ओ३म्

रक्तसाक्षी पं० लेखराम

(जीवन-चरित्र : विचार-दर्शन)

लेखक

प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

प्रकाशक

आर्य प्रकाशन

८१४, कुण्डेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-६

प्रकाशक :
आर्य प्रकाशन
८१४, कुण्डेवालान, अजमेरी गेट,
दिल्ली-११०००६

लेखक : प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु

द्वितीय संशोधित व परिवर्धित संस्करण : १९८८

मूल्य : ६०.०० रुपये

मुद्रक :
दुर्गा मुद्रणालय
सुभाष पार्क एक्सटेंशन,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

समर्पण

मैं

अपनी

इस कृति को

महर्षि दयानन्द जी महाराज के

महान लक्ष्य

के लिए

सर्वस्व न्यौछावर करने वाले

आर्य समाज के दूसरे हुतात्मा

श्री चिरञ्जीव लाल पहलवान

की पावन स्मृति में

सादर समर्पित करता हूं।

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

झण्डा ऊंचा रहे सदा यह चिरञ्जीव बलिदानी का।
झण्डा ऊंचा रहे जगत् में लेखराम नरनामी का।।

—'जिज्ञासु'

प्रकाशकीय

आर्यसमाज के इतिहास में हुतात्माओं का स्थान भी बहुत ऊँचा है। आर्यसमाज ने अपने आरम्भ के जीवन में ही बहुत से हुतात्मा पैदा किये जिनमें पं० लेखराम का स्थान सबसे ऊँचा है जिन्होंने सारी आयु त्याग-तपस्या से आर्यसमाज की सेवा में लगा दी। उनकी आखिरी वसीयत थी कि "आर्यसमाज मे साहित्य लिखने का काम बन्द न हो"। स्वर्गीय पंडित जी की इसी वसीयत को पूरा करने के लिए प्रिय भ्राता राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने आर्यसमाज को बड़ा अद्‌भुत साहित्य दिया है, उसी कड़ी में 'रक्तसाक्षी पं० लेखराम' जैसी पुस्तक लिखकर आर्यसमाज के इतिहास में एक कमी को पूरा कर दिया है। श्री जिज्ञासु जी से आशा की जाती है कि वह भविष्य मे भी अपनी लेखनी से उत्तम साहित्य देते रहेंगे।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण कई वर्ष पूर्व छपा था; यह द्वितीय संस्करण है। इस संस्करण में पहले से दुगुनी सामग्री है जिसे श्री जिज्ञासु जी ने बड़े परिश्रम से खोजकर एकत्र किया है। इस संस्करण की भूमिका भी आर्यसमाज के तपोधन विद्वान् तथा मलयालम भाषा के मूर्धन्य साहित्यकार आचार्य नरेन्द्र भूषणजी ने लिखी है।

श्री जिज्ञासु जी ने गत वर्षों में बहुत ही अद्‌भुत साहित्य लिखा है जिसमें 'महात्मा हसराज ग्रन्थावली' विशेष है। दो नयी पुस्तकें हमारे प्रकाशन ने भी छापी है।

(१) मूल की भूल

(२) धरती का एक महामानव

आशा है जिज्ञासु जी इसी लगन से खोजपूर्ण (साहित्य) लिखते रहेंगे।

इस कठिन कार्य के लिए मैं उनके प्रति बहुत आभार व्यक्त करता हूँ।

हमें यह लिखते हुए बड़ा हर्ष होता है कि धर्मवीर के बलिदान के समय Mayo Hospital मे लिया गया दुर्लभ चित्र हम प्रथम बार ग्रंथ में प्रकाशित कर रहे हैं।

तिलकराज आर्य

अध्यक्ष

आर्य प्रकाशन दिल्ली

कर्त्तव्य का नशा

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः।
महि द्युक्षतमो मदः ।। —सामवेद

"ऐ मेरे मन ! तू मस्ताना बन । दीवाना बन । अन्य मद तो कर्त्तव्य की भावना को मिटा देते हैं । तेरी मस्ती तेरे कर्त्तव्य की भावना को और अधिक तीव्र कर दे । तू अपने कर्त्तव्य-पथ से डिगना नहीं, उस पर उलटा, और भी दृढ़ हो जाना । ऐसा दृढ़ कि संसार का कोई प्रलोभन, कोई भय तुझे इस चट्टान से हटा न सके । तुझे नशा ही कर्त्तव्य-पालन का हो ।

मेरी जान ! तू रसमय है । तेरे लिए जीवन का सभी व्यापार रसमय हो रहा है । कर्त्तव्य-पालन का सा आनन्द किसी और व्यापार में है कहाँ ? इसके लिए कष्ट सहन, दुःख-दर्द उठाना । अत्यन्त मधुर है, अत्यन्त रसीला है । वह कर्त्तव्य ही क्या जिसके पालन में आत्म-त्याग की आवश्यकता न पड़े ? पहिले धन कमाने का लोभ था, अब धर्म के मार्ग में धन लुटाने का लोभ है । पहिले प्रतिष्ठा पाने की उत्सुकता थी, अब सत्य की प्रतिष्ठा के लिए अपने आप अप्रतिष्ठित हो जाने में खुशी है । वास्तविक प्रतिष्ठा है ही सत्य की, सदाचार की ।

अब तो हमारा एक-मात्र धन भगवान् ही है । हमारा एक-मात्र यश भगवान् की दृष्टि में ऊँचा उठ जाना ही हो रहा है । भगवान् की ओर जाने में ही आत्मा की सफलता है । मेरी जान ! तू भगवान् की ओर गति कर । उसी की खुशी में अपनी खुशी समझ । इस मनोभावना में एक उल्लास है जो अन्य किसी भावना द्वारा प्राप्त नहीं होता । एक आनन्द है, एक मस्ती है जो साधक को झट किसी और लोक का वासी बना देती है । अत्यन्त प्रकाशयुक्त, अत्यन्त उल्लासपूर्ण मस्ती ।

मेरे मन ! तू मस्ताना बन । दीवाना बन । इतना मस्ताना कि अपनी मस्ती से भी बेखबर हो जा । इतना दीवाना कि तुझे अपने दीवाना होने की भी सुध-बुध न रहे ।

मेरी जान ! तू मस्ती की सूरत बन जा । तेरा वास्तविक स्वरूप है ही मद-हर्ष, आह्लाद, दीवानगी, मस्ती । कर्त्तव्य की मस्ती, सदाचार की मस्ती, न टलने वाले धर्म की मस्ती ।"

—आचार्य चमूपति जी के सोम सरोवर से

द्वितीय संस्करण की भूमिका

'रक्तसाक्षी पं० लेखराम' का द्वितीय संस्करण आपके हाथों मे है। इस संशोधित व परिवर्द्धित सस्करण के लिए लेखक ने दिन-रात एक करके कार्य किया है। बीसियों लेखो व प्रमाणों का अनुवाद करना कोई सहज कार्य नही है। हमने पूरा-पूरा यत्न किया है कि प्रत्येक प्रमाण का अनुवाद करते समय लेखक के भाव को पूरा-पूरा सुरक्षित रखा जावे। इस कार्य में लेखक को अपनी जीवन-सङ्गिनी श्रीमती यजुर्वेद कुमारी तथा सुपुत्री कु० रश्मि आर्या एम० ए० से भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। कहीं-कही विद्वानो के लाभार्थ हमने मूल फारसी शब्द को कोष्ठो मे रखकर उसका अर्थ भी साथ दिया है और कहीं-कहीं मूल फारसी शब्दों के आगे उनका अर्थ हिन्दी मे कोष्ठो में दिया है। ऐसी अवस्था मे पाठक यह समझ लेवे कि फारसी का शब्द मूल लेख का है, भले ही वह कोष्ठों में रखा है या कोष्ठो से बाहर है।

पुस्तक में दो खण्डो मे तो मिर्जा गुलाम अहमद जी के इलहामों व भविष्यवाणियों की विशेष चर्चा की गई है। और भी कई खण्डों मे प्रसंग अनुसार उनका उल्लेख है। ऐसा होना स्वाभाविक ही है। कुछ भविष्यवाणियों की चर्चा एक से अधिक बार है। इसके लिए हम पुनरोक्ति दोष के दोषी नही हैं। इसका कारण मिर्जा साहिब ही है जो एक ही बात को अदल-बदलकर लिखते रहते थे। यह उनका स्वभाव था। उनको इसी में लाभ था। कहीं-कहीं प्रसंग अनुसार भी हमे मिर्जा जी की कुछ बातो को दुहराना पड़ा। इस सम्बन्ध में पाठक एक मुसलमान विद्वान् के इन शब्दों को सदा ध्यान मे रखे, "Almost every Ahmadi believes his dreams to be inspired, and the first thing he would do early in the morning is to recount his dreams to those about him. So complete is the Ahmadi dream-mania that they publish in the Columns of 'Alfazal' geowing accounts of the excursions into the dream—land. They seem to have too much faith in dreams, too little in the realities."[1]

अर्थात् प्रत्येक अहमदी अपने स्वप्न को ईश्वरीय प्रेरणा समझता है। प्रात. उठने के पश्चात् एक मिर्जाई सबसे पहले जो कार्य करेगा वह है अपने अड़ोस-पड़ोस वालो को अपने स्वप्न सुनाने का। अहमदियों को यहाँ तक यह स्वप्न-उन्माद है

---

१. द्रष्टव्य 'His Holiness' By Phoenix. Page 201.

कि वे 'अलफ़ज़ल' में अपनी स्वप्नलोक की यात्राओं का बड़ा उत्साहपूर्ण (चटपटा) विवरण प्रकाशित करते रहते हैं। उनका स्वप्नों में अत्यधिक विश्वास है, वास्तविकता में कम।"

इस मिर्ज़ाई प्रवृत्ति के कारण कुछ भविष्यवाणियों की चर्चा एक से अधिक बार करनी पड़ी। अपने स्वप्नों व भविष्यवाणियों के अर्थ; परिभाषा Interpretation व्याख्या [तावील] की भी मिर्ज़ाइयों की एक अपनी ही शैली है।

प्रथम संस्करण के प्रूफ देखे ही न गये। श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी ने तब लेखक को कहा था, "जितनी बढ़िया पुस्तक उतनी घटिया छपाई।" ऐसा बिना प्रूफ पढ़े के प्रकाशन पर कहा था। स्वर्गीय श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक ने प्रथम संस्करण की बहुत प्रशंसा की और बिना हमारे कहे दूसरे संस्करण के लिए सब अशुद्धियाँ ठीक करके दीं। वह प्रति श्री तिलकराज जी ने खो दी। इस संस्करण के प्रूफ देखने की विशेष व्यवस्था की गई। अल्पज्ञ जीव की प्रत्येक कृति में दोष का रह जाना स्वाभाविक ही है अतः गुणियों के सुझाने पर इस संस्करण के दोष हम तृतीय संस्करण में दूर करने का पूरा प्रयास करेंगे।

इस संस्करण की प्रेरणा तो अनेक बन्धुओं ने दी परन्तु आर्य साहित्य के विशेष प्रेमी आर्य पिता के आर्य पुत्र श्री प्रभाकर देव जी आर्य, हिण्डौन सिटी ने इस ग्रन्थ के प्रकाशन में जो सक्रिय रुचि ली, उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। इसका कारण इतना इस ग्रन्थ का लेखक नहीं जितना कि 'रक्तसाक्षी लेखराम' का नाम व काम। उस महान् बलिदानी के व्यक्तित्व की गरिमा के अनुरूप आर्यों ने एक जीवन-चरित का प्रकाशन अब कर दिया है। सिर ऊँचा करके यह घोषणा करने के अब हम सब अधिकारी हैं। ईश्वर को किन शब्दों में धन्यवाद दें कि एक छोटे से ग्राम में जन्म लेकर, दुर्बलताओं को ढोते हुए भी हम आगे बढ़ रहे हैं। जिन-जिन विद्वानों से कुछ सीखा उन सबके प्रति आदर से शीश झुकाते हुए हम आज अपनी इस उपलब्धि पर इतरा रहे हैं। भले ही इसके लिए कोई हमें अहंकार पूजा का दोषी ठहराये। आर्यपथिक के जीवन की सामग्री की खोज के लिए निरन्तर ४२ वर्ष तक श्रम करके इस ग्रन्थ की रचना कर देना हमारे लिए सन्तोष व स्वाभिमान का विषय है। किसी भी आर्य का इस उपलब्धि पर गर्वित होना सहज स्वभाव की बात है।

प्रैस में भेजने से पहले कुछ सामग्री एक बार फिर गुम हो गई। कहाँ खो गई? प्रैस में अथवा प्रकाशक से गुम हुई, कुछ अता-पता न चला। इससे जो हुई सो क्या लिखें। अब भी आर्यसमाज हिण्डौन सिटी के सभासदों के प्रशंसनीय उत्साह को ध्यान में रखकर हम सब इसे शीघ्र प्रकाशित करना चाहते हैं। जो कुछ लेखक ने सोचा था, उतना कुछ तो नहीं हो सका। अब भी जो कुछ छपा है, लेखक उसे नहीं देख पाया। समय का अभाव व स्थान की दूरी इसका कारण है। कुछ सामग्री

अस्थान पर भी आप पायेंगे। कुछ आवश्यक बातें छूट भी गई हैं। प्रथम संस्करण में बहुत स्थूल अक्षरों में अत्यन्त उपयुक्त स्थान पर हम धर्मरक्षा जातिरक्षा के लिए वीर लेखराम की गाड़ी से छलांग लगाने की घटना चाहते थे परन्तु यह महत्त्वपूर्ण घटना रह गई थी और इस बार···।

लेखक ने किसी सभा, संस्था अथवा किसी नेता के कहने से या सम्मान-सत्कार के लोभ से इस ग्रन्थ का सृजन नहीं किया। धर्मवीर लेखराम का पावन चरित्र ही हमारा प्रेरणास्रोत है। आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब ने प० लेखराम साहित्य पुरस्कार आरम्भ किया। १९७६ ई० मे लेखराम नगर (कादियाँ) में यह डा० भारतीय जी को प्राप्त हुआ। १९७७ ई० में इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण छप गया। पं० लेखराम जी पर लिखे जिस ग्रन्थ को मूर्धन्य विद्वानों ने अपने विषय का बेजोड़ ग्रन्थ लिखा, उस पर पं लेखराम पुरस्कार की चर्चा तक न हुई; कारण सभा के स्वामी के लिए यह असह्य था कि 'जिज्ञासु' को पुरस्कार प्राप्त हो। परिणाम यह निकला कि मक्खी को उड़ाने के लिए नाक ही काट डालने की उक्ति के अनुसार पं० लेखराम पुरस्कार का देना ही बन्द कर दिया गया।

किसी भी साहित्यकार की लोकप्रियता व प्रतिष्ठा की एक कसौटी यह भी है कि लोग उसका साहित्य अपने नाम से छापे। आज लेखक का साहित्य कुछ बडे नाम वाली संस्थाएँ हमारे नाम के बिना छाप रही है। यह 'डाका' हमारे सौभाग्य का व प्रतिष्ठा का सूचक है। यह प्रभु के आशीर्वाद का फल है कि लेखक की लेखनी का लोहा ऐसे 'भद्रपुरुष' मान रहे हैं।

दुर्गा मुद्रणालय के संचालकों ने इसके प्रकाशन में जितने धर्म भाव से कार्य किया है, इसके लिए हम उनको व उनके कर्मचारियों को धन्यवाद देते है। लेखक का सङ्कल्प है कि तीन वर्ष पश्चात् इस ग्रन्थ का तृतीय परिवर्द्धित सस्करण और भी बढ़िया ढंग से निकाला जावेगा।

आर्यसमाज नया बाँस देहली में बैठकर इस संस्करण का कार्य आरम्भ किया था और आज राष्ट्रभाषा के कर्मठ सेवक पुरुषार्थ के पुतले स्वर्गीय स्वामी केशवानन्द जी की नगरी में इसे पूर्ण किया है। दिवगत पं० भागचन्द जी खानखाना (जालन्धर) की मृत्यु-इच्छा के अनुसार उनकी 'आर्य मुसाफिर', 'आर्य वीर' की कुछ पुरानी फाइलें लेखक को प्राप्त हुईं। उनको हम किन शब्दो मे स्मरण करें?

विनीत

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
स्वामी स्वतन्त्रानन्द शोध संस्थान
कविता कुञ्ज/वेद सदन
अबोहर-१५२११६

रक्षाबन्धन
हैदराबाद सत्याग्रह
बलिदान स्मृति दिवस
विक्रम संवत् २०४५

प्रथम संस्करण की भूमिका

बालकाल में जिन महापुरुषों, वीरों विद्वानों व हुतात्माओं के जीवन-चरित्र पढ़कर लेखक को कुछ बनने, करने व बढ़ने की प्रेरणा प्राप्त हुई, पं० लेखराम जी उनमें से एक है। जिस धरती पर लेखक ने सूर्य की प्रथम किरण देखी, बालकाल में जहाँ क्रीड़ा की'''उस क्षेत्र मे परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद का सन्देश देने वाले सर्वप्रथम महापुरुष लेखराम ही थे। जब से होश सम्भाला है, लेखराम के नाम और काम से नव चेतना मिल रही है। विनीत पर इस बलिदानी का कितना गहरा प्रभाव है, यह बताना अति कठिन है।

जीवन में दुर्बलताओं का बोझा ढोते हुए भी लेखक आगे बढ़ रहा है। लेखराम के कार्य को पूरा करने का मन में भरपूर उत्साह है। बालकाल में ही इस कार्य के लिए मन में शिवसङ्कल्प जागा था। लेखक अपने व्यक्तिगत जीवन में जिसका इतना ऋणी है, उस आग्नेय विभूति का जीवन-चरित्र लिखने का विचार वर्षों पूर्व मन में अंकुरित हुआ था।

आर्य प्रचारकों के लिए पं० लेखराम का जीवन एक आदर्श है। भारतीय नवजागरण के उषाकाल मे जिन पूज्य महापुरुषो ने देश, धर्म व मनुजता के लिए बलाओं को बुला-बुलाकर आलिङ्गन किया धर्मवीर लेखराम उनमें से एक थे।

लेखक ने वीर विप्र लेखराम के जीवन-चरित्र की सामग्री की खोज में तीस वर्ष से ऊपर परिश्रम किया है। तहों के नीचे दबे रिकार्ड की खोज में विनीत को उतना ही आनन्द प्राप्त रहा, जितना चरित्र-नायक को महर्षि के जीवन-चरित्र की सामग्री की खोज में। इस कार्य को पूरा करने में कितना परिश्रम किया गया है और कहाँ तक सफलता मिली है? इस प्रश्न का उत्तर तो गुणीजन ही दे सकते है।

पण्डित जी के आर्यसमाज मे प्रवेश के समय से लेकर उनके बलिदान तक की पत्र पत्रिकाओ की खोज करके उपयोग प्रयोग किया गया है। इतिहास प्रेमी निश्चय ही इसका पूरा लाभ उठायेंगे। अल्पज्ञ जीव की प्रत्येक कृति में दोष की सम्भावना होती है। ग्रन्थ लेखक प्रूफ आदि की अशुद्धियों के अतिरिक्त भी इस पुस्तक की कमियो को अगले संस्करण में दूर करने का यत्न करेगा। विद्वानों के सुझावों का

पूरा-पूरा स्वागत किया जावेगा।

यदि इस जीवन-चरित्र के स्वाध्याय से किसी भी पाठक के उर आँगन मे सत्य की ज्योति जगी, धर्म का अनुराग उत्पन्न हो गया तो लेखक अपने पुरुषार्थ को धन्य समझेगा। भारतीय स्वाधीनता संग्राम के सेनानी मृत्युञ्जय स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज की जन्मशताब्दी पर इस ग्रन्थ की रचना करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। लेखराम का यह जीवन-चरित्र उसी के अग्रगामी (Fore-Runner) रक्त साक्षी श्री चिरंजीव को समर्पित करने के आनन्द की अनुभूति को शब्दों में बन्दी नही बनाया जा सकता।

३ जुलाई १९७६ ई० को दयानन्द मठ दीनानगर मे एक महामुनि के तपोवन में इस ग्रन्थ का लेखन कार्य आरम्भ किया और १६-२-१९७७ ई० को महर्षि दयानन्द की जन्म स्थली टंकारा में बैठकर यह भूमिका लिखी है।

प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में जिस-जिस से जो-जो सहयोग प्राप्त हुआ सबको धन्यवाद देना एक कर्त्तव्य है। श्री पण्डित शान्तिप्रकाश जी महाराज तथा आर्य जाति के इतिहास की रक्षा में दिन रैन भाग दौड़ करने वाले तपोधन स्वामी ओमानन्द जी महाराज को ऋषि भक्तों की ओर से धन्यवाद देना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है। स्वर्गीय ला० ठाकुरदास भण्डारी का ज्ञान भण्डार('सद्धर्म प्रचारक' की फाईल) हमे सौंप कर श्री सत्यदेवजी भण्डारी पानीपत व महाशय चिरंजीलाल जी पानीपत ने भी यश कमाया है। इनको भगवान् और धर्म धुन दें।

महर्षि बोध पर्व
२०३३ संवत्

विनीत
राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

रक्त साक्षी दर्शनम्

संसार में अरबों प्राणी आते हैं व जाते है। यह आवागमन इस पृथ्वी पर ही नहीं किन्तु अन्य गोलकों में भी चलता रहता है। ऐसी आर्ष मान्यता है। इन असंख्य जीवात्माओं का विविध क्रियाकलाप ही संसार को संसार बनाता है। जीवात्मा के लक्षण बताते हुए हमारे ऋषियों ने इच्छा को पहले स्थान पर रखा है, और इच्छा के पश्चात् द्वेष को रखा है। यदि इच्छा मानव कल्याण पर आधारित है तो यह इच्छालु जीवात्मा महान कार्य करेगा और महात्मा बन जाएगा। महात्माओं का रक्त दुष्टों के लिए स्वादिष्ट होता है और येनकेन प्रकारेण उसको पियेगा ही। वह इसके बिना रह ही नहीं सकता। दुष्टता का साक्षी रक्तसाक्षी है। यदि दुष्ट संसार मे जन्म न लेता तो यह शब्द (रक्तसाक्षी) ही भाषा मे न बनता।

अमर हुतात्मा, अनश्वर रक्तसाक्षी प० लेखराम आर्यपथिक की जीवनी आपके हाथों मे है। जीवन वृत्तान्त लिखने और जीवनी लिखने में बडा अन्तर है। वृत्तान्त तो केवल पत्रकारिता है। जीवन तो सर्ग साहित्य है परन्तु जीवनी लिखने में बडा तप और कुशाग्र वीक्षण ही नहीं चाहिए परन्तु लक्ष्यबोध भी अत्यन्त आवश्यक है। जीवनी लेखक का लक्ष्य तो महात्म्य और दुष्टता का परिचय पाठकों को देना है ताकि जीवन को सुधारने मे पाठकों को भी प्रेरणा प्राप्त हो।

अनश्वर रक्तसाक्षी प० लेखराम जी के कतिपय छोटे-बडे जीवन-चरित्र मैंने पढ़े है। इस जीवनी के महत्त्व के बारे में जो विचार मेरे मन में आए उनकी संक्षिप्त रूपरेखा ऊपर लिखित वाक्यो मे दर्शायी गई है।

इस जीवनी में अनेक ऐसी घटनाएँ दी है, जो आजतक पुरानी पत्रिकाओं के समाहारों में तमसावृत रहती थी। मैं अधिक नही कहता, केवल एक संकेत करता हूँ। जीवनी लिखने वालों के लिए 'रक्तसाक्षी' एक दीपस्तम्भ है—एक ही अर्थ में नही, सब अर्थों में। इसलिए यह रक्तसाक्षी दर्शनम् भी है।

महर्षि दयानन्द भवन
चेंगन्नूर, केरल।
जन्माष्टमी : २०४५

नरेन्द्र भूषण
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, केरल
एवं वैदिक साहित्य परिषद्

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

पं० जी के जीवन-चरित्र की सामग्री की खोज

आर्यसमाज में प० जी के एक अच्छे प्रामाणिक जीवन-चरित्र का अभाव अत्यन्त खटकने लगा। समाजों ने आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब पर दबाव डाला तो सभा ने अपने कर्त्तव्य को निभाते हुए श्री लाला केशवदेव जी को घूम-घूमकर पं० जी के जीवन सम्बन्धी घटनाओं को संगृहीत करने का कार्यभार सौंपा। इस विषय में 'आर्य पत्रिका' में प्रकाशित एक टिप्पणी हम यहाँ देते है—

"The Secretary Arya Pratinidhi Sabha, Punjab, has issued a circular to the Arya Samajes in the province informing them that Lala Keshab Deva has been appointed by the Sabha for collecting materials for the biography of the late lamented Pandit Lekhram, Arya Musafir, and that all possible assistance should be rendered to him when he calls for their help. We should hope the Samajes will not spare any pains in the matter, since it is very important one that ought to have been attended to earlier. More than 7 years have passed since the great martyr gave his life for the sake of Dharma but nothing practically has been done yet to present to the world even a sketch of the illustrious life. Now that Lala Munshi Ramji has undertaken to complete the biography from the material so collected, Samajes and the Samajists will, it is hoped, make it a point to see that no stone is left unturned to supply the material."*

इससे स्पष्ट है कि १९०४ ई० तक कोई जीवन-चरित्र नही छपा था। विज्ञप्ति द्वारा समाजों को ला० केशवदेव जी को सामग्री देने की प्रेरणा दी गई। महात्मा मुंशीराम जी को ही इस जीवन-चरित्र के लेखन के लिए योग्यतम व्यक्ति अथवा सबसे उपयुक्त किंवा अधिकारी विद्वान् लेखक समझा गया।

---

* The Arya Patrika, Weekly, Lahore, June 18, 1904, Page 7.

धर्मवीर पं० लेखराम आर्य पथिक के जीवन-चरित्र

(१) प० लेखराम जी के बलिदान के पश्चात् लाला मुशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज) ने सर्वप्रथम उनके जीवन पर एक खोजपूर्ण विस्तृत लेख लिखा। इस लेख के कई उद्धरण इस पुस्तक में हमने दिये है। इस लेख की लोकप्रियता का इससे बढकर प्रमाण क्या हो सकता है कि यह एक से अधिक बार प्रकाशित हो चुका है। यह लेख 'आर्य मुसाफिर' मासिक उर्दू में, पं० जी की पुस्तकों की भूमिका के साथ तथा 'कुलियात आर्य मुसाफिर' की भूमिका के साथ भी प्रकाशित हुआ। हमारा अनुमान है कि यह लेख 'सद्धर्म-प्रचारक उर्दू' साप्ताहिक में भी अवश्य छपा होगा।

पं० जी के जितने भी जीवन-चरित्र अब तक प्रकाशित हुए हैं उन सबका आधार यही निबन्ध रहा। हमने भी इसका उपयोग किया है। पं० जी के जीवन-चरित्र की गवेषणा तो इसमें है ही, इसकी सबसे बड़ी विशेषता लेख के आरम्भ में बलिदान के महत्त्व पर मुशीराम जी के गम्भीर भावपूर्ण, तल स्पर्शी उद्गार और विचार हैं।

(२) पं० जी का जीवन-चरित्र लिखने का दूसरा प्रयास इससे भी बड़ा था। दुर्भाग्य की बात है कि मानव जाति इससे लाभान्वित न हो पाई। यह प्रयास अधूरा तो रहा ही, जितना था वह भी जनता के सामने न आया। अप्रकाशित रहा और पाण्डुलिपि भी न जाने कहाँ गई।

श्री महता जैमिनि जी वकील मुलतान ने प० जी का जीवन-चरित्र लिखना आरम्भ किया। वह पं० लेखराम जी के बड़े भक्त थे। युवावस्था मे आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के पुस्तक प्रचार विभाग के लिए आपने जो प्रशंसनीय कार्य किया उसका उल्लेख करने मे लेखनी अक्षम है।[1]

महता जी की भाषा तो इतनी ओजपूर्ण व प्रवाहयुक्त न थी परन्तु उनका विस्तृत अध्ययन और असाधारण स्मृति उनके पाठकों व श्रोताओं के हृदय पर गहरा प्रभाव डालने की अद्भुत क्षमता रखते थे। वह पं० जी के विशेष भक्तों में से थे। यदि वह जीवन-चरित्र पूरा

---

१. देखिए आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब की वार्षिक रिपोर्ट, सन् १९०२-१९०३ ई०, पृ० ६७।

लिख देते तो प्रकाशित भी हो ही सकता था परन्तु इतिहास में 'यदि' के लिए स्थान नहीं होता। महता जी ने पं० जी के जीवन-चरित्र के लिए जो उत्साह दिखाया उसका प्रमाण उनका निम्न पत्र है।

"Dear Sir,—In reply to the query of Lala Sada Nand I beg to inform the public that, after the death of Pt Lekh Ramji, I commenced the business of writing the biography, of the Pundit at the instance of Rai Thakur Dutta. After writing some fifty pages as introduction to the biography I fell a prey to consumption owing to severe labour, then I think Pt. Ram Bhaj Dutt B A., pleader, Amritsar, took up the charge of writing the said biography but he could not do it Then Lala Behari Lal Shafaq volunteered himself but that proposal also proved futile. Then Lala Munshi Ram ji took up the duty but, on account of heavy burden of other tasks on his head, he could not do this work. Then Sadhu Yoginderpal took up the task but he also failed in performing the duty. After passing the pleadership examination, I established myself in Mooltan. I volunteered myself to write the biography but the secretary of the Sabha made no reply on this point. Then I wrote to Rai Thakur Dutt, Adhishthata Lekh Ram Memorial Committee, to get me permission for doing this business. He promised me to move the Sabha on this point but he could not prevail upon the workers in the Sabha.

Now I am prepared to write the biography of the Arya Musafir, if the Sabha allows me to do so."

Jaimani
Pleader
Mooltan[1]

इस पत्र से कई तथ्यों का पता चलता है। महता जी ने पं० जी के जीवन-चरित्र की भूमिका के रूप में पचास पृष्ठ लिख दिये। कठोर परिश्रम से उन्हें क्षय रोग हो गया। जीवन-चरित्र लिखने की प्रेरणा राय ठाकुरदत्त से मिली थी।

(३) महता जी के अस्वस्थ होने पर विख्यात राष्ट्रीय नेता और आर्य प्रतिनिधि सभा के एक पूर्व प्रधान श्री रामभज दत्त वकील ने

१. देखिए 'The Arya patrika' Weekly, Lahore का ३१ मई, १९०२ ई० का अङ्क, पृष्ठ सात।

जीवन-चरित्र लिखना आरम्भ किया। वह कार्य पूरा न कर सके।

(४) ला० बिहारी लाल जी 'शफ़क' ने यह कार्य करने के लिए सेवा समर्पित की परन्तु यह सुझाव भी सिरे न चढ़ा।

(५) फिर ला० मुन्शीराम जी ने यह भार अपने ऊपर लिया परन्तु उनकी व्यस्तताओं ने उनको भी यह कार्य पूरा न करने दिया।

(६) तब प्रसिद्ध शास्त्रार्थी व कुशल लेखक साधु योगेन्द्रपाल जी ने वीर लेखराम की जीवनी लिखने की ठानी परन्तु वह भी यह पुनीत कार्य न कर पाये।

इन परिस्थितियों में स्वस्थ होते ही वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करके जैमिनि जी ने फिर अपनी सेवायें इस पुनीत कार्य के लिए भेंट कीं। सभा से लिखने की आज्ञा माँगी। राय ठाकुरदत्त जी ने आश्वासन दिया कि वह सभा को इसके लिए प्रेरित करेंगे परन्तु कुछ न बना। महता जी सभा से पूछते ही रहे और···।

हमें यहाँ यह समझ नहीं आ रही है कि इसमें पूछने वाली क्या बात थी? सब काम सभाओं से पूछ-पूछकर ही थोड़े होते हैं। भले कामों में जुट जाना चाहिए। सभायें भी ऐसे कार्यों में पीछे लगाई जा सकती हैं।

(७) स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज आर्य पथिक के घनिष्ठ मित्र थे। आपने भी 'उन्नीसवीं सदी का सच्चा बलिदान' नाम से पं० जी के जीवन पर एक महत्त्वपूर्ण ट्रैक्ट लिखा। बड़े यत्न से हमने यह खोजा है। इसका हिन्दी अनुवाद भी हमने ही पहले छपवाया। वह सर्वथा अनुपलब्ध था। श्री डा० भवानीलाल जी भारतीय ने लिखा है कि यह तीन भागों में था। ऐसी बात नही है। यह केवल १६ पृष्ठ की पुस्तिका है।

(८) पटियाला के श्री शामलाल जी ने उर्दू में पं० जी का जीवन-चरित्र लिखा। इसका प्रथम भाग दयानन्द मठ, दीनानगर के स्वामी स्वतन्त्रानन्द पुस्तकालय में है। पृष्ठ संख्या ६८ है। आकार परोपकारिणी सभा के सत्यार्थप्रकाश का है। यह 'आर्य मुसाफिर' मासिक द्वारा छापा गया था। इसके अन्त मे लेखक की घोषणा है कि इसका दूसरा भाग भी तैयार हो रहा है परन्तु लगता है कि दूसरा भाग नही छापा गया अथवा लिखा ही न जा सका। यह पुस्तक स्व० पं० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति को समर्पित की गई थी। इस प्रथम भाग में पं० जी

के सम्बन्ध में मिर्जा गुलाम अहमद की भविष्यवाणियों व मिर्जा साहिब से पं० जी के पत्र-व्यवहार के साथ उनके बलिदान के गौरव को दर्शाया गया है। पठनीय पुस्तक है। १९१२ ई० में यह प्रकाशित हुई थी।

(६) पं० जी के जिस जीवन-चरित्र ने अत्यन्त लोकप्रियता पाई वह स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की लौह लेखनी से लिखा गया। हिन्दी में अब तक प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ जीवनियों में से एक यह भी है। The Arya Patrika साप्ताहिक अंग्रेजी में एक सम्पादकीय लेख में मुन्शीराम जी की लेखनी के विविध गुणों एवं मुन्शीराम जी के धर्मवीर लेखराम के साथ दीर्घकालीन घनिष्ठ सम्बन्धों का उल्लेख करते हुए उनसे विशेष अनुरोध किया गया कि वह इस कार्य को हाथ में लें। हमने सार्वदेशिक सभा के पुस्तकालय में वह लेख मार्च १९७६ ई० को स्वयं पढा था। हमारे पास भी 'आर्य पत्रिका' की कुछ फाइलें हैं परन्तु इस समय वह लेख नहीं मिल रहा। उस लेख में यह लिखा था कि मुन्शीराम की शैली में करुणा (Pathos) है, ओज है अतः वही इसे लिखने के अधिकारी विद्वान् हैं।

यह जीवन-चरित्र १९७१ वि० में लिखा गया। भूमिका ५ मार्गशीर्ष, १९७१ की लिखी है। इसके ठीक दस वर्ष पश्चात् गोविन्दराम हासानन्द ने कलकत्ता से नवम्बर १९२४ ई० में इसकी द्वितीय वृत्ति बड़े सुन्दर ढग से प्रकाशित की। भूमिका पर ५ मार्गशीर्ष १९७१ विक्रम तिथि दी है। यह 'सार्वदेशिक' साप्ताहिक के विशेषांक के रूप मे भी १९६८ ई० में छापा गया परन्तु, छपाई व कागज बढ़िया नहीं। आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब ने भी कुछ वर्ष पूर्व इसे प्रकाशित करवाया और अब सन् १९८७ ई० श्रद्धानन्द ग्रन्थावली में पुनः प्रकाशित किया गया है।

'आर्यसमाज के महाधन'—आर्यसमाज के वीरों, हुतात्माओं के जीवन-चरित्र लिखकर स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने आर्य-समाज के इतिहास की मूल्यवान् सामग्री नष्ट होने से बचा ली। यह इतिहास का एक अद्वितीय ग्रन्थ है। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज एक इतिहासज्ञ थे। उनकी एतदविषयक खोज का लोहा बड़े-बड़े इतिहासकार मानते थे।

उपर्युक्त ग्रन्थ 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दिनों में लिखा गया

था। स्वामी जी शाही किले लाहौर से छूटे तो दीनानगर में स्थान-बद्ध कर दिये गये। स्वतन्त्रता के लिए साधना के इस काल में ही वीर लेखराम आदि शूरवीरों की जीवनियाँ लिख दीं। भूमिका के अन्त मे तिथि ४-७-१९४६ ई० दी है। प्रकाशन इसका १९४८ ई० में सार्वदेशिक सभा द्वारा हुआ। इसका प्रकाशकीय वक्तव्य आर्य गौरव महान् दार्शनिक पूज्य पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने लिखा है।

(११) प्रि० मेलाराम 'बर्क' करनाल वालों ने भी देश के विभाजन से पूर्व उर्दू में पं० जी का एक संक्षिप्त जीवन-चरित्र लिखा था।

(१२) गोविन्दराम हासानन्द देहली वालों ने भी एक बालोपयोगी जीवन-चरित्र हिन्दी में छापा। इसके कई संस्करण निकले।

(१३) बलिदान जयन्ती अम्बाला के अवसर पर १९६२ ई० में आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब ने एक पुस्तक आर्य हुतात्माओं की जीवनियों पर छापी। इसमें कोई मौलिकता न थी। यह स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज लिखित 'आर्यसमाज के महाधन' की सामग्री की काँट-छाँट मात्र थी।

(१४) स्वामी ओ३मानन्द जी (आचार्य भगवान् देव) ने गुरुकुल झज्जर से 'सुधारक' मासिक का 'बलिदान' विशेषांक १९५८ ई० में प्रकाशित किया। इसमे भी प० जी का जीवन-चरित्र दिया गया है। इस ग्रन्थ के दूसरे व तीसरे संस्करण में भी प० जी का जीवन-चरित्र दिया गया है। स्वामी ओ३मानन्द जी एक प्रख्यात इतिहासज्ञ हैं परन्तु, अपनी अन्य-अन्य व्यस्तताओं के कारण आप पं० जी के जीवन सम्बन्धी कोई नवीन खोज नहीं कर सके।

पं० लेखराम जी पर काव्य

(१) पं० जी के बलिदान पर उर्दू के नामी कवि श्री दुर्गासहाय जी 'सरूर' ने एक मुसद्दस लिखी। साहित्यकारों की दृष्टि से यह काव्य उत्तम कोटि का था। पुस्तक रूप में भी छपा था। हमें यत्न करने पर भी अभी तक नहीं मिला। स्मरण रहे कि श्री दुर्गा सहाय 'सरूर' उर्दू के प्रथम कोटि के कवि माने जाते हैं। उर्दू साहित्य का इतिहास उनकी चर्चा के बिना अधूरा ही रहता है। 'सरूर' जी एक निष्ठावान् आर्यसमाजी थे।

(२) आज से कोई ३७ वर्ष पूर्व लेखरामनगर निवासी महाकवि 'शान्त' ने पं० जी के जीवन का प्रथम भाग (विवाह तक) हिन्दी कविता में 'अमर कथा' के नाम से छपवाया। २५० पृष्ठों का यह काव्य साहित्यिक दृष्टि से बढ़िया था। हमने इसे कई बार पढ़ा। दूसरा भाग नहीं छपा। उन्होंने रचा तो होगा। हमने कभी उनसे पूछा ही न कि दूसरा भाग कहाँ तक लिखा है।

(३) पं० नाथुराम जी 'शंकर', 'महरूम', 'फ़लक', 'शहीद', 'आफ़ताब', 'शाद', 'प्रकाश', 'सरशार', 'शरर', 'सरस' आदि कवियों ने उनपर लिखा तो बहुत कुछ परन्तु महाकाव्य इनमें से किसी ने न लिखा।

"लेखराम का जीवन

त्यागमय और

सरल था।

वे

सच्चाई और

सदाचार की

मूर्त्ति थे।

अपनी

प्रतिज्ञा पालन के

पक्के थे।

वे

तेजस्वी और

मन्युप्रवण

थे।"

वीतराग बाल ब्रह्मचारी
आचार्य स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी

उषा काल

युगवार्ता—जन्म—कुल—जन्मस्थान

१८५७ ई० में भारत में बड़ा भारी विप्लव हुआ। अपनी कुछ दुर्बलताओं, सङ्गठन के दोषों व साधनों की कमियों के कारण भारतवासी संघर्ष में पराजित हो गये। अंग्रेज जाति अपने राष्ट्रीय चरित्र के कारण लड़ाइयों में हार कर भी युद्ध को जीत गई। तब समझा यह गया कि अब भारत राष्ट्र व भारतीयता का ऐसा प्राभव हुआ है कि शतियों तक इस देश के उठने का प्रश्न ही नही उठता। विश्व इतिहास की धारा यह बताती है कि किसी भी देश के विदेशी दासता के विरुद्ध क्रान्ति करने के कारण कुछ भी क्यों न बताये जाएँ परन्तु मूल कारण तो उस देश का स्वाभिमान ही होता है। जब तक किसी देश में जीवन है, जब तक किसी राष्ट्र के निवासियों की धमनियों में उष्ण रक्त बहता है, वह देश संघर्ष करेगा। वह आज उठे या कल, वह क्रान्ति करेगा। वह दासता से मुक्त होकर रहेगा। तात्कालिक कारण संग्राम का कुछ भी क्यों न बन जावे, मूल कारण तो स्वाधीनता की चाह ही होती है।

भारत १८५७ ई० के संग्राम में शौर्य के चमत्कार दिखाकर भी मात खा गया परन्तु युद्ध हार कर हिम्मत नही हारी थी। श्रीराम अर्जुन, चन्द्रगुप्त मौर्य, समुद्रगुप्त, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी ताना जी, मिश्र दीवानचन्द और हरिसिह नलवा की शूरता की कहानियाँ राष्ट्रवासियों के हृदयों में निनाद रही थी। जैसे जाने में आना छिपा रहता है 'जैसे मरण का अर्थ नया जन्म है' वैसे ही १८५७ ई० में हमारे देश का पराभव एक नए इतिहास की भूमिका बन गया। एक नई सृष्टि का सृजन आरम्भ हुआ। नई उमगों से एक नया युग उमड़-गुमड़ कर आया। देश ने १८५६ से १८६५ ई० तक एक दशाब्दी में इतने प्रतापी, शूरों, गुणियों व बलिदानी पुत्रों को जन्म दिया कि

उनके शुभ नामों की सूची देना भी यहाँ कठिन सा कार्य है। विश्व के किसी भी देश मे एक दशाब्दी में इतनी महान् विभूतियो का जन्म नहीं हुआ, जितनी कि इस काल मे भारत में जन्मीं। हमारे चरित्र-नायक रक्त साक्षी लेखराम भी इसी दशाब्दी की देन है। विश्व विभूति कवीन्द्र रवीन्द्र, सुनामी स्वामी श्रद्धानन्द बलिदानी, सूफी अम्बा प्रसाद, राष्ट्रवीर लाजपत राय व लोकमान्य तिलक भी इसी दशाब्दी में जन्मे।

पं० लेखराम का जन्म ८ चैत्र संवत् १९१५ विक्रमी (१८५८ ई०) को हुआ। आपका जन्म सैदपुर जिला झेलम (पश्चिमी पंजाब) में हुआ। इस क्षेत्र का जल, वायु व प्राकृतिक दृश्य अपनी विशेषताओं के कारण विख्यात हैं। यहाँ का जलवायु पुष्टिकारक है। इसका प्रभाव पं० लेखराम जी पर भी पड़ना स्वाभाविक था। जहाँ अपने पैतृक संस्कारों के कारण पं० जी वीर बने वहाँ प्रकृति की गोद में पलने के कारण भी वह निर्भीक बने। यहाँ यह उल्लेख कर देना भी हम आवश्यक समझते हैं कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम के वीर हुतात्मा श्री खुशीराम शास्त्री का जन्म भी इसी सैदपुर मे हुआ। वह भी दृढ़ आर्यसमाजी थे और सात गोलियाँ खाकर लाहौर में वीरगति पा गये। पं० जी को महर्षि दयानन्द के सत्संग व शिक्षा ने और भी निर्भीक बना दिया। पं० जी के जन्मस्थान के तीन ओर बरसाती नदियाँ बहती हैं। ग्राम के पूर्व में बहने वाली नदी का नाम काशी है। दूसरी नदी का नाम सुर है। पं० लेखराम जी सुर शब्द को सरस्वती का अपभ्रंश बतलाया करते थे। सैदपुर का केवल दक्षिणी भाग शुष्क रह जाता है। शेष तीनों दिशाओं में नदियाँ हैं। पर्वतमाला की गोदी में यह सुरम्य क्षेत्र अपने सौन्दर्य से सबका मन मोह लेता है। जड़ में भी यहाँ चेतना के दर्शन होते हैं। कहा जाता है कि अपने वनवास के दिनों में पाण्डवों ने यहाँ भी निवास किया था।

इस क्षेत्र में किसी समय मयूर नाचा करते थे। सैदपुर शब्द का अर्थ है शिकार का नगर। 'सैद' फारसी का शब्द है जिसका अर्थ शिकार है। प्रतीत होता है कि पुराने समय में यहाँ के जंगलों में शिकार प्रेमी हिंसक जन्तुओं के शिकार के लिए आया करते थे। अब मोरां वाली कस्सी तो पूर्व में बहती है परन्तु, मयूर नहीं हैं। मांसाहारी लोगों के कारण परमेश्वर की सृष्टि के इस प्रिय व अति सुन्दर पक्षी का अब

वहाँ लोप हो गया है। पौराणिक हिन्दूओं का प्रसिद्ध तीर्थ कटासराज इसी क्षेत्र में है।

पं० लेखराम जी का जन्म तो सैदपुर में हुआ परन्तु उनके पूर्वज पोठोवार (पोठोहार) क्षेत्र में कहूटा नामक ग्राम में निवास करते थे। कहूटा भी अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है। लेखराम जी के दादा श्री नारायणसिंह सैदपुर में आकर बस गये। यहाँ नारायणसिंह जी की ससुराल थी। सैदपुर का ग्राम महाराजा रंजीतसिंह के काल में सरदार उत्तमसिंह की उत्तम राज्य व्यवस्था के कारण आबाद हुआ। पं० जी के दादा नारायणसिंह जी एक बार सरदार काहनसिंह के साथ पठानों के विरुद्ध लड़ने गये। लड़ाई में आपको गोली लगी। गोली कान को चीर कर गर्दन पर गहरा घाव करती हुई निकल गई। युद्ध में असाधारण वीरता के कारण आपको एक जोड़ी सोने के कड़े पुरस्कार में प्राप्त हुए।

इस वीर पुरुष के वंशज लेखराम पर कुल-परम्परा का गहरा प्रभाव पड़ा। श्री नारायणसिंह सच्चे योद्धा थे। जब सिख राज समाप्त हुआ तो भारतीय सैनिकों को अपने शस्त्र नई सरकार को सौंपने के लिए कहा गया। वीर नारायणसिंह ने अपने हाथ से शस्त्र देने में अपना जातीय अपमान व क्षत्रिय का निरादर समझा। आपने पुंछ राज्य (जम्मू कशमीर) में जाकर अपने शस्त्र स्वयं विक्री कर दिये। दादा का यह अड़ियल स्वभाव व शिव सङ्कल्प लेखराम को बपौती में मिले। १९२५ विक्रमी में नारायणसिंह जी का निधन हो गया। नारायणसिंह जी के छोटे भ्राता श्यामसिंह बाल ब्रह्मचारी थे। वह साधु बन गये। उनका शरीर १९२८ विक्रमी में छूटा। तब लेखराम १३ वर्ष के थे। स्पष्ट है कि कुल से जहाँ वीरता के संस्कार मिले वहाँ धर्म-भाव भी कुल की एक पवित्र देन के रूप में हमारे चरित्र-नायक को प्राप्त हुआ।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पं० जी के बलिदान के पश्चात् प० जी पर अपने ऐतिहासिक लेख में उन्हें 'मोहियाल कुल' का रत्न लिखा। पं० जी की जीवनी में उनको शाण्डिल्य गोत्रज सारस्वत ब्राह्मण लिखा है। यह तो सुनिश्चित तथ्य है कि वह मोहियाल ब्राह्मण न थे। शाण्डिल्य गोत्रज सारस्वत थे कि नहीं, इसका हमें पता नहीं चल सका। पं० जी के चाचा श्री पं० गंडाराम जी ने प० जी के जीवन-चरित्र में

अपने कुल को एक से अधिक बार 'सूदन ब्राह्मन' लिखा है। हमें यह ठीक-ठीक ज्ञात नहीं हो सका कि 'सूदन ब्राह्मण' क्या शाण्डिल्य गोत्रज सारस्वत ब्राह्मणों के अन्तर्गत ही आते हैं अथवा यह ब्राह्मणों की कोई पृथक् शाखा है। कुछ भी हो, चाचा साहिब गण्डाराम जी का लेख ही प्रामाणिक मानना पड़ेगा कि वह 'सूदन ब्राह्मण' (सारस्वत) कुल में जन्मे।[1]

पं० जी के सब जीवन-चरित्रों मे यही लिखा है कि उनका नाम लेखराम रखा गया। चाचा गण्डाराम जी ने भी ऐसा ही लिखा है। पं० जी की बालकाल की जो कविताएँ उपलब्ध हुई है उनमें भी आपने किसी उपनाम की बजाए अपना नाम लेखराम ही प्रयुक्त किया है। पता नही चल सका कि वह 'लेखराज' कैसे कहलाने लग गये। आर्यसमाज में प्रवेश पाने पर वह लेखराज के नाम से भी जाने-माने जाते थे। इसकी चर्चा इस पुस्तक में कई स्थानों पर हमने की है। 'आर्य पत्रिका' अंग्रेजी साप्ताहिक में हम पढ़ते हैं—

"Pandit Lekh Raj of Peshawar is one of the most zealous members of the Arya Samaj, to the cause of which he has sacrificed all his comforts of life."[2]

अर्थात् पं० लेखराम पेशावर निवासी आर्यसमाज के परमोत्साही सदस्यो में से एक हैं। आपने आर्यसमाज के हित के लिए अपने जीवन के सर्वसुख न्योछावर कर दिये है। इस लेख में पं० जी का नाम लेखराज लिखा है।

पं० जी के पिता श्री पं० तारासिह जी व उनकी माता भागभरी दोनों ही सौभाग्यशाली थे जिनके सुत ने अपने बालकाल के नाम लेखराम को आगे चलकर सार्थक बना दिया। अपने माता-पिता की ज्येष्ठ सन्तान होने के कारण उनमें वीरता व उग्रता का भाव प्रधान था। जीवनचक्र ने उनको एक आदर्श ब्राह्मण बना दिया। ब्राह्मण का कर्त्तव्य निभाते हुए लेखराम ने यदा-कदा और सदा अपने क्षात्र स्वभाव, अपनी वीरता व उग्रता का भी अच्छा परिचय दिया। उनके जीवन की घटनाओं का गम्भीर अध्ययन यह बतलाता है कि यदि वह कहीं सेना में होते अथवा अपने चाचा पं० गण्डाराम जी के समान

१. स्वानेह उमरी प० लेखराम, लेखक पं० गण्डाराम जी, पृ० १६, ७६, १५९।
२. 'The Arya Patrika', Oct. 19, 1886, Page 5.

पुलिस विभाग से ही सेवा-निवृत होते तो अपने शौर्य व तीव्र बुद्धि की अच्छी धाक जमाते ।

बालकाल व शिक्षा

उर्दू फारसी प्रधान युग में लेखराम की शिक्षा आरम्भ हुई। पाठशाला में एक निरीक्षक परीक्षक पधारे। लेखराम की प्रत्युत्पन्न-मति से वह प्रभावित हुए और बालक लेखराम को एक विशेष पुरस्कार दिया। ११ वर्ष की आयु में लेखराम के चाचा पं० गण्डाराम उन्हें अपने पास पेशावर ले गये। तीन वर्ष वह चाचा जी के साथ रहे। विभिन्न मुसलमान शिक्षकों के पास पढ़ते रहे। अध्यापक उन पर इस्लाम का प्रभाव डालने का विशेष प्रयत्न करते रहे। लेखराम भी अपनी शंकाएँ करते रहते थे। कभी-कभी अध्यापक शंकाओं से खीज भी जाया करते थे।

चाचा के पास रहते हुए पं० जी ने अपनी चाची गणेशदेवी (सगी मौसी भी लगती थी) की देखादेखी एकादशी का उपवास रखना आरम्भ कर दिया। मासी जी ने बहुत समझाया कि बालकों के लिए उपवास रखना कठिन है इसलिए एकादशी व्रत मत रखो परन्तु दृढ़-प्रतिज्ञ लेखराम कहाँ टलने वाला था ! वह नियमपूर्वक यह उपवास रखा करते थे। इस दृढ़ता व धर्मभाव ने उनको बलिदान पथ का ऐसा पथिक बना दिया जो ध्येय धाम पर पहुँचकर ही रुका।

चौदह वर्ष की आयु में पं० जी पुनः सैदपुर चले गये। यहाँ अपने आदर्श गुरु मुंशी तुलसीदास जी की छत्रछाया में शिक्षा पाने लगे। मुंशी जी बड़े निर्लोभी, धर्मभाव वाले, परोपकारी और गुणी अध्यापक थे। आप गुणियों के पारखी थे। लेखराम आपको पाकर धन्य हुए और आप लेखराम को पाकर धन्य हुए। पं० जी के विषय में तुलसी-राम जी का एक पत्र हमारे चरित्र-नायक के विद्यार्थी जीवन पर अच्छा प्रकाश डालता है—

"स्वर्गवासी पण्डित लेखराम जी अपने दोनों छोटे भाइयों (तोता-राम और बालकराम) सहित मेरे पास शिक्षा पाते रहे। धर्म पर शहीद होने वाले पण्डित जी का (आकार) मध्य का, साँवला रंग, चौड़ा माथा, काली आँखें (पीछे एक आँख में कुछ विकार-सा बैठ गया था) हँसमुख थे। उस समय उनकी आयु १४ वा १५ वर्ष की होगी।

बड़े सरल हृदय के थे। कुरते की घुण्डी खुली है तो वैसी रही, पगड़ी का लड गले में है तो कुछ परवाह नहीं, किन्तु स्वभाव ऐसा तीक्ष्ण और स्मरण शक्ति ऐसी पहुँचने वाली कि कठिन-से-कठिन फ़ारसी के पाठ को दोबारा उन्होंने कभी नहीं कहा था। जो पूछो उनकी जिह्वा पर होता था। गणित में अद्वितीय, भारतीय इतिहास भी कण्ठ। केवल गुलिस्ता पूरे आठ अध्याय और बोस्ता पूरे दस अध्याय पण्डित जी ने मुझसे बातर्तीब (विधिवत्) पढ़े। फिर बहारे दानिश आधी से अधिक, कुछ सिकन्दरनामा, और मन्तख़बात ए० फारसी, जिसमें अनवारे सुहेली, सिकन्दरनामा, शाहनामा का कुछ इन्तखाब था। परन्तु, इन ग्रन्थों की शिक्षा में यह स्थिति थी कि दो-दो पृष्ठ उलटने पर सम्भवत: कभी कोई शब्द ही मुझसे पूछा हो। स्वयं ही उनके अवलोकन में जल पर नाव के समान तैरते जाते थे।"

यह पत्र मुशी जी ने वीरवर के बलिदान का समाचार सुनकर स्वामी श्रद्धानन्द जी (तब मुन्शीराम) को प्रकाशनार्थ भेजा था।

पं० लेखराम जी कक्षा में अद्वितीय थे। मानीटर थे। तुकबन्दी की प्रवृत्ति जाग उठी। यह पढ़ाई में बाधक भी बनने लगी। मुन्शी तुलसीदास जी इस प्रवृत्ति से कुछ खिन्न भी हो गये। उर्दू, फ़ारसी के अतिरिक्त वह पंजाबी में भी कविता लिखने लगे। उर्दू, फ़ारसी की गजलों के प्रभाव से शृंगार रस की कविताएँ भी कुछ लिखी बताते हैं परन्तु ऐसी कोई कविता उपलब्ध नहीं हो सकी।

प० जी की १८७३ ई० की रचनाओं के कुछ पद यहाँ देते हैं—

(१) बाबा फ़कीरी दूर है जैसी कि लम्बी खजूर है।
चढ़े ते चूपे (चूसे) प्रेम रस गिरे तो चकनाचूर है॥

(२) लिखूँ पहले हमदे ख़ुदाए जहाँ।
कि जिसने किया पैदा अरज़ो समाँ॥

(३) किया मेहरो मा दरखशाँ ख़ुदा।
किया नजम अखतर नमायाँ ख़ुदा॥[1]

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने हुक्के पर पं० जी की एक कविता दी है। यह भी छात्र जीवन की रचना है। इसका आद व अन्त ही यहाँ देते हैं—

---

१. स्वानेह उमरी प० लेखराम, लेखक प० गण्डाराम, पृ० ८१।

'वा वांग हुक्के नहीं चीज़ कोई, नाम बरितयाँ दा उत्तरसा हक्का।
लेखराम बस बैठो नाम जप लो, नाड़ी भन्न के दे ओ हुक्का नाड़ा।'

इसका भाव यह है कि हुक्के सरीखी कोई बुरी वस्तु नहीं। सारी बुराइयों का आद हुक्का है, 'लेखराम' कुछ बैठकर नाम जपो और हुक्के की नाली तोड़कर हुक्के को छोड़ दो।

यह कविता फ़ारसी उर्दू के कठिन शब्दों से युक्त पंजाबी बोली में है। स्मरण रहे कि पं० जी के एक महात्मा फकीर चन्द थे। कुछ पारिवारिक सम्बन्ध भी था। वह भी तुकबन्दी किया करते थे। संगत ही ऐसी थी। पं० जी की कविता के प्रशंसक से गुरुवर तुलसीराम जी तंग थे। तब किसको यह पता था कि आगे चलकर यह बालक गद्य-पद्य में नाम पैदा करेगा। इसकी लेखनी असंख्य मानवों को जीवन की नई दिशा देगी।

पुलिस विभाग में

शिक्षा का प्रतिशत भारत में गिर रहा था। सैनिक प्रवृत्ति वाले घरानों में तो शिक्षा की रुचि समाप्त सी हो रही थी। पं० जी के परिवार में भी उच्च शिक्षा की रुचि न रही। उस युग में १६, १७ वर्ष की आयु के लड़के का कर्त्तव्य माना जाता था कि वह कमाकर घर बसाए और माता-पिता को भी कमाई खिलाये। पं० लेखराम के घर वाले भी चाकरी को ही उत्तम व्यवसाय समझते थे। पं० गण्डाराम पुलिस में अच्छे पद पर थे। प्रभाव भी था। आपने १७ वर्ष के लेखराज को पेशावर में अपने पास बुला लिया और पुलिस विभाग में ही भरती करवा दिया।

उस समय क्रस्टी साहिब पुलिस के जिला अधीक्षक थे। आपने प० जी को भरती कर लिया। संयोग की बात है कि इन्हीं क्रस्टी साहिब से पं० जी के बलिदान पर स्वामी श्रद्धानन्द जी ने घातक का पता लगाने की प्रार्थना की तब क्रस्टी महोदय ने कहा था कि **"मुझे ज्ञात था कि लेखराज अपनी निर्भीकता व स्पष्ट व्यक्तित्व के कारण कभी न कभी मारा जावेगा। उसकी दृढ़ता के लिए मेरे हृदय में सदा मान का भाव रहा करता था।"**

२१ दिसम्बर, १८७५ को वह उस विभाग में प्रविष्ट हुए। नक्शा नवीसी (मानचित्र बनाने) का कार्य मिला। उन्नति करके सार्जैण्ट

बन गये। जिस वर्ष पुलिस विभाग में आये उसी वर्ष आर्यसमाज की स्थापना हुई। लेखराम को पुलिस विभाग अपने बन्धन में न बाँध सका। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक के एक ही बार के दर्शन ने जीवन की काया ऐसी पलट दी कि लेखराम सब बन्धन तोड़कर आर्यसमाज के हो गये।

धार्मिक प्रवृत्ति—पुलिस मे आने से पूर्व ही सुआबी थाना में अपने चाचा के पास रहते हुए लेखराम एक सिक्ख सिपाही के सत्संग से ईश्वर भजन में समय देने लगे। प्रातः ब्रह्ममुहूर्त्त मे स्नान करके गीता का पाठ करते और समाधि लगा लेते। एक रात्रि को खाट पर ध्यान में लीन थे। एकदम खाट से ऐसे गिरे कि पाँव खाट के ऊपर और सिर नीचे हो गया। इस अवस्था मे भी आप अपने ध्यान में लीन थे।

यह धार्मिक भावना वढ़ती गई। एक समय आया कि अद्वैतवाद का रंग चढने लगा। भक्तिभाव फिर भी बना रहा। गीता के पाठ से कृष्ण जी का अनुराग ऐसा हुआ कि कृष्ण-कृष्ण जपने लगे। टीका लगाकर अपनी धुन में मस्त रहने लगे। वैराग्य-सा हो गया। नौकरी छोड़कर वृन्दावन जाने की ठानी। माता-पिता ने विवाह करने की सोची परन्तु गृहस्थ के नाम से ही चौक पड़ते थे। वह तो भजन में जीवन लगाने का निश्चय कर चुके थे। तब आयु २१ वर्ष की थी। मन में विचार आया कि संस्कृत का गहन अध्ययन किया जावे। इसी काल में रासलीला का भी आकर्षण जागा।

पं० जी के जीवन में परिवर्तन आ रहा था। मन भटक रहा था आचार्य चमूपति जी का एक पारिभाषिक शब्द प्रयोग करे तो कहना होगा कि तब पं० जी का हृदय 'खाना बदोश' (Nomadic) था। इस्लाम की ओर भी झुके। सत्य की खोज थी। शान्ति को पाने का प्रयास चल रहा था। सार्वभौमिक प्रवृत्ति थी। पं० जी के मित्र कृपाराम जी ने इस्लामी साहित्य के अनुराग को देखा तो पूछ ही लिया कि क्या इस्लाम में सत्य मिले तो आप मुसलमान हो जायेंगे ? झट उत्तर दिया कि, 'हाँ'। पं० जी ने कहा कि यदि दस घड़े पड़े हों और पता करना हो कि किसका जल अधिक शीतल है तो बिना चखे कैसे पता चले कि किस घड़े का जल मीठा व शीतल है ? इस भाँति सब मतों की पड़ताल करनी चाहिए। पं० लेखराम सच्चे अर्थों में जिज्ञासु थे।

आत्माभिमानी वीर लेखराम

पं० जी के विद्यार्थी जीवन की एक घटना उनके स्वभाव और चरित्र को समझने के लिए बड़ी महत्त्वपूर्ण है। हम उसे श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के शब्दों में यहाँ देते हैं—

"एक बार इनको पाठशाला में प्यास लगी। पानी के घड़े को भ्रष्ट देखकर मौलवी से घर जाकर पानी पीने की छुट्टी माँगी। मौलवी ने कहा छुट्टी नहीं मिलेगी। पानी पीना हो तो यहीं पी लो। इस आत्माभिमानी ने न तो गिड़गिड़ाकर पुनः छुट्टी माँगी और न भ्रष्ट घड़े का पानी पिया। सारा दिन प्यासे ही बिता दिया।"[1]

इतिहास की परीक्षा और इतिहास की सूझ

पं० जी मिडिल की परीक्षा देने गये। इतिहास के प्रश्नों का उत्तर न देकर इतिहास की पाठ्य-पुस्तकों में प्रचलित एतद्विषयक मिथ्या धारणाओं का खण्डन लिखकर पर्चा दे आये। अन्य विषयों में उत्तम स्थान प्राप्त करके भी इतिहास में अनुत्तीर्ण हुए।

इतिहास में इसी अनुत्तीर्ण विद्यार्थी को पाँच वर्ष पश्चात् राज्याधिकारियों ने पेशावर जिला के इतिहास की सामग्री एकत्रित करने का कार्य सौंपा। इस अनुत्तीर्ण विद्यार्थी ने आगे चलकर महर्षि दयानन्द के जीवन-चरित्र की सामग्री एकत्रित करते हुए ऐसी सूझ-बूझ का परिचय दिया कि लेखनी उनके भागीरथ प्रयास का वर्णन करने में अक्षम है। उनका परिश्रम व गवेषणा बड़े-से-बड़े इतिहासज्ञ के लिए एक प्रेरणास्रोत है।

वैदिक धर्म का प्रकाश एवं महर्षि-दर्शन

प० जी ने काशी से किसी का गीताभाष्य मँगवाया। गीताभाष्य पढ़ते हुए पं० जी को प्रसिद्ध सुधारक व उर्दू लेखक मुंशी कन्हैयालाल जी अलखधारी का साहित्य देखने की उत्कण्ठा हुई। मुशी कन्हैयालाल का साहित्य मँगवा लिया। मुशी जी के ग्रन्थों से ही पं० जी को महर्षि दयानन्द जी के बारे में कुछ जानकारी हुई। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने कन्हैयालाल अलखधारी जी के जनजागरण में योगदान का बड़े सुन्दर शब्दो में मूल्यांकन करते हुए लिखा है—"अलखधारी

१. आर्यसमाज के महाधन, पृष्ठ ७३।

के खुले स्पष्ट शब्द कुरीतियों से पीड़ित आर्य सन्तान को उत्साहित करने और उन्हे अन्ध परम्परा की कड़ी साँकलो को तोड़ने का बल प्रदान करने मे बिजली का काम देते थे, किन्तु फिर भी पुराने ढर्रे के पौराणिकों पर उनका कुछ भी प्रभाव नही पड़ता था। पौराणिक गढ़ को तोड़ने के लिए वेदशास्त्र रूपी प्रबल शस्त्रों की आवश्यकता थी, जिनके चलाने में निपुण एक ही कौपीनधारी संन्यासी शताब्दियों के पश्चात् दिखाई दिया था। अलखधारी ने उसी अखण्ड शास्त्रधारी बाल ब्रह्मचारी की शरण ली, और अपने लेखों की पुष्टि में स्वामी दयानन्द सरस्वती के व्याख्यानों और लेखो का प्रमाण दिया। यही कारण था कि मुशी कन्हैयालाल अलखधारी के सब चेले अन्त को ऋषि दयानन्द की पवित्र शरण में आये और आर्यसमाज के उत्साही सभासद् बने। इसी प्रकार के सुशिक्षित युवक वीरो में से एक लेखराम था।"[1]

यहाँ यह भी स्मरण रहे कि स्वयं अलखधारी जी ने अपने स्वीकार पत्र (Death will) में यह आदेश दिया कि उनके पश्चात् उनकी सारी सम्पत्ति लोकोपकार में दान कर दी जावे। सम्पत्ति के सज्जन व्यवस्थापकों के सौजन्य से इसमें से कुछ भाग आर्यसमाज को भी प्राप्त हुआ था। मुशी जी ने ऋषि जीवन पर एक पृथक् पुस्तिका भी लिखी थी।[2] इस अलभ्य पुस्तिका को खोजकर हमने इसे हिन्दी में अनूदित व सम्पादित करके छपवाया है।

लो ! ब्रह्म जीव बन गया ?

श्री कन्हैयालाल अलखधारी के ग्रन्थों से जब पं० जी को ऋषि के नाम व काम की जानकारी मिली तो आपने अपने अद्वैतमत की जाँच-पड़ताल आरम्भ कर दी। परिणाम यह हुआ कि आपने अद्वैतवाद को तिलाञ्जलि दे दी। यदि हम यह कह दे कि 'एक ब्रह्म जीव बन गया' तो अधिक उपयुक्त होगा। नवीन वेदान्ती अपने को भ्रम से अथवा 'स्वप्नवाद' से जीव की बजाय 'ब्रह्म' समझते हैं। लेखराम का भ्रम-भंजन हो गया और उसे पता चल गया कि वह जीव ही है।

अब लेखराम जी ने ऋषिकृत ग्रन्थ मँगवाए। इन ग्रन्थों के स्वाध्याय

१. आर्य पथिक लेखराम 'सार्वदेशिक' का विशेषांक, पृ० २४-२५।
२. 'आर्य समाचार', मासिक, भाद्रपद १९४३ वि०, पृ० १४६।

में लग गये। ऋषि से पत्र-व्यवहार आरम्भ हो गया। महर्षि के दर्शनों की चाह मन मे करवटें लेने लगी। संवत् १९३७ विक्रमी के अन्त तक पेशावर में आर्यसमाज भी स्थापित कर दिया।

माई रञ्जी की धर्मशाला में पं० जी रहते थे। वही आर्यसमाज के दैनिक सत्संग आरम्भ हो गये। पं० जी अपने मित्रों को वैदिक सिद्धान्त समझाने बैठ जाते। चार मित्र तो वैदिकधर्मी बन गये परन्तु पाँचवाँ 'ब्रह्म' ही बना रहने पर तुला हुआ था। उसी ने तो पं० जी को 'ब्रह्म' बनने का प्रथम पाठ पढाया था। उसके आर्य बनने की घटना बड़ी रोचक है। एक दिन पं० जी ने कहा, "कम्बख्त ! तेरी समझ में कुछ नही आता तब भी हमारी ख़ातिर से ही आर्य बन जा। मित्र मण्डल तो न टूटेगा।"

यह तीर ठिकाने पर लगा। वह भी मित्र मण्डली में मिल गया। पाँचों ने मिलकर वैदिक धर्म प्रचार का पुनीत कार्य आरम्भ कर दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इस घटना पर सुन्दर टिप्पणी दी है—

"पाँच पंच मिल कीजे काज।
हारे जीते न आवे लाज।"

पं० जी सुन-सुनाकर आर्यसमाजी तो बन गये परन्तु कभी-कभी अपने नवीन वेदान्ती पुराने मित्रों की शकाओ का निवारण करते हुए अटक जाया करते थे। सकल संशय निवारण के लिए महर्षि से पत्र-व्यवहार करके एक मास की छुट्टी लेकर अजमेर मे ऋषि चरणों में पहुँचे। लाहौर, अमृतसर, मेरठ आदि प्रसिद्ध नगरों के आर्यसमाजो में ठहरते हुए जिज्ञासु लेखराम १६ मई, १८८० ई० की रात्रि अजमेर नगर में पहुँचा और सेठ फतेहमल जी की वाटिका में १७ मई को महाराज के प्रथम व अन्तिम वार दर्शन किए।

महर्षि दर्शन का वृत्तान्त पंडित जी के अपने शब्दों में

११ मई सन् १८८१ ई० को 'सवाददाता'[1] पेशावर से स्वामी जी के दर्शनों के निमित्त चलकर १६ की रात को अजमेर पहुँचा और स्टेशन के समीप वाली सराय में डेरा किया और १७ मई को प्रातःकाल सेठ जी के बागीचे में जाकर स्वामी जी का दर्शन प्राप्त किया। उनके दर्शन से मार्ग के समस्त कष्टों को भूल गया और उनके सत्योपदेशों से

---

१. धर्मवीर प० लेखराम जी।

समस्त गुत्थियाँ सुलझ गयीं। जयपुर में एक बगाली सज्जन ने मुझ से प्रश्न किया था कि आकाश भी व्यापक है और ब्रह्म भी, दो व्यापक किस प्रकार इकट्ठे रह सकते हैं? मुझसे इसका कुछ उत्तर न बन पाया। मैने यही प्रश्न स्वामी जी से पूछा। उन्होंने एक पत्थर उठाकर कहा कि इसमें अग्नि व्यापक है या नहीं? मैंने कहा कि व्यापक है। फिर कहा कि मिट्टी? मैंने कहा कि व्यापक है। फिर पूछा कि जल? मैंने कहा कि व्यापक है। फिर पूछा कि आकाश और वायु? मैंने कहा कि व्यापक हैं। फिर पूछा कि परमात्मा? मैंने कहा कि वह भी व्यापक है। कहा कि देखो, कितनी चीजें है परन्तु सभी इसमें व्यापक हैं। वास्तव में बात यही है कि जो जिससे सूक्ष्म होती है वह उसमें व्यापक हो सकती है। ब्रह्म चूँकि सबसे अति सूक्ष्म है इसलिए वह सर्वव्यापक है। जिससे मेरी शान्ति हो गई।

मुझसे उन्होंने कहा कि और जो तुम्हारे मन में सन्देह हों सब निवारण कर लो! मैने बहुत सोच-विचारकर १० प्रश्न लिखे जिनमें से तीन मुझे स्मरण हैं, शेष भूल गये।

प्रश्न—जीव-ब्रह्म की भिन्नता में कोई वेद का प्रमाण बतलाइए?

उत्तर—यजुर्वेद का ४०वाँ अध्याय सारा जीव-ब्रह्म का भेद बतलाता है।

प्रश्न—अन्य मत के मनुष्यों को शुद्ध करना चाहिए या नहीं।

उत्तर—अवश्य शुद्ध करना चाहिए।

प्रश्न—विद्युत् क्या वस्तु है और किस प्रकार उत्पन्न होती है?

उत्तर—विद्युत् सर्वत्र है और रगड़ से उत्पन्न होती है। बादलों की विद्युत् बादलों और वायु की रगड़ से उत्पन्न होती है।

"मुझसे कहा कि २५ वर्ष से पूर्व विवाह न करना। कई ईसाई और जैनी प्रश्न करने आते थे, परन्तु शीघ्र निरुत्तर हो जाते थे।

एक हिन्दू नवयुवक—जिसके विचार पूर्णतया ईसाई मत की ओर झुके हुए थे—प्रतिदिन प्रश्न करने आता और शान्त होकर जाता था। अन्त मे वह पूरी शान्ति पाने के पश्चात् ईसाई मत से विरक्त होकर वैदिक धर्मानुयायी हो गया।

चिह्न-स्वरूप अष्टाध्यायी की प्रति प्रदान की। व्याख्यानों में सैकड़ों मनुष्य आते और लाभ उठाते जाते थे। २४ मई सन् १८८१ को दोपहर के समय महाराज जी से विदा होने पर मैंने निवेदन किया कि

आप मुझे अपना कोई चिह्न प्रदान करें। एक पुस्तक अष्टाध्यायी की प्रदान की जो अभी तक पेशावर समाज में विद्यमान है। तत्पश्चात् उनके चरणों को हाथ लगाकर नमस्ते करके दास वहाँ से विदा होकर चला आया।"[१]

वाणी से जाय वह क्योंकर सुनाया

अजमेर में महर्षि के व्याख्यानों की व्यवस्था श्री पं० भागराम जी न्यायाधीश ने की व करवाई। पं० लेखराम जी महर्षि के प्रवचनों व व्याख्यानों के प्रभाव का उल्लेख करते हुए पं० भागराम जी की ओर संकेत करते हुए लिखते हैं—"उनकी कृपा और सहायता से वह आनन्द आता था कि वर्णन नहीं हो सकता।"

जिज्ञासु लेखराम के यह उद्गार पढ़कर भक्तराज अमीचन्द जी के ये पद अनायास मुख से निकलते हैं—

तुम्हारी कृपा से जो आनन्द पाया। वाणी से जाय वह क्योंकर बताया॥
तुम्हारी दया से अजी मेरे भगवन्। मेरी ज़िन्दगी ने अजब पलटा खाया॥

पं० जी की सूझ और सरकार की प्रतिष्ठा—शास्त्रार्थी लेखराम और लेखक लेखराम की सूझ की तो धाक जमी है। वीर लेखराम जब सरकार की सेवा में थे तब आपके व्यवहार और सूझ का आपके बड़े-बड़े अधिकारियों व जनता पर गहरा प्रभाव था। एक बार राजकीय कार्य के लिए आपको कहीं भेजा गया। पैदल वहाँ जाना था। आप टाँगे पर चल पड़े। मार्ग में आपका एक अंग्रेज अधिकारी मिल गया। उसने कहा, टाँगे पर क्यों जा रहे है ?

प० जी ने कहा, "पैसे मैं अपनी जेब से व्यय कर रहा हूँ और टाँगे पर यात्रा करके सरकार की प्रतिष्ठा बढ़ाई है। पैदल जाता तो शासन की अप्रतिष्ठा होती।"

यह उत्तर सुनकर अंग्रेज अधिकारी प्रसन्न हुआ परन्तु इतना अवश्य कहा कि आगे से ऐसा न करना।

यह घटना जहाँ पं० जी की दृढ़ता और सूझ का परिचय देती है वहाँ अंग्रेज शासकों की मलीन मनोवृत्ति का भी अच्छा प्रमाण है। एक भारतीय अपने पैसे से टाँगे पर यात्रा करे तो यह भी अंग्रेजी शासकों को चुभता है।

---

१. महर्षि का जीवन-चरित्र, (हिन्दी अनुवाद), लेखक पं० लेखराम, पृ० ५७०-५७१।

नई से नई बातों का

पता लगाने में

उनकी रुचि

अत्यधिक थी।

वे ऊहावान

और वाग्मी थे।

उनकी लेखनी

बिना रुके

स्वपक्ष का मण्डन

और

प्रतिपक्ष का खण्डन

करती थी।"

पू० स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

कार्यकर्त्ता प्रधान . सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

आत्म-समर्पण

धर्मवीर लेखराम के जीवन ने एक नया मोड़ लिया। वैदिक धर्म प्रचार की उनकी चाह और ऋषि मिशन के लिए उनका उत्साह उनको बेचैन कर रहे थे। वह प्रभु की राह में सर्वस्व समर्पण करना चाहते थे—

भावों की भीषण ज्वाला को सीने में कौन दबा सकता।
अलबेले दृढ़ संकल्पों को रस्ते से कौन हटा सकता॥

सर्वत्यागी लेखराम को ऐसा अनुभव हुआ कि विदेशी शासकों की सेवा उनके लक्ष्य की पूर्ति में बाधक है। बस, फिर क्या था। यह विचार मन में उत्पन्न हुआ और "२४ सितम्बर, १८८४ को त्यागपत्र देकर, मनुष्यों के दासत्व से मुक्त होकर लेखराम अब पण्डित लेखराम बन गये। वैदिक धर्म के अनथक सेवक बन गये।"[1]

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा है कि नवम्बर १८८४ ई० में त्याग-पत्र दिया।[2]

श्री शामलाल जी ने भी पं० जी के जीवन-चरित्र में स्वामी श्रद्धानन्द जी की बात को दोहराया है कि त्यागपत्र नवम्बर १८८४ ई० को दिया गया।

श्री पं० चमूपति जी ने लिखा है, "सितम्बर १८८४ में सरकार की सेवा से मुक्त होकर धर्म-प्रचार के लिए स्वतन्त्र हो गये।"

हमारा मत यह है कि श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज व पं० चमूपति जी का लेख प्रामाणिक है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज व महाशय श्यामलाल जी का लेख सत्य तो है परन्तु अधूरा है। पं० जी ने त्यागपत्र सितम्बर १८८४ ई० को ही दिया था परन्तु यह

---

१ आर्यसमाज के महाधन', पृ० ८०।
२. कुलियात आर्यमुसाफिर, भूमिका पृ० दाल, आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब का सचित्र इतिहास, पृ० १९२।

स्वीकार नवम्बर में हुआ। इस प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द जी का लेख लौह-पुरुष स्वतन्त्रानन्द जी के लेख का पूरक हो जाता है। श्री चाचा गण्डाराम जी ने इस पर अच्छा प्रकाश डाला है। उनका लेख इस घटना पर सबसे बड़ा प्रमाण है।[1]

पण्डित जी की कार्यकुशलता व योग्यता का प्रभाव—पुलिस विभाग में वार्षिक रिपोर्ट बड़ी कठिनाई से तैयार होती है। मानचित्र का कार्य भी कठिन ही होता है। पं० जी इन सब कार्यों में दक्ष थे। पुलिस विभाग वालों के लिए संवाददाता का कार्य वर्जित है। पं० जी ने 'धर्मोपदेश' पत्रिका निकाली और सवाददाता का कार्य भी करते थे। एक बार आपने 'शराब खाना खराब' (सुरापान घर का नाश) विषय पर व्याख्यान दिया। पं० जी तब सार्जैण्ट पुलिस थे। बड़े-बड़े अंग्रेज, धनीमानी लोग भी सुनने आये और जिला के एक उच्च अधिकारी ने सभा की अध्यक्षता की। एक सार्जैण्ट पुलिस का अधिकारियों पर इतना प्रभाव उनके चरित्र की छाप का प्रमाण है।

कमांडिंग आफीसर (Commanding Officer) और कई सैनिक उत्सुकता से भाषण सुनने आये थे। सुरापान के विरुद्ध यह उनका प्रथम प्रयास था। कई श्रोता इस व्याख्यान को सुनकर धर्म के पिपासु वन गये और कई एक ने वहीं मद्यपान छोड़ने की प्रतिज्ञा की।[2]

मृतकों में चेतना का संचार

१८९४ ई० के अन्तिम दिनो की घटना है। पं० जी कोहाट (सीमा प्रान्त) गये। वहाँ पाँच से दस नवम्बर तक छः व्याख्यान देकर वैदिक धर्म-प्रचार की धूम मचा दी। वहीं बन्नू वालों की तार पर तार आई कि धर्मवीर वहाँ आये। टाङ्गा पर प० जी वहाँ गये। वहाँ आर्यजनों ने उनका स्वागत किया। भजन-कीर्तन करते नौ बजे समाज मन्दिर उनको ले गये।

यहाँ २० नवम्बर को उनका अन्तिम व्याख्यान **'आर्य जीवन'** विषय पर हुआ। आचरण पर प० जी सदा बल दिया करते थे। आपने अपने व्याख्यान में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र, वीर हकीकतराय आदि के जीवन के हृदय को छू लेने वाले ऐसे दृष्टान्त

१. चाचा गण्डाराम लिखित प० जी का जीवन चरित्र, पृ० ८९।

२. पं० लेखराम का उर्दू जीवन-चरित्र, लेखक श्री श्यामलाल, पृ० २२-२३।

दिये कि व्याख्यान सुनकर मृतको में भी जीवन का संचार हो गया। स्वामी श्रद्धानन्द जी इस व्याख्यान के बारे में लिखते है कि "पत्थर दिलों को भी मोम बना आठ-आठ आँसू रुलाया।"[1]

स्त्री-शिक्षा तथा पं० लेखराम आर्य पथिक

पं० लेखराम जी स्त्री-शिक्षा आन्दोलन के एक प्रमुख कर्णधार थे। इस क्षेत्र में वह एक नई दिशा देने वाले युगद्रष्टा थे। आर्य साहित्यकारों ने भी उनके जीवन के इस पहलु पर समुचित प्रकाश नही डाला। पजाब की सरकार को तो विशेष रूप से आज स्वतन्त्र भारत में पजाब के इस नामी सपूत की स्त्री जाति के प्रति सेवाओं के कारण उनका स्मारक बनाना चाहिए।

स्त्री-शिक्षा पर पहली पुस्तक जो उत्तर भारत में प्रचारित व प्रकाशित हुई वह लेखराम जी की 'कुमारी भूषण' थी।[2] अब यह प्राप्य नहीं है। 'हुजत-उल-इस्लाम' के प्रथम संस्करण के अन्तिम पृष्ठ पर प० जी की पुस्तकों की सूची में इसका भी नाम है। 'प्रकाश' साप्ताहिक की एक फाईल (File) मे पं० जी की पुस्तकों में हमने 'नारी भूषण' पुस्तक का भी नाम पढ़ा है। प्रतीत होता है कुमारी भूपण को ही 'नारी भूपण' लिख दिया गया है। कुमारी भूपण में युक्ति व प्रमाण से प० जी ने स्त्री-शिक्षा का महत्त्व सिद्ध किया।

पं० लेखराम प्रथम पुरुप थे जिन्होंने स्त्रियों के यज्ञोपवीत के पक्ष मे एक प्राचीन ऋपि का प्रमाण प्रस्तुत किया।[3] स्त्रियों के यज्ञोपवीत सस्कार का उन्होने आन्दोलन चलाया। प० जी व्याख्यानो में कुमारिल भट्ट व राज कन्या के वार्तालाप की मार्मिक शब्दों में चर्चा किया करते थे।

एक धनी पुरुष को तर्जना की -एक बार एक धनी पुरुप ने धर्मवीर लेखराम की उपस्थिति मे एक स्त्री के प्रति कठोर शब्दो का प्रयोग किया। पं० जी यह सहन न कर सके। उसकी तर्जना करते हुए कहा तुम आर्य नहीं अनार्य हो। तुम्हें वेदों की पवित्र शिक्षा का ध्यान नहीं है। यदि तुम आर्य होते तो स्त्रियो के प्रति अशोभनीय शब्दो का प्रयोग

१. स्वामी श्रद्धानन्द जी लिखित पं० जी का जीवन चरित्र, पृ० ९९।

२-३. 'कुलियात आर्य मुसाफिर', प्रथम संस्करण मे ला० देवराज जी का लेख, पृ० १६५ पर देखें।

कभी न करते ।

पं० जी ऋषि के शिष्टाचार को अंगीकार करते हुए सदैव स्त्रियों को माई, माता, देवी आदि शब्दों से सम्बोधित किया करते थे। उनका जो भक्त मित्र जालन्धर आता उसे कन्या महाविद्यालय देखने की प्रबल प्रेरणा दिया करते थे। तब स्त्रियों के लिए ज्ञानज्योति का यही केन्द्र था।

उनका एतद्विषयक एक ऐतिहासिक लेख—पं० जी ने ३० सितम्बर, १८९३ ई० को स्त्री-शिक्षा की आवश्यकता पर एक महत्त्वपूर्ण लेख लिखा था। इसमें युक्ति और प्रमाणो से इसकी महत्ता पर प्रकाश डाला गया है। पं० जी के कई सुझाव बड़े उपयोगी और सरल थे। उनकी सूझ व दूरदर्शिता का भी इनसे पता चलता है।

(१) आपने तब स्त्री शिक्षा के प्रचार के लिए सुझाव दिया था कि कन्याओं के संस्कार देवियाँ करवायें तो उपयोगी होगा।

(२) उस युग में आपने यह सुझाव दिया कि स्त्रियो को शिल्प विद्या में प्रशिक्षण दिया जावे ताकि देश की आर्थिक उन्नति हो, वे अपने परिवारों को सुखी सम्पन्न बना सकें।

(३) सुयोग्य स्त्रियों की, महान् देवियों की जीवनियाँ प्रकाशित कराई जावे ताकि स्त्री-शिक्षा के लिए प्रेरणा मिले।

और भी कई सुझाव थे। प० जी ने इस दिशा में अविस्मरणीय कार्य किया है।

जालन्धर छावनी का वह अविस्मरणीय दृश्य

१८९२ ई० की घटना है। पं० लेखराम के प्रचार की व्यवस्था सेना के जाट जवानो की पलटन संख्या १४ ने की। जालन्धर छावनी में बहुत आकर्षक मञ्च बनाकर शामियाने लगाकर छावनी के तीन-चार सौ श्रोताओं के मध्य चार-पाँच सौ गणवेशधारी सैनिक अपने अंग्रेज अधिकारियों सहित आर्य पथिक के व्याख्यानों में उपस्थित होते थे। पं० जी का एक व्याख्यान जनता के लिए जालन्धर सदर में हुआ और दो व्याख्यान पलटन में हुए। दोनों दिन श्रद्धा सहित सेना के जवान सुनने आते रहे। इस पलटन के अधिकतर जवान आर्यसमाजी ही थे।

इस अवसर पर महात्मा मुन्शीराम जी के भी व्याख्यान वहाँ हुए।

अंग्रेज अधिकारी भी पं० जी के खोजपूर्ण ओजस्वी व्याख्यान सुनकर अति प्रसन्न हुए। हमारे विचार में सेना में वैदिक धर्म विषयक व्याख्यान देने वाले सर्वप्रथम आर्य विद्वान् हमारे चरित्र नायक लेखराम व उनके सखा मुन्शीराम ही थे। लेखराम जी ने अपने तपोबल व योग्यता से कितनी कीर्ति अर्जित कर ली, यह उसी का एक प्रमाण है कि सेना के आर्य जवान भी इस पूज्य विप्र की ज्ञान प्रसूता वाणी को सुनने के लिए लालायित थे। इन दोनों धर्म बन्धुओं की तड़पन भी तो देखो कि ये प्रचार करने कहाँ-कहाँ जा पहुँचते थे।

बस वैसी ही स्थिति है 'जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि।' महात्मा मुन्शीराम जी ने स्वयं इस अवसर को अविस्मरणीय लिखा है।[1]

सिद्धान्तनिष्ठ स्पष्टवादी लेखराम

आर्यसमाज पेशावर का वार्षिकोत्सव पं० लेखराम जी के बिना सफल नहीं माना जाता था। एक बार पं० जी वार्षिकोत्सव पर पधारे। धर्मशाला बाबू केशवमल में उत्सव का आयोजन किया गया। सुन्दर सिह जी सरकारी वकील बाबू केशवमल के घनिष्ठ मित्रों में से थे। आप आर्यसमाज के मञ्च से आर्य सिद्धान्तों के विरुद्ध कुछ कहना चाहते थे। पं० लेखराम जी को इस बात का पता चल गया। आप झट मञ्च पर आकर मेज के पास खड़े हो गये। पं० जी के चाचा श्री पं० गंडा राम जी पास ही बैठे थे।

चाचा जी ने पं० जी की लात पकड़ कर रोकना चाहा परन्तु प० जी सद्धर्म के प्रचार और मिथ्या मतों के खण्डन से कब चूकने वाले थे। किसी के लिए हृदय में दुर्भाव न थे। सबका कल्याण चाहने वाले लेखराम निडरता से सत्य कहने के लिए सर्वदा उद्यत रहते थे। पं० जी ने सिह गर्जना करते हुए कहा, "यदि कोई उत्सव में विघ्न डालेगा और आर्यसमाज के विरुद्ध कुछ कहेगा तो मैं उसका उत्तर दूँगा।"

यह सुनकर वकील महोदय को कुछ भी कहने का दुःसाहस न हो सका।[1]

---

१. आर्य पथिक लेखराम, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, द्वितीयावृत्ति, पृ० ७९-८०।
१. द्रष्टव्य जीवन चरित्र उर्दू पं० लेखराम, लेखक चाचा गंडाराम जी, पृ० ९०।

आचरण की प्रधानता

इसी उत्सव के पश्चात् आर्यसमाज के अधिकारियों का चुनाव रखा गया। एक विचार यह भी था कि बाबू केशवमल को प्रधान बनाया जाये। पं० जी भी समाज मे पहुँच गये। उनको बाबू केशव-मल जी के आचरण में बड़ी कमियों का पता लग गया। पं० जी नहीं चाहते थे कि आर्यसमाज के सभासद् एवं अधिकारी दूषित आचार-विचार वाले हों।

आपने कहा, "अच्छा, सुरापान करने वाले और मास-भक्षण करने वाले को आर्यसमाज का प्रधान बनाया जा रहा है !" मांस-मदिरा का दोष आर्यों में हो, यह पं० जी के लिए असह्य था। अत: आपने मर्यादा की रक्षा के लिए खरी बात कह दी। अब किसी को भी ऐसे व्यक्ति के नाम का सुझाव रखने का दु:साहस न हुआ।[1]

'गाना बन्द करा दिया'

एक बार कहूटा (पाकिस्तान) में कुछ डूमनियाँ गा रही थीं—

'अर्शों उतरियाँ चार किताबां'

अर्थात् आकाश से चार पुस्तकें उतरीं। पं० जी के कानों में ये शब्द पड़ गये। झट गाने से रोक दिया और कहा कि पवित्र वेद ज्ञान आकाश से नहीं उतरा।

आर्य सज्जनों को इस घटना से शिक्षा लेनी चाहिए। आर्यसमाज में उर्दू के अभ्यास से कई वक्ता कह जाते है 'सृष्टि के आद में वेद नाजिल (उतरे) हुए। वेद का ज्ञान ऋषियो की हृदय रूपी गुफा में व्यक्त हुआ था। चार ऋषियों ने यह सद्ज्ञान फिर आगे सबको दिया।[2]

मांस-भक्षण से बचो

पं० जी के चाचा पं० गडाराम जी रुग्ण हो गये। चार मास तक ज्वर आता रहा। डाक्टरों ने क्षय रोग बतलाया। अंग्रेज डाक्टर ने मांस-भक्षण का परामर्श दिया। चाचा जी ने सारा वृत्त प० जी को लिखा। प० जी ने अपने चाचा जी को लिखा, "क्या मांस के वदले में

१. द्रष्टव्य पं० लेखराम जी का उर्दू जीवन चरित्र, पृ० ९०-९१, लेखक चाचा गंडाराम जी।

२. द्रष्टव्य वही, पृ० ९८।

कोई वस्तु शरीर को शक्ति देने वाली नहीं ?" बस इतना ही लिखा और कोई सुझाव नही दिया। बुद्धिमान के लिए संकेत ही पर्याप्त है।

पं० सीताराम जी की चिकित्सा से प० गंडाराम स्वस्थ हो गये। मांस-भक्षण के पाप से बच गये। स्वस्थ होकर चाचा गंडाराम वर्षो तक जीवित रहे।[1]

इन पंक्तियों के लेखक को १९५७ ई० के आरम्भ में प्लूरसी का रोग हो गया। हमें भी अण्डा खाने का परामर्श दिया गया। पं० लेखराम जी के पवित्र जीवन का प्रभाव था कि हमने दृढ़तापूर्वक इस सुझाव को सुनना भी अपना अपमान समझा। प्रभु की असीम कृपा से घी, दूध, मक्खन व फलाहार से हो स्वस्थ ही गये।

पाण्डित्य का प्रभाव—रावलपिण्डी झेलम की ओर एक ग्राम में काजी बाग अली उनसे शास्त्रार्थ करने के लिए आए। पंडित जी से मिलकर उनकी बातें सुनीं तो ऐसे प्रभावित हुए कि बिना शास्त्रार्थ केही लौट गये।[2] पंडित जी की विद्या पाण्डित्य का यह प्रभाव आर्यसमाज के विद्वानों के लिए एक उदाहरण रहा है। पं० लेखराम जी से लेकर पं० शान्तिप्रकाश और प० निरञ्जनदेव जी तक आर्यसमाज के विद्वान् और वक्ता बडे स्वाध्यायशील रहे हैं। अब रैडीमेड लैक्चरों वाले अखबारी वक्ताओं को आर्यसमाज ने प्रोत्साहन देना बन्द न किया तो समाज की हानि में तनिक भी सन्देह नही।

यदि मुझे अंग्रेजी का ज्ञान होता—एक बार पंडित जी अपने चाचा पं० गंडाराम जी के साथ ईसाई भाइयों की एक सभा में गये। पादरी लोग वहाँ अच्छी संख्या मे उपस्थित थे। एक अंग्रेज पादरी ने अंग्रेजी में भाषण दिया। पंडित जी ने तब बड़े खेद से कहा कि यदि मुझे अंग्रेजी भाषा का ज्ञान होता तो मैं इस अग्रेज का अच्छी प्रकार मे उत्तर दे पाता।[3]

'मै, आप और पुस्तक सब ब्रह्म ही तो हैं'

यह उन दिनो की बात है जब पंडित जी अभी आर्योपदेशक नहीं बने थे। एक नवीन वेदान्ती से एक पुस्तक आपने ली और यह कहकर

---

१. द्रष्टव्य चाचा गंडाराम लिखित जीवन-चरित्र, पृ० ९८।

२. वही, पृ० ९९।

३. वही, पृ० ८७।

पुस्तक न लौटाई कि मैं, आप और पुस्तक सब ब्रह्मरूप ही तोहैं। किसको दूँ ? क्या दूँ और कौन दे ? मायावादी नवीन वेदान्ती को भी कुछ न सूझा कि अब इस तर्क का क्या उत्तर दे।[1]

जब उदासी बाबा उदास हो गये—एक बार पडित जी रेल में यात्रा कर रहे थे। महात्मा मुन्शीराम जी भी साथ थे। गाड़ी में एक उदासी सम्प्रदाय के बाबा ने ऋषि दयानन्द जी को साधु-निन्दक कहा। उदासी का कथन था कि स्वामी जी ने बाबा नानक को दम्भी लिखा है। पं० जी ने बडे प्रेम से कहा कि ऋषि ने बाबा नानक को दम्भी नही लिखा। गुरु नानक जी के आशय की प्रशंसा की है। गुरु जी के शब्दो में कहीं-कही वेद की निन्दा ऋषि को अखरी तो इस पर सस्कृत न जानते हुए संस्कृत मे पग रखने को उचित नहीं माना।

उदासी बाबा गर्म होते गये तो पंडित जी ने गुरु जी के अपने शब्द सुनाकर कहा, देखो इसमें अपने में कई कमियो से बचने की ईश से प्रार्थना की है। इन दोषों मे दम्भ शब्द भी है परन्तु हम यह समझते हैं कि कुछ साधारण दुर्बलताओं से बचने की प्रभु से वह प्रार्थना करते हैं। वह सच्चे ईश्वर-भक्त थे। आप गुरु जी को क्या मानते है, यह इस शब्द के आप द्वारा समझे जाने वाले भाव से पता चलता है। आप कुछ भी जानो, हम तो उन्हे प्रभुभक्त ही समझेगे।

उदासी बाबा उस प्रमाण से ऐसा फँसा कि पडित जी अब गर्म होकर उसको दबाते रहे और उसको कोई उत्तर न सूझ रहा था। अपनी भूल को स्वीकार करने की उसमें क्षमता न थी। यहाँ यह भी स्मरण रहे कि ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश मे छत्रपति शिवाजी के साथ गुरु गोविन्द सिंह की वीरता की भी प्रशंसा की है। उनके मन में कोई दुर्भाव न था। सब विचारक दार्शनिक महापुरुष खण्डन करते आए है। कठोर से कठोर शब्दों मे शंकराचार्य, कबीर, तुलसी, नानक, तुकाराम, ज्ञानेश्वर आदि सब महापुरुषों ने विरोधी विचारो का खण्डन किया है। ऋषि दयानन्द ने अवैदिक मतों का खण्डन करके कोई निराला काम नहीं किया।

प० लेखराम जी के उर्वरा मस्तिष्क से उस दिन युक्ति, तर्क, प्रमाण सुनकर उदासी बाबा की उदासी देखकर महात्मा मुंशीराम जी

---

१ चाचा गंडाराम लिखित जीवन चरित्र, पृ० ८७।

भी चकित रह गये ।[1]

कवि 'कुसुमाकर' जी ने ठीक ही लिखा है—

मानते लोहा सभी थे, ज्ञान के भण्डार थे तुम ।
हे शहीदों के शिरोमणि धर्म का अवतार थे तुम ॥

दलितों से प्यार—पंडितजी थाना सवाबी सीमा प्रान्त में सरकारी सेवा में थे। वहाँ शहजादा श-ईब जान खाँ नाम का एक थानेदार था। कोहाट का निवासी था। किसी राजवंश का वशज था। उसे अपने वंश का बड़ा अभिमान था। बड़ी डींग मारता रहता था। पंडित जी उसकी डींग सुन लेते और अपने आप मस्त रहते।

वहीं थाना सवाबी में दलित वर्ग से सम्बन्ध रखने वाला एक सिख बिशनसिंह जमादार के पद पर काम करता था। अस्पृश्यता के उस युग में पं० जी उससे बड़े प्रेम से मिला करते थे। नमस्ते करने वाला लेखराम बिशनसिंह से हाथ भी मिलाया करता था। यह केवल इसलिए ताकि पौराणिक मनोवृत्ति वालों के मन से अस्पृश्यता का भूत निकल जावे।[2]

'सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना'—१८८९ ई० की घटना है। पंडित जी कमालिया (पश्चिमी पंजाब) में प्रचारार्थ गये। भूमण्डल प्रचारक महता जैमिनि जी (स्वामी ज्ञानानन्द जी) ट्रेनिग कालेज लाहौर से परीक्षा देकर वहाँ अपने घर गये हुए थे। जैमिनि जी लाहौर में पडित जी के भक्त बन चुके थे। पडित जी ने जैमिनि जी से कहा, "यहाँ तो रात्रि को व्याख्यान होगा, अच्छा होगा यदि दिन को किसी समीपवर्ती ग्राम में प्रचार हो जावे।"

जैमिनि जी ने कहा, "ग्राम जखड़ियाँ यहाँ से चार मील की दूरी पर है। वहाँ कुछ हिन्दू हैं।"

पडित जी ने कहा, "भोजन करके हम वहाँ चलकर प्रचार करेंगे। आप मेरे साथ चलें।"

"वहाँ प्रचार की व्यवस्था कौन करेगा ?" जैमिनी जी बोले।

"खड़े होकर ग्राम के किसी मुहल्ला या बाजार में प्रचार करेंगे।" पंडित जी का उत्तर था। ग्राम में जाकर एक पीपल के वृक्ष के नीचे ईश्वर-भक्ति पर डेढ़ घण्टा व्याख्यान दिया। स्त्री-पुरुष एकत्रित

---

१. स्वामी श्रद्धानन्द जी लिखित पडित जी का जीवन-चरित्र, पृ० ८६-८७।
२. चाचा गडाराम लिखित जीवन-चरित्र, पृ० ८८।

हो गये । लौटते हुए मार्ग मे जेब से भुने हुए चने निकाल कर जैमिनि जी को दिये और स्वयं भी खाए। रात्रि को कमालिया मे आकर व्याख्यान दिया । वेद प्रचार की ऐसी लग्न थी।[1]

पेशावरी सन्ध्या हो चुकी—वे दो काल की सन्ध्या के नियम का दृढ़ता से पालन किया करते थे । स्वामी श्रद्धानन्द जी के साथ शिक्रम की सवारी मे लुधियाना से जगरॉव जा रहे थे तो मार्ग मे जल लेकर शौच गये । जब लौटे तो पता चला कि हाथ-पैर धोने, कुल्ला व आचमन आदि के लिए जल नहीं है। स्वामी श्रद्धानन्द जी नीचे थे और पडित जी शिक्रम की ऊपर की छत पर थे । स्वामी जी ने (तब मुशीराम थे) कुछ पूछने के लिए पं० जी को आवाज दी तो उत्तर न मिला । जब देखा तो आर्य पथिक सन्ध्या कर रहे है ।

जब दूसरी चौकी पर शिक्रम पहुँची तो एक अन्य भाई ने कहा, "क्या पेशावरी सन्ध्या हो चुकी ?"

गम्भीर होकर पडित जी ने उत्तर दिया, "तुम पोप हो जो बिना पानी मिले ब्रह्म यज्ञ नहीं कर सकते । भोले भाई ! स्नान कर्म है, हुआ वा न हुआ, परन्तु सन्ध्या धर्म है और उसका न करना पाप है।"

स्वामी श्रद्धानन्द जी इस पर लिखते है, "प्रतिज्ञा-पालन में दृढ़ता का ही परिणाम था कि धर्मवीर लेखराम धर्म में समझौता नहीं किया करते थे।"[2]

ईश्वर के नाम पर ही मुग्ध थे—ला० देवराज जी जालधर वालों के निवास-स्थान पर एक गमले पर ओ३म् लिखा हुआ था। किसी पडोसी बालक ने गमले पर लिखे 'ओ३म्' का निरादर कर दिया । पंडित जी ज्वरग्रस्त होते हुए भी उसके पीछे भागे । ला० देवराज जी का अपराध भी क्षमा न किया, क्योंकि उन्होंने गमला नीचे क्यों रखा था । पडित जी का भाव यह था कि यथोचित सम्मान प्रभु के ओ३म् नाम का होना चाहिए ।[3]

जड़ को सींचने से वृक्ष हरा होता

लौहपुरुष स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने आर्य पथिक की जीवनी में उनके जीवन की एक अत्यन्त प्रेरणाप्रद और प्रसिद्ध

---

१. 'आर्यवीर' उर्दू साप्ताहिक जालधर का १९५३ ई० का शहीद अंक, पृ० ९ ।

२ जीवन चरित्र पं० लेखराम, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, पृ० १५ ।

३. आर्य प्रतिनिधि सभा, पजाब का सचित्र इतिहास, पृ० १९९ ।

घटना दी है। लोकोपकार और वेद-प्रचार की चाह रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस घटना से और आर्य पथिक की तडप से कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

"७, ८, ९ अप्रैल को करनाल आर्यसमाज के उत्सव पर दो व्याख्यान दिये और शंका समाधान किया। पं० लेखराम के पाँव में एक फोड़ा हो गया था। जो चलने-फिरने से खराब हो गया था। पंडित जी ने कुछ सभासदों से पूछा—किसी आर्य डाक्टर के पास मुझे ले चलो तो फोड़ा दिखाऊँ। एक अधिकारी ने किसी मुसलमान का नाम लिया तो इन्होंने पूछा—क्या कोई आर्य डाक्टर नही है? इस पर किसी आर्य सज्जन ने कहा—इलाज में आर्य-अनार्यपना क्या घुसा है? यह सुनते ही आर्य पथिक की आँखें लाल हो गई और वह बोले—खाक आर्यसमाज है! एक डाक्टर को भी आर्य नही बना सके। इस पर महात्मा मुन्शीराम जी ने हँसकर कहा—जिस समाज का कोई डाक्टर सदस्य न हो तो क्या उसे आर्यसमाज नहीं कहा जावे? लेखराम ने कुछ गम्भीर होकर कहा—जिस आर्यसमाज ने डाक्टरो, स्कूल के अध्यापकों को और विद्यार्थियो को आर्य नही बनाया उसने क्या खाक काम किया। जड़ को सीचने से ही वृक्ष हरा होता।"[1]

"ईश्वर जानता है"—स्त्री शिक्षा आन्दोलन के एक जनक व कर्णधार स्व० लाला देवराज जी के गृह पर गमले की घटना अन्यत्र हमने दी है।

यहाँ हम इस घटना का एक आवश्यक अश पुनः इस प्रयोजन से दे रहे हैं कि पाठक हमारे चरित्रनायक के अन्तःस्थल को और गहराई से समझ सकें। जब कभी प० लेखराम जी विशेष रूप से भावविभोर होते थे तो उनका हृदय द्रवीभूत होकर अनायास ही ये पुकार उठता था 'ईश्वर जानता है'।

जब ला० देवराज जी के घर एक उद्दण्ड पोंगापथी बालक ने गमले पर लिखे 'ओ३म्' का अपमान किया तो महात्मा मुन्शीराम जी ने भीषण ज्वरग्रस्त पं० लेखराम जी का मन्यु शान्त करने के लिए कहा कि ला० देवराज जी का इसमें क्या दोष? तब पंडित जी ने सहज स्वभाव मे कहा, "क्यों नहीं गमले को ऊँचे स्थान पर रखा जहाँ

---

१. आर्यसमाज के महाधन, ले० स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पृ० ८८।

बालक का हाथ न पहुँच सकता। ईश्वर जानता है मैं यहाँ नहीं ठहरूँगा।"[1]

कैसी गहरी आस्तिक्य भावना है, कितना भोलापन है। अपनी युक्तियों पर मत-पन्थों को उछालने वाले दार्शनिक के हृदय की कोमल भावनाएँ देखकर किस पाषाण हृदय पर प्रभाव न पड़ेगा।

इसी प्रकार अजमेर में एक दिन श्री रामविलास सार्डाजी से पंडित जी बिगड गये। यह घटना भी अन्यत्र दी हुई है। यहाँ तो पंडित जी का भावपक्ष दिखाने के लिए उनके कुछ शब्द ही देते है—"ईश्वर जानता है सार्डाजी। आप आर्यसमाज के सच्चे प्रेमी है, मैं उस पत्थर-पूजक का उत्तर लिखूँगा।[2] आपने 'साँच को आँच नहीं' पुस्तक शिवनारायण प्रसाद कायस्थ की पुस्तक के उत्तर में लिखी।

श्री शिवनारायण कायस्थ की पुस्तक 'श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती की महिमा' के उत्तर में लिखी उपर्युक्त पुस्तक के आरम्भ में पंडित जी ने लिखा है, "हम आपत्तियों को देखकर प्रसन्न होते हैं। और ईश्वर जानता है कि यदि सत्य की खोज से आक्षेप किये जावे तो 'चश्मे मा रोशन दिले मा शाद' हम प्रतिक्षण सत्य के विरोधियो को उत्तर देने के लिए उद्यत…।"[3] इस उपर्युक्त फारसी उक्ति का अर्थ है आँखों सुख कलेजे ठण्डक। पाठक इस उद्धरण मे पंडित जी के उद्गारों का दर्शन करें। यहाँ भी 'ईश्वर जानता है' यह वाक्य उनके स्वभाव का दिग्दर्शन करा रहा है। वैदिक धर्म की रक्षा और सत्य के प्रकाश की धुन कैसी थी, यह भी पाठक उनके अपने शब्दों में ऊपर पढें।

श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का एक संस्मरण—"पायजामा और प्याज ये दो आपके विशेष प्रेम की वस्तुएँ थीं। पायजामा के भक्त होने के कारण आप धोती के सख्त विरोधी थे। एक घटना याद आती है। पिताजी घर पर धोती पहिनते थे। केवल अदालत या सफर मे जाते समय पायजामा या पतलून पहिना करते थे। एक दिन वे धोती-कुर्ता पहने बैठक के बाहर चबूतरे पर घूम रहे थे कि बाहर से पायजामा धारी पण्डित लेखराम जी आए और जहाँ तक मुझे स्मरण है, निम्नलिखित वाक्य कहा—

१-२. आर्य पथिक लेखराम, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, द्वितीयावृत्ति, पृ० ५६ व १७८।

३. 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृ० १९४।

"ईश्वर जानता है लाला मुन्शीराम जी ! इस धोती ने ही हमारे देश का नाश किया है। आप धोती न पहना करें।"

पिताजी हँस पड़े। जैसे महाराष्ट्र साम्राज्य के संस्थापक छत्रपति शिवाजी के चित्र को देखकर यह पहचानना कठिन है कि वह कोई मुगल बादशाह है या मराठा सरदार, उसी प्रकार पं० लेखराम जी को पूरे वेश में देखकर यह भेद करना दुष्कर था कि वे पेशावरी मुसलमान है या सरहदी हिन्दू ?"[१]

कुशल लेखक व इतिहासज्ञ इन्द्र जी के बालकाल का यह संस्मरण प० लेखराम जी के चरित्र-चित्रण के लिए इतिहास की एक निधि है।

जब पं० लेखराम के अश्रु टप-टप गिरे

पं० लेखराम की महर्षि दयानन्द के प्रति अखण्ड श्रद्धा थी। महर्षि की सत्यनिष्ठा, ईश्वर-विश्वास, मनुष्य जातिके प्रति सेवा, राष्ट्रोत्थान के लिए सतत साधना के कारण वह ऋषि के अनन्य भक्त बन गये। वह ऋषि के प्रति कुछ भी अशोभनीय व मिथ्या बात सुनने को तैयार न थे। श्री लाला लाजपत राय जी ने एक घटना का उल्लेख किया है—

"I remember when once in Ajmer Rai Mul Raj said that Swami Dayanand had changed his views on vegetarianism under pressure from the Jains, tears flowed from Pandit Lekhram's eyes involuntarily. Whenever anybody attacked the personality of Swamiji, he could not contain himself."[२]

अर्थात् मुझे स्मरण है कि एक बार अजमेर में राय मूलराज ने कहा, स्वामी दयानन्द ने जैनियो के दबावमें शाकाहार सम्बन्धी अपने विचार बदले। यह सुनते ही प० लेखराम के नयनों से टप-टप अश्रु गिरने लगे। जब कभी किसी ने स्वामी जी के व्यक्तित्व पर प्रहार किया, वह उसे सहन न कर सके।

जिस हृदय को लोग वज्र के समान कठोर समझते थे वह सुमन के समान कोमल भी था। उपर्युक्त घटना उसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। बिन सोचे पराई आग में कूद जाने वाले वीर लेखराम के हृदय की गहरी गहराइयों का परिचय शब्दों मे नहीं दिया जा

१. मेरे पिता, लेखक प० इन्द्र जी।

२. Lajpat Rai Autobiographical Writings, page 74.

सकता। संवेदनशील हृदय ही उसकी महत्ता को अनुभव करके समझ सकता है।

ग्राम में किसी के घर गाय नहीं ?—१८८९ ई० में जब पण्डित जी कमालिया गये तो कमालिया (पश्चिमी पंजाब) तब कोई बड़ा नगर न था। प्रातः मन्त्री आर्यसमाज उनके पास दूध लेकर आए। पण्डित जी ने पूछा, "दूध कहाँ से लाए ?" मन्त्री जी ने कहा, "बाजार से।"

पण्डित जी ने झुँझलाकर कहा, "आप लोग ग्राम के रहने वाले है। क्या किसी आर्यसमाजी के घर गाय भी नहीं ? व्यर्थ में दूध के लिए समाज के पैसे व्यय कर दिये। आप लोगों को उपदेशकों के प्रति श्रद्धा होनी चाहिए।"[1]

गो भक्त दयानन्द के सुशिष्य प्राणवीर लेखराम के हिये में धेनु, धन के लिए कितना प्यार था यह इस घटना से स्पष्ट है। विप्रजन के प्रति आर्यसमाजियों मे श्रद्धा उत्पन्न हो जावे तो ससार का बेड़ा पार हो जावे। दुर्भाग्य से आर्यसमाज मे ऐसे सद्भाव रखने वाले बहुत थोड़े है। अधिकतर तो ऐसे ही लोग है जो गुणियों के, पूज्यों के भक्त नही अपितु पाठशाला, स्कूल, कालेज व भाड़ालय (किराये पर दी जाने वाली समाज की सम्पत्ति) के भक्त है।

विदेश मेरे साथ चलना—महता जैमिनि जी से आपने वचन लिया कि वह बी० ए० करके ईरान, इराक व अरब आदि देशो में वेद-प्रचार के लिए साथ चलेगे। मेहता जी भी फारसी के बड़े विद्वान् थे इसलिए ईरान मे उनके जाने से विशेष लाभ था। महता जी अरबी भी जानते थे इसलिए सब अरब देशों में ऐसे सहयोगी के जाने से पण्डित जी को लाभ था। १८९६ ई० में महता जी ने सत्यार्थप्रकाश का फारसी अनुवाद करने की घोषणा की थी। पण्डित जी ने भूमिका लिखने का वचन दिया था।

प्रत्युत्पन्नमति एवं मनोविनोद

तार्किक शिरोमणि लेखराम की प्रत्युत्पन्नमति की अनेक घटनाएँ मिलती हैं। महात्मा मुन्शीराम जी ने लिखा है कि उनकी प्रत्युत्पन्न-मति कई बार उनको विकट विचित्र परिस्थिति में बचा लेती थी।

१ 'आर्य वीर' उर्दू साप्ताहिक के शहीद अंक, पृ० ९-१० तक प्रकाशित स्वामी ज्ञानानन्द जी के सस्मरण।

आर्य पथिक के इस गुण को दर्शाने वाली एक घटना उनके अपने शब्दों मे हम यहाँ देते है। पण्डित जी के तर्क के साथ मनोविनोद मिश्रित होता था इस कारण उनकी युक्तियाँ कई बार बड़ा रंग जमा देती थी। "डेरा इसमाईल खाँ नगर में एक शेख यूसफ की कबर है, जिससे सैंकड़ो हिन्दू पुरुष व स्त्रियाँ मुरादें (कुछ माँगना) माँगने जाते हैं। वहाँ के मजावर (कबर पर रहनेवाले मौलवी) पहले तो मुख पर थूकते फिर जूते लगाते हैं। एक बार डेरा में कुछ हिन्दू मुझसे पूछने लगे कि वे थूकते तो हैं परन्तु जूते क्यों लगाते हैं। मैंने कहा, थूकते इस कारण हैं कि तुम पारब्रह्म परमात्मा को तजकर कबर पर सिर रगड़ने आए और क्योंकि थूक शीघ्र सूख जाती है इसलिए जूते भी लगाते हैं ताकि तुम शीघ्र भूल न जाओ।"

सावधान ! ऐ मूर्ख जाति सावधान[1]

मन क्या है ? श्री पं० इन्द्र जी ने अपने बालकाल का एक अत्यन्त रोचक सम्मरण लिखा है। "उस अतिथि-गृह मे अनेक अतिथि आते रहते थे, उन सबकी सूरतें याद नही, पर एक सूरत मानो पत्थर की लकीर होकर स्मृति पर बैठी हुई है। वह थी आर्य पथिक लेखराम जी की मूर्ति।

जो घटना याद है, उसमे आर्य पथिक का वह पेटेण्ट रूप नही था। उस समय उन्होंने केवल एक कपड़ा पहना हुआ था और वह था पायजामा। बरसात के दिन थे। शाम का समय था। शरीर से पानी बह रहा था। इस कारण पायजामे के भक्त पं० लेखराम जी केवल पायजामा पहने कोठी से निकलकर आर्यसमाज के कुएँ की ओर जा रहे थे।

कुएँ के पास पेड़ था—शायद जामुन का, जिसके नीचे चारपाई डालकर पण्डित जी लिखा करते थे। आप वहाँ जाकर खड़े हुए। उस स्थान पर वैदिक पाठशाला के दो-तीन विद्यार्थी थे। उनके नाम याद नहीं। मैं भी पास ही खड़ा था। एक विद्यार्थी ने बातचीत के प्रसंग में पूछा—

१. कुलियात आर्य मुसाफिर मूल उर्दू संस्करण महात्मा मुन्शीराम द्वारा प्रकाशित, पृ० १८२।

'पण्डित जी, मन का क्या लक्षण है ?' मैं उसका कुछ अभिप्राय न समझा क्योंकि इतना छोटा बच्चा मन और उसके लक्षण को क्या जाने ? मुझे भी यह बात याद न रहती यदि पण्डित जी का जवाब इतना विलक्षण न होता। उस जवाब के कारण ही यह घटना मेरी स्मृति पर अंकित हो गई है। आपने उत्तर दिया—'उल्लू का पट्ठा'।

जिज्ञासु पण्डित जी का मुँह देखने लगा। शायद उसने समझा हो कि पण्डित जी ने उसे ही गाली दे डाली। पण्डित जी भाँप गए और बोले, 'भई ! मैं कहता हूँ कि मन उल्लू का पट्ठा है क्योंकि अगर इसे काबू न रखो तो यह अनर्थ कर देता है।'

यह व्याख्या सुनकर विद्यार्थी हँस पड़े। इस उत्तर में पं० लेखराम जी के चरित्र की कई विशेषताएँ भरी हुई हैं। आप हाजिर जवाब थे, तुर्तफुर्त जवाब देते थे। आपकी भाषा में एक सीधापन था, जो अक्खड़पन की सीमा तक पहुँचता था। आप सूक्ष्म से सूक्ष्म बात को जनता के समझने योग्य स्पष्ट भाषा मे प्रकट करने की शक्ति रखते थे।"[1]

स्मरण रहे कि यह अतिथि-गृह महात्मा मुन्शीरामजी की जालंधर वाली ऐतिहासिक कोठी थी। इसी कोठी में पं० इन्द्रजी का बालकाल बीता था। यहीं 'सद्धर्म प्रचारक' का जन्म हुआ था। यह आर्यसमाज मन्दिर श्रद्धानन्द बाजार के सामने स्थित थी। अब इसका **वह रूप नहीं रहा।**

पण्डितजी का पाण्डित्य व सूझ एक मौलवी की दृष्टि में

एक माननीय मुसलमान विद्वान् मौलवी रफीक दिलावरी जी ने एक घटना लिखी है। पण्डित जी के विस्तृत व गम्भीर अध्ययन का लोहा प्रत्येक निष्पक्ष विद्वान् को मानना पड़ा है। यह घटना इसी का एक प्रमाण है। वह लिखते है कि पण्डित जी कादियाँ में मिर्जा साहेब के इल्हामी कोठे पर बैठे हुए 'आसमानी मोजजा' (Heavenly Miracle) देखने के लिए कादियाँ में एक वर्ष के निवास की शर्तों का निर्णय कर रहे थे। बातचीत करते हुए शब्द **'खारिक आदात'** पर वाद-विवाद हो गया। पण्डित जी ने कहा कि इसका अर्थ आदत

---

१. मेरे पिता, लेखक, पं० इन्द्र जी 'जन ज्ञान' मासिक का दिसम्बर १९७७ ई० का विशेषाङ्क पृ० १५।

अथवा स्वभाव के तोड़ने को कहते है। चाकू-छुरी का स्वभाव काटना, वृक्ष का गतिहीन रहना, अग्नि का जलाना स्वभाव है। यदि आप इनका यह स्वभाव बदल दें तो मै आपके मत को स्वीकार कर लूँगा। यदि आप ऐसा करने में असमर्थ हैं तो आप आर्य हो जावे और यह झूठे दावे घोषणाएँ (Claims) करने से बचें।

मिर्जा जी ने कहा—**"कुरान की परिभाषा में 'मोजजे' के यह अर्थ नहीं हैं"**। पण्डित जी ने कहा कि जब यह शब्द ही कुरान मे नहीं तो कुरान से इसके लिए कुरानी पारिभाषिक अर्थ का पक्ष कहाँ तक उचित हो सकता है ?[1]

मौलाना रफीक दिलावरी लिखते हैं—**"सचमुच कुरान में मोजजा शब्द नहीं।"**[2]

मिर्जा जी अड़ गये कि यह शब्द कुरान में है। पण्डित जी ने आगे कुरान रख दिया और कहा कि भगवान् के लिए दिखाइये। पृष्ठ उल्ट-पुल्ट करते रहे फिर मिर्जा जी को हठ छोड़ना पड़ा और पण्डित जी की बात को सत्य मानने पर विवश हुए। उस समय कादियाँ के कई हिन्दू और मुसलमान मिर्जा जी के साथ पण्डित जी की वार्ता सुन रहे थे।

पण्डित जी का हठ व नम्रता

आर्यसमाज वज़ीराबाद का उत्सव था। मुकेरियाँ जिला होशियारपुर से समाज का पत्र लेकर एक व्यक्ति वहाँ मुंशीराम जी के पास पहुँचा। आर्य पथिक भी वहीं थे। वहाँ एक विचित्र विवाद था। सनातन धर्म सभा के एक पण्डित ने महाभारत का एक श्लोक आर्यों के सामने रखा और कहा कि यह वेद-मंत्र है। आर्यसमाज वाले कहते थे वेद में से दिखाओ। सनातन धर्म सभा वाले कहते थे कि यदि दिखा दिया तो आर्यसमाज का प्रधान ५००-०० रुपया दण्ड दे और यदि सनातनी न दिखा सके तो सनातन धर्म सभा का प्रधान आर्यसमाज के प्रधान को पचास रुपये देगा। लिखित रूप में यह सब कुछ निश्चित हो गया।

मुंशीराम जी ने कहा कि यह कोई शास्त्रार्थ थोड़ा है। जुआ है। हम नहीं जाते। आर्य पथिक भी तो विचित्र पुरुष था। कहा, जुआ

१, २. 'रईसे कादियां', पृ० ६८-६९।

को तो एक ओर कर दें परन्तु अपने पक्ष का तो हमें समर्थन करना है। मुंशीराम के हृदय को लेखराम की कोमल भावना ने छू लिया। दोनों महापुरुष वहाँ से मुकेरियाँ पहुँचे। पहले दिन मुशीराम जी बोले। दूसरे दिन पं० लेखराम का व्याख्यान हुआ। तीसरे दिन दो सहस्र की उपस्थित थी। सनातनी पण्डित वेद में से महाभारत का श्लोक दिखाने में सर्वथा विफल रहे।

महात्मा मुशीराम का उच्चारण शुद्ध था। अत: पौराणिकों से शास्त्रार्थ के लिए मुकेरियाँ वाले उन्हें अधिक चाहते थे। उनको डर था कि पण्डित लेखराम जी हठ से शास्त्रार्थ बिगाड़ न दें। जगरॉव का उत्सव था। मुंशीरामजी ने कहा हममे से एक को जाने दें। मुकेरियॉ वालों को टॉगे की व्यवस्था के लिए कहा गया तो उन्होंने कहा, टाँगा नहीं मिलता। तीन बार कहने पर यही उत्तर मिला कि टॉगा नहीं मिलता। तव निश्चय हुआ कि लेखराम जाएँगे। इस पर पॉच मिनट में टाँगा आ गया। पण्डित जी ने कहा, "मै तुम्हारी शरारत समझ गया, मैं नही जाता।"

टॉगा लौटा दिया गया। जब शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ तो प० लेखराम को मुशीरामजी ने कुर्सी पर बैठने को कहा। लेखराम जी ने कहा, "नही, शास्त्रार्थ आप करेंगे।" ऐसा लगता था कि शास्त्रार्थ का सारा दायित्व लेखरामजी पर ही है। योग्यतम व्यक्ति को शास्त्रार्थ करने के लिए वह स्वयं आसन भेंट कर रहे थे।

मुशीराम जी ने विनयपूर्वक कहा, "लेखराम के होते हुए मै यहॉ कैसे उपस्थित हो सकता हूँ ?"

मुस्कराकर विनीत ब्राह्मण लेखराम ने कहा, "यह बात अब जाने दीजिए, यह आप ही का काम है। यदि मै बैठ गया तो शास्त्रार्थ की रिपोर्ट कौन लिखेगा।" यह कहकर पकड़कर मुंशीरामजी को कुर्सी पर बिठा दिया।

शास्त्रार्थ समर के अजयी-विजयी योद्धा नरनामी लेखराम ने जिस प्यार, नम्रता और धर्मनिष्ठा का परिचय इस घटना मे दिया है उसकी कौन आर्यपुरुष प्रशंसा न करेगा। मुंशीरामजी ने इस पर टिप्पणी दी है—"यह आचरण का परस्पर विरोध सम्भवत: सबकी समझ मे न आएगा, परन्तु बुद्धिमान् पाठक इसके रहस्य को समझ

जाएँगे ।"[1]

इस घटना का एक दूसरा पहलू भी तो है। उसके नायक मुंशीराम जी स्वयं है। मुंशीराम जी आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी थे और लेखराम जी सभा के उपदेशक थे। लेखराम जी को जागरॉव भेजने का निश्चय हुआ परन्तु वह नहीं जाते। वहीं मुकेरियाँ में डटे रहना चाहते हैं। मुंशीराम जी उनके सामने झुकते है। उनसे दबते है। उनके सकेत पर चलते हैं। कारण मुशीराम जानते हैं कि लेखराम का रोम-रोम ऋषि के महान् लक्ष्य की पूर्ति का राग गा रहा है। लेखराम के प्रति मुशीराम का पूज्य भाव मुशीराम के प्रति हमारे हृदय मे वही सद्भाव, सम्मान व श्रद्धा उत्पन्न करता है, जो मुशीराम के लिए लेखराम के मन में था। समय आने पर लेखराम भी तो 'लाला जी' 'लाला जी' कहकर मुशीराम पर जान देने को उद्यत रहा करते थे। तभी तो वारम्बार मुशीराम जी ने सगर्व यह लिखा है कि आर्य पथिक को उनसे विशेष स्नेह था।

निज़ाम राज्य में आर्यसमाज पर प्रहार

१८९४ ई० की बात है। निजाम हैदराबाद ने आर्यसमाज के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए आर्यों पर एक घिनौना प्रहार किया। निजाम की पुलिस ने आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् ब्र० नित्यानन्दजी व प० बालकृष्ण जी शास्त्री को राज्य से निष्कासित कर दिया। इनका दोष केवल यह था कि इन्होंने आर्यसमाज के एक विरोधी पण्डित गोकुलप्रसाद पौराणिक के प्रत्युत्तर मे व्याख्यान देने का साहस किया था।[2]

'मित्रविलास' मे यह वृत्त पढ़कर पण्डित जी ने नोट कर लिया कि इसके बारे में आन्दोलन करके आर्यसमाज की रक्षा के लिए लेख लिखेंगे। इस घटना से पता चलता है कि निजाम राज्य में आर्यसमाज को आरम्भ से ही एक विद्रोही संस्था समझा जाता था। आर्यसमाज की शक्ति से निजामी शासन आरम्भ से ही शङ्कित कम्पित था। आर्यसमाज के प्रभाव को रोकने के लिए शासन पौराणिकों की पीठ

---

१. स्वामी श्रद्धानन्द लिखित जीवन-चरित्र' पृ० १३७-१३९।

२ 'सार्वदेशिक' का लेखराम विशेषाङ्क, ले० स्वामी श्रद्धानन्द, पृ० १००।

ठोकता रहा है। शासन हिन्दू समाज को दीनता-हीनता की दलदल से निकलता हुआ देखना नही चाहता था।

आर्यसमाज ने पूज्य महात्मा नारायण स्वामीजी और लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के कुशल नेतृत्व मे १९३८-३९ ई० में प्रचण्ड और सफल सत्याग्रह चलाया। लेखराम की दिव्य दृष्टि ने १८९४ ई० में निज़ाम की दुर्नीति को भाँप लिया था। पण्डित जी के उर्वरा मस्तिष्क ने ही सर्वप्रथम वहाँ आन्दोलन की कल्पना की थी।

यह किसको घर ले आए ?—अमृतसर के विख्यात आर्य नेता श्रीमान् पं० रुद्रदत्त जी के पिता श्री पं० लक्ष्मणदत्त जी महर्षि के जीवन काल मे ही वैदिक धर्मी बन गये। तब अपने-बेगाने सब आर्यों का घोर विरोध किया करते थे। पं० लक्ष्मणदत्त जी श्री प० लेखराम के प्रति भी बड़ी श्रद्धा रखते थे। जब कभी पण्डित जी अमृतसर आते थे तो पं० लक्ष्मणदत्त उन्हें अपने गृह पर अवश्य लेकर जाते। पण्डित जी की वेशभूषा पेशावरी थी। पगडी का पल्ला आगे छाती पर लटकाए रखते थे। इस वेशभूषा को पंजाब के हिन्दू कोई अच्छा न समझते थे।

पंजाब मे बाजारों में घूमने वाले शरारती लडके भी पगड़ी का पल्ला आगे को लटकाए रखते थे। पण्डितजी को ऐसी पगड़ी पहने देखकर पं० लक्ष्मणदत्त जी की वृद्धा माता पुराने सस्कारो के वशीभूत कहती कि यह तुम किस दुष्ट को घर पर ले आते हो। जब पण्डित लक्ष्मणदत्त जी ने यह बताया कि यह तो बड़े विद्वान् ब्राह्मण, तपस्वी आर्य नेता और आर्य जाति के बलिदानी ज्ञानी रक्षक हैं तब बूढी माता का भय और संशय दूर हुआ। फिर तो परिवार के लोगों में इस अतिथि के आगमन पर जो हर्षोल्लास अनुभव किया जाता था उसी का प्रमाण वह पलंग है जो आज भी परिवार में इस मधुर स्मृति के रूप में सुरक्षित रखा हुआ है। इसी पलंग पर आर्य अतिथि लेखराम आकर बैठा करते थे।[1]

बला घर आ गई

श्री पं० इन्द्र जी ने अपने बालकाल का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सस्मरण लिखा है। दिलजले बलिदानी लेखराम को समझने के लिए

१. अपने २०-७-१९७६ ई० के पत्र में प० रुद्रदत्तजी ने हमे यह घटना लिखकर भेजी।

यह संस्मरण पढ़ना हमारी दृष्टि में परमावश्यक है।

"पं० लेखरामजी का पिताजी से सगे भाई का-सा प्रेम था। हमारे घर पर उनका आना-जाना और रहना नि.संकोच था। हम बच्चे उन्हें 'पण्डित जी' नाम से पुकारा करते थे। घर में प्राय. उनकी चर्चा हुआ करती थी। पिताजी उनके निडरपन के कारनामे बड़ी प्रशंसा के साथ सुनाया करते थे। ताई जी उनसे काफी असन्तुष्ट रहती थीं। वह गृह स्वामिनी ठहरी, हमेशा का मेहमान उन्हें कैसे रुच सकता था ? एक और भी बात थी। वह स्त्री सुलभ नैसर्गिक बुद्धि से यह अनुभव किया करती थीं कि इस अनथक उपदेशक के साथ जरूर कोई-न-कोई मुसीबत बँधी हुई है, जो हमारे घर पर भी आ सकती है। जब बाहर से खबर आती थी कि पं० लेखरामजी आ रहे हैं तब ताई जी प्राय: कहा करती थी—आ गई आफत।"[1]

ताई जी की इस मनोभावना का कारण यह था कि उस युग में आर्यसमाज को सब ओर से विरोध का सामना करना पड़ता था। आर्यसमाज पर किये गये प्रत्येक प्रहार का उत्तर देने के लिए पण्डित लेखराम व मुन्शीराम सबसे आगे होते थे। श्री सत्यव्रतजी सिद्धान्तालंकार पूर्व उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी के शब्दों में स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज तो समय की प्रत्येक चुनौती का उत्तर थे। प० लेखरामजी का मुन्शीरामजी के घर पर आगमन इसी कारण अच्छा नहीं समझा जाता था। परिवार वाले समझते थे कि इनकी प्रेरणा व संगति से ही मुन्शीराम नित्य नूतन विपदा से आलिंगन करने को सदा उद्यत रहता है। मुन्शीराम व लेखराम के स्वभाव में यह समानता उनकी मैत्री को पक्का करने वाली थी। एक कल्याण मार्ग का पथिक था तो दूसरा बलिदान मार्ग का पथिक। किसी भी समाज, संगठन व राष्ट्र का कल्याण बलिदान के भाव से ही सम्भव है। इस प्रकार कल्याण व बलिदान दोनों पर्यायवाची हैं। एक ही भाव के दो शब्द हैं। मुन्शीराम व लेखराम की मैत्री एक दशाब्दी से भी कम रही। इतने स्वल्पकाल में दोनों ही एक-दूसरे से घुलमिल गये कि एक के जीवन की चर्चा दूसरे के बिना अधूरी ही रहती है। श्रद्धानन्द में लेखराम ओतप्रोत है और लेखराम के व्यक्तित्व में मुन्शीराम को हम रमा हुआ पाते हैं।

---

१. अपने २०-७-१९७६ ई० के पत्र में पं० रुद्रदत्तजी ने हमें यह घटना लिखकर भेजी।

एक कविता के कुछ पद हमारे इस भाव और उपर्युक्त घटना को समझने में सहायक हो सकते है। स्वामी श्रद्धानन्दजी के प्रति इसमें लिखा है—

रहा तड़पता सदा तरसता बलि होने को।
रक्त बहाया उसने जग का मल धोने को॥
लेखराम सी रही हिये में आग धधकती।
उसकी गर्जन सुनकर के फिर जागी जगती॥
उसके तेजोमय जीवन की छवि निराली।
नित्य नई उस देश धर्म हित विपदा पाली॥

—राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

प्रतिपक्षी सामने न आ सका

मिर्जा साहेब ने स्वयं स्वीकार किया है कि पण्डित जी कादियाँ में एक मास रहकर प्रतिदिन भारी भीड में व्याख्यान दिया करते थे। मिर्जा जी ने तो यहाँ तक लिखा है कि वह प्रतिदिन मेरे निवास स्थान पर आकर मुझसे चमत्कार दिखाने का आग्रह किया करता था।

मिर्जा जी को एक वार भी पण्डित जी के सामने आने का सौभाग्य प्राप्त न हो सका। सत्य-असत्य के निर्णय के लिए हठ व दुराग्रह छोड़कर विद्वानों को विचार करके मनुष्य जाति का हित करना चाहिए। मौलाना रफीक जी ने भी विस्तार से इस पर लिखा है कि मिर्जा जी चमत्कार दिखाने में बेबस थे। "वह पं० लेखराम के सामने निरन्तर अनादर (जिल्लत पर जिल्लत) सहते रहे।"[1] वह लिखते हैं कि उन दिनों कादियाँ पर पराजय व पतन एवं अपमान की आँधियाँ छाई रहीं।[2] यह था लेखराम का विद्याबल तथा तपोबल।

'प्राणों में अंगार धधकते तुम लाए थे'

कोट छुट्टा [डेरा गाजी खाँ] पश्चिमी पंजाब के कुछ हिन्दू युवक मुसलमान बन रहे थे। पता चला कि वीर लेखराम उधर आ रहे है। उनके विचार भी सुन लें फिर मत परिवर्तन करेंगे, इस विचार से वे पण्डित जी का व्याख्यान सुनने चले गये। धर्मवीर लेखराम के तर्क, विद्वत्ता व अदम्य उत्साह ने ऐसा रंग चढ़ाया जिसे सारे संसार की सारी शक्तियाँ मिलकर भी न उतार सकें। वे युवक घर लौटे परन्तु

१-२. 'रईसे कादियाँ', पृ० १०० ।

बदलकर। अब वे आर्य थे, पौराणिक नहीं थे। न ही इस्लाम की दीक्षा लेने का अब चाव था। कोट छुट्टा ग्राम के जो तीन युवक सर्वप्रथम आर्य बने उनके नाम इस प्रकार है—

श्री महाशय चोखानन्द, श्री छबीलदास जी तथा श्री महाशय खूबचन्द जी।

जीवन भर ये तीनों युवक अपने आपको पं० लेखराम जी का ऋणी मानते थे। उनका हृदय पण्डितजी के प्रति कृतज्ञता से कहता था—

'प्राणों में अंगार धधकते तुम लाए थे।'

इन युवकों में पण्डित जी ने किस प्रकार से प्राण फूँके इसका प्रमाण निम्नलिखित घटना है—

ये तीन युवक आर्य बने तो शेष हिन्दुओं ने इनका सामाजिक बहिष्कार कर दिया। महाशय छबीलदास जी की माताजी का निधन हो गया। इस शोक में भी पाषाण पूजा करने वालों का पाषाण हृदय न पिघला। बहिष्कार और भी कड़ा कर दिया गया।

शव के दाहकर्म के लिए अर्थी उठाने वाले भी ये तीन आर्य ही थे। चौथा कोई व्यक्ति आगे न आता था। ओ३म् नाम सत्य है, गायत्री का जप करते हुए ये आर्य अर्थी को लिए जा रहे थे। ग्रामीण लोग उपहास उड़ा रहे थे।

महाशय खूबचन्द जी की माता बिरादरी के बहिष्कार के प्रकोप से भयभीत हो गई और अपने पुत्र को अर्थी से हटा कर ले गई। खूबचन्द को घर में ले जाकर कमरे में बन्द करके कुण्डा लगा दिया। अब केवल दो वीरों ने ही शव को उठाया हुआ था। ये दोनो सगे भाई थे। तनिक भी न घबराए। धर्मपथ से विचलित न हुए। घृत सामग्री सब साथ लिये जा रहे थे। अपनी धुन में चले जा रहे थे।

खूबचन्द जी भी खूब निकले। घर का द्वार तोडकर लेखराम का अड़ियल योद्धा भागकर पुनः अर्थी के साथ आ मिला। वैदिक विधि से कोट छुट्टा में यह प्रथम आर्य संस्कार था। श्रुतिगान से वायुमण्डल गूँज उठा। आर्यों की परीक्षा हुई। पौराणिकों ने एक कुचाल चली। यह प्रसिद्ध कर दिया कि आर्यो ने माता का शव भून कर खा लिया है इसी का नाम वैदिक संस्कार है।

समय आया कि सारे ग्राम पर वैदिक धर्म की छाप लग गई। इसी

ग्राम ने एक ऐसे रत्न को जन्म दिया जिसने आगे चलकर पं० लेखराम के कार्य को आगे बढाने के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। वह है आर्यसमाज के यशस्वी शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० शान्ति प्रकाश जी। इसी ग्राम ने स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी के प्रिय भक्त महाशय मूलशंकर जी को जन्म दिया।

इन पक्तियों के लेखक ने श्री महाशय खूबचन्द जी के हिसार में कई बार दर्शन किये। वह वैदिक धर्म के रंग में रँगे हुए सरल हृदय धर्मात्मा थे। वह आर्यसमाज के कीर्ति भवन की नींव का एक पत्थर थे।

पं० गुरुदत्त जी से स्नेह—मुनिवर गुरुदत्त जी ने अपनी विद्या, योग्यता, शिष्टता, सौम्यता, लग्न व महान त्याग से आर्य-धर्म के प्रत्येक दीवाने का हृदय अपने वश में कर रखा था। पं० लेखराम जी भी उन लोगों में से एक थे जिनको प० गुरुदत्त जी से असीम स्नेह था।

एक बार पं० गुरुदत्त जी आर्यसमाज पेशावर के वार्षिकोत्सव पर गये। व्याख्यान देकर उन्हे तुरन्त लौटना था। पण्डित जी ने अपनी चाची जी श्रीमती गणेश देवी जी को उत्सव मे से उठाकर घर भेजा और कहा कि पण्डित जी के लिए भोजन तैयार कर दें। व्याख्यान के पश्चात् पण्डित जी इकदम उनको घर ले गये, भोजन करवा के गाड़ी में बिठाकर लाहौर भेजा।[1]

१५ नवम्बर, १८९५ ई० को आपने प० गंडाराम जी को मुलतान से पत्र लिखा, "दुःख है कि आज गुरुदत्त जी का छोटा पुत्र चेचक के रोग से चल बसा है।"[2]

प्रसगवश यहाँ प० गुरुदत्त जी के प्रति आर्यो की श्रद्धा की एक और घटना दे दें। आर्यसमाज अमृतसर का दूसरा वार्षिकोत्सव था। उ० प्र० से ऋषि भक्त अथक मिशनरी चौधरी नवलसिंह जी भी पधारे थे। ला० लाजपराय जी ने स्वयं पं० गुरुदत्त जी को उठाकर मेज पर खड़ा किया। पण्डित जी ने तब व्याख्यान देना आरम्भ किया। चाचा गडाराम जी भी उस उत्सव में सम्मिलित हुए थे।[3]

शुद्धि की धुन—पण्डित जी अभी पुलिस विभाग में ही थे। आपको पता चला कि जम्मू के श्री ठाकुरदास मुसलमान हो रहे हैं। आपने

१-२. पं० गंडाराम लिखित जीवन-चरित्र, पृष्ठ १००।

३. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचित्र इतिहास, ले० पं० चमूपति, पृष्ठ १९४-१९५।

स्वयं जम्मू जाकर उस व्यक्ति को विधर्मी होने से बचाया।

१८९१ ई० में हैदराबाद सिंध के एक श्रीमन्त सूर्यमल की सन्तान ने इस्लाम स्वीकार करने का मन बना लिया। पं० पूर्णानन्द जी को साथ लेकर धर्मवीर लेखराम हैदराबाद पहुँचे। उस समृद्ध परिवार के लड़के पण्डित जी से मिलने के अनिच्छुक थे। अब क्या किया जावे? आग्नेय पुरुष लेखराम भी कहाँ टलने वाला था। "इन्होंने अपने आग्रह के बल से उन्हें जा घेरा। उनके सम्मुख मुसलमान मौलवियों को हराकर उनकी निष्ठा आर्य धर्म में पैदा कर दी।"[1]

इसी प्रचार-यात्रा का विस्तृत वर्णन सद्धर्म प्रचारक आदि साप्ताहिक पत्रों में ऐसे छपा मिलता है।

सिन्धु प्रदेश में जाति रक्षा व धर्म-प्रचार अभियान

वैशाख १९४७ विक्रम संवत् की घटना है पण्डित जी आर्यसमाज सक्खर के उत्सव पर गये। पं० पूर्णानन्द जी भी वहाँ पधारे। वहीं सूचना मिली कि सिन्धु प्रदेश के हैदराबाद नगर में एक धनीमानी व्यक्ति व उसके दो पुत्र मुहम्मदी मत स्वीकार करने को तैयार है। यह भी पता चला कि कई युवक ईसाई होने वाले हैं।

आर्य पथिक लेखराम को ईश्वर ने हृदय ही ऐसा दिया था जो जाति की हानि को देख व सुन नहीं सकता था। पं० पूर्णानन्द जी सिन्धी भाषा जानते थे। उन्हें साथ लेकर अविलम्ब हैदराबाद को चल दिये। ज्येष्ठ १९४८ के आरम्भ में वीरवर के ओजस्वी विद्वत्ता-पूर्ण भाषणों से अवैदिक मतों में खलबली मच गई। ईसाई मत से युवकों को बचाने के लिए वहीं एक पुस्तिका लिख दी। इसका विषय **'आदम व हव्वा'** थे। इसी विषय पर सारगर्भित व्याख्यान दिया। इसका प्रभाव अच्छा पड़ा। आठ दस युवक विधर्मी होने से बच गये।

मुसलमानी मत की ओर झुके सेठ सूर्यमल तो वहाँ न थे। उनके दो पुत्रों को धर्म धुन के धनी लेखराम जाकर मिले। वे टालना चाहते थे पर वह टलने वाला धर्मवीर न था। सेठ सूर्यमल के बड़े पुत्र को बार-बार मिलकर समझाया और कहा कि जिस मौलवी पर उन्हें पूरा विश्वास हो उसे शास्त्रार्थ के लिए ले आवें। चार बार सेठ के

---

१. पं० गंडाराम लिखित जीवन-चरित्र, पृ० १७४।

ज्येष्ठ पुत्र मेवाराम जी से मिलकर यह आग्रह किया और उधर मौलवियों को साहसी सुधीर वीर लेखराम ने पत्र-व्यवहार करके शास्त्रार्थ की चुनौती दी।

मौलवियो को विवश होकर सामने आना पडा। मौलवी सय्यद मुहम्मद अलीशाह के साथ प्रथम शास्त्रार्थ करके उसे निरुत्तर किया इनके पश्चात् चार और मौलवियों से पत्र-व्यवहार किया गया। उर्दू पत्रों का उत्तर उर्दू में और फारसी भाषा मे प्राप्त पत्रों का उत्तर फारसी में दिया गया। पं० लेखराम में यह विशेष गुण था कि विपक्षी के प्रश्नों, आक्षेपों, कटाक्षों का उत्तर उसके लेख की भाषा मे ही दिया करते थे। पाठक अन्यत्र पढ़ेंगे कि गद्य का उत्तर गद्य व पद्य का उत्तर पद्य में देते थे। यहाँ भी अत्यन्त योग्यता से मौलवियो के पत्रों का उत्तर उनके पत्रों की भाषा में देकर सबको प्रभावित किया।

धर्मवीर के हिये की तड़पन का और अत्यन्त पुरुषार्थ का यह परिणाम निकला कि दीवान सूर्यमल व उनके दोनों पुत्र मुसलमानी मत में प्रविष्ट होनेसे बचाए जा सके। शुद्धि आन्दोलनके प्राणलेखराम ने अपने लहू की धार से आर्य धर्म के उपवन को सींचकर हमारे लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया। आर्य पथिक के बलिदान की शौर्यगाथा के पीछे उनकी लग्न के ऐसे चमत्कारों की एक लम्बी गौरव गाथा है।

साधु वासवानी का हृदय परिवर्तन

श्री महात्मा मुन्शीराम जी ने इसी प्रसंग में यह उल्लेख किया है कि देश प्रसिद्ध लेखक, स्वतन्त्रता सेनानी, शिक्षाशास्त्री स्वर्गीय प्रि० टी० एल० वासवानी के उर मे आर्य धर्म शास्त्रों के लिए श्रद्धा ज्योति जगाने का श्रेय हुतात्मा लेखराम जी को ही जाता है। जब आर्य पथिक सिन्ध की इस यात्रा पर हिन्दू युवकों को विधर्मी होने से बचाने के लिए निकले तो जिन युवको को प्राणवीर लेखराम के सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ टी० एल० वासवानी उनमे से एक थे। तब वह न प्राध्यापक थे, न लेखक थे और न प्रिंसीपल थे।

हुतात्मा लेखराम के सत्संग ने उनको तार दिया और आगे चलकर वह महात्मा वासवानी व साधु वासवानी के नाम से देश विख्यात हुए। अभी कुछ ही वर्ष पूर्व उनका पूना नगर में निधन हुआ। यदि लेखराम जी के विचारो के अगारों में तपने का सौभाग्य न मिलता

तो कौन जानता है कि देश का सुयोग्य शिक्षाशास्त्री, स्वतन्त्रता सेनानी किस गढ़े मे गिरता पड़ता जीवन धन वैसे ही लुटा देता। वासवानी जी का कृतज्ञ हृदय महर्षि दयानन्द का आजीवन गुणगान करता रहा। इस गुणगान के पीछे लेखराम का तप था। **पं० लेखराम की दया से ही उनके जीवन ने** पलटा खाया।

सिद्धान्त-निष्ठा—आपने प० गडाराम जी को लिखा कि घर से चला तो माता जी ने विवश किया कि उस ओर जा ही रहे हो, अपने पिताजी की अस्थियाँ भी साथ ले जाओ। गंगा मे प्रवाहित कर देना। माताजी की बात टाल न सके। अस्थियाँ ले आए और मार्ग में झेलम नदी मे डाल दीं। चाचाजी को सारा वृत्त लिख दिया।[1] आर्य मर्यादा के विरुद्ध, किसी को प्रसन्न करने के लिए कुछ करना उनके स्वभाव के विपरीत था। उनकी तो एक ही धुन थी कि ऋषि की आज्ञा और वेद की शिक्षा को जीवन में उतारा जावे।

तोपों की दनादन में से—अपने बलिदान से कुछ दिन पूर्व आप चाचाजी के पास बैठे हुए थे। आर्यसमाज नोशहरा छावनी में व्याख्यान देकर अकोड़ा में पहुँचे। १६ फरवरी का दिन था। बाल बढ़े हुए थे। वस्त्र बहुत मैले हो चुके थे। चाचाजी ने नाई को मँगवाया। स्नान करवाया, वस्त्र बदलवाए। धर्मचर्चा चल पड़ी। अपनी नई पुस्तक चाचा जी को सुनाने लगे। अटक के दुर्ग के पुल के सामने पश्चिम की पहाड़ी होडी पर मोर्चे तैयार हो चुके थे। १८ फरवरी, १८९७ ई० को तोपों का अभ्यास होना था। अधिकारियों ने आदेश निकाला कि कोई मनुष्य व पशु बाहर न निकले। पण्डित जी ने राज-आज्ञा सुनी तो बोले कि जाना तो मैने भी है।

लाहौर जाना है फिर मुलतान के उत्सव पर भी अवश्य जाना है। तोपों की दनादन में तो कोई निकलने न देगा। झट भोजन किया और खैराबाद रेल द्वारा चले गये। वहाँ पुलिस चौकी में चाचाजी के साथ वार्ता करते रहे फिर पथिक थे चल पड़े।[1]

बलिदान पथ के पथिक की अपने प्यारे चाचाजी से यह अन्तिम भेंट थी। कितनी चिन्ता थी उनको वैदिक धर्म प्रचार की यह घटना भी उनके हिये की उस आग का **एक उदाहरण है**।

---

१. पं० गंडाराम जी लिखित जीवन-चरित्र, पृ० १७४।

शास्त्रार्थ की धुन—१८९५ में आर्य पथिक का निवास लाहौर हो गया। आप तब ऋषि-जीवन लिख रहे थे। पण्डित जी का और सुख-सुविधा का परस्पर का कोई सम्बन्ध ही न था। तपश्चर्या उनका जीवन श्रृङ्गार था। स्थान-स्थान से उनके प्रचार की माँग आ रही थी। वह स्वयं भी तो प्रचार के लिए तड़पते रहते थे। उनकी उत्कट धर्म-भावना उनको कहाँ चैन लेने देती थी। शास्त्रार्थों का युग था। शास्त्रार्थ के लिए कहीं से भी बुलावा आ जाए तो पण्डित प्रवर सभा के रोके न रुकते। बलात् चले जाते थे। कोई कुछ कहे तो कह देते थे कि इन दिनों की दक्षिणा काट लो।[1]

विपक्षी भाग आए इसलिए हम लौट आए—१८९२ ई० की घटना है, बूँदी राज्य (राजस्थान) में वैदिक धर्मियो का पौराणिकों से शास्त्रार्थ हो रहा था। ब्र० नित्यानन्दऔर श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी महाराज की जोड़ी ने वैदिक धर्म प्रचार की धूम मचा दी। इनकी सहायता के लिए शास्त्रार्थ समर के सेनानी लेखराम जी को भी भेज दिया गया। कई एक शुभचिन्तकों ने यह भी कहा कि राजा का राज्य है। पौराणिक लोग हैं, कुछ अनिष्ट न हो परन्तु प्राणो के निर्मोही लेखराम कब रुकने वाले थे। पण्डित जी जा रहे थे कि मार्ग मे ही ब्र० नित्यानन्द जी महाराज से आपकी भेंट हो गई। शास्त्रार्थ में विपक्षी चित हो गये। राज्य अधिकारियों ने विजेता ब्रा० नित्यानन्द जी को निष्कासित कर दिया। पण्डित जी जहाजपुर आ गये; वहाँ प्रचार करने लग गये। व्याख्यान में अवैदिक मतों की खोजपूर्ण समीक्षा कर रहे थे कि सभा में एक मुसलमान भाई, जो पुलिस का सिपाही था, उसे अपनी तलवार के कब्जे पर हाथ ले जाता देखकर पण्डित जी ने कहा, "पठान का है तो तलवार निकाल कर स्वाद देख ले।"

पठान ने पण्डित जी के बूँदी से आने पर चुभता व्यंग्य कसा। प्रतिभाशाली लेखराम ने बड़ी शान्ति और सहज स्वभाव से उस पठान को हिजरत [इस्लाम के सस्थापक आँ हजरत मुहम्मद साहब के मक्का से प्रस्थान] का स्मरण कराके शान्त कर दिया। आपने कहा, विरोधी पराजित हो गया अत: हम आ गये, कोई भाग कर तो आये नही। एक बड़े अधिकारी ने उस सिपाही को पृथक् बिठा दिया। फिर कोई

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचित्र इतिहास, पृ० १९७।

व्यक्ति सभा में नहीं बोला। वह बन्धु भी तो पण्डित जी का **उत्तर सुनकर शान्त हो चुका** था।

पेशावर में

आर्यसमाज पेशावर का चौथा वार्षिकोत्सव अप्रैल २५-२६ सन् १८८५ ई० को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पण्डित जी के दो प्रभावशाली व्याख्यान हुए। पहले दिन प्रातः नौ बजे से दस बजे तक हवन यज्ञ के लाभ विषय पर पण्डित जी का व्याख्यान हुआ। दूसरे दिन दोपहर बाद पाँच से छः बजे तक पण्डित जी का 'सामाजिक एकता' विषय पर व्याख्यान हुआ। आपने परस्पर प्रीति व संगठन के लाभ पर बड़ी उत्तम रीति से प्रकाश डाला। इन व्याख्यानों की चर्चा उस युग के पत्रों में गौरवपूर्ण ढंग से की गई।[1]

चित्तचोर लेखराम–गंगोह [सहारनपुर] आर्यसमाज की स्थापना पण्डित जी द्वारा की गई थी। उस समय एक पौराणिक विद्वान् श्री प० रामचन्द्र जी ने धर्मवीर से शास्त्रार्थ किया था। पण्डित जी का विपक्षी पर कैसा प्रभाव रहा इसका प्रमाण देने की कोई आवश्यकता नहीं। पाठक आर्य विप्र की वाणी व जीवन के प्रभाव को जानने के लिए 'आर्य समाचार' उर्दू मासिक में प्रकाशित एक समाचार पर विचार करें। सहृदय पाठक इसे पढ़कर अनायास ही कह उठेंगे कि सचमुच लेखराम चितचोर था।

अगस्त २५, १८८५ ई० को गंगोह समाज ने रक्षाबन्धन का पर्व मनाया। इस अवसर पर वही प० रामचन्द्र जी समाज के सत्संग में आए और विद्या विषय पर व्याख्यान भी दिया। अपने मध्य उनको पाकर आर्यों को हर्ष हुआ। यह सब सच्चे ब्राह्मण लेखराम के पवित्र आत्मा का प्रभाव था।

स्मरण रहे कि इस समाचार में पण्डित जी को लेखराम की बजाय लेखराज लिखा गया है। इस पत्रिका के कई अंकों में उनका नाम यही छपा मिलता है।[2]

---

१. 'आर्य समाचार', मासिक मेरठ, जेठ [ज्येष्ठ] संवत् १९४२ विक्रम, पृ० ६०-६१।

२. 'आर्य समाचार', पृ० १८६, भादो (भाद्रपद) १९४२ विक्रम, नवम्बर ६।

उस ऐतिहासिक उत्सव पर—आर्यसमाज लाहौर का छठा वार्षिकोत्सव फरवरी १८८६ ई० के अन्तिम दो दिनों में रखा गया। यह उत्सव ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। तब तक फूट कलह का राक्षस अभी आर्यसमाज में सिर नहीं उठा पाया था। वैसे शत्रु घुस-पैठ कर चुके थे। इसी उत्सव में तरुण हंसराज ने महर्षि के स्मारक रूप बनने वाले कालेज के लिए सर्वत्यागी बनने का संकल्प सभा में किया तो आर्यजनों के हृदय हर्षोल्लास से झूम उठे। इसी वार्षिकोत्सव में लाला लाजपतराय जी व मुनिवर गुरुदत्त जी ने प्रस्तावित कालेज के लिए ओजस्वी प्रेरणाप्रद भाषण दिये और आर्यों को इन युवकों ने ऐसी प्रेरणा दी कि धन की वृष्टि होने लगी।

इसी उत्सव पर माता भगवती हरियाणा वाली ने ऐसा सुन्दर भाषण दिया कि नर-नारी झूम उठे।

इसी ऐतिहासिक उत्सव पर बलिदानी ज्ञानी लेखराम ने पादरी अब्दुल्ला आथम जी के आक्षेपों के उत्तर में लिखी अपनी पुस्तक 'सदाकते ऋग्वेद' अर्थात् ऋग्वेद की सत्यता का वाचन किया। उस समय के पत्रों ने पण्डित जी के इस व्याख्यान अथवा पत्र-वाचन की बड़ी प्रशंसा की। यह पुस्तक अब हिन्दी में भी उपलब्ध है। पाठक वृन्द स्वय पढ़कर देख लें कि किस योग्यता से लिखी गई है।

आर्य समाचार ने उत्सव के वृत्तान्त में पण्डित जी का नाम लेख-राज ही दिया है।[1]

'आर्यगज़ट' फीरोजपुर आदि पत्रों में भी उत्सव का विवरण छपा था।

पण्डित जी के सबसे पुराने लेखों में से एक के कुछ अंश

हम बता चुके हैं कि महर्षि के जीवनकाल में ही पं० लेखराम जी ने 'धर्मोपदेश' पत्रिका पेशावर से निकालकर लेखनी का कार्य आरम्भ कर दिया था। फिर १८८७ ई० में 'आर्यगजट' फीरोजपुर के सम्पादक नियुक्त किए गए। इस पुस्तक के प्रथम संस्करण के प्रकाशन के पश्चात् हमने देश भर में घूमकर 'आर्यगज़ट' के १८८७, १८८८ ई० के वे अंक खोज लिये हैं, जब श्री प० लेखराम जी इसके सम्पादक थे। और भी अनेक लेख मिल गये हैं।

१. 'आर्य समाचार', पृ० ४०८, नवम्बर, १३, चैत्र मास, १९४२ विक्रम।

सौभाग्य से लेखक के पुस्तकालय में उनका १८८५ ई० का लिखा एक लेख है। यह लेख 'राजपूताना' पत्रिका अजमेर न० ३०, दिनांक २१ अक्तूबर, १८८५ ई० में प्रकाशित दस प्रश्नों का उत्तर है। पण्डित जी तब आर्यसमाज कादियाँ के मन्त्री थे। यह ठीक है कि वह कादियाँ प्रचारार्थ ही आए, निवास वहाँ नहीं था। हमें भी इसी लेख से पता चला कि वह कादियाँ आर्यसमाज के मन्त्री भी रहे भले ही स्वल्प समय के लिए। इन पंक्तियों के लेखक को भी इस बात का गर्व है कि वह भी उक्त समाज का मन्त्री रह चुका है।

प्रश्न १ - तुम्हारा मत वैदिक है अथवा अवैदिक ?

उत्तर— आर्यसमाज का तीसरा नियम है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। अतः आर्यसमाज के सदस्य तीसरे नियम के अनुसार एवं प्रथम नियम के आधार पर चारों वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं।

प्रश्न २ यदि वैदिक है तो आर्यावर्त्तीय आर्य हो सकता है अथवा इतर देश का ?

उत्तर - आर्यावर्त्तीय का आर्य होना अथवा इतर देश वाले का एक अत्यन्त विचित्र प्रश्न है। प्रश्नकर्ता ने इस प्रश्न के ठीक-ठीक भाव को नहीं समझा। केवल साधारण रीति से ही प्रश्न कर दिया है।

अतः स्पष्ट हो कि पवित्र वेद केवल आर्यावर्त्त के लिए नहीं अपितु सकल विश्व के लिए हैं। जैसा स्वयं पवित्र ऋग्वेद में यह बात सर्वथा स्पष्ट है। इसलिए जब वेद सार्वभौमिक हैं तो वेदोक्त धर्म क्या किसी चारदीवारी (भौगोलिक सीमा) में बन्द हो सकता है ? आर्यधर्म वालों के कारण से आर्यावर्त्त प्रसिद्ध हुआ न कि आर्यावर्त्त के कारण आर्य प्रसिद्ध हुए। अतः जहाँ पर भी पवित्र वेद की शिक्षा पहुँचे वही देश (वैदिक शिक्षा पर आचरण करे तो) आर्यावर्त्त हो सकता है। चाहे अन्य बातों के कारण उसका और नाम क्यों न होवे यथा शब्द ब्रिटिश इण्डिया (British India) उस हिन्दोस्तान से अभिप्राय है जो अंग्रेजों के अधीन है।

प्रश्न ३ -- हम बड़े आश्चर्य में हैं कि कादियाँ आर्यसमाज ने मिर्जा अमाम-उ-दीन साहब एवं मुंशी मुराद अली मुसलमानों को आर्यसमाज (मूल लेख में आर्यसमाज शब्द ही है) कर लिया।

उत्तर—आप चकित व आश्चर्ययुक्त न होवें अपितु प्रसन्न व आनन्दित होवें और जान लेवे कि केवल आर्यसमाज देहरादून ने मुशी मुहम्मद उमर साहब को जिनका नाम इस समय अलखधारी है और इसी प्रकार आर्यसमाज जबलपुर एवं रावलपिण्डी, लाहौर तथा अमृतसर आदि ने भी सैकड़ों मुसलमानो, ईसाइयों व जैनियों को आर्य धर्म में सम्मिलित कर लिया है जो प्रत्येक दृष्टि से शुभ है और भविष्य मे भी प्रतिदिन लोग अपने मिथ्या मतों को तजकर वैदिक धर्म की ओर आकर्षित हो रहे हैं। आपको जाति के प्रमाद पर आश्चर्य होना चाहिए न कि जातीय उन्नति पर चकित होना।

प्रश्न ४—आर्य से पुनः मुसलमान हो जाए, आर्यसमाज किस प्रकार व्यवस्था कर सकता है ?

उत्तर—हे कृपालु ! यदि किसी का पुत्र मर जावे तो इसका निदान उपचार नहीं है परन्तु रोग की चिकित्सा हो सकती है इसलिए पहले तो कोई आर्य किसी मत मे जाता ही नही है क्योंकि पूर्ण दर्शन, योगाभ्यास, अध्यात्मवाद आदि सब उनके अपने घर में है, हॉ धन, धरती, दारा, बलात् से हम विवश हैं परन्तु हमारा प्रकाश का द्वार प्रतिक्षण खुला है। किसी प्रकार की कोई रुकावट नही है।[1]

"मैं पहले पहुँच गया"

आर्यसमाज रोपड़ का वार्षिकोत्सव था। स्वर्गीय पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति तब बालक ही थे। वह अपने पूज्य पिता मुंशीराम जी के साथ उस उत्सव में सम्मिलित हुए थे। इन्द्र जी ने बाल्यकाल की मधुर स्मृति का निम्न शब्दों में एक सुन्दर चित्र खीचा है :

एक सज्जन वहाँ और खड़े थे, जो देखने मे पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त के मुसलमान दिखाई देते थे। मजबूत शरीर, दरम्याना कद, छोटी-छोटी दाढ़ी, बड़ी-बडी मूँछें, सिर पर लम्बे शल्के वाली बड़ी सी पगड़ी, कोट के बटन खुले हुए और हाथ में एक किताब थी। वे ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त धर्मवीर लेखराम थे।

उस समय लाला मुशीराम जी और प० लेखराम में एक महत्त्वपूर्ण वार्तालाप का पं० इन्द्र जी ने विवरण देते हुए लिखा है :

---

१ 'आर्य समाचार' मासिक, पौष मास, १९४२ विक्रम, पृ० ३११-३१४।

"किश्तियों से उतरने पर पिताजी से पं० लेखराम जी ने आगे बढ़ते हुए कहा—प्रधान जी नमस्ते, देख लीजिए मैं आपसे पहले यहाँ पहुँच गया।" पिताजी ने उत्तर दिया "आपको तो पहले पहुँचना ही चाहिए था, क्योंकि आप तो आर्य मुसाफिर हैं।"

इतिहासकार इन्द्र जी ने इस घटना पर जो टिप्पणी दी है, वह भी पठनीय है।

आर्यसमाज के कल्याणमार्ग के इन दोनों पथिकों का यह वार्तालाप भविष्यवाणी से कैसे भरा हुआ था, यह किसी को उस समय मालूम नहीं था। दोनों एक ही राह के राही थे तथा एक ही डगर से होकर इस संसार से विदा हुए। भेद केवल वही रहा जो रोपड़ की उस बातचीत में झलक रहा था। पं० लेखराम की गति बहुत तेज थी, इस कारण वह रास्ते को जल्दी तय कर गये और कुर्बानी के द्वार से होकर विश्राम स्थल में पहुँच गए। पिताजी की तबियत में उनकी अपेक्षा अधिक ठहराव था। इस कारण वह रास्ते पर देर तक चलते रहे। परन्तु पहुँचे उसी कुर्बानी के द्वार से और उसी विश्रान्ति स्थान पर।'[1]

इन पंक्तियों के लेखक का भी यही मत है कि दोनों मित्र बलिदानी थे। दोनों ने वैदिक धर्म पर सर्वस्व वार दिया। दोनों एक ही पथ के पथिक थे। दोनों का चरित्र पवित्र था। दोनों को वीरगति पाने का गौरव प्राप्त हुआ। दोनों अमर हो गए। अन्तर यही रहा कि लेखराम की गति अपने अभिन्न हृदय मित्र मुंशीराम की अपेक्षा अधिक तीव्र थी। अतः वह आगे निकल गए।

मुंशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द जी) को मित्र की जीवनदायिनी मृत्यु से स्पर्धा थी। उनके हृदय की उत्कट इच्छा थी कि ऋषि दयानन्द के महान् लक्ष्य की पूर्ति के लिए तन, मन, धन आहुत करने में उनमें कोई कमी न रह जावे। उनके उर का अरमान एक था -उनके जीवन का गान एक था और उनके हिये के सद्भावों का निनाद और तान यही थी कि उनको आचार्य दयानन्द और वीर लेखराम वाली मृत्यु प्राप्त हो। तभी तो पण्डित जी के बलिदान पर अपने ऐतिहासिक लेख में यह अमर वाक्य लिखा था "वह संस्था धन्य है जिसके नेताओं को अपनी रक्त साक्षी से अपनी मान्यताओं (मानी हुई सच्चाइयों) को

१. इन्द्र विद्यावाचस्पति, लेखक सत्यकाम विद्यालंकार तथा अवनीन्द्र विद्यालंकार, पृ० ६-७।

सत्य सिद्ध करने का अवसर प्राप्त हो।"[1]

जोधपुर में बाधायें—महर्षि का जीवन-चरित्र लिखते हुए आर्य पथिक को कितनी बाधाओं और कठिनाइयो का सामना करना पड़ा, इसका पूरा-पूरा विवरण तो इतिहास से सदैव ओझल ही रहेगा। अपने दुःख-कष्ट की कहानी उस महामानव ने कभी किसी के सामने रखी हो तो कोई बताता भी। तो भी कुछ सर्वविदित कठिनाइयों का उनके समकालीन लेखको ने कुछ उल्लेख किया है।

महर्षि दयानन्द जोधपुर गए। वही महर्षि को विष दिया गया। विष देने के षड्यन्त्र मे कई शक्तियों का हाथ था। जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिह और उसके कुटिल भाई महाराजा प्रताप सिंह का भी महर्षि के प्रति व्यवहार आपत्तिजनक और निन्दनीय था। महर्षि ३१ मई, १८८३ ई० को जोधपुर पहुँचे और जसवन्त सिंह २६ जून, १८८३ ई० को ऋषि के दर्शन करने आया। छब्बीस दिन तक तो वह ऋषि के पास फटका तक नहीं। प्रताप सिंह ने राव राजा तेजसिह से ऋषि को पत्र लिखवाकर बुलाया। स्वयं एक पत्र तक न लिखा। ऋषि उस प्रताप सिह को भला मानस समझते रहे। सर प्रतापसिह स्वार्थी व अंग्रेज का चाटुकार था। ऋषि ने जुआ आदि खेलने को पाप बतलाया है सर प्रतापसिंह ऋषि को जोधपुर छोडकर पूना नगरी में जुआ खेलने जा पहुँचा। सुरापान तो करता ही था।[2] मास-भक्षण के प्रचार का उसे उन्माद था।[3] आर्यसमाज के लोग इस प्रतापसिंह को ऋषिभक्त समझते रहे। इसी प्रतापसिह ने प्रथम डी० ए० वी० कालेज लाहौर के नये भवन की आधारशिला रखी थी।

जब आर्य पथिक जोधपुर महर्षि के जीवन-चरित्र की खोज के लिए गए तो सर प्रतापसिह ने इस पुनीत कार्य मे जो विघ्न डाले उसके लिए इतिहास कभी भी उसे क्षमा नही करेगा। आर्य पथिक ने सर प्रताप सिंह के मांस-भक्षण के प्रचार का बड़ी योग्यता व साहस से प्रतिकार किया। जोधपुर में मास प्रचारकों का एक सशक्त दल बन चुका था। लाहौर के र० ब० मूलराज की उमत से इस दल की

---

१. कुलियात, 'आर्य मुसाफिर' की भूमिका, प्रथम संस्करण, पृ० जीम (फार्सी का ज)।

२. सर प्रतापसिंह की आत्मकथा, पृ० १७२, १७५।

३. सर प्रतापसिंह की आत्मकथा मे शिकार के स्थल।

साँठगाँठ थी। तो भी आर्य पथिक ने निर्भीक निर्भीड़ होकर वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा का जो स्तुत्य कार्य किया वह पाठक अन्यत्र पढ़ेंगे।

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज लिखते हैं—

"जोधपुर में मांस प्रचारकों का भण्डा फोडकर कुछ दिनों ऋषि जीवन सम्बन्धी मसाला वही एकत्रित करते रहे, परन्तु विरोधी उनके आक्रमण से ऐसे तंग आ गये थे कि उन्हें अधिक दिनों तक जोधपुर ठहरने में अपनी बड़ी हानि समझते थे। जहाँ कही आर्य पथिक आन्दोलन करने जाते महाराजा प्रतापसिंह का गुप्तचर साथ जाता। पहले हल्ले मे जो घटनाएँ लिखी गई वह तो ठीक रही परन्तु उसके पश्चात् लोगों ने डर के मारे ऋषि जीवन सम्बन्धी घटनाएँ ही बतलानी बन्द कर दीं। तब पण्डित लेखराम फिर पंजाब की ओर लौट आए।"[1]

बड़ा आश्चर्य होता है कि राजाओं के आतक के उस युग मे पण्डित जी वहाँ कैसे डटे रहे। सागर मे जाकर मगरमच्छ से युद्ध जा छेड़ा। कार्य में क्षमता ऐसी कि कई बड़ी छोटी-छोटी परन्तु अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण बातो का पता लगाकर ही चैन लिया। यथा ऋषि के पत्रों से विदित होता है कि शाहपुरा से जोधपुर जाते हुए मार्ग में बड़ी वर्षा आई। वर्षा का जो वृत्तान्त पण्डित जी ने ऋषि जीवन-चरित्र में दिया है उसकी पुष्टि उस समय का जोधपुर का राजकीय रिकार्ड (जिन्हें बहियाँ कहते हैं) करता है। इसी प्रकार वहाँ ऋषि की दिनचर्या व प्रचार-कार्य की सप्रमाण जाँच करने मे पण्डित जी ने जितनी सफलता पाई इसके लिए उनका गुणकीर्तन करने मे हमारी लेखनी सर्वथा अक्षम है। नैनुराम ब्रह्मभट्ट राजस्थान के इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान् माने जाते थे। सर जॉन मार्शल व डा० भण्डारकर सरीखे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के इतिहासज्ञों ने श्री नैनूराम ब्रह्मभट्ट के सूक्ष्म व विस्तृत ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशसा की है।[2] श्री नैनूराम महर्षि के समकालीन थे। महर्षि के जोधपुर प्रवास की दिनचर्या का जो वृत्तान्त पण्डित जी ने लिखा है, श्री नैनूराम ने पूर्णतया उसकी पुष्टि की है। आप जोधपुर के ही निवासी थे। गवेषक लेखराम की सतत साधना का अभिनन्दन।

१. आर्य पथिक लेखराम का जीवन-चरित्र, ले० स्वामी श्रद्धानन्द, 'सार्वदेशिक' का विशेषांक, पृ० ८१।

२ महर्षि का विषपान अमर बलिदान, लेखक प्रो० राजेन्द्र 'जिज्ञासु'।

उसके शौर्य का वन्दन।

इस तथ्य को कैसे झुठलाया जा सकता है कि ऋषि जीवन की गवेषणा के लिए यदि अतुल्य पराक्रमी लेखराम ने पुरुषार्थ न किया होता तो मानव जाति को ऋषिवर के चरित्र-अमृत का पान करने का सुयश न मिल पाता। दिव्य गुणों वाले पूज्य विप्र देवेन्द्र बाबू की साधना भी तो तभी सफल हो सकी—पथिक ने पहले पथ बना रखा था।

आर्यसमाज के जीवनी साहित्य के जनक तो आर्य पथिक लेखराम ही थे, कोई और नहीं। श्री पं० गोपालराव जी शर्मा का 'दयानन्द-दिग्विजार्क' महर्षि का प्रथम जीवन-चरित्र है। इस दृष्टि से इसका महत्त्व है परन्तु शर्मा जी का प्रयास एक भूमिका ही माना जा सकता है। यह जीवन-चरित्र बहुत संक्षिप्त है। महर्षि के जीवन-चरित्र के लिए जो तप पं० लेखराम ने किया है उसको देखकर उनके समकालीन भी चकित थे और आज के विद्वान् भी नतमस्तक है।

तड़प वाले तड़पाती तेरी कहानी—महर्षि के जीवन-चरित्र के लिए दिन-रात एक करके आपने खोज की। सामग्री तैयार थी। अब प्रकाशन कार्य आरम्भ हुआ। आप लिख-लिखकर प्रेस में भेजते। पुस्तक उर्दू में प्रकाशित हो रही थी। उर्दू फ़ारसी के ग्रन्थों को प्रकाशन से पूर्व सुलेख लिखने वाले लेखक (कातिब) एक विशेष कागज पर लिखते हैं फिर यह छपने के लिए जाता है। कम्पोजिंग इसमें नहीं होती। ग्रन्थ का प्रकाशन तो आरम्भ हो गया परन्तु लेखराम जी निश्चिन्त होकर इस कार्य में न लग सके।

रुकावट आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से न थी, साधनों की भी चिन्ता न थी। इस कार्य के निरन्तर न होने का कारण तो स्वयं पं० लेखराम जी थे। उनकी लग्न, उनके हृदय की तड़प उनको चैन न लेने देती थी। वैदिक धर्म प्रचार के लिए भागदौड यथापूर्व बनी हुई थी। ६ फरवरी, १८९५ ई० को 'देश की आवश्यकता' पर मिण्टगुमरी में व्याख्यान देते हैं तो १० फरवरी, १८९५ ई० को पण्डित जी गुजराँवाला में 'हमारी वर्तमान स्थिति' पर भाषण देने पहुँच गए। दुर्भाग्य से उन दिनों राय बहादुर मूलराज एम० ए० ने आर्यसमाज लाहौर के सोलहवे वार्षिकोत्सव पर अग्रेजी में एक लम्बा भाषण झाड़कर आर्यसमाज में भयानक फूट कलह का बीज बो दिया।

इस रायबहादुर ने मांस-भक्षण का प्रचार आरम्भ कर दिया। कई चेले भी मिल गये। रायबहादुर का यह भाषण आर्यसमाज के इतिहास की एक अत्यन्त दुःखद दुर्घटना है।[1] फूट कलह के इस पैगम्बर और अंग्रेज के गुप्तचर रायबहादुर मुलराज के इस भाषण के अगले वर्ष ही तो आर्य प्रादेशिक सभा की स्थापना हो गई।

१८९२ ई० में दिए गए इस अंग्रेजी भाषण ने ऐसी कलह पैदा की कि स्थान-स्थान पर मांस-भक्षण के खण्डन के लिए पण्डित जी को जाना पड़ा। गुजराँवाला भी इसीलिए गये थे।[2]

फिर यात्रा - १४ फरवरी, १८९५ ई० को महात्मा मुंशीराम जी के नाम एक पत्र में आपने लिखा, "अब भिवानी, स्यालकोट, कराची, होशियारपुर के उत्सव समीप आ गये। आपने क्या सोचा है? आपके सहित आठ महाशय जाने वाले हैं। उनमें से चार स्यालकोट और चार भिवानी जावें। मैं और पं० कृपाराम जी दोनों लाभचन्द्र भजनीक सहित होशियारपुर को भुगत लेंगे। बतलाइए अब क्या आज्ञा है? जिन-जिन (महाशय) को जिस स्थान में भेजना है, आप भली प्रकार सोच-विचारकर, शीघ्र सबको सूचित कर दीजिए। जिससे ठीक समय पर काम हो।"

महात्मा मुंशीराम जी इस पत्र का उल्लेख करते हुए लिखते हैं "उन्हें दिन-रात आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की चिन्ता रहती थी, परन्तु यश और कीर्ति का लेशमात्र भी लोभ न था।"[3]

आर्यपथिक २३-२४ फरवरी को होशियारपुर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में तो सम्मिलित न हो सके। २३-२४ फरवरी को भिवानी पहुँच गए। व्याख्यान भी दिए और धर्मचर्चा, शंका समाधान में विशेष भाग लिया।

करनाल के उत्सव पर—भिवानी से पण्डित जी सीधे करनाल के उत्सव पर पधारे। वहाँ आपने दलितों के उद्धार और आर्य जाति के भविष्य पर ऐसे ओजस्वी भाषण दिए कि निष्प्राण हिन्दुओं में नव-जीवन का संचार हो गया। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने आर्य पथिक के

१ आर्यसमाज लाहौर के १६वें वार्षिकोत्सव पर अंग्रेजी लैक्चर का उर्दू तर्जुमा, सन् १९०६ में प्रकाशित हुआ।

२. आर्यपथिक पं० लेखराम, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, पृ० १०४।
'सार्वदेशिक' साप्ताहिक का १९६८ ई० का विशेषांक।

३. 'सार्वदेशिक' का १९६८ ई० का विशेषांक, पृ० १०५।

जीवन-चरित्र में लिखा है कि इन विषयों पर ऐसे ओजस्वी प्रेरणाप्रद व्याख्यान मैंने पहले कभी नहीं सुने थे।

लेखनी का अद्वितीय प्रभाव—१८८५ ई० में ही पण्डित जी अपनी योग्यता के कारण भारत भर में ख्याति पा चुके थे। आप कादियाँ गए। मिर्जा साहब को ललकारा। मिर्जा गुलाम अहमद की पुस्तक 'बुराहीने अहमदीया' का युक्ति-युक्त उत्तर 'तकजीब बुराहीने अहमदिया' के नाम से लिखा। प्रकाशित होने से पूर्व ही १८८६ में इसकी हस्तलिखित प्रतियाँ दूर-दूर तक पहुँच गई। श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज लिखते हैं कि ये हस्तलिखित प्रतियाँ स्थान-स्थान पर शास्त्रार्थों में बडी सहायक सिद्ध हुई।

"इस प्रकार जब लोगों को उस पुस्तक के महत्त्व का ज्ञान हुआ तो १८८७ में वह प्रकाशित हुई और बिकी भी खूब।"[1] प्रकाशन से पूर्व किसी के ग्रन्थ ने इतनी धूम मचा दी हो और इतनी लोकप्रियता अर्जित की हो, इसका दूसरा उदाहरण आर्यसमाज के साहित्य में तो मिलता नहीं। साहित्यकार लेखराम की साहित्य के लिए सतत साधना का स्मरण कर अनायास हमारा सिर झुक जाता है।

गवेषणा का अनुराग—श्री वनवारीलाल जी करनाल निवासी ने पण्डित जी के बलिदान पर एक पुस्तक लिखी। आपने गवेषणा के लिए आर्य पथिक के अनुराग को दर्शाने वाली एक घटना दी है। बलिदान से पूर्व जनवरी मास में जब पण्डित जी करनाल गये तो पता चला कि आपने मनुस्मृति के पचासों संस्करण व भिन्न-भिन्न टीकाएँ संग्रह की हैं। उनका विचार था कि प्रक्षेप रहित मनुस्मृति का एक शुद्ध वेदानुकूल सस्करण निकाला जावे। वह इस शोधकार्य में संलग्न थे। तब कौन जानता था कि बलिदान पथ का यह पथिक अपने ध्येय-धाम की ओर तीव्र गति से बढ़ रहा है। यह कार्य अधूरा ही रह गया। दिनरैन यात्राएँ शास्त्रार्थ, लेखनी का[2] कार्य, गवेषणा और शुद्धि। हा! प्यारे लेखराम तू क्या था?

मैं क्या चाहता हूँ?—मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी मुसलमान बन्धुओं को आर्यसमाज के और आर्यसमाज में विशेष रूप से पं० लेखराम जी के विरुद्ध भड़काते रहते थे। योजनाबद्ध रीति से विषैला

१ आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का सचित्र इतिहास, पृ० १९३।
२ प० लेखराम आर्य मुसाफिर का धर्म पर सच्चा बलिदान, पृ० ७-८।

प्रचार हो रहा था। अंग्रेज़ भी यही चाहता था। मिर्ज़ा गुलाम अहमद की पीठ पर अंग्रेजी साम्राज्य था। वह अपनी अंग्रेज भक्ति पर बड़ा गर्व करते थे। अंग्रेज की स्तुति में अपनी पुस्तकों में बहुत कुछ लिखा भी।

पं० लेखराम जी ने मुसलमान भाइयों को सम्बोधित करके लिखा—"इस्लाम के अनुयायी मुझसे अकारण रुष्ट होते है और मुझे कष्ट देना चाहते हैं। वे बिना कारण के मुझसे द्वेष करते है तथा केवल भूल से मुझे अपना शत्रु समझते हैं। जबकि तथ्य यह है कि मेरे हृदय में जितना प्रेम उनके लिए है अन्य किसी के लिए नही। मेरी प्रबल इच्छा है कि जो-जो मिथ्या विश्वास उनके हृदयों में बैठ गए है, वे उनको शिष्टता, ज्ञान, बुद्धि, युक्ति व **तर्क से ठीक कर लेवें।**"

तुम्हारा धन्य धन्य तप त्याग,
धन्य शुचि सयम धन्य विवेक।
तुम्हारा धन्य धन्य संकल्प,
कोटि मनुजों में हो तुम एक।

—कविरत्न प्रकाशचन्द्र जी

सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना—पण्डित जी विदेशों में जाकर वेद प्रचार करना चाहते थे। अपनी जीवन-सङ्गिनी का भी पवित्र कार्य में सहयोग चाहते थे। इस उद्देश्य को सम्मुख रखकर वह पत्नी को पढ़ा रहे थे। वह अरबी-फारसी के विद्वान् थे। उनकी चाह थी कि मध्य एशिया के देशों में पवित्र वेद का शुभ सन्देश दिया जावे।

जब वह ईश्वर के स्वरूप और ईश्वर की एकता पर भाषण दिया करते थे तो कट्टर से कट्टर मुसलमान भी उनके विचारों से प्रभावित हुए बिना न रहता था।[1] उनका खण्डन मानव हृदयो से भ्रान्तियों को उखाड़ता जा रहा था। मतान्ध मुसलमान अज्ञानवश उन्हें अपना शत्रु समझ रहे थे। वे श्री पण्डित जी के विरुद्ध विषैला प्रचार कर रहे थे। कुछ वर्ष पण्डित जी और जीवित रहते तो अवश्य ईरान आदि

२. जीवन-चरित्र प० लेखराम जी, उर्दू लेखक महाशय श्यामलाल के मुखपृष्ठ से।

१. जीवन चरित्र पं० लेखराम, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, पृ० १०६, सार्वदेशिक वाला विशेषाङ्क।

देशों मे वेद का एक ईश्वरवाद लेकर जाते। कबर पूजा, ईश्वर के साथ और ईश्वर से भी बढकर, मनुष्य की पूजा की हानियाँ सबको बताते, भटके हुए मानवों को सन्मार्ग पर लाते।[1]

परन्तु बलिदान-पथ के पथिक लेखराम के जीवन में विदेश जाने का दिन तो न आया। अपने रुधिर की धार से ऋषि-उद्यान को सींचते हुए वह मानव जीवन को सफल बना गए। अपने सर्वस्व त्याग के कारण वह सदा के लिए अमर हो गए।

धर्म का जागरूक प्रहरी—दिसम्बर १८९४ ई० में पण्डित जी पेशावर आदि नगरों में धर्मप्रचार कर रहे थे। इसी यात्रा में चकवाल भी गये। वही आपने ईसाई पत्रिका 'नूर अफ़शा' में किसी व्यक्ति द्वारा छपवाया गया एक भ्रामक लेख पढ़ा। उसमें लिखा था कि एक बार पं० लेखराम ने गुजरात में अपने एक व्याख्यान में ईसा के विचित्र जन्म का पता वेदों से दिया था।

वहीं तत्काल पण्डित जी ने 'सद्धर्म प्रचारक' के लिए इसका उत्तर भेजा। पण्डित जी का उत्तर १५ पौष १९५१ विक्रम के अङ्क में प्रकाशित हुआ।

जालन्धर में धूम मचा दी—२५ दिसम्बर को जालन्धर समाज के उत्सव पर आपके पहले व्याख्यान के दूरगामी परिणाम निकले।

'धर्म परीक्षा की कसौटी'—विषय पर आपने बडा मौलिक व मार्मिक भाषण दिया। **'सद्धर्म प्रचारक'** में इस भाषण के बारे में यह समाचार छपा था कि एक साधु आगरा के राधास्वामी सम्प्रदाय से सम्बन्धित था और राधास्वामी के जाप में ही निमग्न था, पण्डित लेखराम जी का व्याख्यान सुनकर अत्यन्त प्रभावित हुआ। भाषण के बाद पण्डित जी से मिला। उसने वैदिक धर्म ग्रहण किया। उसने सम्प्रदाय के संस्थापक राय शालिग्राम जी को पत्र लिखकर सूचित भी किया कि पं० लेखराम जी को सुनकर उसका विश्वास राधास्वामी सम्प्रदाय में नहीं रहा।

पाप ताप पूर्ण भण्ड,
मैं करूँगा खण्ड खण्ड।

कविरत्न 'प्रकाश' जी

---

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचित्र इतिहास, लेखक पं० चमूपति, पृ० १९९

सहृदय इतिहासकार मूल्यांकन करें

इतिहास प्रेमियों के लिए पीछे दी गई एक घटना को यहाँ सविस्तार दिया जाता है। वीरवर लेखराम अजमेर गये। वहाँ बैठे कुछ लिख रहे थे। इतने में श्री रामबिलास जी सार्डा आ गए। आपने पूछा, "पण्डित जी क्या लिख रहे है ?"

सार्डा जी वैदिक यन्त्रालय अजमेर की देखरेख करते थे। पण्डित जी ने उनके प्रश्न के उत्तर में कहा, वैदिक यन्त्रालय वालों की असावधानी से लाभ उठाकर विरोधी हमारे विरुद्ध कुछ-न-कुछ लिखते रहते हैं। हम तो उत्तर देते-देते थक जाते हैं। पण्डित जी ने एक मूर्ति-पूजक की पुस्तक दिखाते हुए कहा कि देखो प्रतिमा पूजक ने यन्त्रालय वालों की असावधानी का लाभ उठाकर क्या-क्या आपत्तियाँ की है। आप लोग कुछ सुव्यवस्था करते नहीं।

सार्डा जी ने कहा कि अशुद्धियाँ पुरानी हैं, इन्हें ठीक करने का प्रबन्ध हो रहा है। यह सुनकर पं० लेखराम जी का प्रचण्ड मन्यु ऐसा चमका कि अपने लिखे ५०-६० पृष्ठ फाड़ डाले और कहा कि क्या खाक कर रहे है ?

रामबिलास जी ने वे फटे पृष्ठ एकत्रित किए तो उनसे छीन लिए। वह उदास हो गए। अगले दिन पण्डित जी को मिलने भी न गए। पण्डित जी स्वयं उनके गृह पर मिलने गये। उन्होंने आगमन का कारण पूछा तो धर्मवीर बोले, "ईश्वर जानता है सार्डा जी, आप आर्यसमाज के सच्चे प्रेमी हैं, मैं उस प्रतिमा पूजक का उत्तर अवश्य लिखूँगा।" 'साँच को आँच नहीं' पुस्तक श्री शिवनारायण कायस्थ की पुस्तक का युक्तियुक्त खोजपूर्ण उत्तर है। यह पृथक् भी छपी थी और 'कुलियात आर्य मुसाफिर' में भी यह पुस्तक १९४ पृष्ठ से २०७ तक छपी है। 'आर्य पथिक लेखराम' में प्रूफ की अशुद्धि से १९४ की बजाए १७४ छप गया है।[1] यहाँ यह भी स्मरण रखने योग्य है कि शिवप्रसाद जी ने अपनी पुस्तक का नाम कुटिलता से 'श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती की महिमा' रखा।

एक बार लिखा-लिखाया फाड़कर फिर से पुस्तक लिखकर ही चैन लिया। उनके अरमानों का मूल्याङ्कन करने के लिए निष्पक्ष सहृदय और कृतज्ञ आर्य इतिहासकारों की आवश्यकता है।

१. आर्यपथिक लेखराम, द्वितीया वृत्ति, पृ० १७८।

भेरा आर्यसमाज के उत्सव पर

२५ मई, १८९५ ई० को वीरवर आर्यसमाज भेरा (पश्चिमी पजाब) के उत्सव में सम्मिलित हुए। उनके सखा लाला मुन्शीराम जी भी वहाँ पहुँचे। भेरा का समाज सारे आर्यजगत् में एक विशेष स्थान रखता था। पण्डित जी के पुरुषार्थ व विद्वत्ता से यह उत्सव बड़ा सफल हुआ। लेखराम जी अपने पुरुषार्थ को देखकर गद्‌गद हो रहे थे।

एक उदासी साधु बालकराम उन दिनों ऋषि दयानन्द जी को गालियाँ देने का धन्धा कर रहा था। यह धन्धा उसकी कमाई का साधन था। पण्डित जी को स्थान-स्थान पर उसका पीछा करने के लिए जाना पडा। भेरा वह पहुँचा ही था कि पीछे-पीछे आर्यपथिक जा पहुँचे। आर्यसमाज ने बालकराम जी को निमन्त्रण भेजा। आर्य पथिक के सामने आकर शास्त्रार्थ किवा शङ्का समाधान करने का भी वह साहस न बटोर सका।

जाति को जीवन दो भगवान्

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ने निर्बलों की रक्षा के लिए जो कार्य किया है वह सर्वविदित है। ऋषि ने जाति में जीवन-सञ्चार करने के लिए सन्देश ही नही दिया, अपना अमूल्य जीवन भी दिया। ऋषि के शिष्यों ने भी मानव मात्र को निर्बलता के महारोग से बचने के लिए कर्मण्यता, शुचिता, सरलता, सादगी, सयम, सात्त्विक आहार, व्यायाम, दूध, दही, घृत का सेवन व ईशोपासना को जीवन का अंग बनाने का प्रचार किया। ऋषि स्वयं इसका मूर्त्तिमान उदाहरण थे। वीर लेखराम, वीर चिरञ्जीलाल, महात्मा श्रद्धानन्द, महात्मा स्वतन्त्रानन्द, महात्मा नारायण स्वामी, वीर श्यामलाल, पण्डित नरेन्द्र (स्वामी सोमानन्द जी), वीर फूलसिह आदि आर्य विभूतियों ने व्यायामशालाएँ स्थापित करवा के राष्ट्र को सतेज बनाने का अभियान चलाया।

भेरा में पण्डित जी ने 'आजकल के युवक और उनकी हिम्मत' विषय पर एक ओजस्वी व्याख्यान दिया। आपने इसमें कहा, जो युवक व्यायाम नहीं करते वे खाकर कुछ पचा भी नही सकते और जब पर्याप्त भोजन ही नही खाते तो बल कहाँ से आवे ? पण्डित जी ने यहाँ

तक कहा कि हमारे आज के युवक हस्पताल के रोगियों से भी घटिया हैं। दो-तीन फुलकियाँ खाकर उठ जाते हैं। महात्मा मुन्शीराम जी लिखते हैं कि पण्डित जी के व्याख्यान का यह भाग तो भेरा नगर के निवासियों को कण्ठस्थ ही हो गया।

महात्मा मुन्शीराम जीत गये

भेरा से लालामूसा गये। ६-७ उपदेशक थे। भोजन की व्यवस्था आर्यपथिक को सौंपी गई। सब खाकर उठ गये। मुन्शीराम जी ने आर्यपथिक का साथ निभाया। सत्रह पूरियाँ खाकर पण्डित जी उठे और हाथ धो लिए। मुन्शीराम जी ने दो पूरियाँ और लीं। इस पर पण्डित जी बोले, "लाला जी ! मैं तो आपको श्रीमन्तों में ही गिनता था। आपने तो कमाल कर दिया।"

मुन्शीराम जी की इस क्षमता से लेखराम जी दंग भी हुए और प्रसन्न भी हुए। मित्र की इस जीत पर और अपनी पराजय पर उनका उल्लसित होना, उनके ध्येयनिष्ठ होने का ही एक प्रमाण है।

सरस हृदय मस्ताना ज्ञानी

पण्डित जी कुटिलता, झूठ, छलछद्म और अनैतिकता को न सह सकते थे। ऐसे अवसर पर उनके व्यवहार को देखकर कई बन्धु उन्हे शुष्क हृदय समझते थे, परन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है। पाठक इस जीवन-चरित्र में उनके करुणामय रूप को भी देख रहे है। पर पीड़ा देखकर वह विह्वल हो उठते थे। वह अपनी तड़पन से औरों को भी तड़पाते रहे। उनके नयन पुत्र के मरण पर तो सजल न हुए, छुरा खाकर भी गालों पर अश्रुकण न टपकाए परन्तु जाति की दुर्दशा पर रक्त रोदन करते थे।

वह कितने सरस हृदय थे, इसका एक उदाहरण स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने दिया है। सुखदेव के जन्म की प्रसन्नता मे लालामूसा में भोजन के पश्चात् सब उपदेशकों को आपने सहभोज दिया। सारे भोजन का व्यय भी साधनहीन सरस-हृदय मस्ताने ज्ञानी लेखराम ने अपने पास से दिया। कितना उदार हृदय था वह !

१. आर्य पथिक लेखराम, म० मुन्शीराम, द्वितीयावृत्ति, पृ० १८५-८६।

ख़ाक अंग्रेजी पढ़े हो !

एक अंग्रेजी पुस्तक 'The Day After Death' उन दिनों प्रकाशित होकर बड़ी प्रसिद्ध हुई। पण्डित जी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पुनर्जन्म' के लिए सामग्री एकत्र कर रहे थे। आपने उपर्युक्त अग्रेजी पुस्तक मे से एक उद्धरण किसी से लिखवाया हुआ था। यह उद्धरण एक आर्य भक्त श्री लब्भूराम जी को दिखाया और इसके अर्थ पूछे।

लब्भूराम जी ने अनुवाद करके सुनाया। पण्डित जी का इससे प्रयोजन सिद्ध न हुआ। लेखक महोदय उच्च योनि से नीची योनि में आना नही मानता था। आर्यपथिक लब्भूराम जी से कहने लगे, "भाई तनिक सम्भलकर अर्थ करो। यह अर्थ कैसे हो सकते हैं। मनुष्य से जहाँ देव योनि मे जाना मानता है तो नीच पशु योनि में जाना भी मानता होगा।"

लाला लब्भूराम जी ने फिर वही अर्थ किया तो पण्डित जी बोले, "ख़ाक अंग्रेजी पढ़े हो। बी० ए० की ही मिट्टी खराब की। यह अर्थ भला कैसे हो सकते हैं ?"

मधुरभाषी विनम्र लब्भूराम जी बोले, "पण्डित जी, अर्थ तो यही हैं जो मैंने किये, परन्तु आपके दण्डे के भय से कहिये तो आपके मनचाहे अर्थ कर दूं।"

यह सुनकर पण्डित जी खुलकर खिलखिलाए और भावविभोर होकर धर्मधुन का धनी सच्चा ब्राह्मण बोला, "ईश्वर जानता है। लब्भूराम जी आप बड़े होनहार है। इन यूरोपियनों को अभी पूरी समझ नही आई। धीरे-धीरे समझ जायेंगे।"

यह घटना पण्डित जी के स्वभाव व चरित्र पर अच्छा प्रकाश डालती है। वह कभी भी बिना जाँच-पड़ताल के प्रमाण नहीं दिया करते थे। **'ईश्वर जानता है'** यह वाक्य पण्डित जी का बड़ा प्यारा वाक्य था।

प्राय: द्रवित होकर वह यह वाक्य कहा करते थे—

नहीं कोई भी चाहना और दिल में,
भला जन्मभूमि का मैं चाहता हूँ।

अपने बलिदान से ढाई वर्ष पूर्व पण्डित जी ने एक नोट लिखा। यह नोट उनके हृदय की अभिलाषा का चित्र प्रस्तुत करता है। महात्मा मुन्शीराम जी ने आर्यपथिक के हृदय की इस पुकार को सुनकर आर्य

जगत् के सामने रखा और उनके अधूरे कार्य को पूरा करने के लिए अपने सर्व सामर्थ्य से उद्योग किया। अब भी देश का भविष्य और आर्य जाति का हित हम सबसे धर्मवीर के स्वप्न साकार करने की माँग कर रहा है।

सारे भारत वर्ष को आर्य धर्म में दीक्षित करने के लिए आपने निम्न कार्यक्रम सोचा—

(१) विधवा विवाह का प्रचलन और अन्य साधनों का प्रयोग, जिससे स्त्रियाँ विधर्मी न बनें।

(२) शुद्धि-निधि—जिससे सब अवैदिक धर्मी लोगो को वैदिक धर्म में लाया जा सके।

(३) वेद-प्रचार निधि की स्थापना। यह निधि सुयोग्य उपदेशकों के निर्माण के लिए प्रयुक्त की जावे।

(४) बाल-विवाह को रोकना।

(५) सब भाषाओं में आर्य साहित्य का सृजन किया जावे। जो-जो बाते विज्ञान की वेद-विरुद्ध प्रतीत हों, उनपर विचार करके उनका समाधान करना।

(६) धर्म-प्रचार के लिए साधु कम हों तो सद्गृहस्थी उपदेशक धर्म-प्रचार करें। वर्तमान में जो साधु हैं वे सब धर्म-प्रचार करें।

(७) दान की व्यवस्था ठीक करना। आर्यपथिक जी का भाव यह है कि दान की दुरगति न हो।

ये कार्यक्रम आज भी उतना ही महत्त्व रखता है जितना कि गत शताब्दी में था। बाल-विवाह की समस्या तो अब भयावह नहीं रही परन्तु, विधवा स्त्रियो की समस्या तो पहले से भी अधिक जटिल हो गई है। अब विधवाओं की संख्या तो वैसी चिन्ताजनक नहीं। न ही विधवा विवाह पर अब किसी को आपत्ति है। राज नियम और समाज नियम यह होना चाहिए कि विधुर का विधवा से ही विवाह हो। समाज में अब भी विधवा से विवाह के लिए उत्साह नहीं है। स्त्रियो की समस्या का एक और पहलू भी है। दुर्भाग्य से आज कुमारी लड़कियों के लिए वर का खोजना और कुमारी का विवाह ही एक समस्या बन गया है। कुमारियों के लिए ही लड़के नहीं मिलते तो विधवा स्त्री का तो कहना ही क्या। हिन्दू समाज के लिए यह एक घातक समस्या है। पतित्यक्ता (Divorced) देवियो की संख्या में

निरन्तर वृद्धि भी एक चिन्ताजनक विषय है।

अत: पं० लेखराम जी का चिन्तन आज भी हमारे लिए दिशा-सूचक है। इस पर चलने से ही कल्याण हो सकेगा।

साहित्य-निर्माण की ओर भी ध्यान देने की परम आवश्यकता है। पहली व दूसरी पीढ़ी के सब आर्य नेता व कार्यकर्त्ता विद्वान् थे। बहुत से लेखक व गवेषक भी थे, केवल उपदेशक वर्ग पर ही सारे समाज का दायित्व न था। अब तो चार-पाँच (Ready made) रटे-रटाए लैक्चरों से कोई भी नेतागिरी करके जनता को मूर्ख बना सकता है। आर्यसमाज में लेखकों के पारिश्रमिक की कोई योजना या व्यवस्था है ही नही। अच्छे-अच्छे लेखकों को भी स्वयं ही अपने साहित्य-प्रसार के लिए प्रकाशकों को सहयोग देना पड़ता है। अहिन्दी भाषी प्रान्तों की प्रादेशिक भाषाओं में तथा अंग्रेजी आदि में तो साहित्य निर्माण की स्थिति ऐसी चिन्ताजनक है कि समय पर इस ओर ध्यान न दिया गया तो परिणाम और भी दु:खदायी होंगे। पं० लेखराम के हृदय की वेदना को इस युग में पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने अनुभव किया। उपाध्याय जी ने इस दिशा में जो कुछ किया है वह सदैव अविस्मरणीय रहेगा।

"वेद-प्रचार निधि का स्थान तो पाठशाला निधि ने छीन लिया है। संस्थाओ के भवनों के निर्माण का उन्माद आज विवाद व फ़िसाद का कारण बन गया है। भवनों की नींव में भावनाएँ दबकर रह गई हैं।"

उपदेशकों के निर्माण का कार्य हो रहा है। इस कार्य का महत्त्व तो तब समझा जावेगा जब पूर्ववत् लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, स्वामी वेदानन्द जी महाराज, स्वामी आत्मानन्द जी महाराज और पं० भोजदत्त जैसी विभूतियाँ इस कार्य के लिए आगे आएँ। व्यक्तियों के निर्माण के लिए व्यक्तित्व चाहिए। जो-जो सज्जन इस समय यह कार्य कर रहे हैं, वे सब आर्य जगत् के आदर के पात्र है।

साधु धर्म-प्रचार में शक्ति लगावें, यह एक ऐसा सूत्र है जिस पर दो मत नही हो सकते परन्तु साधु ऐसे हों जिन्होंने फैशन से लूट-खसूट के उद्देश्य से साधु का वेश न लिया हो, वेश मात्र से कोई व्यक्ति सन्यासी नहीं बनता, संन्यास की भी एक मर्यादा है। इसके लिए भी पात्रता चाहिए। वैराग्य का होना आवश्यक है। पं० लेखराम जी के

सम्मुख योगी योगेश्वर ऋषि-महर्षि आचार्य दयानन्द का आदर्श है। साधू ऐसे चाहिए जो संन्यासी दयानन्द की मर्यादाओं को जीवन में उतारें। इसके बिना दान दाताओं के दान की दुरगति तो होगी ही, देश-जाति का भी अनिष्ट होगा।

पं० लेखराम जन्मभूमि का हित चाहते थे। वेद का प्रचार चाहते थे। उनकी यह चाहना आज हमारी ओर निहार रही है, जिनमें अरमान हैं, उनको उभार रही है, पुकार रही है—सुनो! सुनो! बढ़ो! बढ़ो! कुछ करो।

'हम वीर हैं, डरना क्या जाने'

१२ फरवरी, १८८५ ई० को धर्मवीर पं० लेखराम जी के उपदेशों से प्रभावित होकर गंगोह जिला सहारनपुर (उ० प्र०) के बीस सज्जनों ने वैदिक धर्म की दीक्षा ली। आर्यसमाज की स्थापना कर दी गई। लाला गणेशीलाल जी गुप्त प्रधान और पं० शिवप्रसाद जी मन्त्री निर्वाचित हुए। पं० किशोरीलाल जी, लाला मूलचन्द जी व पं० केवलराम जी क्रमश: उपप्रधान, कोषाध्यक्ष एवं पुस्तकाध्यक्ष चुने गये।[1]

आर्य समाचार, मेरठ में आर्यसमाज की स्थापना का जो समाचार प्रकाशित हुआ है उसमें प० लेखराम जी की योग्यता और विद्वत्ता की विशेष प्रशंसा की गई है। गगोह में आर्यसमाज की स्थापना के समय पं० मूलराज जी भी धर्मवीर लेखराम के साथ थे।

वीर लेखराम के हृदय में एक आग थी। आपने जन-जन के जीवन में अग्नि पैदा करके दिखाई। असंख्य व्यक्तियों का जीवन ही पलट गया। मृतप्राय जाति में नवजीवन का सचार कर दिया। इसी का एक उदाहरण गंगोह की निम्न घटना है।

आर्यसमाज की स्थापना से कुछ वर्ष पूर्व तीन अग्रवाल भाई पतित हो गये थे। १८९५ ई० में आर्यसमाज के यत्न से उन्होंने वैदिक धर्म की दीक्षा लेने की प्रार्थना की। उन व्यक्तियों ने अपनी भूल का प्रायश्चित किया।

अभागी हिन्दु जाति ने हित-अहित को न जाना। आर्यों के विरुद्ध गंगोह में इक तूफान खड़ा हो गया। श्री रहतूलाल जी नाम के एक

१. 'आर्य समाचार', मेरठ, पृ० ३४५, फाल्गुण १९४१ विक्रम।

सम्पन्न युवक भी समाज के सदस्य थे। उनके पिताजी ने उन्हें शुद्धि सस्कार में भाग न लेने की किसी और व्यक्ति द्वारा प्रेरणा की। पुत्र ने पिता को कह भेजा कि मैं तो आर्यसमाज का ही साथ दूँगा। जो होगा देखूंगा। पिता ने पुत्र के दृढ़ निश्चय को देखकर कुछ न कहा।

जब पंचायत आर्यो के विरुद्ध व्यवस्था देने के लिए बैठी तो रहतूलाल जी के पिताजी ने भी बिरादरी का साथ निभाया। लोग यह समझते थे कि यह युवक पिता के भय से समाज को छोड़ देगा। रहतूलाल जी से पुनः पूछा गया। उसका एक ही उत्तर था कि "गृह-त्याग कर सकता हूँ, आर्यसमाज को नही छोड़ सकता।"

घर आए तो रहतूलाल जी के भाई श्री भक्त जी ने कहा कि जिसे बिरादरी ने अलग कर दिया वह हमारे निकट भगी है। इस पर आर्य युवक ने सहज रीति से कहा कि हमें फिर भंगी ही समझो। हम तो आर्यसमाज के साथ हैं। दोनों भाइयों की बातचीत बन्द हो गई। स्त्री से आर्यवीर ने कहा कि यदि तू मेरा साथ चाहती है तो पृथक् रसोई बना अन्यथा आज से तू भी अपने को मुझसे पृथक् समझ ले।

देवी ने पति का साथ दिया और खाना पकाना अलग कर लिया। शुद्धि देखकर तो हलचल मची ही थी। रहतूलाल जी की ओर से वहिष्कार का सहर्ष स्वागत देखकर लोग और भी दग थे। आर्य धर्म के लिए इतना जोश ! हिन्दू जाति के लिए कष्ट सहन और धर्म पर मर मिटने का अदम्य उत्साह ! आर्यो के भव्य भावों को देखकर सब दंग रह गये।

रहतूलाल जी की माता अपने पुत्र के धर्म-प्रेम को देखकर बदल गई। उसने बेटे का पक्ष लिया। दो सप्ताह में वहिष्कार टूट गया। माँ के बदलने से परिवार बदल गया परन्तु विरादरी मे अव भी नादिरशाही दुर्भावों का अभाव न हुआ। एक व्यवस्था और दी गई कि गगोह में "आर्यसमाजी अतिथि भले ही वह स्वजन हो, निकट का सगा सम्बन्धी भी क्यों न हो, किसी घर में न ठहराया जावे।" ऐसी और भी कई आज्ञाएँ थीं।

गंगोह में फिर हलचल

१८९६ ई० में करनाल से एक बरात गंगोह में आई। एक ब्राह्मण परिवार की कन्या का विवाह था। संयोग ऐसा हुआ कि करनाल के

वरपक्ष वाले आर्यसमाजी थे। आर्यसमाजी तो थे ही, वे गंगोह के अज्ञानी पोप पंथियों के लिए एक और बला ले आए। वही नरनामी गुण धामी लेखराम जिसने गगोह मे वैदिक धर्म का बीज आरोपित किया था करनाल वालो की बरात में भी सम्मिलित था।

पोंगापंथी घबराए-सटपटाए परन्तु आर्य लड़खड़ाए नहीं, डगमगाए नही। विरोध इतना हुआ कि उस दिन विवाह-संस्कार भी न हो सका। यहीं तक बस न थी। बरात को भोजन कन्यापक्ष से तो क्या बाजार से भी न मिल सके, ऐसे कुत्सित यत्न किये गये। बड़ा तंग किया गया।[1]

गोमांस के व्यापारी प० गोपीनाथ सनातनी नेता के पत्र 'मित्र-विलास' लाहौर में भी आर्यो के प्रचण्ड बहिष्कार का समाचार सगर्व छपा। यह अङ्क भी हमारे पास है।

आग्नेय पुरुष लेखराम ने इस अवसर पर अपने व्याख्यानों से वैदिक धर्म का ऐसा नाद बजाया कि पाखण्डियों के पॉव उखड़ गये। आर्यपथिक की हुकार सुनकर किसी को भी सामने आने का साहस न हुआ। अब गगोह के आर्यो के हृदय मे वीरवर ने ऐसी विद्युत् का समावेश कर दिया कि जब १८९८ ई० में एक कन्या के वैदिक रीति से विवाह के निश्चय को सुनकर रूढ़िवादी आर्यो से भिड़ने को उद्यत हुए तो मुट्ठी-भर आर्यो ने फिर अध अज्ञान की विशाल सेना पर पूर्ण विजय पाकर आर्यसमाज के स्वर्णिम इतिहास में एक और पृष्ठ जोड़ दिया।

दुःख आता है तो आने दो। सुख जाता है तो जाने दो॥
हम लेखराम से मस्ताने। हम वीर है डरना क्या जानें॥

समाज को एक अमूल्य देन

पं० लेखराम जी ने आर्यसमाज को कितने रत्न दिये, इसकी गणना करना कठिन ही नहीं असम्भव है। गुणियों के इस पारखी ने अपनी ओजस्वी वाणी व लौह लेखनी से दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट तो किया ही, अपने निकट आने वालों में से विशेष गुणी युवकों को वैदिक धर्म व जाति की सक्रिय सेवा करने की सद्प्रेरणा देकर आर्यसमाज

१. 'मैं कैसे आर्यसमाजी बना', पृ० १६२-१६६, प्रकाशक आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर, सन् १९४० ।

के लिए कई सपूत तैयार कर दिये।

इन्हीं नररत्नों में राज्यरत्न स्व० मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी भी एक थे। १८८६ ई० में बालक आत्माराम अमृतसर के राजकीय स्कूल का मैट्रिक का विद्यार्थी था। स्वर्गीय मास्टर मुरलीधर ड्राईंग पढाया करते थे।

एक दिन मास्टर जी ने अपने सुयोग्य शिष्य आत्माराम से कहा कि परसों पेशावर से हमारे दिग्गज विद्वान् पं० लेखराम जी का भाषण अवश्य सुनने आना। इस भाषण का बालक पर जो प्रभाव पड़ा वे उन्हीं के शब्दों में पढ़िए—

"श्रीमान् पूज्य धर्मवीर प० लेखराम का अमर भाषण अमृतसर समाज में सुनकर मूर्तिपूजा आर्य धर्म अथवा हिन्दू धर्म के विरुद्ध है, उसी दिन से समाज का सदस्य बन गया।"

व्याख्यान की समाप्ति पर आर्यपथिक ने बालक आत्माराम से बातचीत की। बालक स्कूल मे कभी-कभी अग्रेजी में कुछ मिनट के लिए भाषण दिया करता था। उत्सुकता से पण्डित जी से पूछा कि क्या हम भी आपके समान कभी उर्दू में ऐसे भाषण दे सकेंगे?

आर्यपथिक ने उत्साही मेधावी आत्माराम को प्रोत्साहन देते हुए कहा, अवश्य, अवश्य।[1]

तब आर्यपथिक ने अमृतसर में एक (Arya Debating Club) आर्य डिबेटिंग क्लब की स्थापना कर दी। पण्डित जी उसके अध्यक्ष बनाए गये और आत्माराम मन्त्री। बालक आत्माराम का यज्ञोपवीत संस्कार भी आर्यपथिक लेखराम ने करवाया। १८८६ ई० से लेकर जीवन के अन्तिम समय तक आत्माराम जी ने अपना इक-इक श्वास वैदिक धर्म-प्रचार में लगाया। आर्यसमाज की सेवा, दलितोद्धार, नारी जाति की सेवा, साहित्य और शास्त्रार्थों के द्वारा आत्माराम ने ऋषि मिशन की धूम मचा दी। अपना जीवन सफल बना लिया। यह सब कुछ प० लेखराम के पावन जीवन का प्रभाव था। पावक लेखराम ने एक और पावक आर्यसमाज को दे दिया।

डा० श्री चिरञ्जीव जी भारद्वाज भी पं० लेखराम जी की लग्न व तड़प से प्रभावित होकर धर्म दीवाने बने।

---

१. 'मै कैसे आर्यसमाजी बना', उर्दू पुस्तक, पृ० २९-३१, प्रकाशक आर्य-प्रादेशिक सभा, लाहौर।

जातिरक्षक लेखराम के लिए अलवर से पुकार

यह १८९५ ई० की घटना है कि अलवर (राजस्थान) में कुछ हिन्दू युवक कुसग मे फँसकर इस्लाम स्वीकार करने लगे। इससे वहाँ के हिन्दुओं में चिन्ता व्याप्त हुई। उनके सब प्रयत्न निष्फल हुए तो हिन्दुओ ने पं० लेखराम जी को पुकारा। तब सारे देश में प० लेखराम का नाम गूँज रहा था। आर्यसमाज से दूर-दूर रहने वाले हिन्दू भी, जिन्हें जाति का हित प्रिय था, हृदय से यह मानते थे कि प० लेखराम व उनका आर्यसमाज ही प्राचीन आर्यधर्म व आर्यजाति का सच्चा रक्षक है।

पं० लेखराम जी ने यह पुकार सुनी और वे सब युवक बचा लिये गये।

आश्चर्य इस बात पर होता है कि अलवर का हिन्दू राजा व उसके राजपण्डित जाति रक्षा के लिए कुछ भी न कर सके।[1]

मुसलमान भाई मुग्ध हो गया !

धर्मवीर प० लेखराम जी मालेरकोटला के उत्सव पर एक बार गए तो मुसलमान भाई भी उनके खोजपूर्ण व्याख्यानों से बड़े प्रभावित हुए। उनकी मालेरकोटला यात्रा की अन्यत्र भी कहीं चर्चा की गई है। १८९५ ई० की इस यात्रा में मुन्शीराम जी उनके साथ ही थे। जब वहाँ से आप विदा हुए तो अब्दुल—लतीफ नाम के एक मुसलमान भाई ने यात्रा के लिए शिक्रमों का प्रबन्ध किया।[2]

यह ठीक है कि मुसलमानों में एक ऐसा वर्ग था जो दिन-रात पण्डित जी के विरुद्ध विषवमन करता रहता था तथापि पण्डित जी के व्यक्तित्व व ज्ञानप्रसूता वाणी का कुछ ऐसा प्रभाव था कि उन्हें अब्दुल —लतीफ जैसे प्रशंसक मिल जाते थे।

शोध व साहित्य-सृजन की विचित्र धुन

यह उन दिनों की घटना है जब धर्मवीर प० लेखराम जी जालंधर नगर में रहते थे। दिवंगत महता जैमिनी जी भी उन दिनों जालंधर में अध्यापन-कार्य करते थे। एक दिन रात्रि के समय पण्डित जी रेलवे

---

१. सद्धर्म प्रचारक, फरवरी २२, सन् १८९५, पृष्ठ १० पर देखें।

२. देखिए वही, १० मई, सन् १८९५, पृष्ठ ६।

लाइन के पास जैमिनी जी को मिले। जैमिनी जी ने पूछा, "पण्डित जी, इस समय कहाँ जा रहे हैं ?"

पण्डित जी ने उत्तर दिया, "मुंशीराम जी (स्वामी श्रद्धानन्द जी) की कोठी पर जा रहा हूँ ?"

महता जैमिनी जी ने पूछा, "इस समय वहाँ क्या कार्य है ?"

पण्डित जी ने कहा, "घर पर तेल समाप्त हो गया है। कही लेने जाऊँगा तो बहुत समय लगेगा। लाला जी की कोठी में उनके कमरे में बैठकर लिखने का कार्य समाप्त कर लूँगा।"

इस युग के पाठक समझ ले कि तब बिजली नहीं थी। लैम्प व दीपक के प्रकाश मे ही रात्रि को पढ़ाई-लिखाई हो सकती थी।

सहृदय पाठक धर्मवीर लेखराम की इस तड़प को अनुभव करें।

उनका त्याग, उनकी अनूठी तड़प व लग्न का इस घटना से पता चलता है। वे स्वत. प्रेरणा से प्रतिक्षण लिखने-पढ़ने व अनुसंधान में सुध-बुध विसारकर जुट जाया करते थे।[1]

पण्डित जी के हृदय में धधकती ज्वाला

विक्रम् १९४७ में हरिद्वार में मेला लगा था। सहस्रों-लाखो जन ऐसे मेलों पर जाते ही है। श्री पं० लेखराम जी ऋषि जीवन की खोज में कलकत्ता हुगली की यात्रा कर रहे थे। वहीं उनको इकदम हरिद्वार के मेले का ध्यान आ गया। आपने इस मेले के विषय में तत्काल एक लम्बा लेख 'आर्य गजट' साप्ताहिक उर्दू फिरोजपुर छावनी को भेजा।

इस लेख में आर्यजगत् को प्रेरणा दी थी कि हरिद्वार के मेले पर सब बड़े-बड़े आर्यविद्वान् व कार्यकर्त्ता पहुँचे। प्रचार के अवसर को खोना नहीं चाहिए। पूज्य पण्डित जी ने प्रचार की सब योजना इस लेख में आर्यो के सामने रखी। पण्डित जी ने इस लेख के अन्त मे लिखा कि आर्य भाई इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से सोत्साह स्वीकार करेंगे तो वे (पण्डित जी) मेले में दस दिन पूर्व अर्थात् १-४-१८९१ ई० को हरिद्वार पहुँच जायेंगे।

'देशहित व धर्महित कार्यों को करते हुए उन्हें इस बात की भी

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर', उर्दू, लाहौर, १०-१७ मार्च, सन् १९३५, पृष्ठ २१ पर महता जैमिनी का लेख।

चिन्ता न थी कि सभा के प्रधान या मन्त्री से पूर्व स्वीकृति लेकर अपना कार्यक्रम बनावें। सभा के अधिकारी भी तो जानते थे कि पण्डित लेखराम के हृदय में एक प्रचण्ड अग्नि धधक रही है। उन्हें दिन-रात ईश्वर की वेदवाणी के प्रचार की ही धुन है। वे कुम्भ के मेले पर इसी उद्देश्य से तो जा रहे थे। इसी लेख के अन्तिम पैरा में आप लिखते है—

"महाशय सम्पादक इससे बढ़कर आर्यसमाज की उन्नति का कोई उपाय हो सकता है ? मुझे स्मरण है कि सन् १८८७ ई० के मेला हरिद्वार पर हम ५०-६० व्यक्ति गये थे। तो भी दो सौ ईसाइयों को आर्य बनाकर प्रायश्चित कराकर वहाँ से शुद्ध कर लाये थे। इसलिए इतने बड़े जनसमूह का इकट्ठ सब प्रकार से परमात्मा की कृपा से लाभदायक होगा और अवश्य आर्यसमाज में आर्यधर्म की उन्नति का कारण होगा। परमात्मा करे कि हम सब लोग शीघ्र पुरुषार्थ करके इस कार्य के लिए उद्यत हो।"

लेख के नीचे लिखा है—

निवेदक—लेखराम आर्यपथिक, कलकत्ता पाँच मार्च।[1]

आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि हिन्दू तीर्थों पर लाखों के जमघट में बड़े-बड़े तिलकधारी महन्तों, सन्तों व आचार्यों की उपस्थिति में ईसाई मिश्नरी प्रचार करके सैकड़ों हिन्दुओं को ईसाई बना लिया करते थे। आर्यसमाज ने ऐसे ही कुरुक्षेत्र, गढ़मुक्तेश्वर आदि के मेलों पर शुद्धियाँ करके ईसाई पादरियों के प्रचार को रोका व जातिरक्षा की।

जब पं० लेखराम ने सिखों की रक्षा की

यह अत्यन्त दुःख व खेद की बात है कि कुछ सिख इतिहासकार व पत्रकार आर्यसमाज के विरुद्ध लिखने का कोई भी अवसर हाथ से जाने नहीं देते। इन सिख भाइयों को आर्यसमाज से विचार-भेद का अधिकार है। परन्तु आर्यसमाज के उपकारों का स्मरण करके इन्हे कभी कृतज्ञता का भी प्रकाश करना चाहिए। सिख विद्वान् श्री भाई गुरुदास जी ने आर्य नीतिकारों के स्वर से स्वर मिलाते हुए कृतघ्नता को सबसे घिनौना पाप माना है। आर्यसमाज ने अनेक सिख युवकों व सिख परिवारों को मुसलमान या ईसाई होने से बचाया। इतिहास

१. देखिए आर्यगजट, फिरोजपुर छावनी, १५-३-१८९१ ई०, पृष्ठ ३।

की ऐसी बीसियों घटनाएँ हैं।

लेखराम नगर (कादियाँ) में मिर्जाइयों ने दो-तीन सिख युवकों को मिर्जाई बनाया तो आर्यसमाज के प्रमुख नेता लाला देवीचन्द जी एम० ए० ने वहाँ ओजस्वी व्याख्यान देकर हिन्दुओं और सिखों को जगाया, यह १९१८ ई० की घटना है। इन दो सिखों के मिर्जाई बनने के कारण ही १९१९ में लेखराम नगर में डी०ए०वी० स्कूल स्थापित हुआ। इस स्कूल के लिए इसी कारण स्वामी श्रद्धानन्द जी, महात्मा हंसराज जी व पं० मदनमोहन मालवीय जी ने अपील की थी। मैंने वह अपील स्वयं पढ़ी थी। ऐसी सैकड़ों घटनाएँ घटी।

आर्यसमाज के इतिहास (सम्भवत: द्वितीय खण्ड) के पृष्ठ १३०-१३१ पर डा० सत्यकेतु विद्यालंकार ने मेरे जन्मस्थान मालोमहे (पश्चिम पंजाब) के शुद्धि के गौरवपूर्ण इतिहास व आर्यों के प्रचण्ड विरोध की कुछ चर्चा की है। मेरे पूर्वजों का प्रचण्ड वहिष्कार किया गया था। इनमें भी प्रमुख कारण एक सिख जाट की रक्षा थी। उसने एक ईसाई महिला से विवाह किया। आर्यसमाज ने उसे ईसाई न होने दिया, बल्कि उस देवी को ही शुद्ध कर लिया। उस जाट को सिख ही रखा। वह पड़ोसी ग्राम का था।

प्राणवीर पं० लेखराम जी के जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना पाठकों के सामने रखता हूँ। यह घटना फरवरी, १८९४ ई० की है। स्यालकोट छावनी में बारहवीं पलटन के दो सिखों ने मुसलमान बनने का निश्चय कर लिया। वे मुसलमान बन जाते यदि आर्यसमाजी भाग दौड़ करके वीरवर पं० लेखराम को खोजकर उन्हें स्यालकोट में न लाते।

२ मार्च, १८९४ ई० को ये दोनों सिख मत परिवर्तन से पूर्व सिंह सभा स्यालकोट के पास पहुँचे। सिंह सभा वाले सिख मत सम्बन्धी उनके संशय निवारण न कर सके और उनको इस्लाम की ओर प्रवृत्त होने से न रोक सके। सिख सेनाधिकारियों ने उन्हें रोकने का यत्न किया तो एक ने सेना से ही त्यागपत्र दे दिया। दूसरा सेना में रहते हुए ही डट गया कि मैं मुसलमान बनूँगा। इतने में आर्यसमाजियों को यह सूचना मिल गई।

स्यालकोट के आर्यपुरुष लाला देवीसहाय जी ने आर्यसमाज के उपमन्त्री लाला मथुरादास जी को आठ मार्च के दिन बुलाकर कहा

कि आप कहीं से भी पं० लेखराम जी को खोजकर यहाँ लावें। 'आर्य-पथिक' के तो पाँव में चक्कर रहता ही था। वह कहाँ हैं, यह कौन बतावे? मथुरादास महात्मा मुशीराम जी सभा प्रधान के पास जालन्धर गये। उन्ही को पता हो सकता था कि पण्डित जी इस समय कहाँ हैं।

आठ मार्च की रात्रि को ग्यारह बजे पण्डित जी को तार द्वारा स्यालकोट पहुँचने की विनती की गई। वह दस मार्च १८९४ ई० को प्रातः दस बजे वहाँ पहुँच गये। नगर के निवासी (हिन्दू सिख सभी) तथा आर्य भाई भी उनकी धड़कते दिल से प्रतीक्षा कर रहे थे। तुरन्त नगर व छावनी में इश्तहार वितरित किए गए। सायं साढ़े पाँच बजे धर्मवीर का व्याख्यान रखा गया। विषय था, 'सच्चा धर्म'।

प्राणवीर पं० लेखराम अपने मित्र श्री बाबू लाभामल वकील, मन्त्री आर्यसमाज के यहाँ ठहरे। यह महाशय लाभामल कौन थे? आर्यसमाज के निष्ठावान सेवक व शिक्षाशास्त्री प्राचार्य रमेशचन्द्र जीवन की माता श्रीमती कृष्णा देवी इन्हीं लाभामल जी की सगी पौत्री हैं।

सरदार लालसिंह जी महाशय लाभामल के निवासस्थान पर पहुँचे। सरदार लालसिंह के साथ सरदार सुन्दर सिंह भी था। वह सुन्दर सिंह ही मुसलमान बनने वालों में एक था। ये दोनों सिख सज्जन पण्डित जी को व महाशय लाभामल को छावनी में सिख पलटन मे ले गए। वहाँ से यह चार बजे आर्यसमाज मन्दिर मे लौटे। इसका अर्थ यह हुआ कि पण्डित जी नहा-धोकर भोजन करके सीधे छावनी पहुँचे। कैसी लगन थी। मैं दो वर्ष स्यालकोट रहा हूँ, अतः जानता हूँ कि महाशय लाभामल के घर से छावनी तीन मील से कुछ ऊपर है। यह भी स्मरण रहे कि स्यालकोट के आर्य मन्दिर की भूमि महाराजा रणजीत सिंह के पौत्र श्री जगजोध सिंह ने दान दी थी।

आर्यसमाज का मन्दिर पाँच बजने से पूर्व ही खचाखच भर गया। जनसमूह उमड़-घुमड़कर आ रहा था। साढे पाँच बजे तक सरदार सुन्दर सिंह जी आवागमन व मुक्ति के विषय पर शंका समाधान करते रहे। पं० लेखराम जी ने शान्ति से सब प्रश्नों के उत्तर देकर सुन्दर सिंह जी को सन्तुष्ट किया।

इसके बाद पण्डित जी की ज्ञानमयी वाणी से लोगों ने 'सच्चा धर्म' विषय पर व्याख्यान सुना। आपने कहा—सच्चा धर्म वेद ही है। यही मुक्ति देने वाला है। सभा मे श्रोता साढ़े आठ बजे तक लगातार तीन घण्टे मन्त्रमुग्ध होकर पण्डित जी का व्याख्यान सुनते रहे। अन्त मे सूचना दी गई कि कल फिर पण्डित जी का व्याख्यान यहीं साढ़े पॉच बजे होगा।

अगले दिन भी आर्यसमाज मन्दिर खचाखच भरा हुआ था। सेना के सिख जवान व अधिकारी भारी सख्या में पहुँचे थे। 'सच्चे धर्म की दृढ शिला' विषय पर पण्डित जी का व्याख्यान आरम्भ हुआ। आज के व्याख्यान के प्रभाव से दो डाक्टरो तथा सेना के एक अधिकारी ने आर्यसमाज का सदस्य बनने के लिए प्रार्थनापत्र दिया।

अगले दिन अर्थात् १२ मार्च को सुन्दर सिह जी का और पण्डित जी का शास्त्रार्थ डेढ़ बजे से ४ बजे तक हुआ। सुन्दर सिह ने अन्त मे पण्डित जी से तीन बाते कही : (१) मुझे सध्या सिखाने और (२) आर्य भाषा पढाने का प्रबन्ध करे ताकि मैं आपके धर्म-ग्रन्थों की छान-बीन कर सकूँ। (३) मुझे कुछ विज्ञान् पढ़ाया जावे ताकि मै विज्ञान के सिद्धान्तों के साथ धार्मिक विचारों का मिलान कर सकूँ।

किसी शास्त्रार्थ के परिणामस्वरूप ये तीन मॉगे सर्वथा नई थीं। अन्त में पण्डित जी ने सरदार सुन्दर सिंह के कहने पर शास्त्रार्थ बन्द कर दिया। अमरीकन मिशन स्कूल के आर्य अध्यापक गोकुलचन्द जी ने कहा, 'मैं विज्ञान पढ़ाऊँगा।' श्री राधाकिशन उपप्रधान समाज ने संध्या सिखाने, आर्यभाषा पढ़ाने व अपने निजी पुस्तकालय से धार्मिक ग्रन्थ देने का वचन दिया।

अगले दिन भी पण्डित जी का व्याख्यान 'सच्चा धर्म और उसका फल' विषय पर हुआ।

श्री पण्डित लेखराम के पाण्डित्य, उनकी लग्न व वाणी के रस की सब ओर चर्चा होने लगी। हिन्दू सिखों के बच्चे-बच्चे की जिह्वा पर पण्डित लेखराम का नाम था। यह सब वृत्तान्त तब 'सद्धर्म प्रचारक' उर्दू मे छपा था। उनकी कृपा से ये सिख भाई मुसलमान होने से बच गये। श्री सुन्दर सिह ने बाद में धार्मिक क्षेत्र में बड़ी प्रसिद्धि पाई। स्यालकोट जिले में तो वे प्रसिद्ध थे ही, पंजाब के अन्य नगरों में भी वे अत्यन्त सम्मान से देखे जाते थे। उनके मन में सत्य

की खोज व सत्य को ग्रहण करने की एक तड़प थी। वह पं० लेखराम जी के प्रति सदा कृतज्ञता प्रकट किया करते थे। जब तक पण्डित जी जीवित रहे सरदार सुन्दर सिंह उनका व्याख्यान सुनने के लिए दूर-दूर पहुँच जाया करते थे।

निष्पक्ष सिख बन्धु भी इस घटना से कुछ सीखेंगे, यह हमे आशा है।[1]

धर्म धुन में मगन, लगन कैसी लगी !

सन् १८९५ ई० मे धर्मवीर पं० लेखराम जी के सगे भाई की मृत्यु हो गई। ऐसी दुःखद घटना के घटने पर उन्हे घर पर जाना ही था परन्तु पं० लेखराम जी को धर्मरक्षा के लिए दीनानगर के आर्यो ने पुकारा। वहाँ एक चिरागदीन नाम के मौलवी ने आर्यो को शास्त्रार्थ की चुनौती दे दी। उन दिनो श्री सरदार अर्जुनसिंह जी आर्यसमाज दीनानगर के मन्त्री थे। आप एक लग्नशील व उत्साही आर्य पुरुष थे। आपने आर्यसमाज की ओर से यह चुनौती स्वीकार कर ली। पं० लेखराम जी को सूचना पहुँचाई गई।

पण्डित जी २ अगस्त, १८९५ को दीनानगर पधारे। पण्डित जी का नाम सुनकर ही मौलवी चिरागदीन को तो सामने आने का साहस ही न हुआ। उसने बाहर से अकबर अली नाम के एक मौलवी को बुलवाकर आगे कर दिया। पण्डित जी के व्याख्यानों की ऐसी धूम मची कि जो हिन्दू आर्यसमाज के घोर विरोधी थे, पण्डित जी को अब दीनानगर से जाने ही न देते थे।

पौराणिक हिन्दू अब कहते थे कि पण्डित जी नही रुकेंगे तो हम बलात् उन्हें यहाँ रोकेंगे। परिणामस्वरूप पण्डित जी को आठ अगस्त तक रुकना पड़ा। ८ अगस्त, १८९५ ई० को उनका अमृतसर में व्याख्यान निश्चित था। इस कारण दीनानगर के हिन्दुओ ने उन्हें अपने नगर से जाने दिया।[2] निश्चय ही पण्डित लेखराम जी का समस्त जीवन बलिदान की एक लम्बी कहानी है। उनको मृत्यु तो बलिदानी की मिली ही, उनका पूरा जीवन भी तो तिल-तिल जलने व जीने की एक प्रेरणाप्रद गाथा है। घर के सब लोग शोकाकुल हैं। जवान भाई

१ पुस्तक मे दी गई यह घटना लेख के रूप मे कई बार पत्रो मे छप चुकी है।

२. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', उर्दू, जालन्धर ३० अगस्त, १८९५ में पृ० ६-८।

का निधन हो गया है और यह धर्मरक्षक ग्राम-ग्राम, नगर-नगर और डगर-डगर शास्त्रार्थ करता हुआ धर्म-ध्वजा फहरा रहा है। कहना बड़ा सरल है परन्तु ऐसा करके दिखाना अति कठिन है।

लो ! वह मुरादाबाद जा पहुँचे

पण्डित जी अमृतसर से भी घर न जा सके। इस आग्नेय पुरुष को तो कोई लग्न ही ऐसी लगी हुई थी कि उन्हें धर्म-प्रचार व जाति-रक्षा के अतिरिक्त कुछ सूझता ही न था। आज तो वीस-तीस पैसे के गेरू मे वस्त्र डुबोकर लोग काषाय वेश धारण कर संन्यास का ढोंग रचते हैं और अपने आपको संन्यासी कहते हैं। इस प्रकार के लोगों ने आज संन्यास जैसे पवित्र शब्द को भी कलङ्कित कर दिया है।

वीर लेखराम एक गृहस्थी थे। आप उनका त्याग व समर्पण भाव देखें कि उन्हें अमृतसर में सूचना मिली कि मुरादाबाद में श्रीराम सारस्वत ब्राह्मण नाम का एक लड़का राजपुरा देहरादून मे ईसाई बनाया गया है। पण्डितजी ने डाक्टर हुकमसिंह नाम के एक सज्जन के सहयोग से इस लड़के से सम्पर्क करके इसे मुरादाबाद में शुद्ध किया।

मुरादाबाद से प्राणवीर लेखराम अम्बाला पधारे। अम्बाला भी प्रचार किया। इस अद्भुत बलिदानी के जीवन की एक-एक घटना सुरक्षित रखने के योग्य है। खेद है कि उस समय किसी ने ऐसा पुरुषार्थ न किया।[१]

पण्डित जी को कैम्बलपुर में रोका गया

२२, २३ अक्टूबर, १८९४ ई० को पण्डित जी के सीमान्त प्रान्त के कैम्बलपुर नगर में 'वेदों की रक्षा' विषय पर व्याख्यान हुए। सद्धर्म प्रचारक में इस कार्यक्रम का समाचार छपा मिलता है। संवाददाता ने लिखा है कि पण्डित जी के व्याख्यानों का श्रोताओं पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दू देवियों ने इच्छा प्रकट की धर्मवीर पण्डित लेखराम वहाँ और कुछ दिन के लिए ठहरें। लोग कामकाज बन्द करके पण्डित जी को सुनने के लिए आते थे।[२]

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', उर्दू, पृ० १३, दिनांक ३०-८-१८९५ ई०।

२. देखिए वही, पृ० १२, दिनाक ९-११-१८९४ ई०।

पण्डित जी के व्याख्यान का प्रभाव

श्री पं० लेखराम जी जुलाई के प्रथम सप्ताह स्यालकोट गये। आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव था। पं० आर्यमुनि जी आदि कई विद्वान् वहाँ पधारे। श्री पं० लेखराम जी का ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता पर व्याख्यान हुआ। पण्डित जी ने मतपन्थों के ग्रन्थों की पड़ताल करते हुए बतलाया कि धरती तल पर वेद के अतिरिक्त कोई भी सच्ची ईश्वरीय वाणी नहीं है। शेष ग्रन्थ सब मनुष्यकृत हैं। पण्डित जी का व्याख्यान सुनकर तत्काल १५ व्यक्तियों ने आर्यसमाज की सदस्यता स्वीकार की।[1]

लाहौर में एक व्याख्यान

२६, २७ नवम्बर, १८८७ ई० को लाहौर आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव था। पं० गुरुदत्त जी विद्यार्थी का ईश्वर की सत्ता पर व्याख्यान हुआ और उनके पश्चात् श्री पं० लेखराम जी का 'सद्धर्म' विषय पर एक घण्टा तक बड़ा खोजपूर्ण और विचारोत्तेजक व्याख्यान हुआ जिसे श्रोताओं ने बड़े ध्यान से सुना। श्री पण्डित जी सदैव नये-नये प्रमाणों की झड़ी लगाकर श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर दिया करते थे। इस व्याख्यान में भी ईसाई व मुसलमानी मत की अच्छी जाँच-पड़ताल की।[2]

अजमेर पधारे

२८ से ३१ दिसम्बर, १८८७ ई० व प्रथम जनवरी, १८८८ ई० को परोपकारिणी सभा का अजमेर में उत्सव था। श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा के भारत की कंगाली व ऋषि-सन्देश पर व्याख्यान हुए। पं० लेखराम जी का सत्यमत परीक्षा विषय पर डेढ़ घण्टा तक व्याख्यान हुआ। देश के सब बड़े-बड़े समाजों से ऋषिभक्त पधारे परन्तु जोधपुर से कोई भी व्यक्ति न आया। वे लोग जो महाराजा सर प्रतापसिंह को ईमानदार व सच्चा ऋषिभक्त बताते हुए थकते नही, वे इस रहस्य को खोले तो जनता को बड़ा लाभ हो। हमारा निश्चित मत है कि सब घटनाएँ व प्रमाण इसी तथ्य की पुष्टि करते

१. देखिए 'आर्य गजट', पृ० २, दिनाक ८-८-१८८७ ई०।
२. देखिए वही, पृ० २, दिनाक ८-१२-१८८७ ई०।

हैं कि प्रतापसिंह एक कुटिल व्यक्ति था। वह अंग्रेज भक्त अवश्य था। ऋषि भक्त न था।[1]

उनकी तड़पन तो देखिए

जब पण्डित लेखराम आर्य गजट के सम्पादक थे तो आपके सम्पादकीय व सम्पादकीय टिप्पणियाँ लोगों में बड़ा जोश पैदा करती थीं। १८८७ ई० में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने श्री पं० आर्यमुनि जी को उपदेशक के रूप में नियुक्त किया। उन दिनों आप मणिराम के रूप में जाने जाते थे। पं० लेखराम जी ने श्री पं० आर्यमुनि जी की नियुक्ति का स्वागत किया। पं० आर्यमुनि जी को सभा ने पेशावर में वेदप्रचार के लिए भेजा। आपने वहाँ निरन्तर दो मास तक वेद-प्रचार किया। आपके प्रवचनों व व्याख्यानों से सत्य सनातन वैदिक धर्म की धूम मच गई। पेशावर से आप भेरा पधारे।

श्री प० आर्यमुनि जी के प्रचार का वृत्तान्त आर्य गजट मे प्रकाशनार्थ आया तो पं० लेखराम जी ने इस प्रचार यात्रा पर एक प्रेरणाप्रद टिप्पणी देते हुए लिखा कि प० आर्यमुनि जी पेशावर से इकदम भेरा आ गये, मार्ग में झेलम व रावलपिण्डी के समाज भी तो है। इनके आसपास भी तो कई कस्बे व ग्राम है जहाँ सत्योपदेश करके आर्य-समाज स्थापित करना परमावश्यक है। सम्भवत: प्रतिनिधि सभा ने ही पण्डित जी को रावलपिण्डी क्षेत्र में उपदेश करने की आज्ञा न दी हो।

पाठकवृन्द ! पण्डित जी के ये भाव उनके उत्साह व तड़पन का परिचय देते है। वे एक-एक ग्राम व एक-एक नगर में पवित्र वेद के प्रचार की कामना करते हैं। कोई स्थान वेद-प्रचार से वञ्चित रहे, यह उनके लिए असह्य है। प० आर्यमुनि जी के पाण्डित्य का सन्मान करने वाले लेखराम को यह अच्छा नही लगा कि आर्यमुनि जी पेशावर से इकदम भेरा पहुँच जावें। वीर लेखराम के निर्मल आत्मा व धर्म भाव का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है ?[2]

---

१. देखिए आर्य गज़ट, पृ० २, ८ जनवरी, सन् १८८८ ई० तथा पृ० २-३, दिनाक १५ जनवरी, १८८८ ई०।

२. देखिए 'आर्य गज़ट' साप्ताहिक फीरोजपुर छावनी, पृष्ठ ६, दिनांक प्रथम अगस्त सन् १८८७ ई०।

आर्यसमाज के नियमों पर व्याख्यान

३१ दिसम्बर, १८८७ को पण्डित जी का आर्यसमाज के 'असूल' विषय पर डेढ़ घण्टा का एक व्याख्यान हुआ था। श्री पण्डित जी द्वारा इस उत्सव के विस्तृत वृत्तान्त से पता चलता है कि यह व्याख्यान आर्यसमाज के दस नियमों पर था। पण्डित जी ने सब श्रोताओं को शङ्का समाधान का अवसर दिया। खेद है कि किसी ने तब इस व्याख्यान की पूरी रिपोर्ट न ली। आज हम पण्डित जी के उस महत्त्वपूर्ण व्याख्यान से लाभान्वित नहीं हो सकते। इस विषय की सामग्री उनके प्रकाशित साहित्य व उनके लेखो में कहीं नही मिलती।[1]

अमृतसर में धूम मचा दी

जनवरी १८८८ ई० के अन्तिम सप्ताह आर्यसमाज अमृतसर का उत्सव था। प० गुरुदत्त जी विद्यार्थी व पं० लेखराम जी आदि विद्वान् पधारे। वहाँ कुछ लोगों को पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर आपत्तियाँ थीं। पण्डित जी की पुस्तक इस विपय पर तब तक नही छपी थी। पण्डित जी इसके लेखनकार्य में तब संलग्न थे। आपने इसी विषय पर अपना प्रभावशाली व्याख्यान दिया। अकाट्य युक्तियों से पुनर्जन्म के सिद्धान्त की पुष्टि की। व्याख्यान सुनकर सबकी शङ्काओं का निवारण हो गया। पण्डित जी ने वहाँ ईश्वरीय ज्ञान विषय पर भी एक व्याख्यान दिया।[2]

पण्डित लेखराम की महानता

नाम की चाह तो मनुष्य को सदा ही रही है। इस पर विजय पाना बडा कठिन है। कीर्ति की कामना करना कोई बुरी बात नहीं। मनुष्य को यशस्वी होना ही चाहिए परन्तु मनुष्य जीवन का बड़प्पन इसी में है कि वह नाम की भूख के लिए पागल ही न हो जावे। वह कर्त्तव्यपालन को मुख्य समझे और नाम की भूख में आडम्बर न रचे।

प० लेखराम इस दृष्टि से भी महान थे। प० लेखराम जी जब आर्य गजट के सम्पादक थे तो उनको दूरस्थ स्थानों पर आर्यसमाज के सम्मेलनों व उत्सवो पर जाना पडता था। वे यदा-कदा उत्सवों

---

१ देखे वही पृ० २, दिनाक १५-१-१८८८ ई०।

२. देखिए आर्य गजट, दिनाक १५-२ १८८८ ई०, पृ० २।

का व अपनी यात्राओं का वृत्तान्त आर्य गज़ट के लिए लिखा करते थे। जहाँ भी वे जाते थे उनके व्याख्यानो की धूम मच जाती थी परन्तु आर्यगज़ट में अपने व्याख्यानों का वृत्तान्त लिखते हुए बड़ी सयत भाषा का प्रयोग किया करते थे। वे यह भी लिखा करते थे कि उत्सव में बाहर से कौन-कौन पहुँचा। ऐसा विवरण देते हुए श्री पण्डित जी सबके नाम देकर अपना नाम अन्त में दिया करते थे और नाम देने में उनकी एक विशेषता थी। वे लिखा करते थे—'विनीत, सम्पादक आर्य गज़ट।'[1]

आप पण्डित जी की इस नीति-रीति की तुलना आज के सम्पादकों व नेताओं की नीति-रीति से कीजिए। ये नेता लोग सबसे पहले और स्थूल अक्षरों में अपना नाम देंगे और किसी का नाम दें चाहे न दें। अपना व्यक्तिगत प्रचार तो ये लोग करते ही हैं। समाज के गौरव व धर्म-प्रचार की इनमें वह प्रवृत्ति ही नही। इनकी नाम की भूख देखें तो इन नेताओं को कौन धार्मिक कहेगा ?

सक्खर में पण्डित लेखराम

पं० लेखराम जी सिन्ध में बड़े लोकप्रिय थे। सिन्धी आर्य भाई उनके प्रति अगाध श्रद्धा रखते थे। १८८८ ई० के आरम्भिक महीनों में आर्यसमाज सक्खर का वार्षिकोत्सव हुआ। पं० लेखराम जी भी आमन्त्रित थे। आपने वहाँ आर्यसमाज के नियमो पर डेढ़ घण्टा व्याख्यान दिया। शङ्कासमाधान के लिए भी आध घण्टा दिया परन्तु किसी ने कोई शङ्का न की। पण्डित जी के व्याख्यान का यह प्रभाव था कि १४ सज्जनों ने आर्यसमाज की सदस्यता के लिए प्रार्थना-पत्र दिए। उर्दू, हिन्दी, सिन्धी व अंग्रेजी में आर्यसमाज के नियमों पर साहित्य वितरित किया गया।

ईश्वर-भक्ति और परोपकार

पं० लेखराम जी एक उच्चकोटि के आस्तिक थे। वे केवल ईश्वर में विश्वास ही नहीं रखते थे प्रत्युत्त सन्ध्या-वन्दन के नियम का बड़ी दृढ़ता व सहज रीति से पालन किया करते थे। पण्डित जी कहा करते थे कि भक्ति के साथ परोपकार करना भी आवश्यक है। वह भक्त कैसा,

---

१. वही, पृ० ३, दिनांक १५-१-१८८८ तथा पृ० ३, दिनांक ८-३-१८८८ ई०।

जो भक्ति में ही मस्त रहे और लोकोपकार के लिए कुछ न करे।

किन्हीं ला० रलाराम जी ने पण्डित जी को एक बार कुछ प्रश्न भेजे। उनमें से एक प्रश्न यह था कि सर्वोत्तम मद (नशा) कौन-सा है ? जिसका मनुष्य सदा सेवन किया करे।

पं० लेखराम जी ने इसके उत्तर में लिखा था —

"सब मद (नशे) मनुष्य को उन्मादी बनाते हैं। ऐसे लोगों को सुधबुध नहीं होती। हाँ ! ईश्वर का प्रेम, भक्ति तथा उसका ज्ञान मनुष्य के लिए अत्यावश्यक है और इसी ज्ञान के आनन्द में यदि मनुष्य मग्न रहे तो इससे बढ़कर कोई बात नहीं परन्तु, साथ ही जगत् का उपकार भी आवश्यक है।"[1]

जो तड़प उठे जन पीड़ा से,
वह सच्चा मुनि मनस्वी है।
जो राख रमाकर आग तपे,
वह भी क्या खाक तपस्वी है॥

'मिर्जा साहब तो स्वयं ऋणी है'

लाहौर से एक **'पैसा'** नाम का समाचार-पत्र निकलता था। इसके सम्पादक ने अपने २२-४-१८८८ ई० के अङ्क में लिखा था कि पण्डित लेखराम जी सम्पादक आर्य गज़ट ने मिर्जा गुलाम अहमद की पुस्तक ब्राहीने अहमदिया का उत्तर दे दिया है तो वे (पण्डित लेखराम) मिर्जा जी से दस सहस्र रुपया का वह पुरस्कार क्यों नहीं माँगते जिसकी मिर्जा जी ने घोषणा कर रखी थी ? पाठक स्मरण रखें कि मिर्जा साहब व उनके चेले-चाँटे अपनी पुस्तकों पर सदा ऐसी घोषणाएँ करते रहे हैं कि उत्तर देने वाले को इतने रुपये दिये जावेंगे। यह पुरस्कार मिलेगा, वह मिलेगा।

'पैसा' के सम्पादक की इस टिप्पणी पर पं० लेखराम जी ने एक नोट लिखा था कि मिर्जा तो स्वयं ऋणी है, मैं पैसा लूँ किससे ? रुपया है कहाँ ? आप ही कोई अता पता दें।

पण्डित जी को धन की प्राप्ति की लालसा न थी। उन्हें इसी बात पर सन्तोष था कि—सत्य का प्रकाश वे कर पाय हैं।

---

१. देखिए आर्य गज़ट, ८-३-१८८८ ई०, पृ० २।

ऋषि दयानन्द ने वेद बनाया ?

यह १८९४ ई० की घटना है कि धर्मवीर पं० लेखराम जी बन्नू (सीमा प्रान्त) में वेद-प्रचार के लिए गये। वहाँ पौराणिकों से आपकी धर्मचर्चा हुई। जब पण्डित जी ने वेद का प्रमाण माँगा और स्वपक्ष में वेद के प्रमाण दिये तो पौराणिको ने आर्यसमाज व ऋषि के विरोध के जोश में कहा, "तुम्हारे वेद को हम हाथ भी नहीं लगाते। यह दयानन्द का बनाया हुआ है।"[1] इस पर पण्डित जी ने शान्ति से कहा, "फिर तो ऋषि दयानन्द और भी सन्मान के योग्य हैं।" पण्डित जी के इस उत्तर का पौराणिक क्या उत्तर देते ?

अब्दुल अजीज हरजसराय बने

पं० श्री लेखराम जी ने अपनी एक पुस्तक में मौलवी अब्दुल अजीज की शुद्धि की चर्चा की है। आप ऋषि दयानन्द जी महाराज के बलिदान के थोडा समय पश्चात् ही वैदिक धर्म में दीक्षित हुए थे। शुद्ध होने पर आपको हरजसराय नाम दिया गया। पं० श्री लेखराम जी ने लिखा है कि उन्हे परोपकारिणी सभा ने शुद्ध किया। महात्मा श्री हंसराज जी के एक लेख में भी इस शुद्धि की चर्चा है। पाठक इसके लिए हमारे द्वारा अनूदित सम्पादित महात्मा हंसराज ग्रन्थावलि देखें।

महात्मा हँसराज जी ने लिखा है कि उनकी शुद्धि लाहौर आर्यसमाज द्वारा हुई। तब शुद्धि आन्दोलन का विरोध विधर्मियों से अधिक पोगापंथी हिन्दू करते थे। पं० विष्णुदत्त जी वकील ने अपने एक लेख में लिखा है कि इस शुद्धि में अमृतसर के एक पौराणिक ज्योतिषी से भी आर्य लोग सहयोग प्राप्त कर सके।

पं० लेखराम जी ने इस शुद्धि की चर्चा करते हुए अपने योगदान का उल्लेख नही किया। वास्तव में यह उन्ही के पुरुषार्थ का फल था। गुरुकुल कांगडी के पूर्व उपकुलपति श्री बलभद्र हूजा ने हमें एक पत्र में लिखा था कि श्री लाला हरजसराय उनके दादा के भाई थे। कुसग से वह मुसलमान बन गये। बड़े योग्य थे। वह Extra Assistant Commissioner बने। तब भारतीयों को इससे बड़ा पद मिलता ही न था। आप गुरदासपुर भी रहे। मौलवी फाजिल भी थे। पं० लेखराम

१. देखें सद्धर्म प्रचारक, पृ० २, दिसम्बर २८, सन् १८९४ ई०।

जी ने इसके विचार बदले और वह फिर से आर्य जाति का अंग बन गये। पं० लेखराम जी के पुण्य प्रताप से ही अमृतसर के एक प्रतिष्ठित परिवार में उनका विवाह भी हो गया। उन दिनों यह भी एक क्रान्ति थी। उनके विवाह का समाचार हमने सद्धर्म प्रचारक के पुराने अंकों में पढ़ा है।

महात्मा हंसराज जी की साक्षी को ध्यान में रखें तो यह लगता है कि इस कार्य में पं० श्री लेखराम जी ने लाहौर आर्यसमाज का भी सहयोग लिया होगा। अमृतसर वालों का तो सहयोग स्पष्ट ही है। परोपकारिणी सभा के द्वारा ही यह शुद्धि-संस्कार हुआ होगा अन्यथा प० लेखराम जी परोपकारिणी सभा की चर्चा ही न करते। इस शुद्धि ने आर्यों में बड़ा उत्साह उत्पन्न किया। इसके पश्चात् रावलपिण्डी, लाहौर, अमृतसर, गुजरांवाला, स्यालकोट, अजमेर आदि समाजों ने सैकडों बिछड़े भाइयों को शुद्ध कर दिखाया। यह सारा चक्र पं० लेखराम जी ने ही चलाया था। स्मरण रहे कि लाला हरजसराय जी का जन्म डेरा गाजीखाँ जिला (पश्चिमी पंजाब) का था। आर्यों में प्रथम मौलवी फाजिल आप ही थे। इनके पश्चात् तो पं० महेशप्रसाद जी, पं० शिवदत्त जी व प० साधुराम जी अलाहर आदि कई प्रसिद्ध आर्य विद्वानों ने यह उपाधि प्राप्त की।

महाशय अलखधारी जी से स्नेह

महर्षि दयानन्द जी ने देहरादून के श्री मुहम्मद उमर को शुद्ध कर वैदिक धर्म के द्वार मानव मात्र के लिए खोल दिये। ऋषि ने उन्हें अलखधारी नाम दिया। महाशय अलखधारी वैदिक सिद्धान्तों व ऋषि के व्यक्तित्व के प्रभाव से खिचकर आर्य बने थे। उत्तर प्रदेश में जाति-भेद व खानपान के बखेड़े पंजाब से कहीं अधिक थे। अलखधारी जी के धर्मप्रेम को जानते हुए उत्तर प्रदेश के अनेक आर्य उनसे मिलकर खाने-पीने से सकुचाते थे। महाशय अलखधारी स्वयं ही इस कारण प्रीतिभोजों से दूर रहते। वह यदा-कदा गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर आया करते थे।

पं० श्री लेखराम जी जब गुरुकुल मे आते तो वह श्रीमान् अलखधारी जी के साथ बैठकर भोजन किया करते थे। पण्डित जी देहरादून जाते तो उनके घर पर अवश्य जाते। पण्डित जी के इस सौजन्य व

सद्व्यवहार का ही प्रभाव था कि गुरुकुल कांगड़ी में आर्य लोग बड़े उत्साह से महाशय अलखधारी जी के हाथ से मिठाई लेकर खाने लगे। यह सब जानकारी सद्धर्म प्रचारक से हमें प्राप्त हुई है।

पैगम्बरों से लम्बी आयु पाने वाले मुंशी इन्द्रमणि

मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी का यह कहना था कि उन्हे २० फरवरी, १८८६ ई० को मुंशी इन्द्रमणि जी व पं० लेखराम जी के सम्बन्ध में एक इल्हाम (अल्लाह का ज्ञान) प्राप्त हुआ। मिर्जा जी ने एक लेख में ऐसी घोषणा की। इसमें मिर्जा जी ने इन दोनों से कहा कि यदि वे चाहें तो इनकी मृत्यु व भाग्य के विषय में भविष्यवाणियाँ प्रकाशित की जावें। मिर्जा जी को लोगों की मृत्यु, महामारी, भूकम्प व युद्धों के इल्हाम होते ही रहते थे। एक बार उन पर यह इल्हाम उतरा था कि उनके पुत्र पैदा होगा और पैदा हो गई पुत्री।

पं० लेखराम जी ने ऊपर के इल्हाम के बारे में कहा कि वह ऐसी बातों को निरर्थक व झूठ मानते है। मुंशी इन्द्रमणि जी ने भी कुछ आपत्ति की थी। एक बात इस विषय में यह स्मरणीय है कि अल्लाह के इल्हाम में पण्डित जी के फ़िशावरी (अरबी भाषा में प अक्षर नही होता) कहा गया इस पर धर्मवीर लेखराम जी ने स्वयं एक लेख मे लिखा था—

"हम पिशावरी नही हैं और न पेशावर हमारा वतन है। यह मुल्हम खानी (इल्हाम देने वाले अल्लाह मियाँ) की गलती है। हमारा असली वतन (मूल स्थान) जिला झेलम और हाल (वर्तमान) का मसकन (निवास) जिला रावलपिण्डी है।[1] बिना बर आ (इस आधार पर) यह पेशगोई सरासर बातिल (कतई झूठ) है"।[2]

पं० लेखराम जी ने १८९३ ई० में अपने एक लेख में मिर्जा जी के उसी वर्ष प्रकाशित हुए ये शब्द उद्धृत किए हैं, "इन्द्रमणि ने आपत्ति की और कुछ समय पश्चात् मर गया।"[3]

---

१. जिला रावलपिण्डी मे पण्डित जी का परिवार कहूटा मे रहता था। यहीं पर अब पाकिस्तान की परमाणु भट्टी है।

२. देखिए आर्य गजट उर्दू साप्ताहिक फीरोज़पुर छावनी, १-८-१८९३ ई०, पृ० ४।

३. देखिए आर्य गजट साप्ताहिक, १-८-१८९३ ई०, पृष्ठ ४।

फिर पण्डित जी ने लिखा है कि "२० फरवरी सन् १८८६ ई० को इल्हाम हुआ और मिर्जा साहिब ने उसको १८९३ ई० तक प्रकाशित न किया। स्पष्ट है कि इल्हाम देने वाले पर उनको विश्वास न था या उसको इन पर। और इस पर झूठ यह कि मुशी इन्द्रमणि तो कुछ समय के पश्चात् मर गया। कादियानी पैगम्बर साहिब ! मुंशी जी तो अप्रैल १८९१ में चल बसे अर्थात् विज्ञापन के पाँच वर्ष पश्चात् और आप लोगों को छलने के लिए लिखते है। कुछ समय पश्चात्।

इल्हामी लोग रमालों (ज्योतिषियों) की भाँति इस प्रकार की दोहरी गोट चला करते हैं। खेद ! शत सहस्र खेद ! अब वास्तविक वृत्तान्त सुनिए। मुशी इन्द्रमणि जी स्वर्गीय की आयु ७५ या ८० वर्ष की थी।[1] ३० या ३५ वर्ष उनकी पुस्तकों को प्रकाशित हुए हो चुके है। वह एक वयोवृद्ध महानुभाव थे और सम्भवत मिर्जा साहिब तथा उनके बड़े भाई प्रत्युत्त उनके सब हवारियों (अनुयायियो या चेलों) से उनकी आयु अधिक थी।[2] मसीह साहिब ३० वर्ष तथा मुहम्मद साहिब ६३ वर्ष की आयु में दिवगत हुए। मूसा के पश्चात् किसी नबी ने मुशी इन्द्रमणि जितनी आयु नहीं भोगी। इस पर मिर्जा जी का यह कहना कि कुछ अर्सा (समय) बाद फौत (मर) हो गये। क्या यह छलकपट नही ? जिस उत्तमता से उनकी मृत्यु हुई, परमेश्वर के ध्यान मे मग्न, साधारण ज्वर के पश्चात् चल बसे। पुत्र व पौत्र है। वैदिक रीति से उनका मृतक संस्कार हुआ।"[3]

इस लेख की एक-एक पंक्ति मिर्जा जी के लिए एक चुनौती थी। पं० लेखराम को तलवार, कटार का वार न डरा सका। उन्हें मृत्यु की धमकियाँ अपने मार्ग से न हटा सकीं। मृत्युञ्जय लेखराम वैदिक धर्म पताका को लेकर बढ़ते रहे। जिस निर्भीकता से अज्ञान, अविद्या की शक्तियों से वह जूझते रहे, यह उन्हीं का काम था।

---

१ डा० श्री भवानीलाल जी भारतीय की पुस्तक 'महर्षि के भक्त प्रशसक' मे मुशी जी का जन्म व मृत्यु वर्ष दोनों ही अशुद्ध छपे है।

२. स्मरण रहे कि मिर्जा गुलाम अहमद को उनके कई चेलो ने अपनी आयु के कई वर्ष दान किये। आयु सम्बन्धी उनके सब इल्हाम मिथ्या निकले। मिर्जा साहिब लगभग ६८ वर्ष जी सके। उनके शव···मुंशी जी उनसे कही अधिक शान से जिए व शान से मरे।

३. देखें आर्य गजट, उर्दू साप्ताहिक, १-८-१८९३ ई०, पृ० ४।

"जहाँ कहीं भी

उन्हें पता लगता

कि आर्यसमाज पर

किसी ने आक्षेप किया है

तो वे तुरन्त

उसका प्रतिवाद

करते थे।

उन्हें आर्य सिद्धान्तों पर

अटल विश्वास था।

अकुतोभय होकर

वे सर्वत्र विचरते थे।"

हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के फ़ील्ड मार्शल

अजयी विजयी सेनानी

स्वतन्त्रानन्द जी महाराज।

बटाला में डेरे डाल दिये

जब महर्षि दयानन्द के विषपान, अमर बलिदान के पश्चात् मिर्जा गुलाम अहमद जी ने अंग्रेजों की स्तुति करते हुए आर्य धर्म व हिन्दू जाति पर प्रहार करने आरम्भ कर दिये तो पण्डित जी ने कुछ समय के लिये गुरदासपुर जिला के सबसे बड़े नगर बटाला मे भी निवास किया।[1] वह पेशावर आर्यसमाज के प्रधान के रूप में सारे आर्यजगत् में नाम पैदा कर चुके थे। बटाला में रहकर वह मिर्जा साहिब के कुचक्रो का उपयुक्त उत्तर दे सकते थे। भ्रमोच्छेदन के लिए वह अहर्निश जागरूक रहते थे।

हमारा मत है कि पण्डित जी ने ही इस आर्यसमाज की स्थापना की। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के इतिहास मे इस समाज का नाम तो है, कुछ वृत्तान्त नही दिया गया। हमारे मत का एक सबल आधार है। पण्डित जी ने बटाला-निवास के दिनों में एक विज्ञापन निकाला था। इसका शीर्षक था—**'इलान का बतलान'**।

अर्थात् मिथ्या घोषणा। यह विज्ञापन आपने 'आर्यसमाचार' मेरठ को भी प्रकाशनार्थ भेजा। 'आर्यसमाचार' में इसी शीर्षक से यह छपा है। शीर्षक के नीचे प्रथम वाक्य का आरम्भ ही ऐसे है—"पण्डित लेखराम साहिब सैक्रेटरी आर्यसमाज बटाला ने एक इश्तहार बउनवान 'इलान का बतलान' हमारे पास बग़रज इन्दराज रसाला भेजा चुनाचे नकल उसकी हरफन दर्ज जैल की जाती है। पण्डित साहिब तहरीर फ़रमाते हैं कि अशख़ास मन्दरजा इश्तहार मिर्ज़ा गुलाम अहमद के धोखे से बिलकुल निकल गये हैं और अब कसरत से मिम्बर आर्य समाज हो रहे है। कादिया समाज परमात्मा की कृपा से रोज़ बरोज तरक्की पर है।[2]

---

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचित्र इतिहास, पृ० २६।

२ 'आर्यसमाचार' मासिक, पृ० २१५-२१६, भाद्रपद, १९४२ विक्रमी (१८८५ ई०)।

इन पंक्तियों का भाव यह है कि इस विज्ञापन में अंकित व्यक्ति मिर्जा गुलाम अहमद के जाल से सर्वथा निकल चुके हैं। अब बहुत सज्जन आर्यसमाज के सदस्य बन रहे हैं। कादियां समाज प्रभु कृपा से दिन-प्रतिदिन उन्नति कर रहा है।

'आर्य समाचार' के इस उद्धरण से स्पष्ट है कि पण्डित जी ने ही बटाला का आर्यसमाज स्थापित किया और इसको चलाने के लिए वही इसके प्रधानमन्त्री बने। जो विज्ञापन पण्डित जी ने छपवाया वह हम इस पुस्तक में अन्यत्र देंगे।

आर्यपथिक की धूम

मालेरकोटला में त्रिमूर्ति का शुभ आगमन—१३ अप्रैल, १८९५ ई० को आर्यसमाज मालेरकोटला में वार्षिकोत्सव था। पं० लेखराम भी अपने-सखा मुन्शीराम जी के साथ उत्सव में सम्मिलित हुए। लेखराम के एक और प्यारे अभिन्न हृदय सखा पं० कृपाराम जी भी वहाँ पधारे हुए थे। मालेरकोटला के नवाबी राज्य में पं० लेखराम जी के पहुँचने की धूम मच गई। मध्याह्नोत्तर का समय धर्म-चर्चा के लिए निश्चित था। एक मौलाना अब्दुललतीफ जी ने पुनर्जन्म पर कुछ प्रश्न किये। अद्वितीय शास्त्रार्थी पं० कृपाराम जी (महान् दर्शनानन्द) शंका समाधान कर रहे थे। प्रत्येक उत्तर के पश्चात् मुन्शी अब्दुललतीफ जी केवल यह कह देते कि मेरी सन्तुष्टि नहीं हुई। जब तीन चार वार मौलाना ने ऐसा ही किया तो मुन्शीराम जी ने मौलवी जी को पं० कृपाराम जी का भाव समझाने का यत्न किया। इस पर मौलाना बहुत बिगड़े। जब प्रबन्ध के लिए दो तीन वार ला० मुन्शीराम जी उठे तो मौलाना ने चिल्लाकर कहा—"आप कौन हैं जो बार-बार प्रबन्ध के लिए उठते हो ?"

लालाजी ने उत्तर दिया कि मै स्थानीय प्रधान जी की आज्ञा से प्रबन्ध कर रहा हूँ। मौलाना को लाला जी के कथन पर विश्वास न आया तो स्थानीय प्रधान जी ने उठकर लाला मुन्शीराम जी के कथन की पुष्टि की। लाला मुन्शीराम जी ने कहा—"मैं पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रधान हूँ इसलिये प्रबन्ध मे हस्तक्षेप कर सकता हूँ।"

मुन्शी अब्दुललतीफ ने इस पर कहा—"आपका नाम किसी प्रतिनिधि के सम्बन्ध में, किसी समाचार पत्र में, विशेषतया सद्धर्म प्रचारक

में भी कभी नहीं पढा। आप कतई प्रतिनिधि सभा के प्रधान नहीं है।"

लाला मुन्शीराम जी को इस पर कुछ सन्देह-सा हुआ। आपने तब अपनी स्वाभाविक सूझ से पूछा—"क्या आप मेरा नाम भी जानते हैं ?"

मौलाना ने झट से कहा—"भली-भाँति जानता हूँ। आप पंडत (पंडित) लेखराम साहिब हैं।" यह सुनते ही श्रोतागण खुलकर खिल-खिलाए और लाला मुन्शीराम जी को अनायास यह पंजाबी लोकोक्ति स्मरण हो आई—

"नामी शाह खट्ट जाए, बदनाम चोर मारा जाए।"

मौलाना ने धर्मवीर लेखराम के व्याख्यान भी सुने। मौलाना पर आर्यों की त्रिमूर्ति का गहरा प्रभाव पड़ा। लाला मुन्शीराम जी का व्याख्यान सुनने के पश्चात् इसी मौलाना महोदय ने उनके हाथ में पाँच रुपये रखते हुए कहा—"आप किसी भी पवित्र कार्य मे इस राशि को व्यय कर सकते है।"

यह दृश्य !

लाला मुन्शीराम कई दिन से थके-टूटे थे। दिन-रात कार्य करना पड़ता था। एकान्त में जाकर सो गये। एक घण्टे के पश्चात् दो भाई आकर उनके पाँव दबाने लगे। लालाजी जाग गये। इन भाइयों ने क्षमा माँगते हुए कहा, शीघ्र करें, अभी चलें, अनर्थ होने लगा है। नवाब का राज्य है और पं० लेखराम ने मुसलमानों से शास्त्रार्थ छेड़ दिया है। लाला जी भागकर वीरवर के पास गये। वहाँ गये तो विचित्र दृश्य देखा। चार-पाँच मुस्लिम भाइयों से घिरे पण्डित जी प्रेम से धर्म वार्ता कर रहे है। एक मुसलमान युवक का हाथ पण्डित जी ने अपने हाथ में थाम रखा है। अपना दूसरा हाथ उसकी जाँघ पर रखकर उसे कुछ समझा रहे हैं।

वह युवक बोला, "यह प्रमाण तो पण्डित जी आपने कुरान शरीफ से निकाल ही दिया। अब तो मै अपने मौलवी साहिब से फिर पूछकर आऊँगा।" पं० लेखराम के दिल में जो लग्न लगी हुई थी उसे वह युवक क्या जाने।

पण्डित जी बोले, "मैं तो पथिक हूँ, न जाने फिर कब मिलन हो,

हो वा न हो। मेरा आशय तो सुन लो।"

आध घण्टा तक परमेश्वर की कल्याणी वाणी की श्रेष्ठता बता-समझाकर धर्मोपदेश देकर अत्यन्त प्रेम से उनको विदा किया।

किसके भरोसे धर्म-प्रचार कर रहा हूँ ?

मालेरकोटला की ही एक और घटना इसी से सम्बन्धित लाला मुन्शीराम जी ने लिखी है। जब मुसलमान बन्धु चले गये तो पण्डित जी को लाला मुन्शीराम जी के वहाँ पहुँचने के प्रयोजन का पता चला तो स्थानीय आर्यसमाजियों से कहा, "तुम बड़े थोथे हो। क्या मैं तुम जैसे लोगो के भरोसे पर पवित्र वैदिक धर्म का प्रचार कर रहा हूँ ?'

"ईश्वर जानता है, तुमसे अविश्वासी नास्तिकों से तो नमाजी मुसलमान सहस्र गुना अच्छे हैं।"[1]

पाठक ! अन्तिम वाक्य में पं० लेखराम के रोम-रोम में ओत-प्रोत ईश्वर विश्वास व वैदिक धर्म-प्रचार की तड़प को देखें और यह भी देखें कि वह अपने बेगाने के गुण-दोष का बखान करने में कितने निष्पक्ष थे। जैसे महर्षि ने यूरोप वालों के चारित्रिक सद्गुणो को स्वीकार किया व देशवासियों के दोषों पर रक्त-रोदन किया है, ऐसे ही यहाँ आप पं० लेखराम के हृदय चित्र को देख सकते हैं।[2]

आत्म विश्वास ध्रुव की तरह है अटल,
क्या बिगाड़ेंगे मेरे विरोधी प्रबल।
हाथ में मेरे बायें विजय क्यों न हो,
पूर्ण पुरुषार्थ जब दाहिने हाथ है।

—कविरत्न 'प्रकाश'

हिन्दू, कब सुरक्षित होंगे ?

पं० विष्णुदत्त जी, बी० ए०, एल-एल० बी० ने अपने संस्मरणों मे लिखा है कि पण्डित जी कहा करते थे कि जब हिन्दू, इतने दृढ़ हो जावेंगे कि वे मुसलमान पुरुष किवा स्त्री को अपना सहधर्मी बना सकेंगे तो उस समय सुरक्षित हो जावेंगे। वह अमृतसर के दरबार साहिब का उदाहरण प्राय: दिया करते थे कि वहाँ मुसलमान रबाबी

१. महात्मा मुन्शीराम लिखित पण्डित जी का जीवन चरित्र, पृ० १०६-१०९।
२. सत्यार्थप्रकाश : समुल्लास एकादश।

कई पीढियों से गुरु ग्रन्थ साहिब के भजन गाते हैं किन्तु, फिर भी मुसलमान है। यदि यही विपरीत स्थिति हिन्दू की हो—वह भी किसी मस्जिद में प्रतिदिन दीपक जलाता हो या कुरान का पाठ करता हो तो सम्भव नहीं कि वह एक पीढ़ी में भी अपने धर्म पर टिका रहे।[1]

'एक ही बार धूल झाड़ लेंगे'
करतारपुर में आर्यसमाज की स्थापना का दृश्य

आर्यप्रतिनिधि सभा, पंजाब के इतिहास लेखक स्व० आचार्य चमूपति जी ने लिखा है—"श्री महात्मा मुन्शीराम और पं० लेखराम के पुरुषार्थ से यहाँ सन् १८९४ ई० में आर्यसमाज की स्थापना हुई। जब प० लेखराम उपदेश दे रहे थे तो पौराणिकों ने उन पर पत्थर फेंके। इस पर पण्डित जी ने अपनी पगड़ी उतारकर कहा—मुझे ये पत्थर खाने में बडा आनन्द आ रहा है। ऐसा भी समय आयेगा जबकि मेरे मिशन के प्रचारकों पर लोग पुष्प बरसायेंगे। इस उपदेश के अनन्तर यही आर्यसमाज की स्थापना हुई।[2]"

आर्यसमाज के प्रसिद्ध लेखक, शास्त्रार्थी एव—

'मुझे धर्म वेद से हे पिता सदा इस तरह का प्यार दे'

भजन के रचयिता महाशय चिरजीलाल जी 'प्रेम' करतारपुर के ही थे। उनके पिता लाला शंकरदास जी स्टेशन मास्टर को आर्यसमाज करतारपुर की स्थापना के समय वीर लेखराम के आतिथ्य का सौभाग्य मिला था। वह स्वयं उस अवसर पर करतारपुर में थे। उनके मुख से इन पंक्तियों के लेखक ने १९४८ ई० में लेखराम बलिदान पर्व पर करतारपुर के समाज की स्थापना का सारा वृत्तान्त सुना था। उन्होंने 'आर्य मुसाफिर' के फरवरी १९३१ ई० के बलिदान अंक में 'शहीद के चरणों में' अपने सम्पादकीय में इस घटना का जो वृत्तान्त दिया है उसको हम यहाँ उन्हीं के शब्दों में देते हैं।

"मुझे यह गर्व प्राप्त है कि मुझे सर्वप्रथम वैदिक धर्म का परिचय वीरशिरोमणि प० लेखराम जी की वाणी से प्राप्त हुआ था। संभवत:

---

१. 'आर्यमुसाफिर', फरवरी, १९३१, पृ० ५३।

२. आर्यप्रतिनिधि सभा, पंजाब का इतिहास, परिशिष्ट का पृ० १७।

१८९५ अथवा १८९६ ई० की घटना है कि श्री पण्डित जी करतारपुर पधारे। इससे पहले कोई विरला उपदेशक ही करतारपुर में गया हो। मैं यहाँ यह उल्लेख कर दूँ कि कस्बा करतारपुर को आर्यसमाजी क्षेत्र में एक विशेष महत्त्व प्राप्त है। क्योंकि उसे गुरु विरजानन्द जी की जन्मभूमि होने का गर्व प्राप्त है। हमारे स्कूल के मुख्याध्यापक लाला हरिराम जी (नकोदर निवासी जो पश्चात् वकालात वहाँ करते रहे) ने पण्डित जी को प्रचारार्थ बुलाया था। स्कूल के सब छात्र स्टेशन पर पण्डित जी के स्वागत के लिए गए। छात्र बड़ी उत्सुकता से पण्डित जी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। क्योंकि प्रायः यह प्रसिद्ध था कि आज एक आर्य ने आना है। उन दिनो आर्य भी एक विचित्र-सा व्यक्ति होता था।

जब पण्डित जी पधारे हमने देखा कि उनकी पगडी का अधिक भाग खुलकर उनके गले में पड़ा हुआ था और एक अल्प भाग सिर को सुशोभित कर रहा था। उस सायं को किला के नीचे पण्डित जी का व्याख्यान हुआ। उपस्थिति बहुत अधिक थी। क्योंकि पण्डित जी के आगमन से पूर्व ही नगर में चर्चा आरम्भ हो गई थी कि आज एक आर्य आ रहा है। मुझे अच्छी प्रकार से स्मरण है कि पण्डितजी ने अपने व्याख्यान को इन शब्दों के साथ आरम्भ किया---

शत्रु की आँख सदा शत्रु को बुरा देखती है। देखो! हम लोग महाराजा रामचन्द्र जी को मर्यादा पुरुषोत्तम और लका वालों को राक्षस कहते हैं···।"

'प्रेम' जी ने लिखा है व कहा करते थे कि भाषण के आरम्भ होते हुए ही "मूर्ख और दुष्ट लोगों ने मिट्टी, धूल और ईट-पत्थर वर्षाना आरम्भ कर दिया।"

बहुत कुछ समझाने पर भी उद्दण्ड धूर्त लोग न रुके। उत्सव बन्द करना पड़ा। समाप्ति से पूर्व प्राणों के निर्मोही लेखराम ने गर्जना करते हुए कहा, "स्मरण रखो, तुम इस प्रकार धूल-मिट्टी उड़ाकर मुझे सद्धर्म के प्रचार से नहीं रोक सकते। मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है कि मैं करतारपुर में आर्यसमाज स्थापित करके ही छोड़ूँगा।"

जब उत्सव के स्थान से चलने लगे तो बाबू शंकरदास जी ने कहा, "आप वस्त्रों पर से मिट्टी तो झाड़ लें।"

हुतात्मा ने उत्तर दिया, "बाबू जी! स्टेशन पर पहुँचकर इकट्ठी

ही मिट्टी झाड़ेंगे, अभी क्या पता मार्ग में कितनी और पड़ेगी।"[1]

विरोधियों के लिए रक्त साक्षी लेखराम के मन में कोई कटुता नहीं थी। वैदिक धर्म के प्रचार की कभी न बुझने वाली उसकी प्यास इन शब्दों में ओत-प्रोत है। आचार्य दयानन्द का जीवनी लेखक लेखराम मानो करतारपुर में, काशी शास्त्रार्थ १८६९ ई० के अवसर पर महर्षि के साथ किये गए दुर्व्यवहार पर भी यतिवर दयानन्द के अकम्प मन व उदार हृदय का चित्र अपनी आँखों में खींचकर अपने जीवन में ऋषि जीवन का अनुवाद कर रहा था।

पाठकवृन्द ! क्या यह इसी घटना का तो अमिट प्रभाव नहीं था जो 'प्रेम' जी ने अपने भजन में यह पद लिखा—

'वह उदार दिल दयानन्द का घड़ी भर मुझे भी उधार दे।'

ऋषि की उदारता का आदर्श लेकर लेखराम अपने पथ पर आगे बढ़ते रहे।

महात्मा मुन्शीराम जी का एतद्विषयक लेख

महात्मा मुन्शीराम जी ने भी करतारपुर के आर्यसमाज की स्थापना का सक्षिप्त वृत्तान्त दिया है। वह लिखते हैं कि "इन्ही दिनों पं० लेखराम ने करतारपुर (जिला जालन्धर) में आर्य-धर्म की रक्षा के लिए दो बार जाकर धर्मोपदेश दिए और ऐसी जबरदस्त धार्मिक हलचल मचाई कि वहाँ एक प्रबल समाज स्थापित हो गया।"[2]

इससे यह स्पष्ट है कि यह समाज १८९४ ई० मे नही बना। महात्मा मुन्शीराम जी ने इस वृत्तान्त से पहले रोपड़ के वार्षिकोत्सव की चर्चा की है। रोपड़ का समारोह २९ से ३१ मई, १८९६ ई० तक हुआ था। अतः महाशय चिरंजीलाल जी का लेख ही ठीक प्रमाणित होता है कि करतारपुर में आर्यसमाज १८९६ ई० को स्थापित हुआ।

महात्मा मुन्शीराम जी इसकी स्थापना का सारा श्रेय धर्मवीर को ही देते हैं। यद्यपि पं० चमूपति जी के लेखानुसार महात्मा जी का उद्योग भी इस दिशा में प्रशंसनीय था। यह क्षेत्र तो वैसे ही उनका अपना था। यह मुन्शीराम जी की नम्रता है कि वह अपने पुरुषार्थ की चर्चा नही कर रहे।

---

१ 'आर्य मुसाफिर', मासिक फरवरी १९३१ ई०, सम्पादकीय, पृ० ३-४।
२. 'आर्य पथिक लेखराम', द्वितीयावृत्ति, लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, पृ० १४९-५०।

ग्रन्थ के छपते-छपते हमें महता जैमिनी जी (तब जमनादास) के एक लेख व सद्धर्म प्रचारक में एक टिप्पणी से यह स्पष्ट प्रमाण मिल गये कि १२-७-१८९७ ई० को पण्डित जी के 'आर्यसमाज के उद्देश्य' विषय पर भाषण के बाद ही वहाँ समाज स्थापित हुआ।[1]

आग्रह करने पर न किसी के
अपनी इच्छा से ही हमको
असि धारा सम दुर्गम पथ पर,
चलना अङ्गीकार हो गया

—कविरत्न 'प्रकाश' जी

हम रुकना झुकना क्या जानें।
हम दयानन्द के दीवाने॥

पं० लेखराम स्मारक समिति की ओर से पण्डित जी के बलिदान पर जो सबसे प्रथम पुस्तिका प्रकाशित हुई उसमें लिखा है—"आपके साहसिक स्वभाव एव धीरज की यह स्थिति थी कि गत अप्रैल में आप जब मुस्तफाबाद जिला अम्बाला के आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर पधारे तो उस समय दूर-दूर से चार-पाँच सौ के लगभग बड़े-बड़े मौलवी व मुसलमान बदला लेने की दुर्भावना से इकट्ठे हुए थे। परन्तु उस समय वह केसरी इतने मौलवियों की भीड़ में तभी वेद एवं कुरान की सत्यता की तुलना किए बिना न टला और इससे भी बढ़कर यह बात कि सायं को दो-तीन मील तक वह अकेले ही वायु सेवन के लिए दोनो दिन जाता रहा। ऐसे दृश्य एक-दो स्थानों पर नहीं अपितु, सदा ही और अनेक स्थानों पर देखने को मिलते रहे।"[2]

सदा मौत को भय दिखाता रहा वह।
सदा संकटों को नचाता रहा वह॥—'जिज्ञासु'

प्राणों के निर्मोही ईश्वर-पुत्र लेखराम

"पण्डित जी को विज्ञापनो द्वारा, अग्रिम सूचना (Notice) द्वारा, रजिस्ट्री पत्रों द्वारा, व अन्य पत्रों एवं समाचार-पत्रों द्वारा, लिखित व मौखिक धमकियों द्वारा धमकाया गया कि आपको दण्ड दिया

---

१. 'सद्धर्म प्रचार' १७-७-१८९६, पृ० ४; वही, १४-८-१८९६ ई०, पृ० ६।

२. पं० लेखराम आर्य मुसाफिर का धर्म पर सच्चा बलिदान, लेखक श्री बनवारीलाल, पृ० ९-१०।

जावेगा परन्तु पण्डित जी ने अपना मिशन कतई नहीं छोड़ा अपितु वह अन्तिम श्वास तक दृढ़ता और निष्ठा से अपने लक्ष्य की पूर्ति में जुटे रहे और इन गीदड़ भभकियों की तनिक भी चिन्ता नहीं की।"[1]

महता जैमिनी जी (तब जमनादास बी० ए०) के पण्डित जी के बलिदान के समय लिखे ये शब्द दर्शाते है कि जब चारों ओर से उनको मृत्यु का भय दिखाया जा रहा था, प्राणवीर प्राणों का निर्मोही लेखराम अकम्प ही रहा।

'यह हैं पं० लेखराम'

पं० लेखराम स्मारक समिति की ओर से प्रकाशित १३वीं पुस्तिका के लेखक ने एक घटना दी है। मार्च १८९६ ई० में पण्डित जी देहली पधारे। पुस्तिका लेखक भी उनके साथ था। पण्डित जी को देहली में कुछ इस्लामी साहित्य क्रय करना था। मिर्जा गुलाम अहमद ने आर्य धर्म पर कुछ आक्षेप किये थे। उन्हीं के उत्तर के लिए इन पुस्तकों की आवश्यकता थी। दस-पन्द्रह रुपये की पुस्तके थी। एक पुस्तक विक्रेता के पास पण्डित जी गये। पण्डित जी ने पुस्तकों का नाम बताया और पुस्तकें माँगीं।

पुस्तक बिक्रेता ने ग्राहक से पूछा आप कौन हैं? आपका क्या नाम है? ग्राहक के साथी ने कहा यह जाति रक्षक धर्मवीर पं० लेखराम जी हैं। बस इतना कहना था कि पुस्तक विक्रेता ने बड़ा सेवा-सत्कार किया और जितनी पुस्तके पण्डित जी को चाहिए थी, वे दे दी। पण्डित जी ने मूल्य दिया तो उस सज्जन ने लेने से इन्कार कर दिया। पण्डित जी के बारम्बार आग्रह करने पर भी उस पुस्तक विक्रेता ने मूल्य न लिया। उस सज्जन का नाम था बाबू दुर्गा प्रसाद।[2]

बाबू दुर्गाप्रसाद तू भी धन्य था जिसने धर्मवीर प्राणवीर, जाति रक्षक, ज्ञान प्रसारक आर्य पथिक पं० लेखराम के प्रति इतनी श्रद्धा व्यक्त की और मेरे प्यारे लेखराम, बलिदानी ज्ञानी लेखराम! मेरे प्यासे नयन विह्वल और व्याकुल होकर तुझे दशो दिशाओं में खोजते है। बता तू कहाँ है? धन्य था तू लेखराम! तीस रुपये तेरी मासिक

---

१. 'श्रीमान् पं० लेखराम जी की काबिले यादगार शहादत', पृ० १२।

२. आर्यधर्म की तोहीन और बेअदबी करने मे इस्लाम की पेशकदमी, पृ० २८।

दक्षिणा और १५ रुपये का साहित्य देश, जाति व सत्य की रक्षा के लिए क्रय करता है। पुस्तक विक्रेता मूल्य नहीं ले रहा और तू देने पर हठ कर रहा है। धर्म मेघ लेखराम ! सच्चे ब्राह्मण लेखराम ! वीर विप्र लेखराम तुझे शत-शत प्रणाम।

जब प्रभात से रात हो गई थकने की क्या बात

इसी अवसर पर एक पुस्तक की खोज में पण्डित जी ने देहली के सब बड़े-छोटे पुस्तक विक्रेताओ से पूछताछ की। पुस्तक कही भी न मिली। प्रात: से सायंकाल तक चलते रहे। तब रिक्शा आदि की भी सुविधाएँ नही थी। पुस्तक न मिली। पुस्तक का नाम भी घटना का वृत्तान्त देने वाले महाशय जी को भूल गया। पण्डित जी के साथ चलते-चलते उनका यह साथी थक-टूट गया और इस पुस्तक की खोज में लगे इस हठी गवेषक के संग से भी ऊब गया। तंग आकर मित्र ने पूछा, "पण्डित जी, ऐसी भी क्या पुस्तक है जिसके लिए इतना कष्ट झेल रहे है ?"

आर्य पथिक ने उत्तर दिया, "मिर्जा गुलाम मुहम्मद के रसाला 'आर्य धर्म' के उत्तर लिखने के लिए उस पुस्तक में से मसला 'लफ हरीरी' देखना है।"

पण्डित जी के साथी ने तो इस्लाम के 'मसला लफ हरीरी' की बाबत कभी कुछ सुना ही न था। इसलिए पण्डित जी से पूछा कि यह 'लफ हरीरी' किस बला का नाम है ? तब पण्डित जी ने बताया कि यह इस्लामी 'मुता' से भी दो पग आगे की बात है।[1]

पं० लेखराम जी के जीवन की एक-एक घटना उनके समर्पण भाव का चित्र उपस्थित करती है। धर्म प्रचार, धर्म रक्षा एवं जाति सेवा नारो, जयकारों और शब्द मात्र से नहीं हो सकती। धर्म की दुहाई देने वाले छोटे-से-छोटे कार्यकर्त्ता और बड़े-से-बड़े नेता को इस घटना पर विचार करना चाहिए और पण्डित जी के हृदय की विह्वलता को अनुभव करना चाहिए। इस विह्वलता से विहीन लोग आर्य धर्म का प्रसार नहीं कर सकते।

---

१. वही पुस्तक, पृ० २८-२९।

एक ऐतिहासिक घटना और उसका विवेचन

लड़का तेरा बीमार था।
शुद्धि को तू तैयार था ।।
मरने का पहुँचा तार था।
पढ़कर के तार यूँ कहा।
लड़का मरा तो क्या हुआ।
दुनिया का है यह सिलसिला।

इस भजन में आंशिक सत्य है।

१८९६ ई० की घटना है। महात्मा मुन्शीराम (तब बाबू मुन्शीराम 'जिज्ञासु' थे) आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान थे। महता जैमिनी जी सभा प्रधान के पास बैठे थे। पण्डित जी प्रचार से लौटकर आए। महात्मा जी ने कहा, ग्राम मुस्तफाबाद में पाँच हिन्दू मुसलमान होने वाले हैं। आपका प्रिय पुत्र रुग्ण है। आप तो उसका पता करें। मैं हकीम सन्तराम जी को तार देकर वहाँ जाने के लिए कहता हूँ। यह मोगा वाले वैद्य सन्तराम से भिन्न एक अन्य आर्य विद्वान् थे।

पण्डित जी ने कहा, "नहीं, वहाँ तो मेरा ही जाना ठीक है। मुझे अपने एक पुत्र से जाति के पाँच पुत्र अधिक प्यारे है। आप वहाँ तार दे दें। मै सात बजे की गाड़ी से सायं को चला जाऊँगा।" केवल दो घण्टे के लिए घर गये। माता व पत्नी को धीरज बँधाया। उनकी अनुपस्थिति में डा० गंगाराम जी ने बड़ा उपचार निदान किया परन्तु सुखदेव न बचाया जा सका।[1] २८ अगस्त, १८९६ ई० को वह चल बसा।[2] ईश्वर के अटल नियम और विधि-विधान के सम्मुख झुकना ही पड़ता है। हजरत मुहम्मद जी ने कई विवाह किये। एक पुत्र हुआ, वह भी ईश्वर ने ले लिया।

इसी घटना के सम्बन्ध में लिफाफे वाली घटना की भी चर्चा की जाती है। उन दिनों पण्डित जी की कीर्ति सर्वत्र फैल चुकी थी। उनकी विद्वत्ता व लग्न की धूम थी। ऐसे अवसर पर उनको सीधे पत्र भी लिख दिये जाते थे। इसलिए लिफाफे तो उनको आते थे, यह ठीक है परन्तु लिफाफे वाली कविता की पुष्टि में हमें कोई प्रमाण नहीं मिला।

---

१. 'आर्य वीर' का १९५३ ई० का शहीद अंक, पृ० ९-१० देखें।

२. चाचा गडाराम लिखित पण्डित जी का जीवन चरित्र, पृ० १४।

लिफाफा हाथ में लाकर दिया जिस वक्त माता ने ।
लगे झट खोलकर पढ़ने दिया है छोड़ खाने को ।।
लिखा था उसमें कुछ हिन्दु मुसलमां होने वाले हैं ।...

महता जैमिनी जी के संस्मरण से लगता है कि पण्डित जी का पुत्र उनकी अनुपस्थिति में चल बसा परन्तु चाचा गंडाराम सहित उस काल के जीवनी लेखकों में से किसी ने यह नहीं लिखा कि पण्डित जी तब घर से बाहर थे । पुत्र का यह बलिदान ऐसा अनुपम है कि लेखनी इसकी महिमा का गान बखान करने में अक्षम है । इसे अनुभव किया जा सकता है, वर्णन नहीं किया जा सकता । आर्य पथिक तू धन्य था। तेरा बलिदान धन्य है ।[1]

दिया तूने जाति को सुखदेव प्यारा ।
सदाचार तेरा है भूषण हमारा ।।—(जिज्ञासु)

कविवर उत्तमचन्द जी 'शरर' ने इस गौरवपूर्ण बलिदान पर लिखा है—

पुत्र मोह, जिससे दशरथ को मरते देखा ।
पुत्र मोह, मानव की कोमलतम रेखा ।।
छोड़ न पाये थे प्रताप भी जिस ममता को ।
लेखराम ! तुम जीत गये उस दुर्बलता को ।।
धन्य धन्य कहता है युग तेरी श्रद्धा पर ।
अमर रहेगा नाम सदा जग की जिह्वा पर ।।
दयानन्द के सैनिक तुम ही बन पाए थे ।
क्या विचित्र विह्वलता लेकर तुम आए थे ।।

हमने पं० लेखराम जी के जीवन चरित्र की खोज करते हुए कई घटनाओं पर विशेष परिश्रम किया है । ऐसी घटनाओं में से एक सुखदेव की आहुति भी है । मेहता जैमिनी जी को लेखक ने कई बार सुना । उनकी स्मृति अद्भुत थी परन्तु यह घटना मुस्तफाबाद की नहीं लगती । स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा है कि पण्डित जी अजमेर से लौटकर मुस्तफाबाद गये । वहाँ १० से १२ अप्रैल तक रहे । वहाँ कुछ हिन्दुओं को मुसलमान होने से तो बचाया परन्तु तब सुखदेव अस्वस्थ न था ।[2] वहाँ से लौटने के पश्चात् २४ से २६ अप्रैल तक दीनानगर

१. चाचा गंडाराम लिखित पण्डित जी का जीवन चरित्र, पृ० १४ ।
२. द्रष्टव्य स्वामी जी लिखित पण्डित जी का जीवन चरित्र, पृ० १२३ ।

भी गए। सात जून को जालंधर में 'आर्यों का जातीय व्यवहार' विषय पर व्याख्यान दिया।

उन दिनों पण्डितजी पुत्र व पत्नी सहित कोट किशनचन्द जालंधर में रहते थे। यहाँ मकान का किराया दो रुपये मासिक था।

यहाँ यह भी स्मरण रहे कि मुस्तफाबाद के उत्सव के समय सुखदेव व पण्डित जी की पत्नी कहूटा थीं। पण्डित जी अपने पूज्य पिता के देहान्त के कई दिन पश्चात् घर गए। १६ से २८ मई तक वह छुट्टी पर कहूटा ही रहे और लौटते समय लक्ष्मी देवी जी व सुखदेव को साथ जालंधर लाए थे।

जब सुखदेव रोगग्रस्त था तो पण्डित जी शिमला चले गए। शिमला से वह २६ अगस्त को जालंधर लौटे तो पुत्र की स्थिति पहले से भी गम्भीर थी। २६ को जालंधर आकर कहाँ गए यही पता नहीं चल रहा। २८ अगस्त को बालक इस संसार से चल बसा। तब उसकी आयु केवल सवा वर्ष की थी। यह भी उल्लेखनीय है कि लिफाफे वाली घटना में पण्डित जी की माता का उल्लेख है परन्तु, २४-६-१८९६ को अपने चाचा जी के नाम लिखे पत्र मे पण्डित जी ने अपनी माता की कोई चर्चा नही की है।[1] चाचा गडाराम जी ने भी अपनी पुस्तक में इस पत्र का कुछ अंश दिया है।

पं० गडाराम जी ने लिखा है सुखदेव २८ अगस्त, १८९५ ई० को जन्मा और २६ सितम्बर, १८९५ ई० को कहूटा से पण्डित जी के लिखे एक पत्र का उल्लेख करते हुए चाचा जी लिखते हैं कि पण्डित जी ने उसमें लिखा, "मैंने अपने पुत्र का नामकरण कर दिया है। सुखदेव नाम रखा है।"[2] इससे पता चला कि सुखदेव पूरे एक वर्ष का होकर चल बसा। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सवा वर्ष की आयु लिखी है।

हमारी सम्मति है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी का लेख ठीक है। चाचा जी की जन्मतिथि ठीक नहीं। सुखदेव की मृत्यु २८ अगस्त को ही हुई। चाचा जी ने भूल से जन्म तिथि भी २८ अगस्त ही लिख दी। यह भी सम्भव है कि कातब (उर्दू पुस्तक की प्रैस कापी का लेखक) ने भूल से २८ अगस्त जन्मतिथि लिख दी। कम्पोजिंग में

---

१. वही, पृ० १२६। चाचा जी द्वारा लिखित उर्दू जीवन-चरित्र, पृ० १००।
२. चाचा जी द्वारा लिखित उर्दू जीवन-चरित्र, पृ० ९९।

और कताबत में ऐसी भूलें हो ही जाती हैं। चाचा जी ने स्वयं भी तो पुस्तक की छपाई व कताबत आदि में असावधानी के लिए कातब को कोसा है।

हमारे पास एक और भी प्रमाण है कि सुखदेव मृत्यु के समय सवा वर्ष का ही था।

"१८ मई १८९५ ई० को पण्डित जी के यहाँ लड़का पैदा हुआ। उसका नाम सुखदेव…

लड़के को लक्ष्मी देवी की गोद में छोड़ ये अपनी प्रचार-यात्रा पर चल दिए।[1]" स्वामी श्रद्धानन्द जी लिखित पण्डित जी के जीवन-चरित्र को विशेष ध्यान से पढ़ा तो हमें उसमें से भी सुखदेव की जन्म-तिथि मिल गई है। "वह १५ मई, १८९५ ई० को लाहौर से अपनी धर्मपत्नी को साथ लेकर अपने घर कहूटे में पहुँचे, जहाँ १८ मई शनिवार के दिन प्रातः ९ और १० बजे के बीच मे उनके यहाँ पुत्र उत्पन्न हुआ। बच्चे का नामकरण संस्करण वैदिक रीति से करके, २२ मई को आर्य पथिक ने फिर यात्रा आरम्भ कर दी।[2]

जाँच-पडताल से यह सुनिश्चित हो जाता है कि सुखदेव सवा वर्ष की आयु में चल बसा। यह भी सुनिश्चित है कि पण्डित जी सुखदेव की मृत्यु से कुछ समय पूर्व जालंधर पहुँच चुके थे। "पं० लेखराम का प्यारापुत्र २८ अगस्त, १८९६ के दिन, सवा वर्ष की आयु में इस भौतिक शरीर को त्याग कर स्वर्ग-लोक का पथगामी बना। उस समय पण्डित लेखराम की सहन शक्ति का मैंने चमत्कार ही देखा था। किसी प्रकार के भी शोक को समीप नही आने देते थे। परन्तु, बच्चे की दुखिया माता के हृदय पर बड़ा भारी वज्रपात दिखाई देता था। जिस जालंधर की भूमि में पुत्र रूपी रत्न प्राप्त किया था, उसी भूमि पर उसकी राख करके फिर कोमल हृदय भारत रमणी से कब वहाँ निवास किया जा सकता था। धर्मपत्नी को लेकर पं० लेखराम घर पहुँचाने चले गए और दो दिनों के पश्चात् पूर्ववत् ही धर्म-प्रचार में सन्नद्ध हो गए।"[3]

स्वामी श्रद्धानन्द जी आगे लिखते हैं कि "शिमला से प० लेखराम

---

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का सचित्र इतिहास, पृ० १९६।

२. 'आर्य पथिक लेखराम', लेखक स्वामी श्रद्धानन्द, द्वितीयावृत्ति, पृ० १२७।

३. स्वामी श्रद्धानन्द लिखित चरित्र, पृ० १३०।

सीधे जालन्धर गए थे जहाँ अपने इकलौते पुत्र का उन्हें अन्त्येष्टि संस्कार करना पड़ा। जालंधर से परिवार को घर छोड़कर पण्डित लेखराम सीधे वजीराबाद के वार्षिकोत्सव में सितम्बर १८९६ के आरम्भ में ही पहुँच गए।"[1]

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज द्वारा लिखित पण्डित जी का जीवन-चरित्र भी उपर्युक्त प्रमाणों की पुष्टि करता है।

आर्यसमाज के इतिहास में इस घटना का एक विशेष महत्त्व है। कोई भी संघटन ऐसे अद्भुत बलिदानी आत्मा पर जितना भी गौरव करे थोडा है। इस घटना ने ऋषि दयानन्द के शिष्यों को वैदिक धर्म व आर्य जाति की रक्षा के लिए सर्वस्व निछावर की ऐसी प्रबल प्रेरणा दी कि पं० लेखराम जी के पश्चात् भी कई आर्य भजनोपदेशकों व उपदेशकों ने पण्डित जी के इस इतिहास को दुहराया यथा पं० गणपति शर्मा जी अपनी धर्मपत्नी की मृत्यु के कुछ ही दिन पश्चात् कुरुक्षेत्र के सूर्यग्रहण के मेला पर प्रचार के लिए चल पड़े। हमारे सरल हृदय भजनोपदेशक पं० भक्तराम जी अलाहर हरियाणावाले पुत्र का दाह-कर्म करके पानीपत समाज की शोभा यात्रा सफल बनाने चल पड़े। एक जीवित संघटन वही है जो ऐसे अतीत को वर्तमान करता रहे।

प्रातःकाल से सायंकाल तक

श्री पं० लेखराम जी ६ जून, १८८८ ई० को स्यालकोट पधारे। 'राष्ट्रीय आवश्यकतायें' विषय पर व्याख्यान दिया। सात जून को आप पसरूर चले गये। वहाँ प्रातः से सायकाल तक आप लोगों का शङ्का समाधान करते रहे। शङ्का समाधान की आपकी शैली बड़ी अनूठी थी।

दिन भर तो शङ्का समाधान में लगे रहे और रात्रि सद्धर्म विषय पर आपने भाषण दिया। अगले दिन आठ जून को भी पसरूर रहे और 'आर्य धर्म की विशेषतायें' विषय पर भाषण दिया। आपके इस व्याख्यान को सुनकर श्रोता वाह! वाह! करते थे। पसरूर से फिर आपको स्यालकोट जाना पड़ा और वहाँ भी एक व्याख्यान दिया।

---

१. आर्यसमाज के महाधन, लेखक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पृ० ८९।

ऐसे लग्नशील अथक पुण्यात्मा ही युग की धारा को मोड़ने में समर्थ होते हैं।[1]

पण्डित जी गद्गद हो जाते थे[2]

श्री पण्डित जी जब आर्य गजट के सम्पादक थे तो किसी नये आर्यसमाज की स्थापना का समाचार प्राप्त करके वे अत्यन्त भाव-विभोर हो जाते थे और ऐसा समाचार बड़े प्रेरणाप्रद शब्दों में प्रकाशित करते थे।

ऐसे ही जब कहीं से उन्हें ऐसा समाचार प्राप्त होता कि कुछ व्यक्ति आर्यसमाज के सभासद् बने हैं और आर्य धर्म ग्रहण करते ही ऐसे किसी भी व्यक्ति द्वारा दुर्व्यसन तजने पर वे गद्गद हो जाते थे। १८८८ ई० के मई मास में मुजफ्फरगढ़ आर्यसमाज से उन्हें एक समाचार प्राप्त हुआ कि सरदार बिशनसिंह नाम के एक सज्जन ने समाज की सदस्यता ग्रहण की है और आर्य सभासद् बनते ही मांस व सुरा का सेवन करना छोड़ दिया है। पण्डित जी ने इस पर केवल यह टिप्पणी दी, "आफरीन आपकी हिम्मत पर" अर्थात् "बलिहारी आपकी हिम्मत पर"। ये शब्द पण्डित जी के मनोभावो का यथार्थ चित्रण करते है।

चूको मत—चूको मत

श्री पं० लेखराम जी सदा आर्य भाइयों को यह प्रेरणा दिया करते थे कि शुद्धि के कार्य में कभी भी प्रमाद न किया करे। जब भी कोई व्यक्ति वैदिक धर्म को ग्रहण करने के लिए उद्यत हो, उसे बिना किसी विलम्ब के आर्य धर्म में दीक्षित करना चाहिए।

अप्रैल १८८८ ई० में पण्डित जी को सूचना प्राप्त हुई कि मुन्शी इन्द्रमणि जी मुरादाबादी का भांजा बाबू जगन्नाथ आठ वर्ष तक ईसाई मत में रहने के पश्चात् पुनः आर्य धर्म में प्रविष्ट होना चाहता है। उसने पश्चाताप करते हुए आर्यसमाज को इस प्रयोजन से एक पत्र भी लिखा था। श्री पं० लेखराम जी ने तत्काल आर्यसमाज मुरादाबाद को प्रेरित किया कि जगन्नाथ को अविलम्ब शुद्ध किया

---

१. देखिए आर्य गजट १-७-१९८८ ई०, पृष्ठ एक।

२. देखिए वही, पृष्ठ एक, दिनाक २४-५-१९८८ ई०।

जावे। इस अवसर पर चूकना नहीं चाहिए।[1]

यह भी स्मरण रहे कि इस घटना के समय श्री मुन्शी इन्द्रमणि जी जीवित थे।

चिन्तनशील व्याख्याता

श्री पं० लेखराम जी अपने विस्तृत व गहन स्वाध्याय के लिए तो प्रसिद्ध थे ही; उनकी एक और विशेषता यह थी कि वह सदा मनन-चिन्तन करके व्याख्यान देते थे। वे जहाँ श्रोताओं की रुचि व स्तर का ध्यान रखते थे, वहाँ वैदिक सिद्धान्त श्रोताओं के सामने कैसे रखना है इस पर भी वे पर्याप्त चिन्तन करके भाषण दिया करते थे। इसके कई संकेत हम इससे पूर्व दे चुके है। श्री पण्डित जी का ११ सितम्बर सन् १८९६ ई० को मथुरा में एक व्याख्यान हुआ। मथुरा नगरी मे उनके इस व्याख्यान की धूम मच गई। विषय था 'सत्य का स्रोत'। उनके विषयों का पढ़कर उनकी चिन्तन शैली पर हम मुग्ध हैं।[2]

पं० लेखराम एक मुसलमान की दृष्टि में

दिवंगत श्री पं० शान्तिस्वरूप जी (पूर्व मौलवी मुहम्मद अली कुरैशी) को जिला सूरत गुजरात में एक मुसलमान यात्री मिला। उस मुसलमान भाई की कभी पं० लेखराम जी से भेंट हुई थी। उसने प० शान्ति प्रकाश जी को बताया कि "पण्डित जी के अरबी, फारसी व संस्कृत के ज्ञान में भले ही कुछ कमी है परन्तु उनकी आचरण की शक्ति (कुवते अमली) बढ़ी हुई है। वह ईश्वर के प्रेम के रंग में रँगे हुए है। वह तलवार का भय नहीं जानते। वह ईश्वर के सिवा किसी से भी नहीं डरते। वह ईश्वर के नाम पर न्यौछावर है। मैंने उनसे अत्यन्त विनीत भाव से खुदा के नाम पर कुछ रुपये माँगे। पण्डित जी ने फूट-फूटकर रोते हुए कहा कि तू ईश्वर के नाम पर जान भी माँगता तो सेवक जान भी भेंट करता। यह आने-जाने वाला धन ईश्वर के प्रेम के सामने तुच्छ है और मुझे जितने रुपये मैंने माँगे दे दिए। वह चाहे हिन्दू है परन्तु ईश्वर के प्रेम में इतना डूबा हुआ है कि जान वा

१. देखिए आर्य गजट ८ मई सन् १८८८ ई०, पृष्ठ दो।
२. सद्धर्म प्रचारक ११-९-१८९६ ई०, पृष्ठ ८-९ देखें।

माल न्यौछावर करने को उद्यत है।"

इस उद्धरण से ऐसा लगता है कि मुसलमान यात्री ने पं० लेखराम जी के जीवन काल में प० शान्ति स्वरूप जी को ये शब्द कहे। मुसलमान यात्री का एक-एक शब्द पठनीय है। पण्डित जी को संस्कृत का तो स्वल्प ज्ञान था परन्तु फारसी अरबी के तो वह प्रकाण्ड पण्डित थे। यह बात समझ लेनी चाहिए!

रोपड़ में हलचल मच गई

रोपड़ के पादरी पी० सी० उप्पल ने एक राजपूत युवक को फुसलाकर ईसाई बना लिया। पं० लेखराम जी को जब सूचना मिली तो वह रोपड़ पहुँचे। उनके वहाँ पहुँचने से पूर्व ही रोपड़ के प्राणवीर दीनबन्धु सोमनाथ जी के उद्यम से वह युवक शुद्ध कर लिया गया। उस युवक को सोमनाथ जी ने अपने गृह पर रखा। वे ऐसे ही दिन थे। पोंगापन्थी आर्यों के घोर विरोधी थे। शुद्धि का शब्द भी सनातनी सुनने को तैयार न थे। खाना सोमनाथ के घर वह युवक खाता था और ईसाइयों से अधिक पौराणिक सटपटाते थे।

पण्डित जी ने रोपड़ पहुँचकर मण्डी में लगातार कई दिन तक बाइबल पर व्याख्यान दिये। पादरी पी० सी० उप्पल को लिखित वा मौखिक शास्त्रार्थ के लिए निमन्त्रण दिया। उप्पल महोदय ने चुप्पी साध ली। यह घटना अप्रैल १८९५ ई० की है।[1]

जब पण्डित जी गाड़ी से कूद पड़े

इस घटना से सम्बन्धित एक और प्रेरणाप्रद घटना है। पण्डित जी लाहौर से डाक गाड़ी में बैठे। दोराहे का टिकट लिया। जब दोराहे का स्टेशन निकट आया तो पण्डित जी ने अपना सामान बाँधना आरम्भ किया। साथ के यात्रियो ने कहा कि दोराहा तो गाड़ी रुकती ही नही। गाड़ी रुके न रुके पण्डित जी का कार्यक्रम तो निश्चित ही था। उन्होंने गाड़ी से बड़ी सावधानी से छलाग लगा दी। कितनी भी सावधानता वर्ती जावे, गाड़ी से कूदने पर चोट तो लगेगी ही। एक हाथ पर चोटें लगीं। अपना धर्मरक्षा का काम वहाँ करके अगले

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर' मासिक, मार्च १९१४ ई०, पृ० ४६९-७०।

दिन साय को पण्डित जी रोपड़ पहुँचे। पण्डित जी नौका से उतरे तो आर्यों ने हाथ पर पट्टी का कारण पूछा। पण्डित जी ने सब वृत्तान्त सुनाया। आर्यजन उन्हें वीर सोमनाथ जी के घर पर ले गये। कुछ विश्राम कर चुके तो फिर आर्य लोग उन्हे लाला लछमन दास जी सहायक सर्जन के पास ले गये। उनको चिकित्सा से पण्डित जी कुछ दिन में ठीक हो गये।

हम इस घटना को अपनी पुस्तक 'रक्त साक्षी पं० लेखराम' में किसी उपयुक्त स्थान पर देना चाहते थे परन्तु भूल गये। इस घटना की प्रामाणिकता में हमें कभी भी सन्देह नहीं हुआ। पण्डित जी सरीखे साहसी वा बलिदानी व्यक्ति के लिए ऐसा करना साधारण सी बात है तथापि इतिहास प्रेमी, गवेषक इसका प्रमाण जानना चाहें तो हमारा निवेदन है कि रेवाड़ी के महाशय राम लक्ष्मण गुप्त को कई बार पण्डित जी का सत्संग प्राप्त हुआ। वह देहली भी रहे। इस घटना के समय वह रोपड थे। उनका पण्डित जी विषयक लेख हमारे पास प्रमाण स्वरूप सुरक्षित है।[1]

पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने लिखा है कि पण्डित जी ने पायल (पटियाला रियासत) में गाड़ी से छलाँग लगाई थी। चावा पायल अब लुधियाना जिला में है।[2] स्वामी जी के लेख से घटना की सत्यता की तो पुष्टि ही होती है। स्वामी जी ने स्थान का नाम दोराहा की बजाए चावा पायल लिखा है। हमारा मत यह है कि इस विषय में महाशय राम लक्ष्मण जी का लेख ही प्रामाणिक मानना चाहिए।

मौलवी साहिब कुछ कह न सके

मई १८९६ ई० में पण्डित जी आर्यसमाज रोपड़ के उत्सव पर पधारे। पण्डित जी उत्सव के दो दिन बाद भी रोपड़ में ठहरे। महाशय राम लक्ष्मण जी तथा उत्तर प्रदेश के एक आर्य बन्धु (जो उत्सव में सम्मिलित होने के लिए आए थे) पण्डित जी के साथ नौका मे सवार होकर रोपड़ से विदा हुए। नौका चल पड़ी। यात्री परस्पर बातें करने

---

१. द्रष्टव्य आर्य मुसाफिर, मार्च १९१४ ई०, पृ० ४८०।

२. द्रष्टव्य आर्य समाज के महाधन, पृ० ९०।

लगे। नौका में एक मौलवी भोलेभाले हिन्दू स्त्री-पुरुषों को बहकाने लगा। गण्डे-तावीजों की महत्ता के बारे में भ्रामक प्रचार कर रहा था। पण्डित जी, श्री राम लक्ष्मण और तीसरा आर्य बन्धु धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। मौलवी जी बडे ऊँचे स्वर से बोल रहे थे। पण्डित जी ने उसे सुना और झट से पूछ लिया कि मौलवी जी, आप क्या कर रहे हैं? इससे पूर्व कि मौलवी महोदय कुछ कहते, नौका में बैठे हुए एक अन्य व्यक्ति ने मौलवी जी के कान में कहा, "यह पं० लेखराम हैं।" पण्डित जी का नाम सुनते ही मौलवी जी ने ऐसी चुप्पी साधी कि मानो मुख में जिह्वा है ही नहीं। बहुत कहने-सुनने पर लड़खड़ाती वाणी से कुछ कहना चाहा परन्तु कुछ बात न बनी। पण्डित जी तो चाहते थे कि यही सत्य-असत्य का निर्णय करने के लिए शास्त्रार्थ हो जावे।[1]

जहाँ अजीत वा जुझार ने वीरगति पाई

इस यात्रा में पण्डित जी ने चमकोर के पास पहुँचकर गुरु गोविन्द के दो वीर पुत्रों के बलिदान की स्थली देखने की चाह व्यक्त की। चलती नौका मे नहर की पटरी पर कूद पड़े। राम लक्ष्मण सामान के पास बैठे रहे। थोड़ी देर के बाद पण्डित जी इनसे आ मिले।

आपको सदा काम रहते हैं

श्री सत्यधारी जी सोहावा के रेलवे स्टेशन पर गाड़ी से कहीं जा रहे थे। पं० लेखराम जी उन्हें वहाँ मिले और अपने साथ पेशावर के आर्यसमाज के उत्सव पर चलने की प्रेरणा दी। सत्यधारी जी ने कहा कि अभी तो मैं एक आवश्यक कार्य के लिए गुजरात जा रहा हूँ। पण्डित जी ने कहा कि मैंने आपकी बहुत प्रशंसा सुनी है। आपको कभी नहीं सुना। मैं देखना चाहता हूँ कि आप श्रोताओं के हृदय को कैसे हिला देते हैं। इतने मे गाड़ी ने सीटी दे दी और सत्यधारी जी चले गए।

अपने बलिदान से पूर्व पण्डित जी इन्हीं श्री सत्यधारी जी से लाहौर में शाह आलमी द्वार की ओर जाते मिल गये और अपने साथ मुलतान के उत्सव पर चलने को कहा। सत्यधारी जी ने पुनः अपनी

---

१. द्रष्टव्य आर्य मुसाफिर, मार्च १९१४, पृ० ४८१।

व्यस्तताएँ बताकर मुलतान जाने मे अपनी असमर्थता प्रकट की। पण्डित जी ने कहा वहाँ एक सप्ताह के लिए प्रचार की बड़ी धूम रहेगी आप चलिए। फिर ऐसा अवसर नही मिलेगा। सत्यधारी जी ने पुनः वही उत्तर दिया कि अभी मुझे कई काम है। पण्डित जी ने अत्यन्त खेद प्रकट करते हुए कहा 'आपको सदा काम ही रहते हैं'। पण्डित जी चलते गए और पीछे मुड़-मुड़कर कहते गए "फिर ऐसा अवसर नहीं आएगा।" "फिर ऐसा उत्सव नही आएगा।"

हुआ भी ऐसा ही। पण्डित जी मुलतान से लौटे और क्रूर घातक की छुरी से वीरगति पा गये। फिर वह अवसर न आया कि सत्यधारी जी उनके साथ कही जा पाते।

वह इतिहास बना गया

लेखराम बलिदानी योद्धा, जीवन भेंट चढ़ा गया।
तन मन धन सर्वस्व लुटाकर, ऊँचे कर्म कमा गया॥
देश धर्म का दीवाना, वह नरनामी नर नायक था।
दीन दुखी का सेवक था, दलितों का वीर सहायक था॥
पर हित जीवन भेंट चढ़ाकर, वीर गति को पा गया…

मरने का डर वह क्या जाने, वह ईश्वर विश्वासी था।
राम कृष्ण का वंशज प्यारा, सच्चा भारतवासी था॥
जन्म मरण के भेद मुसाफिर सारे हमे बता गया……

छुरियों और कटारों से, वह अंगारों से खेला था।
वीर शहीद निराला मानस, बलिदानी अलबेला था॥
ढोंग ढाँग के तर्क तोप से, सारे किले गिरा गया……

जाति हित में 'लेखराम' ने, क्या कुछ नही लुटाया है।
रच कर ग्रंथ अनूठे उसने, वैदिक नाद बजाया है॥
जीवन लिखते अमर ऋषि का, आप अमर पद पा गया…

'जिज्ञासु' वह नामी ज्ञानी, परम तपस्वी वेदाभिमानी।
हर सङ्कट में नर नाहर ने, डटकर अपनी छाती तानी॥
गर्व करें हम जिस पर ऐसा, वह इतिहास बना गया।
लेखराम बलिदानी योद्धा जीवन भेंट चढ़ा गया॥

—राजेन्द्र जिज्ञासु

उन्नीसवीं शताब्दि का सच्चा बलिदान

—तार्किक शिरोमणि स्वामी दर्शनानन्द

भारत वर्ष ऐ दोस्तो सुंसान हो गया।
वह शेर मर्द धर्म पे कुर्बान हो गया॥

अँधेरे के उपासक

ऐ कालचक्र ! तेरी कुचाल का किसको विश्वास हो सकता है ? कौन सा उजड़ा स्थान है जिसको तूने उद्यान न बनाया हो ? कौन सा उपवन है जिसको वन न बनाकर दिखाया हो। लाखों राजाओं को भिक्षापात्र पकड़वा दिया। सहस्रों भिखारियों को राजा बना दिया। तेरी प्रत्येक चाल निराली विधि दिखलाती हुई मनुष्यों की बुद्धि को चक्राती है। बड़े-बड़े व्यक्ति तेरी तलवार की धार का शिकार हुए है। प्लेटो (Plato) सरीखे तत्त्ववेत्ता तेरी चाल को जानने में बेबस हैं। कही पर हर्षोल्लास के बाजे बज रहे हैं। कहीं पर शोक सन्ताप व्याप्त हो रहा है। जिस समय संसार को आलोकित करने वाला सूर्य अस्त हो जाता है, संसार के लोक हाथ मलते हुए काम चलाने वाले दीपकों वा लैम्पों की खोज करते हैं। परन्तु, अभागा उल्लू सदैव जिस घर पर बैठता है उसी का विनाश माँगता है। भानु के अस्त होते ही अपनी घोर घृणित ध्वनि से प्रसन्नता से चहचहाता है। वह नही देखता कि इस दिनकर के छिपने से संसार के लोको की कितनी हानि व परेशानी होती है क्योंकि उसे तो सूर्य के होते हुए दीखता ही कुछ नहीं। वह भयभीत होकर दिवाकर के अस्त होने की याचना करता है।

यह किसकी कहानी है ?

प्यारे मित्रो ! आज सच्चाई के जिस सूर्य, उन्नीसवी शताब्दि के सच्चे रक्त साक्षी, गवेषणा के भण्डार पं० लेखराम आर्य पथिक की

मृत्यु का शोर चारों ओर फैल रहा है। लाखों व्यक्ति उस वीर के निधन पर नीर बहा रहे हैं। जिस ओर भी निहारो, जिससे भी बात करो वहाँ उसी वीर पुरुष के चल बसने की चर्चा हो रही है। यह कौन था ? यह वही वीर पुरुष अन्वेषक गवेषक है जिसकी खोज ने मजहब इस्लाम की धज्जियाँ उड़ा दीं। जब इस्लाम वालो के पास बुद्धि, युक्ति व समुचित प्रमाण न रहे तो इस्लाम ने अपनी दीन अवस्था को देखकर और अपने अनुयायिओं को दिन-प्रतिदिन अपनी मान्यताओं से च्युत होता देखकर इस नरनाहर को भयभीत करने के लिए न्यायालय में अभियोग चला दिया परन्तु जिस नर केसरी ने वैदिक धर्म की रक्षा और इस्लाम के असत्य को दूर करने का सङ्कल्प किया था उसने ऋषि सन्तान को धर्म के मार्ग पर चलाने के लिए सासारिक सुखो पर लात मार दी; जिसका आत्मा हिन्दू जाति को मुसलमान और ईसाइयों के हाथ से नष्ट होता देखकर इस बात का दृढ़ निश्चय कर चुका था कि चाहे संसार इधर से उधर पलट जावे, चाहे उसके शरीर का अग-अंग काट लिया जावे परन्तु वैदिक धर्म को कभी न छोड़ेगा।[1] उसने अभियोग की तनिक भी चिन्ता न की। करता किस प्रकार से जबकि उस वीर का एक भाई मरने वाला था दूसरी ओर आर्यसमाज को एक हानि होने वाली थी। उस धर्मवीर ने भाई से धर्म को अधिक प्यारा जाना।

शोक वा मोह पर विजय

उसका भाई उसकी अनुपस्थिति में चल बसा। इसी प्रकार दूसरा भाई भी ईश्वर के विधि-विधान के अनुसार इस ससार से चल बसा परन्तु इस ईश्वर विश्वासी ने धीरज की डोरी को हाथ से न छोड़ा। जब इनका इकलौता पुत्र अपनी छोटी सी आयु मे इस असार संसार से विदा हो गया तो भी यह नरनाहर ईश्वरेच्छा मे ही सन्तुष्ट रहा। भला जिस धर्मवीर का इतने कष्टों के होते हुए भी ईश्वर पर विश्वास

---

१. मिर्जा गुलाम अहमद ने अपनी एक फारसी कविता में पण्डित जी को तलवार से डरने की धमकी दी थी। पण्डित जी ने अपनी स्वरचित फारसी कविता में उत्तर दिया था कि मेरा अग-अग काट दिया जावे तो भी मैं इस धर्म पथ से न हटूंगा।—'जिज्ञासु'

नहीं डोला। जिसने बड़े-बड़े विकट स्थानों पर जहाँ पल-पल क्षण-क्षण मे जान के जाने का भय हो।

आदर्श धर्मरक्षक

वैदिक धर्म का नाद बजाया हो। जिस नर सिंह ने पेशावर जैसे रक्त पिपासु स्थान पर आर्य धर्म की जी जान से सेवा की हो। जिस नर सिंह ने चौधरी घासीराम जी[1] के मुसलमान होने की सूचना पाकर उनकी रक्षा के लिए अपनी सरकारी सर्विस से भी त्यागपत्र दे दिया। जिस नर नाहर ने मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयानी के मिथ्या दावों को झुठला कर दिखाया हो उस नर सिंह को उस अभियोग से क्या भय हो सकता है जब कि उस धर्मवीर के लेखों में युक्ति वा प्रमाण के बिना एक भी बात अपनी ओर से न थी। स्थान-स्थान पर कुरान वा हदीस[2] एवं इतिहास की साक्षियाँ दी थीं फिर यह अभियोग कैसे चल सकता था।

साँच को आँच नहीं

विरोधियों ने बहुत हाथ-पैर मारे परन्तु यह अभियोग जिला देहली के न्यायालय से खारिज हो गया। इस्लामी भाइयों ने अपने मिथ्या दावा को अपील के न्यायालय तक पहुँचाया। बड़े यत्न किये कि किसी प्रकार इस नरकेसरी तथा धर्मवीर को कष्ट पहुँचायें परन्तु साँच को आँच नहीं, इस विचार के अनुसार वह अपील भी उड़ गई। इस पर मुसलमानों को बड़ा जोश आया परन्तु करते भी तो क्या ? औरङ्गजेब का युग तो था नहीं कि निर्दोष गुरु तेगबहादुर को मरवा डालते। न किसी अन्य मुसलमान शासक का युग था जिस में हकीकत राय आदि छोटे-छोटे बालकों को निरपराध नष्ट कर देते।[3]

---

१. यह चौधरी घासीराम कहाँ के निवासी थे ? यह पता नहीं चल सका। पण्डित जी के जीवन मे ऐसी अनेक घटनाएँ घटीं। सैकड़ों को धर्म से च्युत होने से आपने बचाया। —'जिज्ञासु'

२. इस्लामी साहित्य का एक भाग। हदीसों मे हजरत मुहम्मद के कथन व कहानियाँ सग्रहीत की गई हैं। —'जिज्ञासु'

३. विचित्र बात है कि आज के युग मे भी मुसलमानी देशों में दूसरों को उपासना की कतई स्वतन्त्रता नहीं। न ही नागरिक के रूप मे समान अधिकार प्राप्त है। —'जिज्ञासु'

इस युग में अंग्रेजी राज था इस कारण आगे उच्च न्यायालय (Chief Court) लाहौर में अपील कर दी परन्तु युक्ति विहीन दावा कहीं भी फूल-फल न सका। अपील वहाँ से भी खारिज हो गई। अब तो उनके क्रोध की कोई सीमा ही न रही। जहाद (मुसलमानों द्वारा दूसरों पर आक्रमण, युद्ध) का विचार आया, यह अंग्रेजी राज में असम्भव था। जब कोई बात बनती न दीखी तो अपनी प्रकृति के अनुसार अर्थात् छल-कपट के सहारे खुदा से याचना करते हुए उस धर्मवीर को कूट कपट से मारने की योजना बना ली।

'वहाँ क्या था कि एक मुसलमान नही-नही'' अन्यायी अधर्मी उस नर सिंह के पीछे लग गया और उनसे कहा मै हिन्दू हूँ, भूल से मुसलमान हो गया था अब पुन. शुद्ध होना चाहता हूँ। आप मुझे शुद्ध कर दीजिए। उस सच्चे वीर पुरुष को उसकी दुष्टता की जानकारी थी अत: उन्होंने स्वीकार कर लिया। पण्डित जी मुलतान आदि नगरों मे बाहर प्रचार यात्रा पर चले गये। उसको अवसर न मिला। अन्त को छ: मार्च की रात को सात बजे जब कि पं० लेखराम अभी घर में बैठे हुए थे वह दुष्ट दुर्भावना से आया और उनसे कहा, आप मुझे वह पुस्तक दिखलावे। उन्हें क्या पता था कि उसकी नियत (भावना) क्या है। वह इकदम पुस्तक लेने के लिए उठे और जब उन्होंने अलमारी में हाथ डाला और उसकी ओर पीठ हो गई तो उस निर्दयी क्रूर ने झटपट उनके पेट में छुरा चला दिया। जिसके कारण यह गिर पड़े और वह अधम भाग गया।[1]

वीरोचित मृत्यु

लोग पण्डित जी के शरीर को हस्पताल में ले गये जहाँ जाकर रात के दो बजे उनका आत्मा इस नश्वर देह को परित्याग करके अमर पद को प्राप्त कर गया।

एक प्रत्यक्षदर्शी का कथन

प्रिय मित्रो! हमारे पास मैडिकल कालेज के एक विद्यार्थी का पत्र

---

१. स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा है कि पण्डित जी को उनकी वृद्धा माता ने पुकारा तब वह उठे, अगड़ाई ली। घातक ने छुरा चला दिया। —'जिज्ञासु'

आया तो हम पढकर चकित रह गये कि इतने[1] भयङ्कर घाव के होने पर वह सात घण्टे तक जीवित रहे परन्तु मुख से एक बार भी हाय न निकली। जैसे पहले निर्भीक, दृढ़ निश्चय वाले तथा ईश्वर विश्वासी थे वैसे ही इस विपत्ति में भी रहे। सत्य को जिस प्रकार अपना मित्र बनाया हुआ था उसी प्रकार धीरज से भी पृथक् न हुए।

आर्यगण ! क्या पं० लेखराम ने किसी को मारा था जिसके लिए वह इस दण्ड का पात्र था ? क्या उसकी इससे (घातक) किसी बात पर शत्रुता थी ? कतई नही। वह तो आर्य धर्म का प्रधान सेनापति था जिसने अपनी अकाट्य युक्तियों की तोपागार (Artillery) से इस्लामी अन्धविश्वास-पाखण्ड के दुर्ग की नीव को हिला दिया जिसमे अनेक हिन्दुओं को इस्लाम के गढ़े में गिरने से बचा दिया था। जिसके सम्मुख मुसलमानों में यह शक्ति न थी कि वे किसी हिन्दू को मुसलमान बना सकते। सैंकड़ों शास्त्रार्थ हुए परन्तु, इस्लाम को सिवाय जहाद (Crusade) के कोई तर्क न सूझा।

आर्यगण ! जब कि लेखराम को इस्लाम से कोई निजी द्वेष न था। उन्हें दुःख था तो यह था कि वे तुम्हारे भाइयो को लूटना चाहते थे। यह बचाता था। वे हमारे वेदशास्त्र, ऋषि-मुनियो पर मिथ्या दोष लगाते थे। यह अपनी प्रबल युक्तियों से, खोजपूर्ण प्रमाणों से उसका उत्तर देता था। यह भी उसका दोष था। इसके वदले में उसे यह दण्ड मिला। नही। नहीं। उसने तो तुम्हारी रक्षा में अपना जीवन तक न्यौछावर कर दिया। इससे बढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है।[2]

आर्यगण ! अब आप सोचिए ! क्या यह छुरी पं० लेखराम के पेट में लगी है ? नही। नहीं। यह छुरी आर्य धर्म पर चली है। क्या इस छुरी से पं० लेखराम की जान गई अथवा उसकी कोई हानि हुई ? नहीं। नही। वह तो अपने जीवन की आहुति देकर कर्त्तव्य का पालन करता हुआ रक्त साक्षी बन गया। यदि इससे हानि हुई है तो तुम्हारे धर्म की तथा धक्का लगा है तो वैदिक धर्म को किंवा उन लोगों को

१. वह विद्यार्थी पण्डित जी के अन्त समय मे हस्पताल में ही था। —'जिज्ञासु'

२. इस वाक्य का आगे-पीछे से कोई सम्बन्ध नहीं। कोई पंक्ति छूटी या इधर-उधर हो गई। —'जिज्ञासु'

जिनको वह इस्लाम के पंजे से निकालकर वैदिक धर्म में लाता ।

आर्यगण ! क्या आप नाशुकरे बनेंगे ? नहीं । नही । तुम्हारी कृतज्ञता को तो युग जानता है । क्या तुम लेखराम के मिशन को अधूरा छोड़कर वैदिक धर्म को क्षति पहुँचाने में सहमत हुए ? कतई नही । कौन मूर्ख है जो इस समय स्वार्थ मे पड़कर आर्य जाति को कृतघ्नता के कलंक से कलंकित करने के लिए उद्यत होगा । कौन अधम है जो इस सच्चे वीर पुरुष के ओजपूर्ण भाषणों का स्मरण करके अश्रु न बहाता होगा । वह कौन हैं जो आर्य कुल में जन्मा है और इस समय जिसका हृदय घायल नहीं है । वह कौन है जो इस समय सच्ची उदारता तथा सहानुभूति न दिखलाकर धर्म विरोधियों को यह न दिखला देगा कि वैदिक धर्म मृत नही । आर्य जाति नाशुकरी नही (विरोधियों को बताना होगा)[1] जहाँ तुम लेखराम का वध करके यह समझ लो कि आर्य धर्म का कोई रक्षक नहीं अथवा इस्लामी आक्रमणों का कोई उत्तर देने वाले नहीं अपितु, मुझे विश्वास है कि लोक धर्मवीर की स्मृति में इस प्रकार से कार्य करेंगे जिससे ससार को विदित हो जावे कि आर्य जाति वाकशूर नही अपितु, सच्ची कृतज्ञता व धन्यवादी होने का भाव इसमें है जिससे आपकी जाति के लोकों में उत्साह उत्पन्न हो और वे सांसारिक स्वार्थों को तजकर धर्म के कार्यो में जुट जावें ।

प्रिय पाठकवृन्द ! आप धर्मनिष्ठ सज्जनों ने निश्चय किया है कि उस वीर पुरुष का मिशन पूरा करने के उद्देश्य से प्रत्येक व्यक्ति को एक मास की आय दान कर देनी चाहिए तथा इस प्रकार से प्राप्त धन से पचास सहस्र रुपये एकत्रित करके निम्न प्रकार से कार्य चलाना चाहिए—[2]

यत्न करना हमारा कर्त्तव्य है, सहायता प्रभु देते है । आओ ऋषि सन्तानो ! सब मिलकर एक बार पुन: भारत को ऋषि भूमि बनाने का प्रयत्न करें और यहां पर जो अधर्म के फैलने से आज अकाल, भुखमरी, अभियोग वृत्ति आदि हमारी दृष्टि मे आते हैं इन सबको

१. अगले वाक्य के प्रसंगानुसार भाव स्पष्ट करने के लिए कोष्ठों के ये शब्द हमने जोड़े हैं । मूल में ये नही है । —'जिज्ञासु'

२. इसके पश्चात् लगभग चार पृष्ठ हमने छोड दिये हैं । उनमे पं० लेखराम स्मारक निधि के लिए सुझाव मात्र है । आज उनकी इतनी आवश्यकता नहीं । —'जिज्ञासु'

नष्ट कर डालें। इस महायज्ञ के पूरा करने के लिए प० लेखराम का बलिदान तीसरी आहुति है[1]। हमारा कर्त्तव्य है कि जब तक यह महायज्ञ सम्पूर्ण न हो तब तक हम नये-नये बलिदानी देते जावें।

प्रिय पाठकवृन्द ! आप लोगों के यत्न से पं० लेखराम का मिशन पूरा होगा। आज तक जो इस्लाम भारत में फैला है वह हिन्दुओं की दुर्बलता है। हिन्दुओं ने बिगड़े हुए भाइयों को वापिस नही लिया और मजहब इस्लाम के खण्डन पर कटिबद्ध नहीं हुए[2] अन्यथा यह कभी सम्भव न था कि भारत भूमि में इस प्रकार का मत चल सकता जिसकी मान्यता ही संसार का अहित करना हो[3]। आज जितने भी मुसलमान दीखते हैं, ये सब हमारे भाई है जिनको इस उल्टी शिक्षा ने पथभ्रष्ट करके इस प्रकार का बना दिया है। आपका कर्त्तव्य है कि आप इस अविद्या की शिक्षा को नष्ट करके इनको विद्या की ओर प्रवृत्त करें !

ओ३म् शान्ति ! शान्ति ! शान्ति

---

१. इस युग मे वैदिक धर्म पर सर्वप्रथम ऋषि दयानन्द ने जान वारी। दूसरे रक्त साक्षी वीर चिरंजी लाल थे और तीसरे बलिदानी लेखराम थे।—'जिज्ञासु'

२. मुसलमानी मत अपनी सैद्धान्तिक विशेषता व प्रचार से तो बहुत कम फैला है। तलवार से फैला है या बहुपत्नी प्रथा के कारण। आज कई कामाध किसी स्त्री से अनैतिक सम्बन्धों के पश्चात् विवाह के लिए मुसलमान बनते है। मुसलमानो ने हिन्दुओं की मान्यताओ के खण्डन मे सदा पहल की हे और बड़ी पुस्तकें लिखी हैं।

३. जहाँ-जहाँ इस्लाम फैलता है, वही-वही उन देशो मे पृथक्कता किंवा विभाजन की माँग का आन्दोलन चलाया जाता हे। मुसलमान देशो मे जनमत का कही भी आदर नही। सर्वत्र गणतन्त्र की बजाए Gun (बन्दूक) तन्त्र है। इन देशों मे इतनी राजनैतिक हत्याओ का कारण ? —'जिज्ञासु'

ज़ो वेद पाक से पुखता
अकीदत हो तो ऐसी हो
जो वैदिक धर्म से सच्ची
मुहबत हो तो ऐसी हो
हो सरगर्मी तो ऐसी हो
हमियत हो तो ऐसी हो
अशायत में मरे हक की
शहादत हो तो ऐसी हो
गजब है शाद गर उसकी
वसीयत भूल जाएँ हम
मुनासिब है कि कुछ जोरे
कलम अपना दिखाएँ हम

(धर्मवीर स्वर्गीय महाशय रौनक राम 'शाद')

आफरीं सद आफरी बर कारे तो
कस न करदा ई चुनी दर राहेओ

(प० शान्तिस्वरूप जी के लेख से)

दीनानगर में पं० लेखराम

प्रथम अगस्त, १८९५ ई० को पण्डित जी दीनानगर, जिला गुरदासपुर में पधारे। आर्यसमाज के मन्त्री सरदार अर्जुनसिंह जी ने उनके प्रचार का वृत्तान्त सविस्तार लिखकर 'सद्धर्म प्रचारक' में छपवाया। पाँच बजे सायं समाज मन्दिर में पण्डित जी का भाषण रखा गया। कस्बा में सूचना कर दी गई। भारी संख्या में लोग समय पर आए। वर्षा के कारण व्यवस्था अन्दर की गई। अन्दर इतने लोग आ न सकते थे। बहुत से लोग बाहर वर्षा में भीग गए परन्तु पण्डित जी के व्याख्यान को सुनने के लिए वे वहीं डटे रहे।

पण्डित जी को सभा की आज्ञा के अनुसार ५ अगस्त को अमृतसर जाना था परन्तु दीनानगर वालों ने एक और भाषण का आग्रह करके रोक लिया। सभा को सूचना दे दी गई। पाँच का भाषण हुआ और पण्डित जी को फिर छ. अगस्त को दीनानगर वालों ने रोक लिया। सायं पाँच बजे पुनः उनका भाषण रखा गया और इसकी सूचना सभा को दी गई।[1]

'कुरान दस पृष्ठ का'

दीनानगर के इसी कार्यक्रम मे पण्डित जी ने एक व्याख्यान में कहा कि कुरान में से यदि तौरेत, जबूर, इंजील के किस्से एवं हजरत मुहम्मद साहब से सम्बन्धित सामग्री निकाल दी जावे तो कुरान फिर दस पृष्ठ का भी नहीं रहता। पण्डित जी ने कहा, ईश्वरीय ज्ञान दस पृष्ठ का तो सर्वथा अपर्याप्त है। एक मुसलमान बन्धु ने एक प्रमाण पूछा तो पण्डित जी ने बड़े प्रेम से उसको उत्तर देकर सन्तुष्ट किया।[2]

---

१. २. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', सितम्बर २७, १८९५, ई० पृ० ६-७।

हिन्दू, क्यों व कैसे मुसलमान बने ?

इसी व्याख्यानमाला मे पण्डित जी ने बताया कि भारत में हिन्दू इतनी बड़ी संख्या में मुसलमान कैसे हो गए। आपने इसके सात कारण बताए—(१) मुसलमान आक्रमणकारियो ने लोगों को बलपूर्वक मुसलमान बनाया। (२) मुसलमानी शासनकाल में जन, जर व ज़मीन (स्त्री, धन व भूमि) का प्रलोभन देकर कई प्रतिष्ठा प्राप्त हिन्दू, धर्म से च्युत किए गए। (३) इस्लामी शासन काल में संस्कृत शिक्षा की समाप्ति के कारण हिन्दू विधर्मी बने। अरबी-फारसी की शिक्षा पाते हुए मुसलमान बनाए गए। (४) हिन्दुओं में पुनर्विवाह न होने के कारण विधवाएँ सती प्रथा के बन्द होने पर कई बार मुसलमान हो जाती रही। कई बार हिन्दू पुरुष मुसलमान स्त्रियों से सम्पर्क हो जाने से बहिष्कृत किए गए और वे मुसलमान बनने पर विवश हुए। (५) मूर्तिपूजा की कुरीति के कारण भी सुशिक्षित हिन्दू विधर्मी बने। (६) मुसलमान वेश्याओं ने भी कई हिन्दुओ को फँसा कर मुसलमान बनाया। (७) वैदिक धर्म का प्रचार न होने के कारण लोग मुसलमान बने व बनाए गए।

इसके पश्चात् पण्डित जी ने अत्यन्त योग्यता से उन उपायों पर प्रकाश डाला जिनसे कि बिछड़े हुए भाइयों को पुनः मिलाया जा सकता है। आपने बड़े भावपूर्ण ढंग से श्रोताओं से अपील की कि वे इस कार्य में आर्यसमाज का सक्रिय सहयोग करें। पण्डित जी की ज्ञानप्रसूता वाणी का श्रोताओं पर गहरा प्रभाव पडा।[1]

अविद्या पर रक्त-रोदन पौराणिक लीला !

१८९४ ई० में मेला सूर्यग्रहण कुरुक्षेत्र पर वैदिक धर्म-प्रचार की बड़ी उत्तम व्यवस्था की गई। पं० कृपाराम शर्मा (स्वामी दर्शनानन्द जी), पं० मणिराम (प० आर्यमुनि जी महामहोपाध्याय) व पं० लेखराम आदि शिरोमणि विद्वान वहाँ पधारे। पं० लेखराम जी ने इस मेला पर अविद्या-जाल में फँसे लोगों की दुर्दशा देखी। देश की अवस्था पर करुणा सागर लेखराम ने रक्त-रोदन किया।

---

१ द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', २७ सितम्बर, १८९५ ई०, पृ० ६-७।

इस मेला पर एक वैश्य ने अपनी पत्नी को भूषणों से अलंकृत करके, एक रथ व जोडी बैलों के सहित अपने पुरोहित को परलोक में मिलने के लिए दान किया। उसके साथ उसका वस्त्र जोडा गया। फिर पुष्कल धन राशि देकर अपनी पत्नी को पुरोहित से वापस लिया।

इसके पश्चात् एक विधवा ने अपने आपको दान किया और कुछ समय के उपरान्त पर्याप्त धन देकर वापस हो गई।

इस पर प० लेखराम जी ने रक्त-रोदन करते हुए लिखा, "शोक! महाशोक! मूर्खता! इस प्रकाश के युग में भी लोग अविद्या जाल से निकलने का यत्न नहीं करते।"[1]

तुझको लग्न थी क्या लगी!

एक समाचार ऐसे छपा मिलता है--"प० लेखराम आर्यपथिक मुलतान नगर आर्यसमाज में व्याख्यान देते हुए कोयटा के वार्षिक उत्सव में सम्मिलित हुए। वहाँ उन्होने १३ व्याख्यान दिये जिनमें उपस्थिति बहुत अधिक होती रही। वहाँ से बोलान होते हुए सिबी और शिकारपुर में प्रचार करेंगे और फिर सक्खर और सम्भवत: बहावलपुर होते हुए महर्षि दयानन्द के जीवन-चरित्र की सामग्री एकत्रित करने के लिए मुलतान नगर में जाकर निवास करेंगे।"[2]

एक ही नगर में १३ व्याख्यान लगातार देना, कोई खेल नहीं। राजनीतिक विषयों पर बोलना और बात है। दार्शनिक चर्चा और बात है। राजनीति नित्य नया विषय व नई सामग्री देती है। धर्म-दर्शन के विषय सदा वही रहे हैं व रहेंगे। प्रचार, खोज, लेखन-कार्य सभी कार्यो के लिए अथक पथिक अहर्निश सोत्साह यत्नशील रहा। उसका पुरुषार्थ धन्य था।

व्यभिचारी गोपीनाथ की अशिष्टता

गोपीनाथ कश्मीरी गोमांस भक्षण के पोषक के नाम से आर्य-समाज के इतिहास के सब विद्यार्थी परिचित हैं। इसी ने महात्मा

---

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', २७-४-१८९४ ई०, पृ० १४।

२. वही, २७ जुलाई, १८९४ ई०, पृष्ठ १३।

मुन्शीराम जी पर मानहानि का अभियोग (Defamation case) किया था। इस अभियोग में यह पिटा ही नहीं अपितु घोर अपमानित हुआ था। क्षमाशील मुन्शीराम ने इसे पराजित होने पर क्षमा करके दयालु दयानन्द द्वारा स्थापित परम्परा में एक और कड़ी जोड़ी।

मुकेरियाँ शास्त्रार्थ का मनघड़न्त विवरण इसने अपनी पत्रिका 'सनातन धर्म गजट' में दिया। उसमें बलिदानी ब्राह्मण धर्म रक्षक लेखराम को पं० लेखराम न लिखकर केवल 'लेखराज आर्य मुसाफिर' लिखा। नामधारी अशिक्षित पौराणिकों को कई उपाधियों से विभूषित किया। इस अशिष्टता का लेखराम जी पर तनिक भी प्रभाव न था। उनके पाण्डित्य की तो दशों दिशाओं में धूम मची हुई थी।[1]

'वेद-प्रचार श्रेष्ठतम कर्म'

१४ अक्टूबर से १६ अक्टूबर, १८९६ ई० तक रावलपिण्डी आर्यसमाज का १९वाँ वार्षिकोत्सव सोत्साह मनाया गया। इसमें पं० लेखराम जी के व्याख्यानों ने आर्यसमाज की धाक जमा दी। आर्य जाति के प्राचीन इतिहास व वेदों की नित्यता पर ऐसा प्रभावशाली व्याख्यान दिया कि श्रोता अवाक् रह गये। विधर्मियों को शंका समाधान का समय दिया गया। आपके उत्तर सुनकर वे बड़े प्रभावित हुए। पण्डित जी ने वेद की नित्यता पर भाषण के पश्चात् अपने हृदय के उद्‌गार इन शब्दों में प्रकट किये—

यदि कोई कार्य सहयोग के योग्य है तो सबसे बढ़कर वैदिक धर्म-प्रचार और इसको स्थिरता से चलाना है। भाषण की समाप्ति पर श्रोताओं ने धन की वृष्टि की।

'जब सामने वह आए, मुल्ला वे डगमगाए'

पसरूर, जिला स्यालकोट के एक शास्त्रार्थ की अन्यत्र चर्चा की गई है। 'कार्यवाही मुबाहसा पसरूर' शीर्षक से एक लम्बा विवरण 'सद्धर्म प्रचारक' साप्ताहिक में छपा मिलता है। यह शास्त्रार्थ उससे न्यारा है। 'सद्धर्म प्रचारक' के इस विवरण में पं० श्री लेखराम जी के पत्र संख्या एक दिनांक ६ जुलाई, १८९६ ई० से पता चलता है

---

१ 'सद्धर्म प्रचारक', २३ अक्तूबर, १८९६ ई०, पृष्ठ ११।

कि निम्न चार मौलवी उसके साथ शास्त्रार्थ के लिए बाहर से बुलाए गए। स्थानीय मौलवी व समीपवर्ती मौलवियों की तो गिनती इनके अतिरिक्त थी।

(१) मौलवी मुहम्मद इब्राहीम लाहौरी, (२) हाफिज फजल-उद्दीन नारोवाल, (३) मौलवी हबीब उल्ला किला सोभा सिंघ, (४) मौलवी नबी बख्श गोजराँवाला।

इनको सत्य-असत्य का निर्णय करने के लिए शास्त्रार्थ की चिन्ता न थी अपितु, अपने पेट की चिन्ता अधिक थी। जन-सभा में इन मौलवियों ने लोगों को यह कहकर बहकाया कि लाला मथुरादास जी वर्मा पसरूर निवासी ने हमको लिख दिया है कि हम शास्त्रार्थ नहीं करेंगे। जब पण्डित जी ने ललकारा कि हमारे व्यक्ति का वह पत्र दिखायें तो ये लोग ऐसा कोई पत्र न दिखा सके।

इन चार को पण्डित जी से घबराता देखकर मुसलमान भाइयों ने एक अली मुहम्मद मौलवी को अमृतसर से बुलाया। इसके पहुँचने से पूर्व यह बात फैलाई कि चारो वेदों का ज्ञाता एक मौलवी भी लेखराम के सामने आएगा। यह चारों वेदोंवाला मौलवी मुहम्मद फ़ाजिल अबुरहमत था। यह कृत्रिम चतुर्वेदी तो पण्डित जी के नाम को सुनकर पसरूर के आस-पास भी न फटक सका।

पसरूर के एक मौलवी मुहम्मद इब्राहीम ने तो शास्त्रार्थ से पिण्ड छुड़ाने के लिए एक अच्छी चाल चली। आपने लिखा कि सब हिन्दू सम्प्रदायों से यह प्रमाण-पत्र लाओ कि आप उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। पं० लेखराम शास्त्रार्थ के लिए ललकारते रहे परन्तु कोई भी सामने न आ सका। सैकड़ों मुसलमान बन्धुओ ने भी पण्डित जी के विद्वत्तापूर्ण ओजस्वी एवं प्रेरणाप्रद व्याख्यान सुने।

पण्डित जी १६ जुलाई, १८६६ ई० को सायं छः बजे पसरूर पहुँचे और २७ जुलाई, १८६६ ई० को जालधर के लिए प्रस्थान किया। इस प्रकार पूरा एक सप्ताह वह पसरूर में वैदिक धर्म का नाद बजाते रहे।"[1]

'सिंह की पकड़ में'

पं० लेखराम जी के बलिदान पर महात्मा मुन्शीराम जी ने 'सद्धर्म प्रचारक' में एक अत्यन्त ओजस्वी लेख लिखा। इसमें एक

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', सात अगस्त १८६६ ई०, पृ० ७-१० तक।

घटना दी है। उन्ही के शब्दों में पढ़िए—अभी कल की तो बात है कि भागोवाल आर्यसमाज के उत्सव पर १८ जनवरी को एक सहस्र से अधिक लोगों की भीड़ में एक मुहम्मदी युवक से उन्होंने बातचीत की। कुछ मौलवी मेरे निकट बैठे थे। जब पण्डित जी बोलते तो अनायास मौलवी साहिबान कह उठते, "यह बालक (मुहम्मदी युवक की ओर संकेत था) बब्बर शेर के पंजे में फँस गया है।"[1]

'मैं शीश तली धर निकला हूँ'

महात्मा मुन्शीराम जी ने 'सद्धर्म प्रचारक' में अपने सम्पादकीय में एक घटना दी है। एक उत्सव में बी० ए० पास एक मुसलमान भाई ने 'विज्ञान व इस्लाम' पर एक भाषण दिया। पण्डित जी ने इसका उत्तर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर अपने भाषण में दिया। मुसलमान बन्धु ने उस भाषण का खण्डन एक सभा में किया। पण्डित जी ने भी वह भाषण सुना। पण्डित जी की प्रार्थना पर वह मुहम्मदी युवक उनका भाषण सुनने आया। उसके साथ कई मुसलमान थे।

पण्डित जी अभी आध घण्टा ही बोले होंगे कि उनकी युक्तियों व प्रमाणों की झड़ी से वह युवक उत्तेजित हो गया। भड़ककर उसने कहा, **"तुम ऐसी कठोर वाणी का फल चखोगे"**। कुछ शोर मचने लगा। वीर लेखराम ने सिंहनाद किया। सब चुप हो गए। गर्जकर नर केसरी बोला, "तर्क का उत्तर मेरे पास तर्क के रूप में है। बद्धि का उत्तर बुद्धि से देने को उद्यत हूँ। परन्तु, स्मरण रखिए कि मुहम्मदी तलवार से भी नही डरता। मै जान हथेली पर लिए फिरता हूँ।"[2]

मौलवियों ने मतांध अज्ञानी मुसलमानों को भड़काने के लिए जान-बूझकर एक झूठ बोला। पण्डित जी ने अपने एक व्याख्यान मैं कहा, "भविष्य में मुसलमान हो चुके हिन्दुओं को वैदिक धर्म की श्रेष्ठता बताकर डंके की चोट से वापिस लाएँगे।" सच्चाई का गला घोटने वाले मताध मौलवियों ने यह बात घड़ ली कि लेखराम ने कहा है कि मुसलमान बन चुके हिन्दुओं को 'दण्डे की चोट' से वापिस लाएँगे।

निश्चय ही मुसलमानों की यह प्रवृत्ति मनुष्यता के लिए घातक है।

---

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक' साप्ताहिक, पृ० ७, मार्च १२, १८९७ ई०।

२. सद्धर्म प्रचारक, मार्च १९, १८९७ ई० का अंक, पृ० ३।

मिस्र में आधुनिक युग में विज्ञान के प्रकाश में भी कोई मुसल्मान इस्लाम को तज दे तो इसका दण्ड मृत्यु है। मलयेशिया में इस्लामी कन्या से कोई दूसरे मत का व्यक्ति विवाह कर ले तो मुसलमान बनना पड़ेगा अन्यथा दण्डित होगा। इस्लाम के प्रसार में जो लोग दण्डे के योगदान से जानते हुए भी जानबूझकर इनकार करते है, वे आज के युग में इन दो देशों की राज्य-व्यवस्था को क्या झुठला सकते हैं ?

हृदय द्रवित हो गए

मुकेरियाँ के शास्त्रार्थ की चर्चा अन्यत्र भी है। एक घटना उस समय की और भी उल्लेखनीय है। लाला मुन्शीराम व पं० लेखराम जी ६ सितम्बर, १८९६ ई० को दिन के दो बजे मुकेरियाँ पहुँचे। प० लेखराम जी का वहाँ 'देश की वर्तमान अवस्था' पर एक बड़ा मार्मिक भाषण हुआ। देश की दुर्दशा का ऐसा चित्र खींचा कि श्रोताओं के हृदय द्रवित हो गए। उनके हृदय की तड़पन दूसरों को भी तड़पाती व रुलाती थी।[१]

श्रोता आनन्द विभोर होते रहे

२७, २८ व २९ नवम्बर, १८९६ ई० को आर्यसमाज लाहौर का १६वाँ वार्षिकोत्सव था। इसका वृत्तान्त जो 'सद्धर्म प्रचारक' में छपा मिलता है उसमें हम पढ़ते हैं—"पण्डित आर्य मुनि का गम्भीर और दार्शनिक व्याख्यान लोगों को बहुत अच्छा लगा। पं० लेखराम जी के भाषण मे प्रायः की भाँति श्रोताओं द्वारा पाँच-पाँच मिनट के बाद हर्षोल्लास व्यक्त किया जाता रहा।"[२]

मिण्टगुमरी आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव ७, ८ नवम्बर, १८९६ ई० को था। इसमें पं० लेखराम जी ने अवैदिक मतों के फैलने की कहानी बड़े प्रभावशाली ढंग से बताई। ढाई घण्टे तक दोपहर के समय आपने यह भाषण दिया। पुजारी शब्द के अर्थ आपने बताए—मान प्रतिष्ठा + घृणा करने वाला, न चाहने वाला अर्थात पूजा से द्वेष

---

१. वही, १६ अक्टूबर १८९६ ई०, पृ० ५-८ तक।
२. वही, ४ दिसम्बर १८९६, पृ० ११।

करने वाला। "लोगों ने इस भाषण से बड़ा आनन्द पाया।"[1]

एक शुद्धि का वृत्तान्त

दिसम्बर, १८९६ ई० के अन्त में आर्यसमाज शरकपुर का वार्षिकोत्सव था। पण्डित जी भी वहाँ पहुँचे। वही एक अवयस्क बालक माधोराम लबाने को हिन्दुओं ने बहिष्कृत कर दिया था। आर्यसमाज के प्रचार से प्रभावित होकर स्वय ही कह दिया कि यदि आर्यसमाज इसे शुद्ध कर दे तो हम साथ मिला लेंगे। प० लेखराम जी, प० लालमण जी व पं० आत्माराम जी ने शुद्धि-सस्कार किया। बालक की विधवा माता प० लेखराम का गुणगान करती हुई समाज के सत्सग से घर लौटी। पण्डित जी के मनोहर उपदेश से श्रोता आनन्द विभोर हुए। वेद-प्रचार के लिए (१) हकीम शेर अली, (२) मियाँ हसनुद्दीन, (३) हाफिज अहमद, (४) मियाँ गुलाम गौस इन चार मुसलमान बन्धुओं ने भी अपने सामर्थ्य के अनुसार दान दिया।[2]

क्रूर के सम्मुख शूर का सीना

महात्मा मुन्शीराम ने 'सद्धर्म प्रचारक' मे वीर के बलिदान पर जो लेखमाला दी थी उसमें मानव हृदय को सुलभ रीति से छू लेने वाली एक बात लिखी। जब ऋषि की जीवन-गाथा लिखने में लीन थे तो वृद्धा माता ने पुकार कर कहा "पुत लेखरामा तेल नही आया।" अर्थात् पुत्र लेखराम तेल नही आया। घातक जानता था अब क्या होगा। पण्डित जी का स्वभाव सा था कि वह लिखते हुए थक जाने पर अंगड़ाई लेते हुए दोनो हाथ सिर पर इकट्ठे करके नयन मूँद लिया करते थे। यह क्रिया करते हुए मुख से कहा, "ओहो! भूल गया।"

कल्याणमार्गी मुन्शीराम के शब्दों में

"सीना उभार कर जिगर को स्वयमेव घातक के समाने रख दिया।"[3]

न जाने कब से घातक छुरी को कितनी बार तोल चुका था। क्रूर के सम्मुख शूर का सीना खुला और आगे जो कुछ हुआ वह

१. वही पृ० १० दिसम्बर ११, १८९६ ई०

२. 'सद्धर्म प्रचारक' पृ ९-१० जनवरी १५ सन् १८९७ ई०

३. वही पृ० ५ मार्च १९ सन् १८९३ ई०

पाठक **'मृत्यु से जीवन मिले तो आरती उसकी उतारो'** शीर्षक के नीचे अन्यत्र पढ़ेंगे ।

पं० लेखराम जी की वे माँगें जो मिर्जा साहिब पूरी न कर सके

जब मिर्जा गुलाम अहमद अपने नवीन मत को फैलाने के लिए अपनी नई-नई भविष्यवाणियों व इल्हामों (आकाश से उतरने वाले अल्लाह के ज्ञान) का ढोल पीट रहे थे तब पण्डित जी ने सत्य-असत्य के निर्णय के लिए मिर्जा जी के सामने तीन सुझाव रखे। मिर्जा जी इनमें से एक भी माँग पूरी न कर सके। यदि उनको अपने चमत्कारों पर और अपने अल्लाह पर इतना ही विश्वास था तो फिर कुछ करके दिखाते। अपने मत को फैलाने का यह सहज उपाय था परन्तु चमत्कारो का ढोंग करने वाले सब लोग ऐसा अवसर आने पर इधर-उधर की बातें बनाकर पिण्ड छुडा लेते है। इसीलिए निष्पक्ष ज्ञान पिपासु वैज्ञानिकों को इन लोगों के विषय मे God or Fraud देव अथवा धोखा का प्रश्न उठाना पडता है।

(१) पण्डित जी की प्रथम माँग यह थी कि मिर्जा जी अपने इल्हामी खुदा से धारावाही सस्कृत बोलना सीखकर आर्यसमाज के दो सुयोग्य विद्वानों पं० देवदत्त शास्त्री जी व प० श्याम जी कृष्ण वर्मा (भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के जन्मदाता) का सस्कृत वार्तालाप में नाक में दम करदें।

(२) छः दर्शनों में से केवल तीन के आर्ष भाष्य मिलते है। शेष तीन के अनुवाद मिर्जा जी अपने खुदा से मँगवा ले तो मैं बिना किसी ननुनच के मिर्जा जी की मान्यताओ को स्वीकार कर लूँगा।

(३) मुझे २० वर्ष से बवासीर का रोग है—यदि तीन मास तक मुझे अपनी प्रार्थना-शक्ति से रोगमुक्त करा दे तो मैं आपके पक्ष की सत्यता स्वीकार कर लूँगा।

पण्डित जी ने 'आर्य गजट' व 'सद्धर्म प्रचारक' में अपने लेख में मिर्जा जी से यह निवेदन किया था। पण्डित जी के बलिदान के पश्चात महता जैमिनि जी (तब जमनादास बी० ए०) न० 'रसाला शहादत संख्या ६' में तथा स्वामी योगेन्द्रपालजी ने भी अपने एक लेख में इन माँगों की चर्चा की।[1]

---

१. 'आर्य मुसाफिर', फरवरी १९०२ ई०, पृ० २८१।

श्री स्वामी योगेन्द्रपाल जी ने मिर्जा गुलाम अहमद जी से इससे भी बड़ी सरल माँगें की थी परन्तु स्वामी योगेन्द्रपाल जी के खुले चैलंज को स्वीकार करने का साहस वह न कर सके। इससे स्पष्ट है कि मिर्जा जी का आसमानी डाकघर उनको दूसरों की मौत, भूकम्प, रोगों की ही सूचनाएँ दिया करता था, इसके अतिरिक्त उस आसमानी इल्हामी डाकघर में कुछ न था। स्वामी योगेन्द्रपाल जी की तीन माँगें ये थीं—

(१) मिर्जा जी अपने चेले मौलवी करीम बख्श की लंगड़ी टाँग ठीक कर दें। उसके सिर में गंज है और एक आँख ठीक नहीं। उसको अच्छा कर दें।

(२) सार्वजनिक सभा में मिर्जा जी अथवा 'हकीम नूर-उद्दीन' की एक अगुली काट दी जावे। मिर्जा जी अपनी चमत्कारी शक्ति से एक घण्टा के अन्दर उसे जोड़ दें।

(३) मिर्जा जी दो सप्ताह में अपने इल्हामी खुदा से जो हो जा कहे कुन फीकुन तो हो जाता है, चारों वेद कण्ठ करके आर्यसमाज लाहौर में सदस्यो के सम्मुख सुना दें। साथ ही महर्षि दयानन्द जी ने जो वेदभाष्य किया है वह सारे का सारा कण्ठ किया हुआ सुना दे। हम हृदय से मिर्जा जी व उनके खुदा पर विश्वास ले आयेंगे।

पं० लेखराम जी ने १८९३ ई० में तीन माँगें रखी थी और स्वामी योगेन्द्रपाल जी ने इसके नौ वर्ष पश्चात् १९०२ ई० मे। जानने वाले जानते है मिर्जा जी इनमें से एक भी माँग पूरी करने मे सर्वथा असमर्थ रहे। वह तो इस विषय में चुप्पी साध गये। चुप्पी साधने में ही उन्होने अपना कल्याण समझा।

मौलवी करीम बख्श की आँख वह क्या ठीक करते? अपनी एक बीवी की आँख के लिए आपने बार-बार प्रो० मैयासिह बटाला से उनका बना सुरमा क्रय किया।[1] उनकी बीवी की आँख तो मैयासिह के सुरमे से ठीक हुई। चेले की आँख वह क्या बनाते?

प्रो० मैयासिह का विज्ञापन 'आरमी न्यूज लुधियाना' के कई अकों मे हमने पढ़ा है। अपने विज्ञापन मे मैयासिह जी ने अपने सुरमा ममीरा की प्रशंसा में मिर्जा जी का १७ नवम्बर १९०४ ई० का लिखा

१. आरमी न्यूज उर्दू लुधियाना की नवम्बर व दिसम्बर, १९०५ ई० के अंकों में मैयासिह का विज्ञापन देखिए।

पत्र भी छपवाया है। इस पत्र में मिर्जाजी ने लिखा है कि कई वर्ष पूर्व इससे मेरी बीवी को लाभ हुआ था अब फिर इसकी आवश्यकता है। इससे स्पष्ट है कि अपनी बीवी की आँख न तो वह पहले इल्हामो से ठीक कर सके न बाद में। प्रतीत यही होता है कि मिर्जा जी पर दूसरो की मृत्यु व अनिष्ट के ही इल्हाम उतरते थे किसी के कष्ट निवारण के लिए आकाशवाणी यदि उतर सकती तो वह अपनी प्यारी बीवी के नयनों को ठीक करवाते।

'होता है जो कुछ होने दो'

श्री स्वामी ओमानन्द जी महाराज को पुराने उपदेशक श्री पं० गौतम जी ने बताया कि धर्मवीर लेखराम हरियाणा के औद्योगिक नगर जगाधरी में पधारे। पण्डित जी का व्याख्यान सुनने के लिए भारी संख्या में श्रोता उपस्थित थे। विरोधी उनके प्रचार को विफल बनाने पर तुले हुए थे। जब किसी की कोई दाल न गली तो हुल्लड़ मचाने लगे। अशिष्टता ने नग्न नृत्य किया। किसी दुष्ट ने पण्डित जी की पगडी उतारकर समीप में तप रही एक भट्ठी मे फैंक दी। वीर विप्र की पगडी जल गई। व्याख्यान फिर भी बन्द न हो सका। सिह की दहाड़ सुनकर अज्ञान अविद्या की पोषक टोली काँप रही थी। सभा में एक श्रोता श्री चौधरी गगाराम भी बैठे थे। वह आर्यसमाजी नही थे। वीर के साहस को देखकर मुग्ध हो गये। उनका हृदय-परिवर्तन हो गया। वह उठे और व्याख्यान की समाप्ति पर कड़ककर बोले, "आज तो पण्डित जी की पगड़ी उतार ली गई है, कल मैं प्रचार कराऊँगा, जिसने जो करना हो कर ले।" अगले दिन उस चौधरी ने यज्ञोपवीत लिया। वैदिक धर्म ग्रहण किया और पण्डित जी का प्रचार करवाया। अब किसी को भी विघ्न डालने का दुःसाहस न हुआ। वीर लेखराम की गर्जना थी –

होता है जो कुछ होने दो।
सागर में नौका डाल चुके॥
पतवार बनाकर लहरों को।
तूफान बुलाने निकले है॥

—'जिज्ञासु'

'मूँछें सिह की होती हैं'

नरेला के चौ० कणकसिह जी सुनाया करते थे कि घासीपुर जिला मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) के सब बड़े-बड़े चौधरियों ने मुसलमान बनने का निश्चय कर लिया। तिथि भी निश्चित हो गई। श्री पं० लेखराम जी को किसी ने सूचना दे दी। पण्डित जी भागदौड़ करके येन-केन प्रकारेण उसी दिन ठीक समय पर घासीपुर पहुँच गये। मौलवियों का जमघट लगा हुआ था। पण्डित जी की दाढ़ी तो नहीं थी। यात्राओं मे समय पर हजामत न होने के कारण बढ़ जाया करती थी। पण्डित जी के वास्तविक चित्र में दाढ़ी नही है। मूँछे तो वह रखते थे।

घासीपुर में उनकी दाढ़ी के कारण मौलवियो ने उनको भी मौलवी समझा और पास बिठाकर पूछा, "दाढ़ी तो हुई, ये मूँछे कैसे ?"

पण्डित जी ने हँसकर कहा, "दाढी तो बकरों की होती है मूँछें सिह की होती हैं।"

मौलवी भाँप गये कि यह कोई मौलवी नहीं है। पण्डित जी ने तब अपना नाम बताया और शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। पण्डित जी के सामने कोई टिक न सका। उनके भाषण को सुनकर घासीपुर के सब चौधरी वैदिकधर्मी बन गये। यह लेखराम जी की कृपा है कि जो घासीपुर मुसलमान बनने जा रहा था, उसी ग्राम में आगे चलकर गुरुकुल की स्थापना हुई।

आए जिसका जी चाहे

श्री पण्डित जी नवम्बर १८९१ ई० के अन्त में स्यालकोट गये। वहाँ आपके दो व्याख्यान हुए। एक का विषय या 'धर्म' तथा दूसरे का 'पुराणों का फोटो'। श्री पण्डित जी ने सब मतावलम्बियों को शङ्का समाधान करने का खुला निमन्त्रण दिया। श्री पण्डित जी को ईश्वर की वाणी वेद की सच्चाई पर अटल विश्वास था. अत. वे निर्भयतापूर्वक पूरे आत्मविश्वास के साथ सबको प्रश्न करने का अवसर दिया करते थे।[1]

सक्खर सिंध में एक व्याख्यान

आर्यसमाज सक्खर सिंध प्रदेश का आठवाँ वार्षिकोत्सव १, २, ३ मई सन् १८९१ ई० को था। वहाँ डाकघर के एक लिपिक

१. देखें आर्य गजट पृष्ठ संख्या सात दिनाँक १ दिसम्बर १८९१ ई०

श्री जैसीराम ने मुक्ति से पुनर्वृत्ति पर प्रश्न किया। श्री पं० लेखराम जी ने इसका उत्तर देते हुए कहा,'हाँ जीव मुक्ति से लौटता है।' अपने इस कथन की पुष्टि में पण्डित जी ने विभिन्न मतों के ग्रन्थों से प्रमाणों की झडी सी लगा दी यथा पौराणिकों के भगवान् विष्णु स्वयं वराह तक की योनि में जन्म लेते है। ईसाई और मुसलमान आदम व हव्वा का स्वर्ग से धरती पर आना मानते है और वेदान्तियो का ब्रह्म भी बार-बार अविद्या के कारण जीव बनता है।

यह मोक्ष से वापिस आने का सिद्धान्त वैसे तो सब मतों को मान्य है और युक्तियों से भी इसका औचित्य सिद्ध ही है। सीमित कर्म का फल सीमित ही तो होगा। मुक्ति भी तो किन्ही कर्मों के फलस्वरूप ही प्राप्त होती है। जब कर्म असीम नही तो मोक्ष का आनन्द कैसे असीम हो सकता है? पं० लेखराम जी के तर्को से सब जन बड़े प्रभावित हुए।

एक अन्य सिंधी भाई खुशीसिंह के भी आपने संशय निवारण किए। यहाँ आर्यसमाज के नियमों पर भी पण्डित जी का एक व्याख्यान हुआ।[1]

वह वोर था डरना क्या जाने ?

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के एक दिवगत प्रधान श्री पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा वैद्य अमृतधारा वाले ने अपने एक लेख में पण्डित जी के जीवन सम्बन्धी अपना एक संस्मरण लिखा है। श्री पं० लेखराम जी एक बार अमृतसर पधारे। विद्यार्थी ठाकुरदत्त भी उनका व्याख्यान सुनने चला गया।

पं० लेखराम बडी निडरता से इस्लाम की समीक्षा करते हुए श्रोताओं को इस मत के दोषों से बचने की प्रेरणा दे रहे थे। जनसमूह पण्डित जी के अथाह ज्ञान व सिह गर्जना से बहुत प्रभावित हुआ। मुसलमान भी बड़ी संख्या में वहाँ उपस्थित थे। आर्यसमाज के कुछ अधिकारी उधर परस्पर कानाफूसी करते देखे गये। व्याख्यान की समाप्ति पर उनमें से किसी ने पण्डित जी को सतर्क रहने के लिए कहा।

---

१. देखें वही, पृष्ठ ३-५, दिनांक १५-५-१८९१ ई०।

पं० लेखराम जी ऐसे परामर्श को भीरुता की संज्ञा दिया करते थे। उत्तेजित होकर बोले, "तो इससे क्या हानि होगी ?" प० लेखराम जी को पं० ठाकुरदत्त जी ने बस एक ही बार सुना था। इस व्याख्यान का उन पर अमिट प्रभाव रहा। वह लिखते हैं कि तब हमे ऐसा लगता था, "बस एक केसरी है जो दहाड़ रहा है।"[1]

सर्पो वाले घर में चले गये

डा० कर्मचन्द प्राचार्य होम्यापैथिक कालेज लाहौर ने अपने लेख में एक घटना दी है कि एक बार आर्यसमाज पेशावर के मन्त्री जी ने पण्डित जी से हास्य-विनोद मे कहा, "आप हवन यज्ञ के बड़े लाभ बताते है, आपको एक ऐसे घर में ठहराते है जिसमें बहुत सर्प चलते-फिरते हैं।"

पं० लेखराम जी ने कहा, "चलिए, मैं चलता हूँ।" पण्डित जी वहाँ जाकर तनिक भी न घबराए। कुछ सामग्री लेकर वहाँ हवन किया और उस घर के सब द्वार बन्द कर दिये। अगले दिन जब पण्डित जी ने वहाँ द्वार खुलवाए तो वहाँ कई सर्प बेसुध, अचेत पड़े थे। पण्डित जी ने सबको बाहर फिंकवा दिया। इससे सबके मन में उस घर के लिए बैठा हुआ भय भी दूर हो गया और यज्ञ-हवन की सार्थकता व उपयोगिता को भी सब मानने लगे। इससे पण्डित जी के दृढ धर्म भाव का भी परिचय मिलता है।[2]

'वे सत्य के कहने से टलते न थे'

उ० प्र० के इटावा नगर के आर्यसमाज के एक पूर्व प्रधान श्री जोरावरसिंह जी बी० ए०, बी० एस-सी०[3] ने भी पं० लेखराम जी के व्याख्यान सुने थे। उन्होंने अपने सस्मरणों में लिखा है कि "जिस बात को उनका आत्मा सत्य मानता था, उसके कहने में वे कतई न डरते थे।" आपने लिखा है कि वे यात्रियों का जीवन बिताते थे। उनके साथ कोई पुस्तकालय नहीं होता था, फिर आश्चर्य इस बात पर

---

१ 'आर्य पत्रिका' लाहौर का शहीद विशेषाङ्क, पृ० ३४-३५, दिनाक १-३-१६१६ ई०।

१. 'आर्य पत्रिका' उर्दू पृष्ठ ३३, दिनांक १ से ८ मार्च, १६१६ ई०।

२. तब B. A., B. Sc. ऐसी भी डिग्री मिलती थी।

है कि इतनी खोज और इतनी जानकारी प्राप्त करने का अवसर कैसे मिल जाता था। पण्डित जी के दिये प्रमाणों को कोई झुठला न पाता था।[1]

'मैं चाहता हूँ'

दलितोद्धार के लिए सारा जीवन आहूत करने वाले अनाथ रक्षक पं० गंगाराम जी मुजफ्फरगढ़ वालों को पं० लेखराम जी ने कहा था, "मैं चाहता हूँ कि अरब देश में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार करूँ तथा मक्का-मदीना में आर्यसमाज स्थापित करके जो विचार धर्म के विरुद्ध संसार में फैल रहे हैं, उनको दूर कर दूँ।" यह उस रक्त साक्षी की मनोकामना थी जिसने वैदिक धर्म के लिए अपने पेट में छुरा खाया और इतने दुःख मे भी अपनी माता व स्त्री का विचार न करके प्रभु प्यारे के ध्यान में ही अन्तिम समय में मग्न रहा।[2]

हाथ पर चन्दन का टीका

आर्यसमाज देहली के उत्सव पर एक सज्जन सबके माथे पर चन्दन का टीका लगा रहा था। पं० लेखराम जी ने यह कहकर टीका लगवाने से इनकार कर दिया कि "मेरे सिर मे पीड़ा नही है।"

उस व्यक्ति ने कहा, "महाराज, सुगन्धि के लिए लगा रहा हूँ।"

इस पर श्री पं० लेखराम जी ने हाथ की पीठ पर टीका लगा देने को कहा। उसने ऐसा ही किया। पण्डित जी हाथ को नाक के पास ले जाकर चन्दन को सँघन लगे तो सब सज्जन हँस पड़े।[3]

मैं पण्डित लेखराम जी का ऋणी हूँ

डी० ए० वी० कालेज लाहौर के एक आचार्य दिवंगत बक्षी रामरत्न जी ने पण्डित जी के सम्बन्ध मे अपने लेख में लिखा है कि उनके पिता जी पक्के थ्योसाफिस्ट थे अतः आपका आर्यसमाज से कोई सम्पर्क न था। आप मिशन स्कूल गुजरांवाला के छात्र थे, वहाँ बाइबल की परीक्षा में प्रथम पुरस्कार पाते रहे। आपको कहीं से पं० लेखराम

---

१. 'आर्य पत्रिका' उर्दू, पृष्ठ ३२, दिनांक १ से ८ मार्च, १९१९ ई०।

२. 'आर्य पत्रिका' उर्दू, पृ० ३०, दिनांक १-८ मार्च, १९१९ ई०।

३. देखिए वही, पृष्ठ २९।

जी के ग्रन्थ पढ़ने को मिले तो आपके विचारो में एकदम परिवर्तन आया। आप अब ईश्वरीय ज्ञान वेद तथा कर्म फल के सिद्धान्त पर दृढ विश्वास रखने लगे। आपने अपने लेख में लिखा था, "मैं आज कृतज्ञ हूँ और यह स्वीकार करता हूँ कि पं० लेखराम जी की लेखनी मुझको आर्यसमाज में खीच लाई।"[1] स्मरण रहे कि दसवी कक्षा में अत्यन्त रुग्ण होने पर जब रामरत्न जी को अम्बाला छावनी में अपने मामा जी के पास चिकित्सा के लिए कुछ समय रहना पड़ा तो वहीं चारपाई पर पड़े-पड़े जब बालक रामरत्न ऊब जाता था तो अपने मामा जी के घर में पड़ी हुई पुस्तकों को पढ़ता रहता।

इन्ही पुस्तकों मे धर्मबीर प० लेखराम जी का पुनर्जन्म विषयक प्रसिद्ध ग्रन्थ तथा कुछ अन्य पुस्तकें बक्षी जी को पढ़ने को मिली थीं। इन पुस्तकों ने रामरत्न का जीवन ही पलट दिया।

'सब अल्लाह का माल है'

आर्यसमाज गुजरात में पण्डित जी का मुसलमानो के 'हलाल तथा हराम' के सिद्धान्त पर व्याख्यान हुआ। इसी भाषण में आपने यह कविता पद सुनाया—

जितने हैं जबरदस्त वह सारे हराम हैं।
और जितने जेरदस्त है अल्लाह का माल हैं॥

अर्थात् जितने भी बलवान जन्तु है (यथा सिंह, भेड़िया, चीता आदि) उनका मांस मुसलमानों के लिए वर्जित हैं और जितने भी निर्बल प्राणी है उन सबका मास मुसलमानों के लिए विहित (भक्ष्य) है—जैसे गाय, भेड़, बकरी, ऊँट, मुर्गा, कबूतर आदि।

भाषण की समाप्ति पर मौलवी बाकर हुसैन जीने कहा, "पण्डित जी आपने हमारे मसला हलाल हराम पर आक्षेप तो कर दिये परन्तु आपको क्या पता कि हमारे मत में चूहिया हराम (वर्जित) है। क्या वह भी जबरदस्त (बलवान) है?"

उत्तर देने से पूर्व पण्डित जी ने पूछा, "मौलवी जी, आप सुन्नी हैं या शिय्या?"

मौलाना बोले, "शिय्या।"

पण्डित जी ने कहा, "मौलाना, मुझे आपकी बात सुनकर हँसी

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य पत्रिका', उर्दू, पृष्ठ २६, दिनांक १-८ मार्च, १६१६ ई०।

आती है। आप शिय्या होकर चूहे के बलशाली होने से इन्कार करते हैं। क्या आपको ज्ञात नहीं कि यही नामुराद (दुष्ट, अशुभ) प्राणी था जिसने कर्बला के रणक्षेत्र में मुसलमानों की सब मुशकें काट दी थीं जिसका परिणाम यह हुआ कि हजरत अमाम हुसैन प्यासे मर गए। यदि कुछ ऐसे जबरदस्त पैदा हो जाएँ तो अरब और ईरान में कर्बला सी कई घटनाएँ घटित हो जाएँ।"

इस पर बहुत ठहाका हुआ।

कुछ लेखकों के आधार पर हमने भी 'प्रेरणाकलश' आदि पुस्तकों में यह लिखा था कि गुजरात में शास्त्रार्थ के मध्य यह प्रश्न आया था परन्तु 'आर्य पत्रिका' में स्पष्ट छपा मिलता है कि आर्यसमाज में उक्त विषय के पश्चात् मौलाना बाकर हुसैन जी ने यह प्रश्न उठाया। उन के प्रश्न के उत्तर में श्रीयुत पं० लेखराम जी ने यह उत्तर दिया। आर्य पत्रिका में प्रकाशित वृत्तान्त हमें अधिक प्रामाणिक जँचता है। कारण यह है कि १९१८ ई० तक तो पण्डित जी के अनेक समकालीन, सहयोगी, भक्त व श्रोता जीवित थे। यह घटना किसी ऐसे ही सज्जन ने छपवाई। लेखक का नाम नहीं छपा।[1]

वराह का भोग

एक बार श्री पं० लेखराम जी जम्मू के रघुनाथ मन्दिर में गये। उनके परिवार के कुछ लोग भी साथ थे। वहाँ पुजारी से पण्डित जी ने पूछा, "इन सबको भोग भी लगाते हो क्या ?"

पुजारी ने कहा, "जी हाँ, सब देवमूर्तियों को, अवतारों को नित्य भोग लगाया जाता है।"

पण्डित जी ने कुछ एक के बारे में पूछा कि इन्हें क्या भोग लगाते हो ?

पुजारी ने अच्छे-अच्छे पदार्थ गिना दिए और कहा इन-इनका भोग लगाया जाता है।

तब पण्डित जी ने पूछा, "इस (वराह) को किस पदार्थ का भोग लगाया करते हो ?"

इस प्रश्न पर पुजारी बड़ा लज्जित हुआ कि क्या कहे और क्या

---

१. 'आर्य पत्रिका', पृष्ठ २६, दिनांक १-८ मार्च, सन् १९१९ ई०।

न कहे ? वराह का प्रिय भोजन तो कोई मनुष्य देखना व छूना भी नही चाहता।

यह घटना श्री पण्डित जी की सूझ-बूझ व मौलिक युक्तियों का एक उदाहरण है।

यह घटना श्री पं० गण्डाराम जी ने पण्डित जी के जीवन-चरित्र में दी है।

उनका सन्देश

लाहौर के एक मुसलमान विद्वान् और उर्दू के सिद्धहस्त लेखक ने श्री पण्डित जी के सम्बन्ध में एक उत्तम भावपूर्ण लेख मे लिखा था—

"पतंगा जल गया परन्तु, स्मारक छोड़ गया। कृतज्ञता (वफा) का सन्देश, शिव सङ्कल्पो का सन्देश, दृढ निश्चय का सन्देश—अडिग रहने का सन्देश—आत्मोत्सर्ग का सन्देश—असीम स्नेह का सन्देश और अदम्य उत्साह (वफूरे शौक) का सन्देश छोड़कर मरा।

यह पतगा कौन था ? यही प० लेखराम जी थे कि जो वैदिक धर्म के लिए समर्पित थे।"[1]

जब शीश तली पर धरकर पण्डित जी ने एक अबला को बचाया

श्री मास्टर गोविन्द सहाय जी आर्यसमाज अनारकली लाहौर के सभासद थे। आपने श्री पं० रामगोपाल जी शास्त्री वैदिक विद्वान् और गवेषक को पण्डित लेखराम जी की शूरता व धर्मानुराग की निम्न घटना सुनाई। एक बार पण्डित जी को सूचना मिली कि लाहौर की बादशाही मस्जिद में एक हिन्दू लडकी को शुक्रवार के दिन बलात् मुसलमान बनाया जाएगा। लड़की को कुछ दुष्ट पहले ही अपहरण करके मस्जिद में ले जा चुके थे। यह सूचना पाकर श्री पण्डित जी की आँखे रक्त वर्णिम हो गई।

आपने मास्टर गोविन्दराम जी से कहा, "चलिए, मास्टर जी हम आज रात्रि ही उस लड़की को निकालकर लावेंगे।" बृहस्पतिवार की सायंकाल को पण्डित जी मास्टर जी को लेकर मस्जिद में गए। लड़की

१. देखिए 'आर्य पत्रिका' उर्दू, पृष्ठ २४ पर, श्री गुलाम अबास खाँ साहिब बी० ए० का लेख, दिनांक १-८ मार्च, सन् १९१९ ई०।

को कहा, चलो हमारे साथ। लड़की साथ चल पड़ी। वहाँ उस समय कुछ मुसलमान उपस्थित थे परन्तु पण्डित जी को कुछ कहने का किसी को भी साहस न हुआ। ऐसे साहसी प्राणवीर को कौन रोक-टोक सकता है ?[1]

लोहारी गेट, लाहौर के सामने

श्री महात्मा हंसराज जी ने एक बार श्री पं० लेखराम जी के सम्बन्ध में अपने उर के उद्‌गार ऐसे प्रगट किए थे—

"मुझे पं० लेखराम जी से मिलने-जुलने का सौभाग्य कई बार प्राप्त हुआ है। मैं उनको बहुत अच्छी प्रकार से जानता हूँ। उनके हृदय में वैदिक धर्म प्रचार की अग्नि बहुत प्रचण्डता से प्रज्वलित थी। इस्लाम का उन्होंने विशेष रूप से अध्ययन किया हुआ था। प्रायः वह वैदिक धर्म की तुलना में इस्लाम की दुर्बलताएँ बताया करते थे। उनके हृदय में किसी प्रकार का भय नहीं था।

अनारकली बाजार के उस भाग में, जो ठीक लोहारी गेट के सामने है, मैदान में खड़े होकर सैकड़ों मुसलमानों के सम्मुख इस्लाम की तुलना में वैदिक धर्म की श्रेष्ठता का प्रकाश करते थे। इस प्रकाश से जो तिलमिलाहट उत्पन्न होती थी, उसकी परवाह न करते हुए भी वह निरन्तर अपने प्रचार के कार्य में संलग्न रहते थे।

जहाँ कहीं उनको पता लगता था कि कोई हिन्दू अपने धर्म से च्युत होने लगा है, वह वहाँ ही पहुँचकर उसको समझाने का यत्न करते थे। घर में कितना ही आवश्यक कार्य हो, उस कार्य को तजकर वह धर्म-प्रचार के अवसरों को हाथ से नहीं जाने देते थे। उन सरीखे महान् प्रचारकों की हिम्मत से आर्यसमाज को गौरवपूर्ण सफलता प्राप्त हुई। यदि हम चाहते हैं कि आर्यसमाज की शोभा बनी रहे तो आवश्यक है कि आर्यसमाज के क्षेत्र में इस प्रकार के उपदेशक विद्यमान हों और आर्यों तथा हिन्दुओं को अपने धर्म पर दृढ़ रहने की प्रेरणा करें।"

---

१. देखिए 'आर्य पत्रिका', उर्दू, पृष्ठ २३, दिनाक १-८ मार्च, सन् १९१९ ई०।

२. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर', साप्ताहिक लाहौर का 'शहीद अंक', १८ फरवरी, सन् १९३४ ई०।

श्री महात्मा हंसराज जी की लेखनी से एक और महत्त्वपूर्ण लेख

"मैंने धर्मवीर पं० लेखराम के दर्शन उस समय किए, जबकि उन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार-कार्य को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया ही था। उनकी आकृति बड़ी सरल थी, परन्तु उनके हृदय में धर्म-प्रेम की अग्नि बड़ी प्रचण्डता से प्रज्वलित थी। कोई समय नही जब उन्हे आर्यसमाज का ध्यान न हो। **कोई भी ऐसा कष्ट नहीं था जिसे वह आर्यसमाज के लिए सहन करने को उद्यत न हों।** यदि पाँच सौ मील से तार आया है कि कोई हिन्दू अपने धर्म का त्याग करने लगा है तो पं० लेखराम वहाँ पहुँचकर कार्य करने के लिए उपस्थित है।

न मार्ग की कठिनाइयों का विचार है, न ही इस बात का विचार है कि जहाँ जायेंगे वहाँ भोजन का मिलना भी कठिन है, विरोधियो की संख्या सहस्र गुणा है और सहायक सम्भवत: कोई भी न हो; परन्तु फिर भी धर्मवीर अपने यज्ञ पर अटल है, अपने मिशन की पूर्ति के लिए उपस्थित है। मैं चाहता हूँ कि हमारे उपदेशक उनके जीवन से शिक्षा लें। उनके जीवन से हमें अनेक शिक्षाएँ प्राप्त हुई हैं, परन्तु, मै केवल तीन बातों का ही वर्णन करूँगा—

१. परम तपस्वी

उनका जीवन तपस्या का जीवन था। वह कष्ट सहन कर सकते थे तथा करते थे। प्रतिदिन यात्रा में रहना कोई साधारण बात नही। उनको इस बात की तनिक भी चिन्ता न थी कि उन्हें धनिकों जैसा जीवन प्राप्त होता है अथवा निर्धनों जैसा। जो कुछ प्राप्त हुआ उसी को खा-पीकर, अपितु, कई बार भूखा रहकर भी वह उपदेश देते थे, शास्त्रार्थ करते थे। उनकी वेशभूषा भी सादा थी।

२. प्राणों का निर्मोही, निर्भय विप्र

उनमे अद्भुत निर्भीकता थी। सहस्रों विरोधियों के मध्य खड़े होकर भी वे उनके मत का खण्डन करने से न डरते थे। उनको इस बात की कतई चिन्ता न थी कि मेरा जीवन सुरक्षित है अथवा नहीं। मिर्जाइयों के सामना के लिए वे प्रतिक्षण डटे रहते थे। उनकी वाणी व लेखनी (तकरीरों व तहरीरों) में भय की तनिक भी गन्ध नही पाई

जाती थी। एक बार की घटना है कि उन्होंने एक स्त्री को मुसलमानों के जमघट से निकालकर बचाया। अनारकली के पुल पर कई बार मैंने उनके प्रवचन को सुना। एक-दो बार तो झगड़ा ही होने लगा था। कठिनाई से और जोर से लोग उनको ईश्वरदास जी के निवास पर ले गये तथा लड़ाई को टाला (रफा-दफा किया) गया।

३. सर्वस्व समर्पण करने की चाह

आर्यसमाज के लिए उनको अत्यन्त प्रेम था। वे इस पर फिदा (समर्पित) थे। न अपने घर की कुछ चिन्ता थी तथा न मित्रों का कुछ विचार था। जब आर्यसमाज में कलह जागी, दुर्भाग्य से मै तथा वे दो भिन्न-भिन्न दिशाओं में थे। उन्होंने बहुत यत्न किया कि हमको अपनी ओर खींचें। यद्यपि वे इस उद्देश्य में सफल न हुए, परन्तु, मै इस बात की साक्षी देता हूँ कि उनके इन सब प्रयत्नो की नींव में आर्यसमाज का प्रेम था। जिस प्रकार जैसूवाट मिशनरी अपने निश्चय के पक्के थे तथा अपने मिशन को सबसे बढ़कर समझते थे, इसी प्रकार यह धर्मवीर भी आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म-प्रचार से बढकर उद्देश्य को स्वीकार नही करते थे। यही उनके जीवन की लग्न थी। इसी के लिए वे सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत थे।

शताब्दी का चौथाई भाग से अधिक बीत[1] गया, परन्तु मेरे नयनों के सामने से वह दृश्य मद्धम नही हुआ जबकि शोक से ग्रसित सैकडों आर्य तथा हिन्दू श्मशान भूमि मे उनकी अर्थी के चहुँओर एकत्र थे। पजाब में सामान्यरूप से व लाहौर में विशेष रूप से एक वलवला (जोश)-सा पैदा हो गया था। लोगों के नयनो में अश्रु बह रहे थे। जिस समय वे धर्मवीर के बलिदान का वृतान्त सुनते थे, उनका हृदय काँप उठता था। इस वलवला में सामाजिक भाइयों ने भी परस्पर आलिंगन किया, परन्तु वह ज्ञान, मात्र श्मशान का ही ज्ञान (वैराग्य) था। श्मशान-भूमि में पहुँचकर पापी भी कुछ क्षण के लिए अपने विचार परिवर्तित कर लेता है, परन्तु यह परिवर्तन स्थायी नही होता। समाज की अवस्था भी ऐसी ही हुई।

---

१. यह लेख पण्डित जी के बलिदान के २२ वर्ष पश्चात् लिखा गया। महात्मा जी ने चौथाई से अधिक भाग बीत जाने की बात यूँही सहज स्वभाव से लिख दी है।

क्रूर घातक पण्डित जी का ही नमक खाता रहा

जिस व्यक्ति ने प० लेखराम को बलिदान का प्याला पिलाया, उसका पता इस समय तक नहीं मिला।[1] इतना ज्ञात है कि पण्डित जी ने एक व्यक्ति को अपने पास रखा और उसको शिक्षा देकर शुद्ध करने का निश्चय किया। उस व्यक्ति ने भी पण्डित जी के पास आकर आर्यसमाज की शिक्षा से लाभान्वित होने के निश्चय को प्रकट किया। उनकी मृत्यु से एक सप्ताह पूर्व[2] एक मुसलमान काली कमली ओढ़े हुए मेरे पास शुद्धि के लिए आया था। उसने यह विचार व्यक्त किया था कि आर्य धर्म की शिक्षा के लिए उसको मैं अपने पास रखूँ, परन्तु मैंने इन्कार कर दिया था और कह दिया था कि न तो मैं स्वयं ऐसा कर सकता हूँ तथा न कालेज में इस प्रकार की व्यवस्था है। वह व्यक्ति चला गया। एक सप्ताह के पश्चात् हमने पण्डित जी के बलिदान का समाचार सुना।

घातक इस बात में सफल हुआ कि पण्डित जी के जीवन को समाप्त कर दे, परन्तु उसने पण्डित जी के जीवन को सहस्रों गुणा अधिक उज्ज्वल तथा पवित्र बना दिया तथा आर्यसमाज की जड़ों को भी दृढ़ कर दिया, क्योंकि हुतात्मा का रक्त, धर्म के भवन का cement (सीमेंट) है।"[3]

---

१ हत्यारा पकडा न गया, इसके लिए आर्यनेताओं का प्रमाद भी कुछ सीमा तक कारण हो सकता है। आर्यसमाज शासन पर हत्यारे को पकड़ने के लिए पूरा दबाव न डाल सका।

अंग्रेज सरकार की नीति भी ऐसी थी कि हत्यारा नहीं पकड़ा जावे। सरकार मिर्जा गुलाम अहमद की संरक्षक व पोषक थी। मिर्जा गुलाम अहमद सगर्व सरकार के गुणगान किया करता था तभी तो मौलाना सैय्यद सरूर शाह गैलानी अलीग मुबलग इस्लाम ने मिर्जा जी को एक बार 'बरतानवी मसीह' लिखा था। देखिए 'प्रकाश' उर्दू, पृष्ठ ६, दिनाक ३०-८ १९३१ ई०।

२ घातक पण्डित जी के पास बलिदान से १९ दिन पूर्व आया था। महात्मा जी के पास वह दुष्ट १२ से १५ फरवरी के मध्य आया था। महात्मा जी ने विस्मृति के कारण एक सप्ताह पूर्व घातक का मिलना लिख दिया। यह एक सहज भूल है।

३. देखिए 'आर्य पत्रिका' उर्दू, लाहौर, पृष्ठ ६, दिनांक १-८ मार्च, १९१९।

जालन्धर छावनी में शास्त्रार्थ

श्री पण्डित जी ने ११ जून सन् १८९६ शनिवार की रात्रि जालन्धर छावनी आर्यसमाज में ईश्वरीय ज्ञान विषय पर एक भाषण दिया। रविवार सायंकाल को श्री पण्डित जी का एक गुलाबदासी साधु से शास्त्रार्थ हुआ। साधु ने दो-चार प्रश्न ही किये। पण्डित जी के उत्तर सुनकर न जाने वह वहाँ से किधर चला गया। उसका कुछ अता-पता न चला।[1]

दीनानगर की अन्तिम यात्रा

आर्यसमाज दीनानगर का वार्षिकोत्सव २४-२५ व २३ अप्रैल, १८९६ ई० को रखा गया। इस अवसर पर श्री पं० गणपति शर्मा व श्री पं० लेखराम जी भी पधारे। शङ्का समाधान का दायित्व श्री पं० लेखराम जी व पं० गणपति शर्मा जी को सौंपा गया। दोनों विद्वानो के पाडित्य का श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव पड़ा।[2] हमारे विचार मे यह पण्डित जी की दीनानगर की अन्तिम यात्रा थी।

द्वेषाग्नि को शान्त करने वाले

आर्यसमाज मुस्तफाबाद जिला अम्बाला का प्रथम वार्षिकोत्सव १०, ११ व १२ अप्रैल, १८९६ ई० को समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। इस उत्सव के समय एक पौराणिक साधु के उत्तेजित करने वाले विषैले व्याख्यानों के कारण आर्यो का बड़ा विरोध हुआ। उपदेशक भी पहले दिन केवल एक पं० आत्माराम जी ही पहुँचे थे अतः आर्यजन बहुत चिन्तित थे कि क्या होगा। रात्रि १२ बजे दिनांक १० अप्रैल को आतुर आर्य भाई स्टेशन पर गये तो धर्मवीर श्री पं० लेखराम जी को गाड़ी से उतरते देखकर गदगद् हो गये। पण्डित के आगमन से द्वेषाग्नि की लपटों को शान्त करने में बड़ी सफलता प्राप्त की।

पण्डित जी ने ११-४-१८९६ ई० को प्रातःकाल 'यज्ञ हवन के लाभ' विषय पर अत्यन्त खोजपूर्ण व्याख्यान देते हुए बताया कि यज्ञ हवन तो अति प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में सब देशों में

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', उर्दू, पृष्ठ ८-९, दिनाक १९ जून, १८९६ ई०।

२. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १३, दिनाक ८ मई सन् १८९६ ई०।

प्रचलित रहा है। पाँच-छः सहस्र श्रोताओं ने बडी शान्ति से पण्डित जी को सुना। पण्डित जी के व्यक्तित्व का ऐसा आकर्षण था कि उत्सव का स्थल तंग पडने लगा। इतने श्रोता वहाँ समा न सकते थे। धूप भी बहुत थी परन्तु श्रोताओं को इसकी तनिक भी चिन्ता न थी। वे मन्त्रमुग्ध होकर धर्मवीर को सुनते रहे।[1]

ऋषि भूमि अजमेर की अन्तिम यात्रा

२१, २२, २३ मार्च, १८९६ ई० को आर्यसमाज अजमेर का पन्द्रहवाँ वार्षिकोत्सव था। इस शुभ अवसर पर श्री पं० कृपाराम जी शर्मा (स्वामी दर्शनानन्द जी) तथा धर्मवीर पं० लेखराम की जोडी को सुनने के लिए दूर-दूर से लोग आए। जोधपुर से प्रतापसिंह कर्नल के दो व्यक्ति विघ्न डालने के लिए भी आए। इस उत्सव पर पूज्य प० लेखराम जी के व्याख्यानों ने आर्यसमाज की धूम मचा दी।

२२ मार्च को जब पण्डित जी व्याख्यान देने के लिए खड़े हुए तो करतल ध्वनि से उनका स्वागत किया गया। उनका विषय था 'अमृत का स्रोत'। आपने युक्ति व शास्त्रीय प्रमाणों से सिद्ध किया कि अमृत का स्रोत केवल पवित्र वेद ही है।

पण्डित जी की पवित्र भावनाएँ

इस व्याख्यान की समाप्ति पर श्री पण्डित जी ने वेद-प्रचार के लिए धन की अपील की तो लोगों ने तत्काल तीन सौ रुपया दान में दिया। यह राशि उस युग में बहुत अधिक थी। यह स्मरण रहे कि पण्डित जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए धन नही माँगा। उन्होंने राजस्थान की सभा के लिए अपील की थी। यह उनके अनुकरणीय धर्मभाव का एक उदाहरण है। उस समय के पंजाब सभा के अधिकारी भी कैसे ऊँचे चरित्र के व्यक्ति थे जिनको पं० लेखराम जी के इस आचरण पर कोई आपत्ति न थी।

आर्यसमाज के उद्देश्य विषय पर भाषण

पण्डित जी ने आर्यसमाज के उद्देश्य विषय पर लगातार तीन घण्टे एक ओजस्वी व सारगर्भित व्याख्यान दिया। श्री वजीरचन्द जी

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १२-१३, दिनांक ८ मई सन् १८९६ ई०।

विद्यार्थी भी उन दिनों अजमेर में ही रहते थे। आपने लिखा है कि इस व्याख्यान की समाप्ति पर ग्यारह नये सज्जन समाज के सभासद् बन गये।[1]

शास्त्रार्थ की चुनौती

कर्नल प्रतापसिंह के व्यक्ति मांसभक्षण का पक्ष लेकर शास्त्रार्थ की डींग मारते फिरते थे परन्तु पं० कृपाराम जी व पं० लेखराम जी के सामने आने की किसी में हिम्मत न थी। शास्त्रार्थ के समय वे खिसक गये।

पण्डित लेखराम जी को सुनकर

पसरूर में पण्डित जी को सुनकर कलासवाला कस्बा (पश्चिमी पंजाब) के कुछ सज्जनों ने जाते ही अपने यहाँ आर्यसमाज की स्थापना कर दी। इस सभा ने आर्य जगत् को कई लोकप्रिय प्रचारक दिये। यह सब पण्डित जी के जीवन का प्रभाव था।[2]

वे ऐसे जोगी न थे

लोक में एक लोकोक्ति है कि 'घर का जोगी जोगना बाहर का जोगी सिद्ध'। इस कथन में बहुत कुछ सच्चाई है परन्तु धन्य है वे जन जो इसका अपवाद होते है। श्री पं० लेखराम जी भी ऐसे भाग्यशाली महानुभावों में से एक थे।

पण्डित जी आर्यसमाज पेशावर के संस्थापक थे और वर्षों तक वहाँ रहे परन्तु फिर भी पेशावर की जनता तथा वहाँ के आर्य पुरुषों के मन में आपके प्रति इतना आदर था कि वे सदैव आपको सुनने व आपके दर्शन करने के लिए आतुर रहते थे।

पं० लेखराम जी के बलिदान से कोई पाँच मास पूर्व आर्यसमाज पेशावर का वार्षिकोत्सव था। लाला शिवराम जी उपमन्त्री आर्यसमाज पेशावर ने इसकी सूचना पत्रों में देते हुए यह विनती की थी कि पूज्य पं० लेखराम जी, श्रीयुत मास्टर आत्माराम जी तथा पं० दौलतराम जी इस उत्सव पर अवश्य दर्शन देवें।[3] अपने नगर के लोगों

---

१ देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ९-१०, दिनांक ४ अप्रैल सन् १८९६ ई०।

२. देखिए वही, पृष्ठ १३, दिनांक २८ अगस्त सन् १८९६ ई०।

३. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक' पृष्ठ १२, दिनांक ११ सितम्बर सन् १८९६ ई० तथा पृष्ठ ३, दिनांक १८ सितम्बर सन् १८९६ ई०।

में पण्डित जी के लिए ऐसी चाह उनके असाधारण व्यक्तित्व का पता देती है।

लोग दंग रह जाते थे

शिमला उन दिनों भारत की गर्मियों की राजधानी होती थी। आर्यसमाज का चौदहवाँ वार्षिकोत्सव २२ व २३ अगस्त को रखा गया। इसकी विस्तृत रिपोर्ट मे पं० लेखराम जी के विषय में छपा है—

"पं० लेखरामजी के ऐतिहासिक व्याख्यान वैदिक धर्म की श्रेष्ठता, सत्यता तथा प्राचीनता की ऐसी सुस्पष्ट रीति से जतलाने वाले थे कि श्रोता सुनकर दग रह गये। प्रशंसित पण्डित जी ने अत्यन्त अकाट्य युक्तियों व सर्वमान्य प्रमाणों से सिद्ध किया कि वैदिक धर्म अत्यन्त प्राचीन, गहरी सच्चाई रखने वाला है। विभिन्न मतो ने सत्य इसी से ग्रहण किया है।"[1]

आर्यजन सदा उनके दर्शनों के प्यासे होते थे

श्री पण्डित जी के विद्या व धर्मानुराग आदि गुणो के कारण सर्वत्र आर्यजन उनके दर्शनों के लिए प्यासे रहते थे। आर्यसमाज कसूर (पश्चिमी पंजाब) का दूसरा वार्षिकोत्सव १९-२० सितम्बर सन् १८९६ ई० को रखा गया। कसूर निवासी पण्डित जी को अपने उत्सव पर अवश्य सुनना चाहते थे। पूज्य श्री पण्डित जी ने उन्हें वचन भी दे रखा था परन्तु पण्डित जी की दोनों रानों पर एक-एक फोड़ा निकल आया। इस कारण वे वहाँ न जा सके। उनकी विवशता के कारण वहाँ के आर्यजन पण्डित जी को उपालम्ब तो न दे सकते थे परन्तु उन्हें इससे दुःख व निराशा अवश्य हुई।[2]

पण्डित लेखराम जी के साहित्य ने रक्षा की

कोटा राज्य के एक छोटे से कस्बा में जुगलकिशोर नाम का एक ब्राह्मण रहता था। वह नाम नाम का ही ब्राह्मण था। मन से पक्का मुसलमान था। पाँचों समय नमाज पढता था और गुप्त रूप से इस्लाम का प्रचार किया करता था। उसने अपने सम्पर्क में आने वाले एक

---

१. देखिए वही, पृष्ठ ४, दिनाक १८ सितम्बर, १८९६ ई०।

२. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १२-१३, दिनाक २-१०-१८९६ ई०।

और ब्राह्मण लक्ष्मीनारायण को भी अपने जैसा मुसलमान बना दिया।

लक्ष्मीनारायण धार कस्बा में गया। वहाँ मस्जिद में नमाज पढ़ी तो सारे नगर मे यह दुःखद समाचार फैल गया। वहाँ के आर्यसमाज के मन्त्री ने लक्ष्मीनारायण से भेंट करके घण्टो उससे धर्मवार्ता की। पं० लेखराम जी का साहित्य उसे पढ़ने को दिया। पण्डित जी की पुस्तकें पढ़कर लक्ष्मीनारायण वैदिक धर्म पर दृढ़ हो गया। उसने इस्लाम के चक्र से बचने के लिए ईश्वर को धन्यवाद दिया। एक पत्र इसी आशय का पण्डित लेखराम जी को व एक पत्र राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा को भी लिखा। पं० लेखराम जी को विनती की कि जुगलकिशोर को भी पतित होने से बचावें। राजस्थान सभा ने तत्काल वहाँ अपना एक सुयोग्य विद्वान् भेज दिया।[1]

विरोधी अब कान पकड़े

आर्यसमाज झंग मघयाना का वार्षिकोत्सव २६ व २७ सितम्बर, १८९६ ई० को रखा गया। श्री पं० लेखराम जी का 'मूर्ति-पूजा कब से चली' विषय पर एक अत्यन्त खोजपूर्ण व प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। श्रोता उनकी योग्यता की बड़ी प्रशंसा करते रहे। इस अवसर पर लाला गण्डाराम आदि कुछ पौराणिक प्रश्न करने के लिए आए। उनके पास सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण था। उन्होने उसमें से मांसभक्षण विषय के कुछ स्थल दिखाते हुए अपनी बात कही। श्री प० लेखराम जी ने इस संस्करण के विषय में आर्यसमाज की स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा कि इसमें ऋषि के पोंगा पथी विश्वासघाती लेखकों ने दुर्भावना से ऋषि जी के आशय के विपरीत कुछ मिलावट कर दी थी। इस कारण ऋषि ने इस सस्करण की ऐसी बातों के बारे में एक विज्ञापन देकर इनका प्रतिवाद कर दिया था।

श्री पण्डित जी ने मासभक्षण विषय पर पौराणिकों के मान्य ग्रन्थों में से कुछ आपत्तिजनक प्रमाण देकर वाल्मीकि रामायण में से अश्व-मेध यज्ञ का घोड़े का एक प्रकरण सुनाकर कहा कि देखो इसमें कैसी भद्दी व आपत्तिजनक बातें मिला दी गई है। यह प्रमाण सुनकर ला० गण्डाराम तथा उनके साथी पं० गोविन्दराम बड़े क्रुद्धित होकर बोले

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १४, दिनाक १८ सितम्बर सन् १८९६ ई०।

कि आप यदि रामायण में से ऐसा श्लोक दिखा देवें तो वे इस सभा मे अपना कान पकड लेगे और पण्डित जी के चेले बन जावेंगे।

श्री पण्डित जी ने अविलम्ब रामायण में से वह श्लोक निकालकर दिखा दिया। इस पर लालाजी बडे लज्जित हुए। इतने मे एक भले मानस ने लालाजी से उनको अपना कान पकडने के लिए भी कहा। वह सहस्रों व्यक्तियो के सम्मुख अपनी कही हुई बात से भला कैसे इनकार कर सकते थे। इस पर वह और भी लज्जित हुए।

दो पौराणिको ने कहा, धर्म सभा के उपदेशक पं० श्यामलाल जी यहाँ आवे तो क्या आप आर्य लोग उनसे शास्त्रार्थ करेंगे? ब्र० नित्यानन्दजी ने उत्तर मे कहा, "हाँ, हम शास्त्रार्थ के लिए तैयार है।" शास्त्रार्थ का समय न होने पर भी आर्यसमाज ने सत्य-असत्य के निर्णय के लिए शास्त्रार्थ करना स्वीकार किया। प० श्यामलाल जी ने आकर कहा, "मैं शास्त्रार्थ के लिए नहीं आया, सशय निवारण के लिए आया हूँ।"

आर्य धर्म की ध्वजा को सफलता से फहराने वाली ये विभूतियाँ प्रतिक्षण शास्त्रार्थ के लिए तत्पर रहती थी। विरोधियो की चुनौती पर सब प्रमाण तत्काल ग्रन्थो से निकाल कर दे देना, उन्हीं का कार्य था। उनके लिए धर्म रक्षा व धर्म प्रचार मुख्य था। वे अपने व्यक्तिगत स्वार्थों का सर्वथा परित्याग करके समाज सेवा मे संलग्न रहे। उन्हें पदों की, प्रतिष्ठा की, अपने चित्र प्रकाशन आदि की तनिक भी चिन्ता न थी।'

पण्डित गोपीनाथ की 'कृपादृष्टि'

आर्यसमाज गंगोह उ० प्र० ने श्रावणी पर्व पर सामूहिक उपनयन देते हुए पाँच ऐसे व्यक्तियों का भी यज्ञोपवीत संस्कार कराया जो कि आर्यसमाज के सभासद् न थे। इनमें से एक निर्धन वैश्य निहालचन्द भी था। गंगोह की हिन्दू धर्म सभा का और तो किसी पर बस न चला, इस निर्धन अग्रवाल निहालचन्द के भाई बन्धुओं से उस पर दबाव डलवाया। गली बाजारों में उस पर व्यंग्य कसे जाने लगे। उसने तंग आकर अपना यज्ञोपवीत उतार दिया और कहा कि मैं निर्धन हूँ इसी कारण मुझे ही सताया जाता है शेष चार को कोई कुछ नहीं कहता। उन चार में से भी तीन समाज के सभासद् बन गये। यह

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ६-१०, दिनाक ३०-१०-१८६६ ई०।

कहानी तोड़-मरोड कर पं० गोपीनाथ कशमीरी के सनातन धर्म गजट लाहौर ने अपने १५-१०-१८९६ ई० के अंक में प्रकाशित की।

यह पण्डित जी आर्यसमाज पर कटाक्ष करने से कभी चूकते न थे परन्तु गंगोह के आर्यवीरों में धर्मवीर पं० लेखराम जी ने ऐसी लग्न व उत्साह पैदा कर रखा था कि विरोध के ऐसे अंधड़ से उनके सीने में धधक रही धर्मप्रेम की ज्वाला की लपटें और प्रचण्ड रूप धारण किया करती थी।

तभी सनातन धर्म गजट ने श्री पं० लेखराम जी के करतारपुर के व्याख्यान [जिसकी चर्चा पृष्ठ १०८ पर की जा चुकी है] का समाचार बड़े भ्रामक ढग से प्रकाशित करके श्री पण्डित जी पर कीचड़ उछाला, परन्तु प० लेखराम जी का निर्मल आत्मा इस प्रकार के विरोध से सदा ही अप्रभावित रहता था।[1]

गोपीनाथ करे गुण गान।
तेरा धन्य धन्य बलिदान॥

जिस प० गोपीनाथ की चर्चा हमने इस ग्रन्थ मे एक से अधिक बार की है, धर्मवीर सोमनाथ जी रोपड़, महात्मा मुन्शीराम व श्री पं० लेखराम जी के इस परम द्वेषी सनातनी नेता का आगे चलकर हृदय परिवर्तन हो गया। जिसे ये पुण्य आत्माएँ अपने जीते जी अपनी लेखनी व वाणी से न बदल सकीं उसे इनके लहू की धार ने बदल दिया।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान पर इसी प० गोपीनाथ ने उर्दू में एक लम्बा व भावपूर्ण लेख दिया था। इस लेख का शीर्षक था—

'पं० लेखराम की स्मृति पुनर्जीवित'

इस लेख के अन्त में पं० गोपीनाथ ने लिखा था—

"आर्यसमाजी भाइयो! पं० लेखराम के बलिदान के पश्चात् यह बहुत बडा बलिदान एक समाजी नेता संन्यासी महाराज का हुआ है जिसके समान नर-नाहर इस समय सारे समाज मे कोई नहीं।"

पाठक देखे कि पण्डित जी व स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान ने कैसा चमत्कार कर दिखाया जो गोपीनाथ जैसा घोर शत्रु खुलकर

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १२, दिनांक ३०-१०-१८९६ ई०।

उन दोनों का गुणगान करता है। यह पूरा लेख हमारे द्वारा सम्पादित स्वामी श्रद्धानन्द जी कृत 'बन्दी घर के विचित्र अनुभव' के अन्त में प्रकाशित किया गया है। इस लेख के ऐतिहासिक महत्त्व को देखकर हमने इसे हिन्दी में अनूदित करके १९८५ ई० में छपवा दिया था।

न्यायलय का निर्णय
निर्दोष पण्डित लेखराम

पण्डित जी के जीवन काल में उनके साहित्य के कारण देहली व बम्बई आदि के न्यायालयों में मुसलमानों ने उन पर कई अभियोग चलाए परन्तु विरोधियों को अपने उद्देश्य में कही भी सफलता प्राप्त न हुई। हमारे सामने डिप्टी कमिश्नर व जिला मैजिस्ट्रेट जिला देहली का पण्डित जी के विरुद्ध चलाए गये अभियोग विषयक पूरा निर्णय है। आश्चर्य इस बात पर है कि मुसलमान भाइयो ने यह अभियोग पण्डित जी के ग्रन्थ 'कृश्चन मत दर्पण' पर चलाया। इसी से स्पष्ट है कि यह अभियोग दुर्भावनापूर्ण था। इस्लाम सम्बन्धी पुस्तक पर अभियोग तो समझ में आता है परन्तु एक मुसलमान 'कृश्चन मत दर्पण' पर अभियोग चलाए, यह बडी विचित्र बात है।

योग्य न्यायाधीश ने अपने निर्णय में यह भी लिखा है कि "यह अभियोग धार्मिक आधार पर चलाया गया है। सारे नगर में सभाएँ की गई। चारों ओर से मुसलमान बुलाए गये ताकि आज न्यायालय में एकत्र होकर अपना सम्मिलित होना दर्शावे।"

यह अभियोग अब्दलहक नाम के व्यक्ति ने चलाया था। उसने हबीब अहमद, शेख मुहमद दीन, कमर उद्दीन व अब्दुल करीम को इस अभियोग में अपने साथ जोड़ा।

पुस्तक लेखक पर अश्लील भाषा के प्रयोग का दोष आरोपित किया गया। पण्डित जी के साथ श्री रामचन्द जी पर भी अभियोग चलाया गया था। श्री रामचन्द्र जी मेरठ के एक आर्य प्रकाशक थे। वह पण्डित जी के एक अनन्य श्रद्धालु थे।

न्यायाधीश महोदय ने अपने निर्णय के अन्त में यह लिखा था—

"मैं स्पष्ट रूप से विचार करता (समझता) हूँ कि अभियोग चलाने वाले ने लोकहित के किसी विचार से यह अभियोग नहीं चलाया। प्रत्युत्त अपने निजी स्वार्थ से ऐसा किया है। मैं निर्णय देता हूँ कि

लेखराम व रामचन्द्र के सम्बन्ध में कोई अपराध नही सिद्ध (दर्शाया) किया जा सका और अभियोग को धारा ४०३ फौजदारी के अनुसार खारिज करता हूँ।"[1]

हस्ताक्षर अंग्रेजी Captain H. Davis

१० सितम्बर, १८९६ ई० District Magistrate Delhi

एक और अभियोग में दोषमुक्त

उसी दिन इसी न्यायालय द्वारा एक अन्य अभियोग में श्री पण्डित जी दोषमुक्त घोषित किए गये। यह अभियोग भी देहली के उपर्युक्त पाँच मौलवियों ने चलाया था। इनमे से प्रथम अब्दुल हक निजाम राज्य की सेवा में था। सम्भवत. इस अभियोग का व्यय भी निजाम राज्य से अनुदान के रूप में मिलता हो। यह अभियोग पण्डित जी की अमृतसर से प्रकाशित इस्लाम सम्बन्धी एक पुस्तक पर चलाया गया। इस अभियोग में पण्डित जी पर दो आरोप थे कि पुस्तक की भाषा अश्लील है और इस्लाम के नबियों का इसमे अपमान किया गया है।

दूसरा आरोप तो मुसलमान बन्धु सदा से दूसरों पर लगाते आए है। प्रथम दोष के लिए भी प० लेखराम जी को कोई क्या दोष दे सकता है जबकि अश्लीलता पण्डित जी की भाषा में न होकर उन प्रमाणो में पाई जावे जोकि विद्वान् लेखक ने इस्लामी साहित्य से उद्धृत किए हों।

इस अभियोग में अमृतसर के नरसिहदास जी को भी फँसाने का यत्न किया गया था। वह प० लेखराम जी के प्रकाशक होंगे।[2]

न्यायाधीश ने यह अभियोग भी खारिज करते हुए लिखा कि और अधिक कार्यवाही की कोई सम्भावना नहीं है।

पण्डित जी के विरोधी लेखनी से, वाणी से और न्यायालयों में भी उनके सामने खडे न हो सके। जिस दिशा मे भी पण्डित जी गये और जहाँ-जहाँ भी गये वे सब पर अपनी छाप छोड़ते गए।

शरकपुर के दूसरे वार्षिकोत्सव पर

दिसम्बर १८९६ ई० के अन्तिम दिनों श्री पण्डित जी शरकपुर (पश्चिमी पंजाब) आर्यसमाज के उत्सव पर गये। कुछ लोग धर्मचर्चा के लिए विशेष समय चाहते थे। एक घण्टा तक वहाँ के हिन्दू भाई

१,२. देखिए 'प्रचारक', पृष्ठ ८-९, दिनाक ११-१२-१८९६ ई०।

शंकाएँ करते रहे। श्री पं० लेखराम जी सबका उत्तर देते रहे। सब लोगों की पण्डित जी ने सन्तुष्टि कर दी।

वहीं एक विधवा देवी का पुत्र माघीराम हिन्दू समाज से बहिष्कृत किया गया था। उस अवस्यक लड़के की माता उसे समाज मन्दिर में लाई कि इसे शुद्ध किया जावे। हिन्दू भी अब कहते थे कि यदि आर्य-समाज इसे शुद्ध कर देवे तो उसे बिरादरी में मिला लेंगे। श्री पं० लेखराम जी आदि विद्वानों ने उसे शुद्ध करके यज्ञोपवीत दिया।

वेद-प्रचार निधि के लिए पण्डित लेखराम जी ने ही अपील की। श्रोताओं ने उदारतापूर्वक दान दिया।

बलिदान से दो मास पूर्व शाहाबाद में

आर्यसमाज शाहाबाद (हरियाणा) का वार्षिकोत्सव विरोधियों के प्रचण्ड विरोध के कारण सितम्बर सन् १८९६ ई० को न हो सका। यह उत्सव ९-१०-११ जनवरी, १८९७ ई० को समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। धर्मवीर प० लेखराम जी के विद्वत्तापूर्ण व्याख्यानों ने एक समां बाँध दिया। शंका समाधान के लिए बार-बार समय दिया गया। पं० लेखराम जी से अपने प्रश्नों के उत्तर पाकर लोग आनन्दित हो रहे थे।

भारी वर्षा मे भी लोग चबूतरे पर खड़े कड़ी शीत में विद्वानों को सुनते थे। देवियाँ भी श्री पण्डित जी की धवल कीर्ति सुनकर उन्हें सुनने के लिए भारी संख्या मे उत्सव मे आईं। मन्त्री समाज ने प्रश्न करने का खुला निमन्त्रण दिया। अन्तिम दिन के इस शंका समाधान कार्यक्रम का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। शंका समाधान आज भी पण्डित जी ने ही किया। फिर पण्डित जी के व्याख्यान के बारे में श्री नारायण दास जी मन्त्री आर्यसमाज लिखते हैं—

"श्रोताओं के कठोर हृदय भी द्रवित हो गये और वाह! वाह! की ध्वनि सुनाई देने लगी। ऐसा युक्तियुक्त तथा ओजस्वी व्याख्यान हुआ कि एक प्रकार से वेद-प्रचार निधि के लिए अपील का मैदान तैयार करना था। वेद-प्रचार के लिए अपील जब हुई तो सब ओर से धन की वृष्टि आरम्भ हो गई।"[1] यह है प्रचार युग की एक झाँकी। अब भी आर्य भवनों को बनाने, स्कूल खोलने की होड़ तज दें तो फिर वही युग आ सकता है।

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ९-१०, दिनांक १२-२-१८९७ ई०।

अविलम्ब उत्तर दिया जावे

श्री महात्मा मुन्शीराम जी ने प० लेखराम जी के बलिदान पर अपने एक ऐतिहासिक लेख "वैदिक धर्म को एक और सख्त धक्का लगा' में श्री पण्डित जी की तड़प के बारे में लिखा था कि पण्डित जी उन्हें जब कभी भी जालन्धर मे मिलते थे तो अनायास यह कहते थे कि "लाला जी, आर्यसमाज में कुछ कार्य नहीं हो रहा।"

श्री मुन्शीराम जी का उत्तर होता था, "पण्डित जी, आप सरीखे पुरुषार्थी व्यक्ति तो थोड़े हैं तथापि कार्य हो रहा है।"

इस पर पण्डित जी जोश से कहा करते थे, "अजी क्या कार्य हो रहा है? विरोधियों की ओर से आक्षेप पर आक्षेप किए जा रहे है। पुस्तक के पश्चात् पुस्तक छप रही है, उनमें से प्रत्येक का उत्तर दिया जाना चाहिए।"

महात्मा मुन्शीराम जी इस पर कहा करते थे, "पण्डित जी! घबराइए नहीं। आर्यसमाज पर और कार्यों का बहुत बोझा आन पड़ा है, अब यत्न किया जावेगा कि प्रत्येक विरोधी पुस्तक का उत्तर दिया जावे।" महात्मा जी लिखते है, "साधु स्वभाव निडर वीर उत्तर देता, "लाला जी! आप भी कमाल करते है। क्या उस समय उत्तर दिया जावेगा जब विष अच्छी प्रकार से अपना प्रभाव कर देगा? अविलम्ब उत्तर दिया जाना चाहिए"।"[1]

श्री पण्डित लेखराम जी की तड़प तो उनके ऊपर के वाक्यों के एक-एक शब्द तथा उनके हाव-भाव से प्रकट ही है। पाठक महात्मा मुन्शीराम जी के प्रबल धर्मभाव व श्रद्धा का मूल्याकन भी तो करें। आज का कोई तथाकथित नेता महात्मा मुन्शीराम जी के स्थान पर होता तो अपनी घटिया मनोवृत्ति का प्रदर्शन ऐसे करता कि लेखराम पण्डित कैसा अनुशासनहीन है कि सभा के प्रधान के सामने टर-टर करके बोल रहा है। इसको क्या अधिकार है कि सभा के प्रधान से ऐसे स्पष्टीकरण माँगे। ये नेता वैधानिक अधिकारों की बात करते हैं। नैतिक कर्त्तव्यों से ये कोसों दूर है।

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ६-७ दिनांक १९ मार्च सन् १८९७ ई०।

मिर्जा गुलाम अहमद का खुदा और पण्डित जी की आयु

पाठक आगे एक शीर्षक "प० लेखराम जी की माँगें जो मिर्जा साहिब पूरी न कर सके" के नीचे नुबवत के दावेदार मिर्जा गुलाम अहमद से पण्डित जी की तीन माँगों को पूरा करने की चुनौती पढ़ेंगे। इन माँगों की चर्चा कई आर्य लेखकों ने अपने लेखो व पुस्तकों मे की है। एतद्विषयक पण्डितजी का एक लेख आर्य गजट में प्रकाशित हुआ था। इस लेख में पण्डित जी ने एक और रोचक परन्तु महत्त्वपूर्ण बात लिखी थी जिसकी ओर हमारे विद्वानों का ध्यान नही गया।

इस लेख मे[1] पण्डित जी ने मिर्जा साहिब के किसी लेख की समीक्षा की थी। मिर्जा जी ने अपने उस लेख में पण्डित जी की आयु २३ (तेईस) वर्ष बताई थी। इस पर पण्डित जी ने लिखा था, "मिर्जा साहिब अपनी अज्ञानता की धुन में हमारी आयु २३ वर्ष बतलाते है जबकि यह सर्वथा भूल है। हमारी आयु इससे बहुत अधिक है। अत: हम ऐसे शैतानी विश्वास से ईश्वर की शरण लेते है और बकवाद को महत्त्व नही देते। ...हम उन्हे चुनौती देते हैं कि वह अपने कल्पित खुदा तथा वहमी मौला से पुन: पूछ ले जिसको इतना भी ज्ञान नही जो इतना प्रमादी है...।"[2]

स्मरण रहे जब मिर्जा जी पण्डित जी की मृत्यु के इल्हाम छपवाते हुए पण्डित जी की आयु २३ वर्ष बताते थे तब पण्डित जी ३५ वर्ष के थे। अल्लाह और उसका इल्हामी कादियानी नबी इस विषय मे कितने अँधेरे मे थे। यह हमारे पाठको के सामने है।

जब पण्डित जी ने मिर्जा जी के इस अज्ञान की पोल खोली तो मिर्जा जी ने भूल स्वीकार करने की बजाए चुप्पी साधना ही श्रेयस्कर समझा। और कर भी क्या सकते थे? भूल मान लेते तो अल्लाह की ओर से भी स्पष्टीकरण देना पड़ता।

वे ईश्वर के आश्रय कार्यरत रहे

श्री पण्डित जी के ईश्वर विश्वास को देखकर सब सज्जन उनके प्रति बडी श्रद्धा रखते थे। उनके व्यवहार पर उनके ईश्वर-विश्वास

---

१ यह लेखमाला थी। एक लेख नही था।

२. देखिए 'आर्य गजट' उर्दू फीरोजपुर छावनी पृष्ठ ४, दिनाक ८-७-१८९३ ई० पर 'कादियानी मसीह' लेख।

की स्पष्ट रंगत थी। जब मिर्जा साहिब ने उनकी मृत्यु की भविष्य-वाणियाँ प्रकाशित करनी आरम्भ कीं तो पण्डित जी ने "कादियानी मसीह" शीर्षक वाली अपनी ऐतिहासिक लेखमाला में लिखा था—

"पाठकगण! यह स्पष्ट रूप से हमारी हत्या अथवा विष आदि देने के षड्यन्त्र नहीं है?"[1] इसी प्रसंग में पण्डित जी ने आगे फारसी की यह प्रसिद्ध पंक्तियाँ उद्धृत की है—

दुश्मन अगर कवी अस्त।
निगाहबान कवीतर अस्त॥

अर्थात् यदि शत्रु बलवान है तो रक्षक (प्रभु) उससे भी कहीं अधिक बलवान है। ऐसा था पण्डित जी का अटल ईश्वर विश्वास।

हम इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १०० पर इसी लेख का एक उद्धरण पहले भी दे चुके है कि पण्डित जी तो मिर्जा साहिब व उनके मुल्हम रबानी (इल्हाम देने वाले मिर्जाई रब) दोनो को ही झूठा मानते थे।

पण्डित जी ने इसी लेख मे लिखा था कि, "अपने जगत् पिता सबके स्वामी परमेश्वर के आश्रय हैं। कदापि ऐसी गीदड़ भभकियों से नही डरते तथा सच्चाई के शत्रुओं, मिथ्यवादियों की तनिक भी परवाह न कर परमात्मा पर श्रद्धा रखकर सद्धर्म का प्रचार करते हैं।"[2]

यह भी स्मरण रहे कि पण्डित जी ने अपने इसी लेख में अपने सम्बन्ध में मिर्जा द्वारा की गई भविष्यवाणी (इल्हाम) की भाषा व उसके अर्थो के दोष दर्शाते हुए कई इस्लामी ग्रन्थों के प्रमाण देकर मिर्जा की योग्यता का भी भण्डा फोड़ा।

उत्तेजित मिर्जा साहिब ने किया

मिर्जा गुलाम अहमद व उसके चेलों की ऐसी प्रवृत्ति व परम्परा है कि वे दूसरों पर घटिया आक्षेप करके उन्हें उत्तेजित करते हैं जब दूसरे उत्तर व प्रत्युत्तर देते हैं तो फिर इस्लाम व नबियों का निरादर का शोर मचाकर मुसलमानों की सहानुभूति प्राप्त करने व अपने स्वार्थ की रोटियाँ इस वैरभाव की अग्नि पर सेकने को आगे आते हैं। पण्डित जी ने इसी लेखमाला में लिखा था—

आपने—"हमको उत्तेजित किया जिस कारण हमने उत्तर लिखा।

१-२. देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ ४-५, दिनाक १-८-१८९३ ई०।

यदि आप व्यर्थ के आक्षेप न करके हमें उत्तेजित न करते तो परमेश्वर जानता है कि हमें कदापि दीने इस्लाम के विरुद्ध लेखनी उठाने का तनिक भी विचार न था।"[1]

कई मुसलमान मौलवियों ने भी स्पष्ट रूप से लिखा है कि यह मिर्जा गुलाम अहमद ही थे जिन्होंने जानबूझकर पहले हिन्दुओं को छेड़ा। एक मौलाना कमरउद्दीन लिखते हैं—"इसके पश्चात् पुस्तक 'ब्राहीने अहमदिया' के प्रकाशन का क्रम आरम्भ हुआ तथा इसमें वेदों पर, हिन्दू धर्म पर, आर्यसमाज पर और पण्डित दयानन्द पर आक्षेप किए तथा दोष आरोपित किए गये।"[2]

पंजाब के सुप्रसिद्ध अहरारी नेता मौलाना मजहर अली अजहर ने लिखा है—

"मिर्जा गुलाम अहमद द्वारा दी गई उत्तेजना ने हिन्दुओं को सत्यार्थप्रकाश का चौदहवाँ समुल्लास तथा अन्य पुस्तकें लिखने पर विवश किया।"[3]

अपनी पुस्तक में अनेक प्रमाणों से मौलाना ने बड़ी योग्यता से यह सिद्ध किया है कि मिर्ज़ा जी ने आक्रमक बनकर छेड़छाड़ में पहल की थी।

अनेक व्यक्ति सन्मार्ग पर आ गये

प० लेखराम जी की ज्ञान प्रसूता लेखनी के कारण अनेक भाई पण्डित जी के जीवन काल में ही धर्म से च्युत होने से बचे और सैकड़ों व्यक्ति इस्लाम तजकर शुद्ध हुए। पण्डित जी को निरन्तर ऐसे पत्र आते रहते थे कि उनकी पुस्तकों यथा 'तकजीबे ब्राहीन अहमदिया' तथा 'नुसखा खब्ते अहमदिया' आदि के अध्ययन से पाठकों को सद्धर्म का प्रकाश प्राप्त हुआ है।

---

१ द्रष्टव्य 'आर्य गजट', पृष्ठ ३, दिनांक २४-६-१८६३ ई० पर प० लेखराम जी का लेख कादियानी मसीह।

२. देखिए 'सत्यार्थप्रकाश और मिर्जा गुलाम अहमद उर्दू पुस्तक की भूमिका, पृष्ठ ६।

३ देखिए 'सत्यार्थप्रकाश और मिर्जा गुलाम अहमद', पृष्ठ ५०, लेखक मौलाना मजहर अली अजहर।

एक बार एक पाठक ने तो उनकी पुस्तक 'नुसखा खब्ते अहमदिया' को पढ़कर पण्डित जी को निम्न कविता पद लिखा था—

मिटाया तू ने खब्ते कादियानी एक नुसख़ा में।
तेरे इस लेख का अकसीर[1] हो जाना मुबारक हो।।[2]

पण्डित जी का गम्भीर ज्ञान और अध्ययन

हमने अन्यत्र भी 'रईसे कादियाँ' पुस्तक के मुसलमान लेखक के प्रमाण से यह लिखा है कि पं० लेखराम जी की कुरान आदि ग्रंथों की खोज अद्‌भुत थी। पण्डित जी ने कुरान का कितना सूक्ष्म अध्ययन किया था इसका एक प्रमाण हम पण्डित जी के निम्न वाक्य से देना चाहेंगे—

"कुरान में तो १६ बार स्वयं हज़रत रसूल साहिब ने मोजजात (चमत्कारों) व खारक आदात से (सृष्टि नियम विरुद्ध—स्वभाव के विपरीत) से इनकार किया है।"[3]

इस बात पर बल देकर पण्डित जी मिर्जा को झकझोरते थे कि तुम नाम तो कुरान का लेते हो और चमत्कारों के दिखाने की भी घोषणाएँ करते है यह केवल अन्धविश्वास फैलाने की बात है।

मिर्जा साहिब द्वारा मौत की धमकी—फरिश्ते का कथन तथ Cash (राशि) अलैस्लाम

मिर्जा साहिब द्वारा पण्डित जी को मृत्यु की धमकी जो भविष्य-वाणी अथवा अल्लाह् मियाँ से प्राप्त डाक (इल्हाम) के नाम से विज्ञापन के रूप में प्रकाशित हुई थी, उस विज्ञापन की एक प्रति मन्त्री जी आर्यसमाज फीरोजपुर छावनी को भी मिर्जा साहिब ने भेजी थी।

उस समय किसी आर्य पुरुष ने 'गुलाम अहमद तथा शेखचिल्ली के ख्यालात' शीर्षक से आर्य गजट में मिर्जा द्वारा दी गई मृत्यु की इस धमकी की विद्वत्तापूर्ण समीक्षा की थी। हम यहाँ उस लेख के भी

---

१. फारसी शब्द है इसका अर्थ है रसायण —अचूक ओषधि।
२ देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ पाँच, दिनांक ८ जून, सन् १८९३ ई०।
३. देखिए वही।

कुछ अंश देना उपयोगी तथा आवश्यक समझते हैं।

"यह इल्हाम किस दिन हुआ उसकी तिथि अंकित नहीं। निष्प्राण (बेजान) गोसाला से आवाज का निकलना[1] और उसको दु:ख कष्ट होना सर्वथा निरर्थक तथा बुद्धि से विपरीत बात है। यदि उनके खुदा ने यह झूठी उपमा दी तो वह भी मिर्जा के समान खब्त (मानसिक रोग) में गरिफ़तार है और उसकी बुद्धि का भी अनुमान हो गया फिर इस इल्हाम के सम्बन्ध में दूसरा इल्हाम कि पण्डित लेखराम अपनी बदजबानियों (अश्लील, कटु वाणी) की सजा में २० जनवरी १८९३ ई० से छ: वर्ष के भीतर दु.ख व कष्ट में मुबतला (फँसेगा—ग्रसित होगा) हो जावेगा, उस खुदा की बड़ी निर्बलता को सिद्ध करता है। तकजीबे ब्राहीने अहमदिया को प्रकाशित हुए छ: वर्ष व्यतीत हो गये, जो खुदा इतने लम्बे समय मे पण्डित जी का एक बाल भी बाँका न कर सका, वह छ: वर्ष के सुदीर्घ काल में क्या करेगा ?"[2]

फिर लेखक आगे लिखता है, "अन्त में पण्डित जी के सम्बन्ध में जो आपने जाहिल (मूढ) आदि शब्दों का प्रयोग किया है उससे आपकी ऊँची सभ्यता तथा शिष्टाचार का पता लगता है। इसके उत्तर में हम क्या लिखें ? विज्ञापन का अन्तिम पृष्ठ देखने से इस इल्हाम की गढ़त से आपके वास्तविक प्रयोजन व इच्छा का पता चल गया। इन दिनों आपने एक पुस्तक 'आईना कमालाते इस्लाम' लिखी है और उसकी प्रशंसा में आप लिखते हैं कि खुदा ने आद से अन्त तक इसके लिखने में आपकी बड़ी-बड़ी विचित्र प्रकार की सहायता की और विचित्र सूक्ष्म विचार इसमें (अल्लाह ने) भर दिये हैं जो मनुष्य की साधारण शक्तियों से बाहर हैं। इसके क्रय करने के लिए आप सब मुसलमानों को उत्साहित करने के लिए फरमाते हैं कि यदि मुझे वुसअत (व्यापकता अर्थात् सामर्थ्य होता) होती तो मैं सब प्रतियाँ नि:शुल्क वितरित करता।

क्या खूब ! पुस्तक के लिखने में तो खुदा ने स्वयं आपकी सहायता की। सूक्ष्म विचार व युक्तियाँ इसमें भर देने का कष्ट उठाया

---

१. इस विषय पर आगे श्री पं० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थमहारथी का पाण्डित्यपूर्ण लेख दिया गया है।

२. देखें 'आर्य गजट', पृष्ठ ३, दिनाक ८ मार्च, १८९३ ई०।

परन्तु पुस्तक को प्रकाशित व निःशुल्क वितरित करने के लिए 'नकद अलैस्लाम' न बतलाए और उसके लिए मनुष्यों का मुहताज (आश्रित) बनाया।

क्या कहिए मिर्जा जी ! चाल तो अच्छी चले थे परन्तु पट पड़ी। बेचारे को अपनी पुस्तक की बिक्री के लिए पण्डित जी के बारे में भविष्यवाणी गढ़ने का ढकोसला सूझा। पुस्तक क्रय करने वालों को बहलाने-फुसलाने के लिए यह भी लिखते हैं कि यदि पुस्तक के पढ़ने से मेरे द्वारा की गई प्रशंसा तथ्य के विपरीत सिद्ध हो तो दो सप्ताह के भीतर पुस्तक लौटा दें। शर्त यह है कि हाथ की गन्दगी व कोई धब्बा न लगा हो। भला जो पुस्तक दो सप्ताह तक देखी जावेगी सम्भव नहीं कि थोड़ी-बहुत भी हाथ से गन्दी न हो, फिर वापिस क्या लेंगे ?

अन्त में आप लिखते हैं कि इस पुस्तक के लिखते समय दो बार रसूल की ज़्यारत (दर्शन) हुई और एक रात्रि मैंने यह भी देखा कि एक फरिश्ता ऊँचे स्वर से लोगों के दिलों को इस पुस्तक की ओर बुलाता है तथा कहता है कि 'यह पुस्तक शुभ (मुबारिक) है इसके सम्मान के लिए खड़े हो जाओ।' सामान्य बुद्धि का व्यक्ति भी इस निरर्थक कर्म (हरकत पर) के लिए मिर्जा जी को लज्जित कर सकता है कि जब फरिश्ता लोगों को पुस्तक की ओर बुला रहा है तो तुझे विज्ञापन देने की क्या आवश्यकता थी ? लोग स्वयमेव प्रार्थनापत्र भेजकर पुस्तकें मँगवा लेते। मिर्जा जी ने विज्ञापन के लिखने व वितरण करने में प्रेस का व्यय और लिखने व डाक व्यय आदि का भार व्यर्थ में उठाया। इस प्रकार से यह सारा विज्ञापन शेखचिल्ली के विचारों से परिपूर्ण है जिससे उनके खब्त (craze) का नहीं प्रत्युत स्वार्थ का पूरा प्रमाण मिलता है।"[1]

इस लम्बे उद्धरण पर किसी प्रकार की टिप्पणी की हम आवश्यकता नहीं समझते। पण्डित जी की 'कादियानी मसीह' लेखमाला के उद्धरण जहाँ पण्डित जी के हृदय की निर्मलता, अटल ईश्वर विश्वास व निर्भीकता का परिचय देते हैं वहाँ मिर्जा जी के विज्ञापन का एक-एक शब्द उनकी निर्बलता, चतुराई, धन बटोरने की मनोवृत्ति तथा

१. देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ ४, दिनांक ८ मार्च, १८९३ ई०।

लोगों के अन्धविश्वास का लाभ उठाने की प्रवृत्ति का प्रमाण हैं। अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए मिर्जा बिना बात के ही मुसलमानों को रसूले खुदा के नाम पर उकसाता है। अन्तत. यही कुचाल मिर्जाइयों को ले डूबी है। मिर्जा जी के पोते मिर्जाई जमात के तृतीय खलीफा पाकिस्तान से भी जान बचाकर भाग गये हैं। मिर्जाई अब पाकिस्तान में Non-Muslim गैर-मुस्लिम घोषित किए जा चुके है। इस्लाम का इतना जोश! मिर्जाइयों को बड़ा महँगा पड़ा है। अब आसमानी डाक लेनेवाले मिर्जा जी के फरिश्ते न जाने कहाँ सोये पड़े हैं।

मिर्जा साहिब का वह Salesman पुस्तक विक्रेता फरिश्ता भी इस विपदा में मिर्जाइयों को छोड़ गया है। उस Salesman पुस्तक विक्रेता फरिश्ते का मिर्जा साहिब ने नाम भी न बताया। उसका अता-पता वह दे जाते तो सम्भवतः वर्तमान खलीफा उससे सम्पर्क स्थापित करके कुछ सहायता प्राप्त कर सकते परन्तु अब मिर्जाई परवश है क्या करें।

'हमें प्यारो प्यारा ऋषि का मिशन है'

१४-१६ अक्तूबर, १८९६ ई० को आर्यसमाज रावलपिण्डी का उन्नीसवाँ वार्षिकोत्सव था। मास्टर आत्माराम, लाला शिवदयाल, बाबा अर्जुनसिंह, मास्टर हीरानन्द व पं० लेखराम जी के विद्वत्तापूर्ण भाषणों को सुनकर जनता झूम उठी। पं० लेखराम जी का वेद की नित्यता व आर्यों की प्राचीनता पर भाषण बड़ा खोजपूर्ण था। पण्डित जी व मास्टर हीरानन्द जी ने शंका समाधान भी किया। पण्डित जी ने तब कहा कि वेद-प्रचार का पवित्रतम कार्य ही सहायता व दान का सबसे अधिक पात्र है। इसे स्थिर बनाना है। पण्डित जी ने भाषण के अन्त में धन की अपील कर दी। उस युग में १२८६ रुपये उसी समय वेद-प्रचार के लिए तथा मन्दिर निर्माण निधि के लिए भेंट कर दिए गए।[1]

खेद ही नहीं दुर्भाग्य की बात है कि जिस कार्य को महर्षि ने पवित्र बताया, जिसके लिए श्रद्धानन्द ने रक्त की धार बहाई, जिसके लिए चिरञ्जी लाल ने सर्वस्व वार डारा। जिसको लेखराम

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', १३ नवम्बर, १८९६ ई०, पृ० ७ से ९ तक।

ने श्रेष्ठतम समझा, जिसके लिए दर्शनानन्द जिए व मरे, जिसके लिए स्वतन्त्रानन्द तिल-तिल जले, आज उस वेद-प्रचार के श्रेष्ठतम कार्य को संस्थाओं के पुजारियों ने, ईंट-पत्थरों के मोह में मरने वाले नामधारी आर्यों, निस्तेज लीडरों व घुसपैठ करने वाले बोगस व भीरु साधुओं ने चौपट कर दिया है। निष्पक्ष इतिहास लेखक देश, जाति व मानव समाज से द्रोह करने वाले इन सब वेद-घातियों को धिक्कारेंगे।

"वह
लेखनी की तलवार लेकर
रणक्षेत्र मे आया।
विरोधियों की विशाल सेना
में
भगदड़ मच गई।
किसी में साहस कहाँ कि
जो उसके सामने आता।
उसकी लेखनी ने
वही कार्य किया
जो स्वामी दर्शनानन्द
की लेखनी व वाणी ने
मिलकर किया।
'कुलियात आर्य मुसाफिर' उसके परिश्रम का
ज्वलन्त प्रमाण है।
मरनेवाला मर गया।
निर्दयी व क्रूर घातक ने अपनी गर्दन पर
निष्पाप की हत्या के पाप का भार यूँ ही लिया।
प्राण छोड़ते-छोड़ते वह आदेश सन्देश दे गया
'आर्यसमाज में लेखनी का कार्य बन्द न होने पावे'[1]।'

राष्ट्रवीर लाला लाजपतराय जी की
लौह लेखनी से

---

१. 'आर्य वीरों के दर्शन' की भूमिका, पृष्ठ ६-७ से।

जहाँ भी जाति व धर्म पर संकट आया

पृष्ठ ५६ व ६० पर हैदराबाद के एक सेठ व उसके पुत्रों को विधर्मी बनने से बचाने की घटना हमने दी है। वहाँ हमने लिखा है कि श्री पण्डित जी को सक्खर आर्यसमाज के उत्सव पर हैदराबाद के इस सेठ के इस्लाम स्वीकार करने के निश्चय का पता चला परन्तु पुस्तक के छपते-छपते हमें इसी घटना से सम्बन्धित कुछ और महत्त्व-पूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। श्री पं० लेखराम जी के व्यक्तित्व व कृतत्व को समझने के लिए हम इसे यहाँ देना आवश्यक समझते है।

इस घटना की पृष्ठभूमि इस प्रकार से है कि एक आर्य पुरुष ला० गोपीनाथ जी को उक्त सेठ के निश्चय का जब पता चला तो उन्होंने पूरी जाँच-पड़ताल करके 'आर्य पत्रिका' अंग्रेजी साप्ताहिक में एक पत्र छपवाया। इस पत्र में आर्य धर्मोपदेशकों विशेषरूप से पं० लेखराम जी को हैदराबाद पहुँचकर इस सेठ के परिवार को बचाने की विनती की।

लाला गोपीनाथ जी का यही विस्तृत पत्र आर्य गजट साप्ताहिक उर्दू ने अपनी टिप्पणी के साथ प्रकाशित किया। पत्र की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार से हैं[1]--

"वैदिक धर्म अवलम्बियों व उपदेशकों को जो यह समाचार सुनें और जिन्हें वैदिक धर्म का ध्यान है, सत्य के हित में इस भ्रमित व्यक्ति से शीघ्र मिलना चाहिए तथा इसको वेदों की सत्य, अमूल्य व पवित्र शिक्षा सुनाकर इस दूषित विचार से रोकें और कोई उपदेशक जो कि इस कार्य को हाथ में लेना पसन्द करे विशेष रूप से पं० लेखराम जी जो कि इस कर्त्तव्य को भली प्रकार से निभा सकते हैं—वैदिक धर्म के लिए बहुत अधिक लाभ पहुँचेगा तथा हैदराबाद के हिन्दुओं पर

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य गजट', पृष्ठ २, दिनांक १-४-१८६१ ई०।

बड़ी कृपा करेंगे। इस व्यक्ति के सगे-सम्बन्धियो व बिरादरी वालों ने सच्चे हृदय से सहर्ष यह इच्छा व्यक्त की है कि यदि आर्योपदेशकों के सत्प्रयासों से यह व्यक्ति अपने निश्चय से टल गया तो वे सब अविलम्ब वैदिक धर्म ग्रहण करेंगे और इसके (वैदिक धर्म के साथ) हार्दिक सहानुभूति प्रकट करेंगे।"

लाला गोपीनाथ जी के पत्र से यह भी पता चलता है कि इस सेठ ने अपने सबसे छोटे पुत्र को तो पहले ही मुसलमान बना दिया था। यह सेठ किसी मौलवी से अरबी-फारसी पढ़ता था। उसी मौलवी की संगति से यह इस्लाम की ओर झुका था। यह सम्भव है कि श्री पं० लेखराम जी को सक्खर पहुँचकर ही इस सेठ के परिवार के धर्मच्युत होने की सूचना मिली हो परन्तु पण्डित जी के जीवनकाल में जहाँ कहीं भी हिन्दुओं के धर्मच्युत होने की घटना घटित होने की सम्भावना होती या कोई विधर्मी बन जाता था तो श्री पण्डित जी को वहाँ से बुलावा आ जाता था। इससे पण्डित जी के महान् व्यक्तित्व व उनकी तड़पन का पता चलता है। पण्डित जी की सेवाओं का मूल्य कौन चुका सकता है ?

'आर्य वीरों के दर्शन' पुस्तक के लेखक ने लिखा है कि पण्डित जी ने वहाँ पहुँच, दो और सेठों को भी धर्मभ्रष्ट होने से बचाया।[1]

यह प० लेखराम व उनके चरणानुरागी आर्य वीरों के तप, त्याग व कष्ट सहन का सुखद फल है कि हिन्दू जाति के कुछ लोग अब शुद्धि आन्दोलन में सक्रिय हैं। मसूराश्रम बम्बई की एतद्विषयक सेवाएँ तो स्वर्णिम अक्षरों में लिखने योग्य है। परन्तु मसूराश्रम को छोड़कर विश्व हिन्दू परिषद् व राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ आदि किसी संस्था के लोग पण्डित जी का नाम भी नही लेते। उनका बलिदान पर्व मनाना तो बहुत दूर की बात है, पण्डित जी का चित्र भी किसी हिन्दू के घर में न मिलेगा। उनके जीवन चरित्र व साहित्य के प्रकाशन की बात तो कोई हिन्दू कभी सोच भी नहीं सकता। यह कृतघ्नता का पाप हिन्दुओं की अवनति का एक कारण है। हाँ, हम पुन. यह दोहरायेंगे कि मसूराश्रम बम्बई के तपस्वी महात्मा विश्वनाथ जी के प्रयास व भावनाएँ वन्दनीय हैं। उनमें जातिरक्षा के लिए वही आग है, जो वीरवर लेखराम में थी।

---

१. देखिए 'आर्य वीरो के दर्शन', लेखक श्री अमरनाथ कालिया, पृष्ठ १०५।

उनके साहस का क्या कहना

मिर्जापुर में एक मुसलमान वकील ने पण्डित जी को शास्त्रार्थ की चुनौती दे दी। पण्डित जी ने चुनौती स्वीकार कर ली। वह वकील वहाँ कुख्यात था। वह धूर्तों का सरदार माना जाता था। आर्य पुरुषों को आशङ्का थी कि अपने गुण्डों से यह पण्डित जी को हानि न पहुँचा दे अत. पण्डित जी को बाहर भ्रमण के लिए जाने से रोका और यह भी कहा कि इस शास्त्रार्थ से भी बचें।

श्री पण्डित जी ने उससे सार्वजनिक रूप मे शास्त्रार्थ भी किया और अकेले दण्डा हाथ में लिए सायंकाल भ्रमण के लिए भी निकल पडे। अपने आत्मबल से श्री पण्डित जी ने सदा सर्वत्र अपनों व बेगानो को प्रभावित किया।[1]

यज्ञोपवीत संस्कार कौन करवाएगा ?

मिर्जापुर में एक कुलवार[2] आर्यसमाज का सभासद् बन गया था। उसने पण्डितजी से कहा, "मेरा यज्ञोपवीत सस्कार कौन करवायेगा ?"

रूढ़ियों को रौदने वाले धर्मवीर पं० लेखराम जी ने उत्तर दिया, "मैं करवाऊँगा। मैं देखूँगा कौन आर्य पण्डित तुम्हारे उपनयन संस्कार मे सम्मिलित नही होता ?"

श्री पण्डित जी के साहस से प्रभावित होकर ब्राह्मण कुल में जन्मे दो पण्डितों ने अपनी बिरादरी के विरोध की चिन्ता न करते हुए उस व्यक्ति के उपनयन सस्कार में भाग लिया। वास्तव मे ऐसे सुधीर पुरुषों ने ही अन्धकार का संहार व सद्धर्म का प्रकाश बखेरा है। जो जन सदा सोचते ही रहते है और पग नहीं उठा पाते वे युग के प्रवाह को नही बदल सकते।[3]

धर्मवीर की दिग्विजय

पण्डित जी जालन्धर में ज्वर ग्रसित थे। चिकित्सा चल रही थी। उन्हें सूचना दी गई कि नकोदर कस्बा में एक कानूगो किसी समय

---

१. 'आर्य वीरों के दर्शन' उर्दू पुस्तक का पृष्ठ १०५ देखिए।

२. कुलवार गोत्र के लोग बड़े परिश्रमी व वीर होते है। कृषि-कार्य इनका धन्धा रहा है।

३. देखिए 'आर्यवीरों के दर्शन', पृष्ठ १०४।

मुसलमान बन गया था परन्तु अब वह अपने संशय निवारण करने के लिए किसी विद्वान् से वार्ता करने को तैयार है।

पण्डित जी का ज्वर कुछ कम हुआ। उन्हे अभी विश्राम की आवश्यकता थी परन्तु ऐसी सूचना पाकर वह सब कुछ भूल जाया करते थे। उन दिनों ज्वर भी कोई सामान्य रोग न था। पण्डित जी झट नकोदर के लिए चल पड़े। उस व्यक्ति से जाकर मिले। उसका शङ्का समाधान किया। अपने प्रयोजन में सफल हुए।

वहाँ इसी यात्रा में पण्डित जी ने अपने पुरुषार्थ से आर्यसमाज की स्थापना कर दी।[1]

उनकी वाणी का प्रभाव

श्री पण्डित जी अजमेर में कई बार गये। वहाँ आपके व्याख्यानों की ऐसी धूम मची कि एक मौलवी अब्दुल रहमान आर्यसमाज का सभासद् बन गया। उसका नाम आपने सोमदत्त रखा। उसकी शुद्धि से वहाँ मुसलमानों में एक खलबली-सी मच गई। कई आर्यसमाजी भी घबरा गये। प० लेखराम जी व कुछ आर्य पुरुषों को मृत्यु की धमकियाँ दी जाने लगीं।

कुछ आर्य पुरुषों ने आपसे कहा, "आपकी रक्षा के लिए चार सिपाही मँगवा लिए जावें।"

पण्डित जी ने बड़ी दृढ़ता से यह सुझाव ठुकरा दिया और कहा कि "मेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है ?"

पण्डित जी ऐसे महापुरुषों में से थे जो केवल ईश्वर को ही अपना रक्षक मानते थे। बात भी ठीक है वह सन्यासी महात्मा भी क्या जो अंगरक्षकों की छाया में ही कहीं घूम सके।

तब आर्यसमाज अजमेर की ओर से 'विजय पत्रिका' नामक एक उर्दू मासिक का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसमें पण्डित जी के लेख निकलते रहे। पण्डित जी की पुस्तक 'रसाला जहाद' भी लेखमाला के रूप में इसी में छपता रहा। इस पत्रिका की कुछ प्रतियाँ आर्यसमाज पानीपत के संग्रहालय में हैं। निश्चय ही मौलवी अब्दुल रहमान की शुद्धि पण्डित जी की बहुत बड़ी उपलब्धि थी।[2]

१. देखिए वही, पृष्ठ १०४।

२ देखिए 'आर्य वीरों के दर्शन', पृष्ठ १०३-१०४।

आपका धर्मभाव धन्य है

श्री पण्डित जी एक बार मिण्टगुम्बरी पश्चिमी पंजाब गये। वहाँ एक पादरी साहिब आपसे मिलने आए। पादरी जी की पण्डित जी से बहुत लम्बी वार्ताएँ हुईं। आपसे कई प्रश्न पूछे। पण्डित जी ने सब प्रश्नों का उत्तर दिया।

पादरी जी आपके सौजन्य, शिष्टाचार व योग्यता से अत्यन्त प्रभावित हुए। विदा लेते हुए पादरी साहिब ने आपके स्वभाव तथा पाण्डित्य की प्रशंसा करते हुए भाव-विभोर होकर कहा, "आपका धर्म प्रेम धन्य है। आप सच्चे मिशनरी हो।"[1]

उनका तप तेज ऐसा था

पण्डित जी शिमला की प्रचार यात्रा से लौटे। मार्ग में भारी वर्षा के कारण भीग गये थे। भीगे हुए वस्त्रों व यात्रा की थकावट से शरीर टूट गया। कुछ रुग्ण हो गए। वस्त्र भी मैले थे। श्री महात्मा मुन्शीराम जी सभा प्रधान ने आपसे धर्मशाला जाने को कहा।

आपने उत्तर में कुछ भी न कहा। चुप ही रहे। आपके हाँ न करने पर मुन्शीराम खीजे नहीं और न ही पण्डित जी पर अपनी इच्छा लादी।

अगले दिन पण्डित जी महात्मा जी से कुछ पैसे माँगने चले गये। महात्मा जी चिन्तित होकर बोले, "घर पर कुशलक्षेम तो है ?"

महात्मा जी यह समझे कि पण्डित जी को घर से किसी के रुग्ण होने का तार आया होगा जो घर जाने के लिए पैसे माँगने आए हैं।

श्री पण्डित जी ने कहा कि घर तो ईश्वर की दया है। धर्मशाला जाने के लिए मार्ग व्यय चाहिए। जब और कोई जाने वाला नहीं तो मुझे जाना ही होगा। वेद-प्रचार का कार्य रुकना नहीं चाहिए।

ऐसी थी पण्डित जी की कर्त्तव्य-भावना और उनका तप तेज भी देखिए कि वे न करते हैं तो सभा का प्रधान उनको जाने के लिए विवश नहीं करता। वह प्रधान जी भी तो ऐसे थे कि उनमें अपने पद का और अपनी प्रतिष्ठा का तनिक भी अभिमान न था। ऐसे धर्म-वीरों से ही संघटन फूलते फलते हैं।[2]

---

१. देखिए 'आर्यवीरों के दर्शन', पृष्ठ १०८।

२. 'आर्य वीरो के दर्शन', पृष्ठ ११३।

ठग ज्योतिषियों से बचिए

डाकघर के एक कर्मचारी के यहाँ पुत्र ने जन्म लिया तो एक ब्राह्मण ने उन्हें कहा कि बालक बड़ा अशुभ है। सारे परिवार के लिए यह अनिष्टकारी सिद्ध होगा। घर वाले शोक सागर में डूब गये। पण्डित जी को पता चला तो उसके घर जाकर उन्हें धीरज बँधाया और अन्ध-विश्वास से बचने का उपदेश दिया।[1]

जब जम्मू में कड़ा विरोध हुआ

ठाकुरदास नाम का एक व्यक्ति जम्मू में मुसलमास होने वाला था। श्री पण्डित जी को सूचना मिली तो झट से सब कार्य छोड़कर वहाँ पहुँच गये।

इस कार्य में उनको कड़े विरोध का सामना करना पड़ा। कई प्रकार की बाधाएँ आईं। पण्डित जी विघ्न-बाधाओं से विचलित होने वाले न थे। आपने सब प्रकार की कठिनाइयों का सामना करते हुए ठाकुरदास को सद्धर्म का उपदेश देकर मुसलमान बनने से बचा लिया।[2]

पण्डित जी को मुसलमान भाई सुनना चाहते थे

मिर्जा गुलाम अहमद अपना नया मत चलाने के लिए व मुसलमानों में नबी बनने के लिए बहुत पापड़ बेल रहे थे। वह मुसलमानों को अपने जाल में फँसाने के लिए सदा ही प० लेखराम जी को इस्लाम का शत्रु बताया करता था। अनेक बार जब मुसलमानों ने श्री पण्डित जी को सुना तो वे उनकी युक्तियों व एकेश्वरवाद से बड़े प्रभावित हुए।

ऐसी ही एक घटना गुरदासपुर में भी घटी। आर्यसमाज गुरदास-पुर का प्रथम वार्षिकोत्सव २९, ३० अक्टूबर, १८९४ ई० को रखा गया। इस उत्सव पर मियाँ नूर मुहम्मद नाम के एक भाई ने बहिश्त व दोजख के विषय में कोई प्रश्न पूछा। इस्लाम पर भी उसे कुछ शङ्काएँ थीं। श्री पं० लेखराम जी, चौ० रामभजदत्त व मास्टर आत्माराम जी ने उसके उत्तर दिये। वह कुछ और भी पूछना चाहता था कि एक समझदार मुसलमान ने कहा कि मियाँ नूर मुहमद से माथा-पच्ची

१. देखिए 'आर्य वीरों के दर्शन' पृष्ठ १०८।

२. वही, पृष्ठ १०१।

करना ठीक नहीं । उसने श्री पं० लेखराम जी का व्याख्यान करवाने की विनती की ।

कैसी विचित्र बात है कि यह घटना गुरदासपुर में ही घटी। कादियाँ भी तो गुरदासपुर जिला में पड़ता है और गुरदासपुर से केवल १६ मील की दूरी पर है। एक मुसलमान के मन में पं० लेखराम जी की विद्वत्ता के लिए इतना आदर-भाव सुनकर मिर्जा साहिब पर क्या बीती होगी ?

श्री पण्डित जी का पुनर्जन्म विषय पर दो घण्टा तक बडा खोज-पूर्ण युक्तियुक्त भाषण हुआ । श्री पं० लेखराम जी ने बडे अनूठे ढंग से अपने विषय को प्रस्तुत किया । जीव का स्वरूप, कर्म की परिभाषा, मनुष्य का जन्म क्यों हुआ, आदि प्रश्नो पर प्रकाश डालते हुए कहा कि मृत्यु के पश्चात् शरीर परमाणुओं में परिवर्तित हो जाता है शरीर का नाश होता है, जीव नही मरता । जब प्रकृति का ही नाश नहीं होता तो जीव के बारे में ऐसा सोचना अनुचित है । पण्डित जी ने पनुर्जन्म के सिद्धान्त को सृष्टि की बाह्य व आन्तरिक व्यवस्था से भली प्रकार से सिद्ध किया ।

यहाँ पण्डित जी ने अपने प्रिय विषय 'सच्चाई की दृढ़ शिला' पर भी एक व्याख्यान दिया । पत्थर की चट्टान और उसमें परिवर्तन की चर्चा करते हुए पण्डित जी ने बतलाया कि वैदिक धर्म ही वह दृढ़ शिला है जिस पर समय-समय पर विरोधियों के भयङ्कर आक्रमण हुए परन्तु वैदिक धर्म फिर भी जीवित है ।

ऐतिहासिक दृष्टि से सब साम्प्रदायिक आक्रमणों की चर्चा करते हुए उन ऋषियों व आत्माओं के नाम बताए जिन्होंने सीना तानकर वैदिक धर्म की आज तक रक्षा की है । दो घण्टे तक लोग मन्त्र मुग्ध होकर पण्डित जी को सुनते रहे ।[1]

उत्सव के पश्चात् पण्डित जी ऋषि-जीवन की खोज के कार्य में कुछ समय तक गुरदासपुर में और भी सके ।

वे और बोलते तो भी लोग डटे रहते

आर्यसमाज बच्छोवाली लाहौर के उत्सव पर श्री पण्डित जी का आर्यसमाज के नियमों पर बड़ा ओजस्वी व्याख्यान हुआ । इस व्याख्यान

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ८-६, दिनांक २-६-१८६४ ई० ।

के सम्बन्ध में सद्धर्म प्रचारक के संवाददाता ने लिखा है—

"व्याख्यान क्या था, जानकारी का भण्डार था। लाहौर की जनता को नियत समय तक बिठाए रखना किसी साधारण व्यक्ति का कार्य नही है फिर निश्चित समय से १½ घण्टा बाद तक श्रोताओं का चित्र के समान जमे रहना यह सिद्ध करता है कि हमारे भाई के भीतर किस जोश से धर्म की अग्नि प्रज्वलित है। यदि पण्डित जी एक घण्टा और भी बोलते जाते तो लोग डटे रहने के लिए तैय्यार थे।"[1]

यह उत्सव का अन्तिम व्याख्यान था। ऊपर के वृत्तान्त से प्रतीत होता है कि पण्डित जी अपने निर्धारित समय से १½ घण्टा अधिक बोले और श्रोत्रा अब भी उठने का नाम नहीं ले रहे थे।

इस व्याख्यान के विषय के सम्बन्ध में यह नही भूलना चाहिये कि ठीक दो वर्ष पूर्व लाहौर में आर्यसमाज के उत्सव पर रायबहादुर मूलराज ने आर्यसमाज के नियमों की दुहाई देकर ही आर्यों में बुद्धि-भेद पैदा करके कलह का बीज बोया था। इसकी पर्याप्त चर्चा अन्यत्र पाठक पढ़ेंगे। उसी विष के दुष्प्रभाव को दूर करने के लिए श्री पण्डित जी ने यह विषय चुना। ऐसा लेखक का मत है। पं० कृपाराम जी ने अपने एक लुप्त हो चुके ट्रैक्ट मे लिखा है कि रायबहादुर मूलराज ने पहले तो उ० प्र० व पंजाब के आर्यों में फूट डाली फिर पंजाब के आर्यो में फूट डाल दी।[2]

इतना विस्तृत अध्ययन

श्री पण्डित जी को बन्नू के आर्यजन सुनने के लिए बहुत उत्सुक थे। आप नवम्बर १८९४ के मध्य वहाँ गए। वहाँ आपके कई व्याख्यान व पौराणिकों से एक शास्त्रार्थ भी हुआ। उसी शास्त्रार्थ की एक घटना अन्यत्र दी हुई है। यहाँ 'ईश्वर की सत्ता', 'मोक्षमार्ग, 'धर्म', 'आर्य जीवन आदि कई विषयों पर पण्डित जी ने भाषण दिये। मुसलमानों को व पौराणिकों को शास्त्रार्थ का खुला निमन्त्रण था।

शङ्का समाधान विभिन्न दार्शनिक विषयों पर हुआ। आश्चर्य है कि इस महापुरुष का कितना गहन अध्ययन था। कितने ही विषयो पर घण्टों तक वे सप्रमाण धाराप्रवाह बोलते थे। बन्नू आर्यसमाज के

---

१. देखें 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ५, दिनांक ३० नवम्बर, १८९४ ई०।

२. देखें ट्रैक्ट 'वक्त का बहाव', ले० पं० कृपाराम शर्मा (स्वामी दर्शनानन्द जी)।

मन्त्री लिखते हैं कि आपकी व्याख्यान शैली ऐसी थी कि मोटी से मोटी बुद्धि का व्यक्ति भी आपको सुनकर वाह्-वाह् ! कह् उठता था ।[1]

दिन-रैन वेद-प्रचार में

पण्डित जी कहूटा अपने घर गये । जाते-जाते ३-४-५ दिसम्बर को पेशावर में 'धर्म की आवश्यकता', 'वेदों की रक्षा', 'आर्यावर्त्त का धार्मिक इतिहास' विषयों पर व्याख्यान दिये ।

६ को रावलपिण्डी मे पहुँचे तो प्रचार का प्रबन्ध न हो सका । वहाँ से अपने घर कहूटा चले गये । श्री लाभचन्द भजनोपदेशक को पण्डित जी साथ ले गये । दो दिन अपने नगर कहूटा में प्रचार करते रहे । वहाँ से धर्मचर्चा करते-करते गुजरखाँ पहुँचे । फिर पण्डित जी चकवाल पहुँचे । चकवाल में भी प्रचार किया तथा 'नूर अफशाँ' के एक भ्रामक लेख का सप्रमाण उत्तर भी लिखा ।

चकवाल से पण्डित जी प्रचार करते-करते जालंधर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित हुए । चकवाल व जालंधर के मध्य कहाँ कहाँ प्रचार किया इसका व्योरा नहीं मिल सका ।[2]

घर गये और गुजरात में रुके

श्री पण्डित जी ऋषि-जीवन के लेखन-कार्य में लाहौर में ठहरे हुए थे । धर्मपत्नी को लेने घर गये । मार्ग में गुजरात में रुक गये । वहाँ एक भाई इस्लाम की ओर झुकाव रखता था । पण्डित जी को सूचित किया गया । उसके धर्मच्युत होने की आशङ्का थी ।

पण्डित जी उसे मिले । उससे धर्मचर्चा करके वैदिक धर्म पर दृढ़ किया । गुजरात व लालामूसा दोनों स्थानों पर आपने व्याख्यान दिये ।[3]

भवानी हरियाणा की कुछ घटनाएँ

आर्यसमाज भवानी का दूसरा वार्षिकोत्सव २३-२४ फरवरी १८९५ ई० को निश्चित हुआ । यह नगर पौराणिकों का बड़ा गढ रहा है । आर्यसमाज का यहाँ डटकर विरोध किया जाता रहा है । श्री

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १०, ११, १२, दिनांक ७-१२-१८९४ ई० ।
२. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १४, दिनांक २१-१२-१८९४ ई० ।
३. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १३, दिनांक १-२-१८९५ ई० ।

पं० लेखराम जी, पं० कृपाराम जी व पं० लाभचन्द जी भजनोपदेशक उत्सव पर पहुँचे।

यहाँ पण्डित जी के व्याख्यान का वृत्तान्त इन शब्दों में प्राप्त होता है —

"प० लेखराम जी का व्याख्यान धर्म विषय पर आरम्भ हुआ। जिस उपदेश में सुयोग्य विद्वान् ने अपनी गहरी जानकारी से भली प्रकार से यह स्पष्ट कर दिया कि अज्ञानता व मूर्खता ने भारतवर्ष में अपना जाल ऐसी दृढ़ता से बिछाया है कि अब तक वैदिक धर्म को समझने मे भारतवासी असमर्थ ही नही रहे प्रत्युत् अपनी अज्ञानता व मूर्खता से घृणा भी करते है।"

पण्डित जी का व्याख्यान अभी समाप्त भी न हुआ था कि एक ब्राह्मण मंगतराम बगल में कुछ पोथियाँ दबाए हुए उत्सव में आया और आते ही मन्त्रीजी का पता लगाकर वैदिक धर्म पर कुछ बोलने का समय माँगा। कार्यक्रम निश्चित था फिर भी प्रधान जी ने विरोधियों को समय देना ही उचित समझा। उसे कहा गया कि श्री प० लेखराम जी के व्याख्यान की समाप्ति पर आपको अवश्य बोलने का अवसर दिया जावेगा।

पण्डित जी के व्याख्यान के पश्चात् उक्त ब्राह्मण को समय दिया गया। उसने कई प्रश्न किये जिनका उत्तर श्री पं० कृपाराम जी ने दिया। उस ब्राह्मण के देखादेखी एक फकीर भी खड़ा हो गया। उसने भी कुछ प्रश्न कर दिए। उसका उत्तर देने के लिए श्री पं० लेखराम जी खड़े हुए।

इसके पश्चात् एक ज्योतिषी पं० रिखीराम खड़ा हो गया। उसने भी कुछ प्रश्न किये। श्री पं० लेखराम जी ने इन प्रश्नों का भी युक्ति-युक्त सप्रमाण उत्तर देकर सबकी सन्तुष्टि की।

यह वाद-विवाद, शास्त्रार्थ जो साढे तीन बजे बाद दोपहर आरम्भ हुआ था सायं सात बजे तक चलता रहा। सूर्यास्त हो गया। लोग डटकर पण्डित जी को सुनते रहे।[1]

ऐसे देहली वालों का भ्रम-भञ्जन किया

१८९५ ई० के मार्च मास के अन्तिम तीन दिनों के लिए आर्य-समाज देहली का वार्षिकोत्सव निश्चित हुआ। आर्यसमाज देहली के

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', दिनांक २२ व २९ मार्च के अक सन् १८९५ ई०।

तत्कालीन प्रधान श्री लाला गिरधारीलाल जी के विशाल भवन (निवास स्थान) पर ही उत्सव का आयोजन किया गया। श्री पं० लेखराम जी आर्य पथिक, महात्मा मुशीराम जी व चौधरी रामभजदत्त जी २६ मार्च की रात्रि देहली पधारे। पलवल व बुलन्दशहर आदि नगरों से भी कुछ आर्य बन्धु आए।

प्रातःकाल यज्ञ हवन के पश्चात् ५०-६० भाई नगर कीर्तन के लिए निकले। उन दिनों नबी बख़श नाम का एक रागी आर्यसमाज से बड़ा प्रेम रखता था। उसे विशेष रूप से बुलवाया गया। जब आर्य भाई नगर कीर्तन करते हुए बाजार में पहुँचे तो बाहर से पधारे आर्यो को पता चला कि देहली में जलसे-जलूस का अर्थ होता है 'वेश्याओं का नाच व नाटक'। ऐसा प्रतीत हुआ कि 'आर्यसमाज का जलसा है' इस सूचना से कोई भी उत्सव के प्रयोजन को न समझेगा।

'जलसा' शब्द सुनते ही लोग यह पूछते थे कि उत्सव में कितनी वेश्याएँ आएँगी ? कितनी वेश्याओ का नृत्य होगा ? भ्रान्ति-निवारण कैसे हो ? ऋषि के दीवानों ने शीघ्र समस्या का समाधान खोज लिया। अविलम्ब एक मूढा मँगवाया गया। उन दिनों कुर्सियों की अपेक्षा मूढ़े का ही अधिक प्रचलन था। स्थान-स्थान पर धर्मवीर प० लेखराम जी, महात्मा मुशीराम जी व चौधरी रामभजदत्त जी के पाँच से लेकर पन्द्रह मिनट तक व्याख्यान हुए। व्याख्यानों का विषय था आर्यसमाज का पवित्र उद्देश्य तथा वेदों की पवित्र शिक्षा। इस प्रकार इन महापुरुषों ने बारी-बारी १६ स्थानों पर मूढे पर खड़े होकर व्याख्यान दिए। इनके व्याख्यानों को सहस्रों जनों ने बड़े ध्यान से सुना।

साढ़े चार घण्टे तक नगर कीर्तन का यह कार्यक्रम चला। इन नेताओ के व्याख्यानों से देहली निवासियो की भ्रान्ति दूर हुई। आर्यसमाज के प्रति लोगों में स्नेह व आदरभाव उत्पन्न हुआ। आज के पाठक तनिक कल्पना तो करे कि साधनों के अभाव मे उस युग के इन योद्धाओं ने किस प्रकार से परिस्थितियों को चीरकर युग की धारा को मोड़ा। नगर कीर्तन के लिए लाउडस्पीकर नहीं थे। जीपों की बात तो दूर रही, बैलगाड़ी ठेला भी न था जिस पर प्राणवीर लेखराम व धर्मदुलारे मुशीराम व आग्नेय पुरुष चौ० रामभजदत्त जी खड़े होकर बोल सकते।

३० मार्च को आर्यपथिक का एक विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान 'ज्ञान का आविर्भाव' विषय पर हुआ। दो घण्टे तक धाराप्रवाह बोलते हुए ओजस्वी वक्ता ने देशी-विदेशी विद्वानों के ग्रन्थों से प्रमाणों की झड़ी लगा दी। इस्लाम व ईसाई मत की समीक्षा करते हुए आपने सिद्ध किया कि सद्ज्ञान का प्रकाश आर्यावर्त्त से ही सारे विश्व में फैला। उस उत्सव की रिपोर्ट देने वाले संवाददाता ने इस भाषण के बारे में लिखा है—

"पण्डितजी ने अपने दो घण्टों के भाषण में जो कुछ कहा उसके लिए एक पुस्तिका की आवश्यकता है। अंग्रेजी लेखकों की अनेक भूलों का अकाट्य युक्तियो से प्रतिवाद किया। वर्तमान में जाति के अन्ध-विश्वासों का आपने हृदयस्पर्शी चित्र खींचा। आपने वैदिक धर्म की विशेषताओं व महिमा को श्रोताओं के हृदय पर अंकित कर दिया।"[1]

आइए ! नगाड़ा धर्म का बजता है

३१ मार्च को प्रातः महात्मा मुन्शीराम जी के आध्यात्मिक प्रवचन के पश्चात् बार-बार घोषणा की गई कि जिस किसी को भी वैदिक धर्म के विषय में कुछ पूछना हो, वह पूछ सकता है परन्तु श्री पण्डित लेखराम जी के सामने आने का किसी विधर्मी को साहस ही न हो पाया। तब श्री पण्डित जी ने एक वेदान्ती रामचन्द्र के छपे हुए प्रश्नों के उत्तर देने आरम्भ किए।

रात्रि को अन्तिम भाषण चौधरी रामभजदत्त जी का था। चौधरी जी से पूर्व आर्य पथिक लेखराम जी का अवैदिक मतों की समीक्षा पर बडा प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। ईसाइयों की 'पिता, पुत्र व पवित्रात्मा' की मान्यता का थोथापन सब पर स्पष्ट हो गया। पुराणों की विज्ञान-विरुद्ध, वेद-विरुद्ध व अश्लील शिक्षा की पोल भली प्रकार से खोली। लोग चाहते थे कि श्री पण्डित जी बोलते जावें और वे सुनते ही जावें परन्तु ऐसा तो सम्भव न था।[2] उत्सव की व्यवस्था का भी तो पण्डित जी को ध्यान था। उनके पश्चात् चौ० रामभजदत्त जैसे सुयोग्य वक्ता का एक विशेष व्याख्यान होना था। पर्याप्त समय बीत जाने पर पण्डित जी को अपना व्याख्यान समाप्त करना पड़ा।

१. देखिए सद्धर्म प्रचारक पृष्ठ ४-५, दिनाक ५-४-१८९५ ई०।

२. देखिए वही, पृष्ठ ५

संवाददाता ने लिखा है कि "पण्डित जी ने अन्धविश्वासों की चट्टान को हिलाकर रख दिया।" आज हमारे अभागे नयन उस प्राणवीर ज्ञान के भण्डार शूरशिरोमणि पं० लेखराम जी के दर्शनों को तरस रहे हैं।

ईश्वर को कैसे जानें ?

आर्यसमाज करनाल ने २८ व २६ मार्च, १८६५ ई० को अपना उत्सव रखा। करनाल समाज को भी पण्डित जी के प्रति विशेष श्रद्धा थी। प्रथम दिन प्रातःकाल ही सभा प्रधान श्री मुन्शीराम जी, पं० लेखराम जी तथा पं० रामरत्न जी ने यज्ञ-हवन करवाकर उत्सव आरम्भ किया। मेरठ जिला से पधारे चौ० श्री खूबचन्द के व्याख्यान से ग्रामीण किसान आर्य भाई बड़े प्रभावित हुए। कुछ लोगों ने प्रश्न करने आरम्भ किये तो पहले चौ० खूबचन्द जी ने उनके उत्तर दिये फिर करनाल के एक ब्राह्मण श्री सावनमल ने यह प्रश्न किया कि जब हम इन्द्रियों से परमेश्वर को नही जान सकते तो फिर हमारे पास ईश्वर के जानने का कौन-सा साधन है ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री पं० लेखराम जी ने कहा, "क्योंकि ईश्वर कोई स्थूल पदार्थ नही है अत. उसे जानने के लिए हमारे पास ऐसे ही पदार्थ हैं जो कि स्थूल नहीं है। ये हैं मन, चित्त, बुद्धि व अहंकार। इनके द्वारा ईश्वर को पहचाना जा सकता है तथा गायत्री मन्त्र का ठीक-ठीक विचार करने से आत्मा की शुद्धि से परमात्मा का मिलाप हो सकता है अन्य किसी प्रकार से नहीं।"

इस पर प्रश्नकर्त्ता ने कहा कि मैं तो प्रतिदिन सन्ध्या व गायत्री का पाठ करता हूँ मुझे तो ईश्वर का ज्ञान नहीं हुआ।

इसका उत्तर देते हुए प० लेखराम जी ने कहा, "सन्ध्या व गायत्री की तोता रटन से ईश्वर का ज्ञान नही हो सकता जब तक कि उस पर विचारपूर्वक ध्यान न दिया जावे तथा तदानुकूल अपने आचरण की शुद्धि न की जावे।"

बाद में श्री सावनमल ने उपासना की विधि जाननी चाही। श्री पण्डित जी ने उपासना की वैदिक विधि बताकर उसे सन्तुष्ट किया।[1]

---

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक' पृष्ठ १०, दिनाक १२-४-१८६५ ई०।

रात है तो प्रभात अवश्य होगी
आर्य जाति के सुदिन अवश्य आएँगे

उत्सव का अन्तिम व्याख्यान श्री पं० लेखराम जी ने दिया। पण्डित जी ने आर्य जाति के अतीत, वर्तमान का चित्र खींचते हुए कहा कि इतिहास साक्षी है कि इस जाति पर कई आक्रमण हुए हैं परन्तु विश्व की यह सबसे प्राचीन जाति आज भी जीवित है। श्री पण्डित जी ने इतिहास के अनेक ग्रन्थों के प्रमाण देकर यह दर्शाया कि संसार की कई जातियाँ थोड़े से कष्टों व विपदाओं को न सहकर ही शत्रुओं द्वारा रौंदी गई परन्तु यह जाति इतने लम्बे समय से एक के पश्चात् दूसरी विपत्ति को झेलते हुए भी जीवित है। इसके जीवन का कोई रहस्य है। इसकी सामाजिक, आत्मिक व शारीरिक अवस्था यह बताती है कि यह जाति एक दिन पलटा खाएगी। यह आर्यावर्त्त देश अपने प्राचीन वैभव को, गौरव को अवश्य प्राप्त करेगा।

यह जाति पुनः आत्मिक बल प्राप्त करके संसार में सिरमौर बनेगी।

आर्यसमाज करनाल के मन्त्री श्री कर्त्ताराम जी ने इस उत्सव का वृत्तान्त लिखते हुए लिखा है, "पण्डित जी का व्याख्यान इतिहास के ग्रन्थों के प्रमाणों से भरपूर था। कोई भी कथन ऐसा न था जिसकी पुष्टि में पण्डित जी ने प्रमाण न दिया हो। बिना प्रमाण के कुछ भी तो न कहा। इस व्याख्यान का श्रोताओं पर विशेष प्रभाव पड़ा। पण्डित जी के व्याख्यान के बीच में बारम्बार करतल ध्वनि होती रही। पण्डित जी से आर्यजन विशेष रूप से व आर्यसमाजेतर जनता सामान्यतया परिचित ही है। आपके भाषण सब स्थानों पर ऐसे ही प्रभावशाली व सारगर्भित होते हैं। इनके व्याख्यानों की प्रशंसा किन शब्दों में की जावे। यह भाषण आर्य जाति को अपनी वर्तमान अवस्था में सुधार लाने के लिए झकझोरने वाला था। एक-एक श्रोता की जिह्वा पर ये शब्द थे कि निश्चय ही हिन्दू जाति की वर्तमान स्थिति सुधार चाहती है।"[1]

जब एक चौधरी का यज्ञोपवीत हुआ

करनाल के इसी उत्सव की एक और घटना भी उल्लेखनीय है। अन्तिम दिन यज्ञ-हवन के समय एक चौधरी का यज्ञोपवीत संस्कार

१. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १०, दिनांक १२-४-१८९५ ई०।

हुआ तो दो ब्राह्मण श्री पं० रामानन्द जी व श्रद्धाराम जी खड़े हो गये। दोनों ने यज्ञोपवीत व वर्णव्यवस्था के विषय में प्रश्न पूछने आरम्भ कर दिये।[1]

श्री पण्डित लेखराम जी ने उनके एक-एक आक्षेप का युक्तियुक्त व सप्रमाण उत्तर देकर दोनों को चुप करवा दिया। श्रोताओं पर श्री पण्डित जी के गम्भीर चिन्तन व शास्त्रज्ञान का बड़ा प्रभाव पड़ा। देश का कैसा दुर्भाग्य है कि ईश्वर के नित्य ज्ञान वेद को पाकर भी इस देश के पोंगापन्थी कैसी-कैसी रूढ़ियों में फँसे पड़े हैं। विदेशियों व विधर्मियों ने जिस जाति-पाँति का लाभ उठाकर इन्हें लूटा व लताड़ा—समझाने पर भी यह उस रोग से मुक्त नही हो पाए। इनको इतनी भी समझ नही कि यह जानलेवा रोग है। इन्हें यह भी पता नहीं कि इसी के कारण ये तिरस्कृत हुए है। एक जाट के यज्ञोपवीत लेने पर जिन ब्राह्मणों को आनन्दित होना चाहिए था, वे उलटा उठकर आपत्तियाँ करने लगते है।

आर्यसमाज ने कड़ा सघर्ष करके युग को बदला है। अब भी नई परिस्थितियाँ पं० लेखराम जैसे प्रकाण्ड विद्वान् व बलिदानी धर्मवीर की माँग करती हैं।

मालेरकोटला के व्याख्यान का सार

इस ग्रन्थ में पृष्ठ ८५ व पृष्ठ १०४-१०६ तक भी मालेरकोटला के उत्सव की कुछ घटनाएँ दी हैं। इसी उत्सव पर पण्डित जी द्वारा दिये गये एक महत्त्वपूर्ण व्याख्यान का सार हमे मिल गया है। हम इसे यहाँ देने का लोभ संवरण नहीं कर सकते।

पृष्ठ १०४-१०५ पर महात्मा मुन्शीराम जी को प० लेखराम समझे जाने की जो घटना अंकित है उस घटना के पश्चात् एक भजन हुआ और भजन के पश्चात् धर्मवीर श्री पं० लेखराम जी का व्याख्यान रखा गया। सुयोग्य वक्ता ने एक अलङ्कार द्वारा यह जतलाया कि वेद ज्ञान ही वह शुद्ध पवित्र स्रोत है जिसके सम्बन्ध में फारसी की एक प्राचीन पुस्तक में यह लिखा है कि भारतवर्ष में एक ऐसा वृक्ष है जो कि प्रत्येक प्रकार के रोग के लिए उपयोगी हो सकता है।

सुदूर देश से एक वैद्य जिसकी खोज करता हुआ भारतवर्ष में

१. देखिए, 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ११, दिनाक १६-४-१८६५ ई०।

आया। यहाँ आकर उसको बतलाया गया कि वह वृक्ष पवित्र वेद का वृक्ष है कि जिससे मनुष्यों के सब शारीरिक व आत्मिक रोग नष्ट होते हैं। इसके पश्चात् श्री पण्डित जी ने पौराणिक मत तथा उसके अन्धविश्वासों का भली प्रकार से चित्र खींचकर जनता के सम्मुख वेदों की महत्ता रखी।

इसी अवसर पर श्री पण्डित जी ने 'ईश्वर सिद्धि' विषय पर भी एक व्याख्यान दिया। आपने प्रभु की सुन्दर व कलापूर्ण रचना—इस सृष्टि की ओर श्रोताओं का ध्यान खींचकर ईश्वर का होना सिद्ध किया। आपने इस विषय के प्रत्येक पक्ष को लेकर ईश्वर की सत्ता और ईश्वर का वैदिक स्वरूप जनता के सामने रखा। साथ ही साथ श्री पण्डित जी अवैदिक मतो की मान्यताओं की वैदिक सिद्धान्तों के साथ तुलना भी करते जाते थे। आप द्वारा अवैदिक मतों की समीक्षा बड़ी पाण्डित्यपूर्ण व प्रभावशाली थी। भारी संख्या में लोगों ने वहाँ आपको सुना। महात्मा मुन्शीराम जी के अनुसार लगभग पाँच सहस्र व्यक्तियों ने पण्डित जी का व्याख्यान सुना। कुछ तो जमकर पण्डाल में बैठकर सुनते थे और कुछ आते-जाते उन्हें सुनकर खिंचे हुए आ जाते थे।[1]

पण्डित लेखराम आए क्या ?

२१ अगस्त सन् १८९५ ई० को आर्यसमाज श्री हरगोविन्दपुर व आर्यसमाज भागोवाल जिला गुरदासपुर के कई सज्जन बुताला जिला अमृतसर में प्रचारार्थ गये। महाशय हरनामसिह जी आदि कई पुरुषों ने प्रचार की अच्छी व्यवस्था कर रखी थी। पौराणिकों ने अपने बड़े-बड़े महारथी मँगवाकर शास्त्रार्थ की घोषणा कर रखी थी। लाला रञ्जीतराय जी श्री हरगोविन्दपुर वाले जालन्धर महात्मा मुन्शीराम जी को शास्त्रार्थ के लिए आमन्त्रित करने गये। अगले दिन शास्त्रार्थ हुआ।

बड़े-बड़े पौराणिक दिग्गज तो न आए। लाहौर के एक पण्डित दीवानचन्द जी ने पौराणिक पक्ष प्रस्तुत किया। वैदिक पक्ष श्री हरगोविन्दपुर आर्यसमाज के मन्त्री महाशय मुकन्दराम जी ने प्रस्तुत किया। पौराणिकों ने शख बजाकर बताशे बाँटकर गड़बड़ भी की

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ६, दिनाक ७-५-१८९५ ई०।

परन्तु दो सहस्र श्रोताओ ने देखा कि मुकन्दराम जी के प्रश्नो का पौराणिकों के पास कोई उत्तर नही। महाशय मथुरादास जी भागोवाल वालो ने भी डेढ़ घण्टा का एक ओजस्वी व्याख्यान देकर सत्य का मण्डन व पाखण्ड का खण्डन किया।

इस क्षेत्र में दूर-दूर तक यह समाचार फैल गया कि बुताला में आर्यो का पौराणिकों से शास्त्रार्थ है। २३ अगस्त को जब कुछ लोग बुताला से व्यास स्टेशन पर पहुँचे तो उत्सुकता से लोग यही पूछते थे कि शास्त्रार्थ कैसा रहा ? पं० लेखराम जी आए क्या ? प्रत्येक व्यक्ति पं० लेखराम जी आए क्या, यही पूछता था। इससे पाठक अनुमान लगा सकते है कि उस युग में पण्डित जी की कितनी कीर्ति थी। ग्रामों में दूर-दूर तक लोग उनको सुनने के लिए उत्सुक रहते थे।[1]

हमें अपने लिए ऐसी सुविधा नहीं चाहिए

श्री पं० लेखराम जी धर्मशाला आर्यसमाज के उत्सव पर जाने के लिए पठानकोट पहुँचे। आर्यसमाज पठानकोट व आर्यसमाज दीनानगर के कई सभासद अपने पूजनीय महात्मा के स्वागत के लिए पहले ही स्टेशन पर आए हुए थे।

स्टेशन से पण्डित जी को आर्य भाई टाँगा अड्डा पर लाए। उन दिनों धर्मशाला को बसें नही जाती थीं। टाँगे आदि ही जाते थे। संयोग से उसी समय कुछ और भाई भी धर्मशाला जा रहे थे और उनका टाँगा चलने ही वाला था। एक यात्री के बैठने का स्थान भी उसमें था परन्तु पहले बैठे यात्रियों के दल के नेता ने टाँगा वाले को कहा कि हम पूरे टाँगा का भाड़ा दे देंगे तुम इस यात्री (पं ०लेखराम जी) को मत बिठाना। टाँगा वाले ने यह बात दीनानगर के लाला कशमीरामल जी व अन्य आर्यो को तत्काल बतला दी। पाठक यह मत सोचें कि धर्मशाला जाने वाले वे यात्री कोई विधर्मी थे जो पण्डित जी से चिढ़े हुए थे। दुर्भाग्य से उन दिनो आर्यसमाज में मूलराज के द्वारा आरोपित कलह का विषवृक्ष फूल-फल रहा था। ये यात्री कालेज पक्ष के शीर्षस्थ नेता थे। इसी कारण वे प० लेखराम जी को साथ बिठाना भी पाप समझते थे परन्तु आगे चलकर ये सब भी पण्डित जी के भक्त व प्रशंसक बन गये। यह घटना १८९५ ई०की है।

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ १०, दिनाक ११-१०-१८९५ ई०।

जब टाँगा वाले ने पण्डित जी को उक्त कारण से बिठाने में विवशता प्रकट की तो लाला कशमीरामल जी व अन्य आर्यों ने आव देखा न ताव पूरा टाँगा अकेले पण्डित जी के लिए किराए पर करने का निश्चय किया। पं० लेखराम जी ने इसका कड़ा विरोध किया और कहा हमें अपने लिए ऐसी सुविधा नहीं चाहिए। कैसा तपस्वी महात्मा है कि भक्तजन सारा व्यय देने को उद्यत हैं परन्तु वह महापुरुष उनके भक्तिभाव को जानते हुए भी यह सुविधा लेना नही चाहता। वह इसे भी जन-धन की हानि मानता है।[1]

तब आर्य भाइयों ने पण्डित जी के लिए और व्यवस्था की। उनका सामान आर्यवीरों ने उठाकर यक्का पर रखा और धर्मशाला के लिए विदा किया। पण्डित जी के प्रति आर्यो की ऐसी श्रद्धा अनुकरणीय है। उस युग में आर्यसमाज के उत्सवों की जो सूचनाएँ छपती थी, उनमें विद्वानों, संन्यासियों, उपदेशको के नाम बड़े सम्मान से दिये जाते थे। अनेक बार धर्मवीर पं० लेखराम जी का नाम पहले दिया जाता था और सभा के प्रधान महात्मा मुन्शीराम जी व चौधरी रामभजदत्त आदि नेताओं का नाम बाद में होता था।

ऐसे बीसियों प्रमाण हमारे पास है कि जब उत्सवों का आँखों देखा वृत्तान्त मुन्शीराम जी 'सद्धर्म प्रचारक' में देते तो पं० लेखराम की चर्चा उसमे बड़ी श्रद्धा से करते। उनके यात्रा-वृत्तान्त में प्रमुखता पं० लेखराम जी, पं० गणपति जी शर्मा, पं० आर्यमुनि जी आदि को दी जाती थी। अपने आपको वे प० लेखराम से बड़ा नही मानते थे।

कई बार उत्सवों का यात्रा वृत्तान्त श्री मास्टर आत्माराम जी लिखते थे। वे आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री थे। वे भी इसी प्रकार अपने यात्रा वृत्तान्त में पण्डित जी के व्याख्यानो व व्यक्तित्व को विशेष प्रमुखता दिया करते थे। वैसे भी मास्टर जी तो अपने को प० लेखराम जी का ऋणी मानते थे। उन्ही के व्याख्यानों के प्रभाव से वे आर्यसमाजी बने थे। यह सारी घटना हम पीछे दे चुके हैं। आज युग उलटा है। सभाओं पर ऐसे लोगों ने अब पजे गाड़ रखे है कि सभाओं के पत्र उनके Publicity Gazzette निजी प्रचारतन्त्र बनकर रह गये हैं। यह देश और धर्म के लिए एक दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना है।

---

१ 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ८-६, दिनाक २५-१०-१८६५ ई०।

अर्थ शुचिता का ऐसा आदर्श

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज अपने उपदेशों में जीवन-निर्माण के लिए कई प्रेरक प्रसंग सुनाया करते थे। श्री पं० लेखराम जी के जीवन की जो घटना स्वामी जी को अत्यन्त प्रिय लगती थी, वह थी पण्डित जी की अर्थ शुचिता की।

एक बार पण्डित जी को अपने निजी कार्य के लिए कहीं जाना था। संयोग से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने भी पण्डित जी को वही का कार्यक्रम दे दिया। पण्डित जी वहाँ प्रचारार्थ गये। आकर सभा को अपने मार्ग व्यय का बिल दिया। एक ओर का मार्ग व्यय उसमें लिखा था दूसरी ओर का अंकित नही था। सभा के मन्त्री जी ने यह समझा कि भूल से पण्डित जी ने दूसरी ओर का मार्ग-व्यय नही लिखा। बिल ठीक करने के लिए पण्डित जी को लौटाया गया।

श्री पण्डित जी ने कहा, "वहाँ मैं अपना कार्य भी करके आया हूँ। उचित यही है कि एक ओर का मार्ग-व्यय मैं दूँ। यदि सभा मुझे वहाँ न भेजती तो दोनो ओर का मार्ग व्यय मुझे ही वहन करना पड़ता।" "यह बात छोटी-सी है परन्तु प० लेखराम सरीखे विरले महापुरुष ही इस मर्यादा का पालन करते है। ऐसी छोटी-छोटी बाते ही किसी व्यक्ति को महान् बनाती हैं। आज तो युग सब कुछ डकार जाने का है। अर्थ शुचिता की बात करना अपना ही उपहास उड़ाना है।

भारतीय मुसलमानो ने प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् जब खिलाफत आन्दोलन चलाया तो मौलाना मुहम्मद अली से आय-व्यय का व्योरा माँगा गया तो मौलाना ने उत्तर दिया कि "हिसाब तो कयामत (प्रलय) के दिन होगा।" मुसलमान यही तो मानते है कि अल्लाह मियाँ कयामत के दिन सबके पाप-पुण्य का हिसाब करता है।[1]

जिसका रक्षक हो भगवान्

आचार्य रामदेव जी गुरुकुल काँगड़ी वालों ने अपने संस्मरणों में लिखा था कि एक बार पं० लेखराम जी को कहीं का प्रोग्राम दिया गया। महात्मा मुन्शीराम जी को जब इस कार्यक्रम का पता चला

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक का १०-१७ मार्च सन् १६३५ का अंक पृष्ठ ४।

तो आपने यह कार्यक्रम यह कहकर बदल दिया कि वहाँ के मुसलमान बड़े तीखे हैं। पण्डित जी को उन दिनों मौत की धमकियाँ मिलती ही रहती थी। पण्डित जी के जीवन की रक्षा के लिए महात्मा जी ने ऐसा किया।

जब पण्डित जी को परिवर्तन के कारण का पता चला तो वे महात्मा जी से उलझ पड़े और कहा, "आप बस धोती प्रसाद ही रहे। डर गये क्या ?"

महात्मा जी ने कहा, "वहाँ जाना सङ्कट से रहित नही।" पं० लेखराम जी का उत्तर था, "जिसके साथ परमात्मा है उसको किस से भय हो सकता है।"[1]

पण्डित जी की दिनचर्या की एक विशेष बात

श्री पण्डित जी के एक शिष्य मास्टर आत्माराम जी ने अपने लेख में लिखा है कि अपने जीवन के अन्तिम श्वास तक श्री पण्डित जी कभी शौचालय मे शौच नहीं गये। कोई मनुष्य (भंगी) मल-मूत्र सिर पर उठाये, यह पण्डित जी को अत्यन्त बुरा लगता था। पण्डित जी जहाँ कही भी जाते युवकों के नाम उनका यही उपदेश था कि दिशा जंगल के लिए ग्राम से नगर से बाहर जाया करो। शौच आदि के पश्चात् उस पर मिट्टी डाला करो।

अहमदाबाद कांग्रेस के अवसर पर गाधी जी ने इसी प्रयोजन से आठ सहस्र गड्ढे खुदवाये थे। सरदार पटेल जैसे सुदक्ष प्रबन्धक को अहमदाबाद कांग्रेस की सफलता का श्रेय प्राप्त है।

महात्मा मुन्शीराम जी ने भी गुरुकुल काँगड़ी में यही नियम बनाया कि दिशा जंगल बाहर जाना होगा। भगी वहाँ भी मलमूत्र न उठाता था। इस आन्दोलन के जन्मदाता प० लेखराम थे।

आरम्भिक युग की कुछ और घटनाएँ

पं० लेखराम जी को कार्यक्षेत्र में उतरे हुए अभी दस वर्ष भी न बीते थे कि चहुँदिश उनकी योग्यता की धूम मच गई। 'आर्य गजट' साप्ताहिक के सम्पादक १८८७ ई० में बनाए गये तो १८८८ ई० के अन्त में ऋषि-जीवन की खोज का कार्यभार उनको सौंपा गया।

---

१ देखे 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक, १०-१७ मार्च, १९३५ ई०, पृष्ठ ५।

२-३-४ अक्टूबर, १८८६ ई० को पेशावर आर्यसमाज का उत्सव था। इस उत्सव पर धर्मचर्चा-शङ्का समाधान का कार्य पण्डित जी को सौंपा गया।

एक केशवानन्द नाम का साधु शास्त्रार्थ के लिए वहाँ शोर मचाता रहता था। जब पण्डित जी वहाँ पहुँचे तो यह साधु सामने ही न आया। यहाँ पण्डित जी ने यज्ञ-हवन के लाभ व आर्यसमाज के नियमों पर प्रभावशाली व्याख्यान दिये। उनका नियमों पर व्याख्यान सुनकर उसी समय तीन सज्जनो ने आर्यसमाज की सदस्यता के लिए प्रार्थना-पत्र दे दिया।[1] इसी दिन दो और सज्जन आर्यसमाज के सदस्य बने।

जहाँ गये वहीं रंग जमा दिया

श्री पण्डित जी ऋषि-जीवन की खोज मे जब निकले तो केवल ऋषि-जीवन की सामग्री ही एकत्र नही करते थे। साथ-साथ वैदिक धर्म-प्रचार, शुद्धि व शास्त्रार्थ सब कार्यो मे पूरी-पूरी रुचि लेते। जनवरी १८६० ई० के तीसरे सप्ताह आप ऋषि-जीवन की खोज मे जिला अलीगढ़ मे गये। आपने यहाँ के कस्बो व ग्रामों में वैदिक धर्म-प्रचार की धूम मचा दी। बरोठा ग्राम में इसी मास आर्यसमाज स्थापित हुआ था। 'सनातन धर्म' विषय पर पूज्यपाद पण्डित जी का एक मार्मिक व्याख्यान हुआ। इस व्याख्यान को सुनकर बीस नये सज्जनों ने आर्यसमाज की सदस्यता के लिए प्रार्थना-पत्र दिया। इस क्षेत्र के राजपूतों पर वीरवर लेखराम की ओजस्वी वाणी का विशेष प्रभाव पडा। लोगो ने मांस-मदिरा व वेश्याओं के नाच पर धन नष्ट करने की बजाए अब अपने धन का सदुपयोग वेद-प्रचार तथा जाति के उपकार में करना आरम्भ किया।

२१ जनवरी को 'कोयल' कस्बा में 'विद्या और अविद्या' विषय पर आपका व्याख्यान हुआ। इस विचारोत्तेजक व्याख्यान को सुनकर वहाँ के श्रोताओं ने एक और व्याख्यान सुनने की विनती की। अगले दिन 'सृष्टि उत्पत्ति' विषय में पण्डित जी का व्याख्यान हुआ। व्याख्यान की समाप्ति पर पण्डित जी ने कहा, जिसको कोई शङ्का हो, वह पूछ सकता है। अलीगढ के एक अध्यापक श्री मास्टर गिधरलाल ने छ:

१. देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ ४-५, दिनाक २४-१०-१८८६ ई०।

प्रश्न पूछे। श्री पण्डित जी ने सब प्रश्नो के उत्तर देकर सभी श्रोताओं को प्रभावित किया।[1]

प० गिरधरलाल का पहला प्रश्न था कि वेद में कहाँ लिखा है कि सृष्टि की उत्पत्ति को इतना समय हुआ है अर्थात् वेद में से सृष्टि सवत् का प्रमाण दो।

पं० लेखराम जी ने बड़े सरल सुबोध ढंग से कहा कि वेद न तो इतिहास का ग्रन्थ है और न ही जन्तरी है जिसमें एक-एक दिन की घटना दी हो। यदि ऐसा होता तो वेद ज्ञान, विज्ञान व दर्शन का ग्रन्थ न होकर घटनाओं की साप्ताहिक, मासिक या वार्षिक रिपोर्ट हो जाते। दूसरी बात यह मत भूलिए कि वेद का प्रकाश सृष्टि के आदि मे हुआ न कि आज अतः इसमें सृष्टि का इतिहास खोजना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। यदि सबका वृत्तान्त वेद में होता तो वेद का धरती में समाना भी कठिन हो जाता। यह कार्य तो वेद के पश्चात् आने-वाले वेद के मानने वालों का है कि वे काल की गणना करते जावें सो स्मृतियों व सूर्य सिद्धान्त आदि में आप देख लें। ये ग्रन्थ आपके लिए भी मान्य हैं।

पं० गिरधर जी का एक प्रश्न यह था कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, इसका क्या प्रमाण है? यह कैसे माना जावे कि ज्ञान विज्ञान का मूल वेद है?

पं० लेखराम जी ने इसका उत्तर देते हुए कहा कि छः दर्शनों, आयुर्वेद, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष आदि ग्रन्थों के लेखक सब ऋषि-मुनि-विद्वान् यह स्वीकार करते है कि ये सब विद्याएँ वेद से ली गई हैं। इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता है? फिर भी यदि आपको कोई शङ्का है तो आप संस्कृत का कुछ अध्ययन करके आर्य ग्रन्थों का अध्ययन कीजिए। आपकी सब शङ्काएँ दूर हो जावेगी। इसी बात को स्पष्ट करने के लिए श्री पण्डित जी ने वेद आदि शास्त्रों से गणित, ज्योतिष, रसायण व अध्यात्म विद्या के गूढ़ रहस्यों के कई प्रमाण दिये।[2]

आश्चर्य इस बात का है कि जो व्यक्ति आरम्भ में केवल उर्दू, फारसी, अरबी व गुरुमुखी ही जानता था उसने वेद, दर्शनों, स्मृतियों,

१. देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ ५, दिनाक ८-२-१८६० ई०।
२. देखिए 'आर्य गजट', पृष्ठ ६-७, दिनाक १-३-१८६० ई०।

महाभाष्य आदि के इतने प्रमाण कैसे कण्ठ कर लिए। यह सब उस धर्मवीर की लग्न का चमत्कार था।

और वे विचलित न हुए

श्री पण्डित जी ने 'ट्रिब्यून' पत्रिका को लिखा कि सब उर्दू पत्रों में यह जो सूचना प्रकाशित हुई है कि बम्बई के सभी मुसलमानों ने 'तक- जीबे ब्राहीने अहमदिया' के प्रकाशन पर उन पर अभियोग चलाने की धमकी दी है, सर्वथा गप्प है। दुर्भाग्य की बात है कि हिन्दू पत्रों ने भी यह झूठा समाचार छाप दिया। पण्डित जी कई पत्रों में यह गप्प छपने पर भी विचलित न हुए। उनका मनोबल, आत्मबल वन्दनीय व अनुकरणी है।[1]

पण्डित जी का जलालपुर शास्त्रार्थ

जुलाई १८९० ई० में जलालपुर[2] में एक पौराणिक पण्डित श्री प्रीतमदेव आए। धर्म सभा में ठहरे। वहाँ उनके व्याख्यान सुनने कुछ आर्य सभासद् भी जाते थे। १६ जुलाई को धर्म सभा ने आर्यसमाज को पत्र लिखा कि यदि आप शास्त्रार्थ करना चाहें तो अपने पण्डित को बुलवा लें। आर्यसमाज ने १७ जुलाई को उत्तर दिया कि हम मूर्त्तिपूजा आदि विषयों पर शास्त्रार्थ करने को तैयार है आप अपने पण्डित से पूछकर बतायें कि वह वेद-संहिता के आधार पर शास्त्रार्थ करने को तैयार है अथवा नही ?

श्री प्रीतमदेव का लिखित उत्तर आया कि मैं वेद को स्वतः प्रमाण मानता हूँ परन्तु वेदमन्त्रो का अर्थ ब्राह्मण ग्रन्थों व वेदांगों के आधार पर किया जावेगा। मूर्त्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, ईश्वर का अवतार व नदी-नाला आदि तीर्थ हैं वा नहीं इन विषयों पर शास्त्रार्थ होगा। बाद में वह इस पत्र से इनकारी हो गये। शास्त्रार्थ के स्थान व नियमों के विषय में सहमति न हो सकी। आर्यसमाज ने लिखकर भेजा कि आप अपने साथियों सहित समाज मन्दिर में आ जावें हम आपके सम्मान व शान्ति-व्यवस्था के लिए उत्तरदायित्व लेते हैं। आर्यसमाज

---

१. देखिए वही, पृष्ठ ८, दिनाक ८ मई सन् १८९० ई०।

२ यह जलालपुर कहाँ था यह पता नही चल सका। गुजराँवाला के निकट कोई कस्बा था। सम्भव है जलालपुर भट्टियाँ हो। वहाँ अच्छा आर्यसमाज था। जलालपुर जट्टाँ तो यह था नही।

ने यह भी लिखकर भेजा कि आर्यसमाज मन्दिर में न आना चाहें तो धर्मशाला महन्तां (शीश महल) में पधारिए ताकि शास्त्रार्थ के नियम निश्चित किए जावें।

जब इस पत्र का कोई उत्तर न आया तो आर्यसमाज ने आर्यसमाज मन्दिर में प्रीतमदेव जी के व्याख्यानों के खण्डन के लिए व्याख्यानों का क्रम चला दिया। इन भाषणों के प्रभाव से लाला जगन्नाथ, शिवरामदत्त, देवीदयाल व अमींचन्द—ये चार सज्जन मूर्तिपूजा आदि तजकर आर्यसमाज में प्रविष्ट हुए। किसी प्रकार से उन्हें शास्त्रार्थ करने के लिए मना लिया गया और उन्होंने ही मध्यस्थता के लिए आर्यसमाज पेशावर के सदस्य हरिकिशन जी का नाम सुझाया। इस पर धर्म सभा के प्रधान लाला सुखदयाल जी क्रुद्ध हो गये कि हम अपने से छोटों से बात ही नहीं करते। आर्यसमाज में सभी युवक थे। धर्मसभा की जय बुलाते हुए अपशब्द बोलते हुए वे चले गये। प्रीतमदेव जी ने यह मान लिया कि आप पहले अपना पण्डित लावें फिर नियम निश्चित कर लेंगे।

श्री रामशरण जी उपमन्त्री आर्यसमाज गुजरांवाला में किसी विद्वान् को लेने गये। वहाँ कोई विद्वान् न मिला तो लग्न के धनी यह युवक लाहौर में मास्टर हंसराज जी[1] के पास पहुँचे कि पं० लेखराम जी महाराज को भेजिए। श्री हंसराज जी ने पं० लेखराम जी को रामशरण जी के साथ भेजा।

श्री पं० लेखराम जी पधारे

अब पुलिस के थानेदार गुरांदित्तामल जी की देखरेख में लोगों के बैठने की व्यवस्था की गई। नियम निर्धारित करने के लिए विपक्ष को बुलाया गया। अब पं० लेखराम जी के आने पर प्रीतमदेव जी टालमटोल करने लगे परन्तु श्री प० लेखराम जी ने प्रीतमदेव जी को भागने का अवसर ही न दिया। आप द्वारा प्रस्तावित मध्यस्थ हरिकिशन जी हमें स्वीकार हैं, ऐसा पं० लेखराम जी ने कहा। अन्ततः अपनी धर्म सभा द्वारा लिखे गए कागज पर प्रीतमदेव जी ने हस्ताक्षर

१ श्री महात्मा हंसराज जी की ओर संकेत है। वे लम्बे समय तक मास्टर हंसराज कहे जाते थे। 'सन्ध्या पर व्याख्यान' पुस्तक के विज्ञापन में मास्टर हंसराज ही छपा करता था।

करके आर्यों को भेजे। धर्मवीर लेखराम जी ने भी उस पर हस्ताक्षर करके थानेदार जी को दे दिया।

अगले दिन २३ जुलाई को प्रातः आठ बजे न्यायालय के निकट नियम निश्चित करने के लिए प्रीतमदेव जी आए तो कुछ कटुता लाकर उन्होंने शास्त्रार्थ से बचना चाहा। अब वादी व प्रतिवादी कौन है ? इसी पर प्रीतमदेव जी ने झगड़ा खड़ा कर दिया। वह कहते थे कि मैं पहले मूर्त्तिपूजा के पक्ष में प्रमाण न दूँगा। पं० लेखराम जी का कथन सरल था कि पहले आपका चैलेज है अतः आप ही पहले स्वपक्ष का मण्डन करेंगे और आर्यसमाज मूर्त्तिपूजा का खण्डन करेगा।

फिर दोनों के परामर्श से क्षेत्र के दो प्रतिष्ठित सज्जन चौधरी सुलतान अली साहिब जैलदार जलालपुर और चौधरी शहामद खाँ साहिब जैलदार ठठामूसा निर्णायक नियत किए गये कि वे दोनों विद्वानों के तर्क सुनकर निर्णय देंगे कि वादी कौन है तथा प्रतिवादी कौन है ? अविलम्ब पं० लेखराम जी ने अपनी बात के समर्थन में आठ युक्तियाँ दीं और प्रीतमदेव जी ने एक भी पंक्ति लिखकर न दी। अब प्रीतमदेव जी ने हठ किया कि प० लेखराम जी का लिखा पत्र उन्हे सुनाया जावे ताकि वह उनके तर्को का उत्तर दे सकें।

श्री प्रीतमदेव जी का हठ देखकर दोनों जैलदार भी उठकर चले गये। अब सब पर स्पष्ट था कि पं० लेखराम जी के सामने खड़ा होना व शास्त्रार्थ करना धर्म सभा व उसके विद्वान् वक्ता के बस की बात न थी। अब कुछ धर्मप्रेमी सज्जनों ने कहा कि प्रीतमदेव जी पहले मूर्त्तिपूजा का मण्डन करें फिर पं० लेखराम जी उनका खण्डन करें। यही बात पं० लेखराम जी ने आते ही कही थी। आर्य भाइयों ने कहा कि बोलने का समय भी तो निश्चित करो। इस पर निर्णय हुआ कि दोनों विद्वान् आध-आध घण्टा बोलेंगे। साढ़े ग्यारह बजे शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ।

श्री प्रीतमदेव जी ने सर्वप्रथम वेद की यह ऋचा बोलकर मूर्त्ति-पूजा सिद्ध करने का प्रयास किया—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भ इत्येष मा मा हि ँसीदित्येषा यस्मान्नजात इत्येषः॥[1]

---

१. द्रष्टव्य यजुर्वेद ३२-३।

हिरण्यगर्भ का अर्थ आपने सोने का अण्डा किया। पण्डित प्रीतम जी ने कोई प्रमाण दिये बिना एक और मन्त्र भी बोला। अथर्ववेद के मन्त्र १२-१-४८ से वराह अवतार का होना सिद्ध किया। इसके लिए युक्ति यह दी कि जैसे धरती के खोदने से जल अपने आप निकलता है ऐसे ही परमेश्वर अवतार धारण करता है। यह भी कहा कि परमेश्वर दैत्यों के मारने के लिए अवतार लेता है। यदि आप ऐसा नहीं मानते फिर तो मूर्त्तिपूजा सिद्ध ही नही हो सकती।

फिर ऋग्वेद मण्डल ६, सूक्त ४७ का १८ मन्त्र **'रूपं रूपं प्रति रूपोवभूव, तदस्य रूपं प्रति चक्षणाय।'**[1] प्रस्तुत किया और कोई प्रमाण नही दिया। यह युक्ति भी दी कि परमेश्वर सर्वव्यापक होने से पत्थर भी परमेश्वर है। पत्थर का पत्थरपना एक पृथक् बात है। फिर ऋग्वेद मन्त्र ८-५९-८ तथा यजुर्वेद ३-६० से परमेश्वर की तीन आँखें सिद्ध करने का यत्न किया और तीन-चार मन्त्रों की केवल मन्त्र संख्या व अता-पता ही सुनाया। इतने में आधा घण्टा समाप्त हो गया।

श्री पं० लेखराम जी—आपने सर्वप्रथम ईश्वर तथा मूर्त्ति शब्दों की व्याख्या की फिर **'न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।……'** वाले मन्त्र का अर्थ करके सुनाया। आपने कहा 'नतस्य' एक शब्द नहीं प्रत्युत्त न पृथक् है और तस्य पृथक् है। पण्डित जी ने कहा जैसे 'तस्य' के लिए हिन्दी उर्दू में उसका है इसी प्रकार तस्य के विपरीत 'यस्य' है। इसका अर्थ है जिसका। 'महद्यशः' की व्याख्या के लिए इस अध्याय के मन्त्र १, २ व ४ उद्धृत किए। पण्डित जी नें बडे स्पष्ट शब्दों में कहा 'तस्य' उस परमेश्वर की मूर्त्ति नही जिसका नाम के 'महद्यशः' है।

इसके पश्चात् पं० प्रीतमदेव जी द्वारा रखे गये चार-पाँच मन्त्रों के अर्थो का खण्डन करके उनके यथार्थ भाव को रखा तथा मूर्त्तिपूजा के खण्डन में आठ-दस मन्त्र और सुनाए। दस अकाट्य युक्तियों से भी मूर्त्तिपूजा का खण्डन किया। आपने सिद्ध किया कि मूर्त्तिपूजा किसी भी दृष्टि से वैदिक नहीं है। प्रत्युत् अनुचित है। पण्डित जी ने यह भी सिद्ध किया कि ईश्वर का अवतार नहीं हो सकता। श्रोताओं में से धर्म सभा के कुछ एक पक्षपाती सदस्यों को छोड़कर सभी जन धर्मवीर लेखराम जी को बडे ध्यान से सुनते रहे। ये पक्षपाती लोग

१. शास्त्रार्थ के वृत्तान्त में इस मन्त्र का पता अशुद्ध छप गया था।

कभी-कभी शोर भी करते थे। अन्त को आर्य लोग भक्तिभाव से ईश्वर के भजन गाते हुए बाजार में से निकले।

फिर सायंकाल को शास्त्रार्थ हुआ। पाँच बजे कार्यवाही आरम्भ हुई। सरदार हजूरासिह प्रधान नगरपालिका जलालपुर व दीवान गुराँदित्तामल थानेदार व्यवस्थापिक नियत किए गये। सर्वप्रथम श्री पं० प्रीतमदेव जी ने मूर्त्तिपूजा के मण्डन में व्याख्यान दिया। जो कुछ प्रातःकाल कहा था उसी को दोहरा दिया। पीसे हुए को पीसने वाली बात कर दिखाई।

श्री बाबा नानकदेव जी महाराज के दो-तीन शब्द और अधिक सुना दिये। 'नतस्य' शब्द के बारे में भी कहा कि व्याकरण की दृष्टि से यह शब्द ऐसा नही, ऐसा है। जो मेरी युक्ति का खण्डन कर दिखाएगा उसको मैं इतना धन दूँगा कि वह सारी आयु खाता रहे। इतने में पण्डित जी महोदय का समय समाप्त हो गया।

श्री पं० लेखराम जी—आपने मूर्त्तिपूजा के खण्डन पर व्याख्यान देते हुए प्रीतमदेव जी के 'न तस्य' शब्द के सम्बन्ध में व्याकरण के प्रश्न का उत्तर देते हुए आपने यजुर्वेद की दो संहिताएँ प्रस्तुत करते हुए कहा, दिखाओ यहाँ 'त' पर स्वर कहाँ है ? एक संहिता बम्बई से प्रकाशित थी और दूसरी प्रयाग से। अब पं० श्री लेखराम जी ने कहा कि आपके पास वेद है तो उसमे भी स्वर न होगा। है तो दिखाएँ। बार-बार माँगने पर भी प्रीतमदेव जी अपने पास से वेद न दिखा सके।

पं० प्रीतमदेव जी ने जो यह कहा कि अग्नि, चन्द्र, सूर्य मिलकर सब परमेश्वर ही है। इसके उत्तर में पण्डित लेखराम जी ने यह कहा कि ऋग्वेद के कई मन्त्रों में सूर्य, चन्द्र, तारागण, जल, अग्नि आदि सबको ईश्वर द्वारा रचा कहा गया है। श्री पण्डित जी ने तीन मन्त्र प्रस्तुत करते हुए कहा कि जब इन सबको ईश्वर ने रचा है तो यह ईश्वर की रचना है स्वयं ईश्वर नहीं हो सकते। ये तो जड़ हैं हाँ, दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण ऐसे नाम ईश्वर के भी हैं परन्तु ये जड़ पदार्थ परमेश्वर नहीं हैं फिर अथर्ववेद के उस मन्त्र का अर्थ किया जिसमें वह बराह का अवतार होना बतलाते थे। इन चार-पाँच मन्त्रों में स्पष्ट रूप में परमेश्वर को पृथ्वी, सिंह, मृग, भेड़, चींटी, मनुष्य व अन्य पशु-पक्षियों को पैदा करने वाला कहा है। इसमें एक शब्द भी

ऐसा नहीं जिससे यह पता चले कि वराह अवतार धारण करता है। इसके पश्चात् उन मन्त्रों का भी ठीक-ठीक अर्थ सुनाया जिन्हें वावन आदि के अवतार के पक्ष में प्रस्तुत किया गया था।

फिर हिरण्यगर्भ का अर्थ जो सोने का अण्डा किया था उसका प्रतिवाद किया। संस्कृत व्याकरण से आपने यह सिद्ध किया कि इसका अर्थ है जिसके आश्रय सब प्रकाश युक्त लोक है उसको हिरण्यगर्भ कहते है। यह किसी अण्डे का नाम नहीं। शतपथ का एक प्रमाण पं० लेखराम जी ने अपने कथन की पुष्टि में दिया।[1]

आपने श्री बाबा नानकदेव जी के मूर्त्तिपूजा के खण्डन में १५ शब्द प्रस्तुत किये। अब समय समाप्त हो गया।

प्रबन्धकों ने दोनों विद्वानों को वार्तालाप के लिए पन्द्रह-पन्द्रह मिनट और दिये।

श्री प्रीतमदेव जी ने भाषण दिया परन्तु पं० लेखराम जी की किसी युक्ति का ठीक-ठीक उत्तर न दे पाए। 'न तस्य' के स्वर के सम्बन्ध में एक शब्द भी न कहा। गुरु नानक जी के कुछ शब्द अवश्य सुनाए जिनका अर्थ यह बताया कि यह सारा जगत् ही ब्रह्म है। पन्द्रह मिण्ट समाप्त होने पर उन्हें रोका गया परन्तु वह रुके नहीं। इस पर उनके समर्थकों के आग्रह पर उन्हें सात मिनट और दिये गये फिर आठ मिण्ट और दिये गये। इस प्रकार वह आध घण्टा तक बोले।

अब पं० लेखराम जी की बारी थी। पण्डित जी के खड़े होते ही प्रीतम देव जी उठकर चल पड़े। उनके कुछ साथी भी चल दिये। कुछ एक ने ताली बजाकर शोर किया। धर्म सभा के मन्त्री श्री ला० अमीर चन्द जी अपने पण्डित की इस कुचेष्टा से रुष्ट भी हुए और धर्मशाला महन्त में प्रीतम देव जी के इकदम चले आने पर बड़े कठोर शब्दों में रोष व्यक्त किया।

अब आर्यों का एक बहुत बड़ा दल भजन गाते हुए आर्यसमाज के मन्दिर में पहुँचा। यहाँ आकर आर्य पण्डित श्री नन्दलाल जी ने पहले पन्द्रह मिनट तक संस्कृत में मूर्ति पूजा का खण्डन किया फिर इस व्याख्यान का आर्य भाषा में भाव सुनाया। यह समयानुसार

---

१. 'रूप रूप' वेद मन्त्र मे मूर्त्ति या मूर्ति पूजा का पर्याय एक भी शब्द नहीं है। न ही इस में परमेश्वर की मूर्ति बनाओ ऐसा कोई ईश्वरीय आदेश है।

एक समुचित व्याख्यान था। पं० नन्दलाल जी ने देश की सामान्य अवस्था, वर्तमान मे ब्राह्मणों के कर्मों पर प्रकाश डाला। आपने कहा कि चारों वेदों में इन्हें खीर पूरी ही दिखाई देती है, यह बड़े दुर्भाग्य की बात है।

अब पं० लेखराम जी ने गत दो दिनों का वृत्तान्त संक्षेप में सुनाया व मूर्त्ति पूजा के खण्डन पर फिर भाषण दिया। ईश्वर अवतार नहीं लेता—यह युक्ति व प्रमाणों से सिद्ध किया।[1]

जलालपुर शास्त्रार्थ के पश्चात् नया शास्त्रार्थ

श्री पं० नन्दलाल जी अगले दिन २४ जुलाई को गुजरात चले गये। श्री पं० लेखराम जी ने सायं पाँच बजे आर्यसमाज मन्दिर में मूर्त्ति पूजा के खण्डन तथा आर्य धर्म की सच्चाई पर एक अत्यन्त ओजस्वी व प्रेरणाप्रद व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान की समाप्ति पर श्री हज़ूरी मल पटवारी ने जीव व ब्रह्म की एकता पर कुछ प्रश्न किये। पण्डित जी ने इन प्रश्नो का समुचित उत्तर दिया। पं० लेखराम जी ने सब लोगो को सम्बोधित करते हुए कहा कि जिसको भी वैदिक धर्म के सम्बन्ध में कुछ पूछना हो, वह प्रश्न कर सकता है। किसी भी व्यक्ति ने कोई प्रश्न न किया।

उसी समय लाला गंगाराम जी, ला० नानक चन्द जी व लाला रामचन्द जी वर्मा ने आर्यसमाज की सदस्यता के लिए प्रार्थना पत्र दिये।

२५ जुलाई को डा० सावनमल जी सभासद आर्यसमाज का श्री पं० लक्ष्मणदास जी से यह विवाद हो गया कि सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ५२७ पर[2] जो लिखा है कि अक्रूर सूर्योदय से मथुरा से चलकर सूर्यास्त के समय गोकुल मे पहुँचा। जो रथ यात्रा के लिए था वह वायु के वेग के समान दौड़ने वाला लिखा है जबकि पूरे दिन की यात्रा की दूरी मात्र चार मील की थी। पण्डित लछमन दास का कहना था कि सूर्योदय से चलकर सूर्यास्त तक पहुँचना भागवत मे नही लिखा है तथा डा०

१, देखिए आर्य गजट, पृष्ठ ५-७, दिनांक १५-८-१८९० ई०।

२ हमने यह पृष्ठ सख्या प० युधिष्ठिर जी मीमासक द्वारा सम्पादित सत्यार्थ-प्रकाशः के शताब्दी संस्करण की दी है।

सावनमल कहता था कि है। क्योंकि डा० सावनमल आर्यसमाज का सदस्य है और सत्यार्थप्रकाश आर्य धर्म का एक प्रामाणिक ग्रन्थ है इस कारण डा० सावनमल की प्रार्थना पर पं० नन्दलाल जी गुजरात से[1] बुलाए गये और २६ जुलाई सन् १८९० ई० को प्रातः आठ बजे इसके निर्णय का समय नियत किया गया।

ठीक समय पर आर्य लोग धर्मशाला महन्तां में पहुँच गये परन्तु पं० लछनदास अपने सहयोगियो सहित दस बजे पहुँचे। प० लछनदास जी तो पं० नन्दलाल जी का सामना न कर सके और प० प्रीतमदेव प्रमाण के लिए आगे बढ़े। आरम्भ में श्री पं० नन्दलाल जी संस्कृत में बोलने लगे जिससे दोनों पौराणिक पण्डित घबरा गये। पं० प्रीतम देव तो भागने ही वाले थे कि वहाँ उपस्थित अधिकांश लोगो ने (जो उनके सहायक थे) निर्णय दिया कि शास्त्रार्थ भाषा में हो। श्रीयुत पं० नन्दलाल जी ने वे तीनों बातें भागवत के स्कध १० अध्याय ३८ श्लोक २४ तथा अध्याय ३९ श्लोक ३८ से सिद्ध कीं जिससे प्रीतमदेव जी ने अपने शास्त्रार्थ का पहलू बदल लिया और कहा कि **'रथेन वायुवेगन जगाम गोकुलं प्रति।'**

यह श्लोक जिसको स्वामी जी ने भागवत का लिखा है, पं० नन्दलाल जी ने भागवत से नही निकाला।

इस पर श्री पं० नन्दलाल जी ने उत्तर दिया कि यह श्लोक भागवत का नही है प्रत्युक्त प्रतीत होता है कि पण्डित जी भाषा का अर्थ नहीं समझते क्योंकि स्वामी जी ने लिखा है कि **"पूतना और अक्रूरजी के विषय में देखो"**[2] जिससे स्पष्ट पता चलता है कि संस्कृत वाक्य भागवत के दो तीन अध्यायों का अक्रूरजी के सम्बन्ध में सार है। स्वामी जी ने यह कहाँ लिखा है कि यह श्लोक भागवत का है जब कि अल्प बुद्धि वाला भी समझ सकता है कि इस सारे कथन का भाव भागवत से लिया गया है अन्यथा यदि यह भाषा भागवत् की होती तो स्वामी जी अवश्य लिख देते कि यह भाषा अथवा श्लोक

---

१. यह पं० नन्दलाल बहुत बड़े संस्कृतज्ञ थे। गुजरात में संस्कृत अध्यापक थे।
२. इस शीर्षक के नीचे ऋषि जी ने "वायु के वेग के समान दौडने वाले घोड़ों के रथ पर बैठकर सूर्योदय से चले और चार मील गोकुल में सूर्यास्त समय पहुँचे" यह वाक्य लिखा है।

भागवत् का है जैसा कि सारे सत्यार्थप्रकाश की शैली है और यदि ऐसा करते तो सौ दो सौ श्लोक का लिखना केवल कागज काले करनेवाली बात होती। इससे लाभ कुछ न होता अतः स्वामी जी ने केवल आपत्ति की है इसके उत्तर में सामान्य पौराणिक भाइयों ने भाव न समझकर केवल मतांधता से ताली बजा दी तथा व्यवस्थापकों ने झगड़े के भय से सभा विसर्जित कर दी।[1]

आर्यसमाज के सभासदों ने किसी प्रकार की कोई अशिष्टता न की और भजन गाते हुए १२½ बजे के लगभग आर्यसमाज मन्दिर में पहुँचे। यहाँ आकर उसी प्रकार जवाबी लैकचर अथवा शास्त्रार्थ के लिए धर्म सभा के मन्त्री को दो तीन पत्र लिखे गये।

२६ जुलाई को सायंकाल सत्यार्थप्रकाशः के मण्डन व पोपलीला के खण्डन में प० लेखराम जी ने एक प्रभावशाली भाषण दिया तथा बाबू जगन्नाथ ने रावलपिण्डी आर्यसमाज तथा धर्म सभा की कार्यवाही सुनाई। वहाँ प० प्रीतमदेव ने चतुराई से अपनी जान बचाई थी। सारी जनता को उस घटना से अवगत करवाया गया।

रविवार २७ जुलाई प्रातः आर्यसमाज का साप्ताहिक सत्संग हुआ तथा १२ बजे दिन के ला० ठाकुरदास मन्त्री, ला० गणेशदास वर्मा तथा ला० रामशरण उप मन्त्री आर्यसमाज मिलकर ला० सुखदयाल प्रधान धर्म सभा की दूकान पर गये। वहाँ जाने का प्रयोजन यह था कि किसी प्रकार सत्य असत्य के निर्णय के लिए शास्त्रार्थ किया जावे। पहले दिन अशिक्षित लोगों ने सामान्य परन्तु विद्वत्तापूर्ण बात का विपरीत अर्थ समझा।

तब भी आर्यसमाज के सुछ सभासदो ने कहा था कि हम आर्यसमाज के सब सभासद २५-२५ रुपये उस व्यक्ति को पुरस्कार देंगे जो 'यह दिखलावे कि सत्यार्थप्रकाशः में यह लिखा है कि'—

'रथेनवेगन जगाम गोकुलं प्रति'

यह भागवत का श्लोक है। सत्यार्थप्रकाशः से ऐसा दिखाना वैसी ही बात है जैसा पश्चिम से सूर्योदय का होना। अतः ये महानुभाव इसी सद्भावना से धर्म सभा के प्रधान जी के पास गये ताकि मूर्त्ति पूजा

---

१. भागवत् मे 'रथेन वायुवेगन' ये शब्द १०-३६-३८ तथा 'जगाम गोकुलं प्रति' ये शब्द १०-३८-२४ मे स्पष्ट दिये हुए है।

आदि विषयों पर शास्त्रार्थ करवाया जा सके। उन्होंने कहा कि यदि किसी वेद मन्त्र के अर्थो पर विवाद होगा तो महीधर के वेद भाष्य का अर्थ प्रामाणिक माना जावेगा।

इस पर आर्यो ने कहा कि ऐसा कदापि नहीं हो सकता। ऐसे लच्चर, भद्दे और अश्लील भाष्य को हम कदापि प्रामाणिक नहीं मान सकते। मतभेद की अवस्था में शतपथ, निरुक्त, अष्टाध्यायी अदि आर्ष ग्रन्थों का प्रमाण निर्णयक होगा। पौराणिक पक्ष का यही हठ था कि वेद मन्त्रों के अर्थों पर मतभेद होने की अवस्था मे हम केवल महीधर के वेद भाष्य को ही अन्तिम प्रमाण मानेंगे।

वहाँ पर आर्यसमाज के परमोत्साही सभासद श्री जगन्नाथ जी ने सब लोगों को ऊँचे स्वर से सम्बोधित करते हुए यह घोषणा की कि जो कोई भी अक्रूर जी के विषय के सम्बन्ध में सत्यार्थप्रकाश: के पाठ में कोई भूल व दोष दिखावे तो मैं उसको अभी यह राशि पुरस्कार स्वरूप देता हूँ। परन्तु किसी में भी इतना साहस न हुआ कि इस चुनौती को स्वीकार करे। २८ जुलाई को प्रीतमदेव जी अपना धन सग्रह करके सायं को चल दिये। हिन्दुओं की ओर से कई आर्यो को बिरादरी से बहिष्कृत करने की धमकी दी गई परन्तु सभी को सद्धर्म पर अरूढ रहने की ऐसी प्रेरणा मिली कि कोई भी विचलित न हुआ। आठ नये भाई आर्यसमाज के सभासद बने। बुद्धिमान लोग समझ गये कि पौराणिक पक्ष थोथा, नि:सार व वेद विरुद्ध है।[1]

गुजरात की एक पुरानी घटना

ऊपर जिस शास्त्रार्थ का वृत्तान्त दिया है इससे दो वर्ष पूर्व सन् १८८८ ई० में श्री पं० लेखराम जी भाई जगत्सिह जी के साथ गुजरात पधारे। पं० लेखराम जी का व्याख्यान उस स्थान पर हुआ जहाँ महर्षि दयानन्द के व्याख्यान हुए थे। इस नगर में सार्वजनिक सभाएं प्राय: इसी स्थान पर हुआ करती थी।

बहुत लोग आर्य पथिक को सुनने के लिए गये। श्रीयुत पण्डित जी के व्याख्यान का बहुत प्रभाव पड़ा। पण्डित जी अपने व्याख्यान की समाप्ति पर कहा करते थे कि जो आर्य बनना चाहें वे आर्य सभासदों की सूची में अपना नाम लिखवा लें। श्री पण्डित भक्तराम

१. द्रष्टव्य 'आर्य गजट', पृष्ठ ५-६ व ७ दिनाक २४ अगश्त १८९० ई०।

जो डिंगा निवासी नें भी पण्डित जी को सुना और अत्यन्त प्रभावित हुए। आपने खड़े होकर आर्य बनने की घोषणा कर दी।

भाई जगत्सिह जी ने देखा कि इस युवक के गले में तुलसी की कण्ठी है। भाई जी ने भक्तराम जी को इस माला से भी मुक्त होने के लिए कहा। वह कण्ठी भाई जी ने ही अपने हाथ से तोड़ी।

उन दिनो आर्यसमाज में प्रवेश करने वाले को यह भी घोषणा करनी पड़ती थी कि मांस-मदिरा आदि दुर्व्यसनों का परित्याग करता हूं। श्री भक्तराम जी ने भी खड़े होकर घोषणा की आज ही से मै मांस व सुरा का सेवन नही करूगा। एक धनी-मानी परिवार के इस युवक पर श्री पण्डित जी की वाणी का कितना गहरा प्रभाव पड़ा, इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस युवक ने एकदम कण्ठी-माला से भी छुट्टी पा ली और दुर्व्यसनों का परित्याग भी तत्काल कर दिया। विशुद्ध शाकाहारी बन गया और शेष सारा जीवन एक निष्ठावान् आर्य के रूप में बिताया। घोर पौराणिक कुल में जन्मे युवक में एकदम इतना परिवर्तन हो गया। यह कोई साधारण घटना नहीं हैं। स्मरण रहे कि श्री भक्तराम जी तब गुजरात में मैट्रिक में पढ़ते थे।[1]

सभी सभासदों ने यह व्रत लिया

आर्यसमाज नकोदर की स्थापना श्री पण्डित लेखराम जी द्वारा हुई थी, यह हम पीछे बता चुके है। इस शुभ अवसर पर आर्यसमाज जालधर छावनी के कुछ उत्साही सदस्य भी पण्डित जी के साथ नकोदर गये थे। २५ सज्जनों ने आर्यसमाज की सदस्यता स्वीकार की और सबने मांस-मदिरा से बचने का व्रत लिया। समाचार से यह तो पता चलता है कि सबने ऐसा व्रत लिया परन्तु इसका अर्थ यह नही हो सकता कि ये सब सभासद पहले मांसाहारी थे।

इसी अवसर पर पण्डित जी का दो ब्राह्मणों के साथ शास्त्रार्थ भी हुआ था। वे दोनों पण्डित जी की अकाट्य युक्तियों से प्रभावित हुए। उन्हें वैदिक धर्म की सच्चाई का निश्चय करवा दिया गया। शास्त्रार्थ किन विषयों पर हुआ, यह जानकारी नही मिली।[2]

---

१. 'मै कैसे आर्यसमाजी बना' उर्दू पुस्तक पृष्ठ ७४-७५।

२ 'आर्य गजट', पृष्ठ ७ दिनाक २४-६-१८६० ई० देखें।

'ऐसी दुष्प्रवृत्ति के लोग भी थे'

दुष्ट जन जहाँ श्री पण्डित जी को मौत की धमकियाँ दिया करते थे वहाँ उनके सम्बंध में अनाप-शनाप बकते हुए भ्रामक प्रचार भी किया करते थे। जनवरी १८९० ई० में लाला मलावामल जी लेखराम नगर (कादियाँ) वाले अमृतसर गये तो उन्हें वहाँ श्री पण्डित जी की मृत्यु का समाचार दिया गया। आपने जब आर्य गजट साप्ताहिक को लिखकर पण्डित जी के सम्बंध में पूछताछ की तो पता लगा कि पण्डित जी सुकुशल है और बनारस से बांकेपुर गये हुए हैं। इस प्रकार के उलट-पुलट ससाचार सुनकर भी धर्मवीर के मन में कभी किसी प्रकार का भय व शङ्का पैदा न हुई।[1]

रावण सीता का क्या लगता था ?

एक बार पेशावर में धार्मिक विषय पर वार्ता करते हुए एक मुसलमान ने छेड़छाड़ करते हुए व्यग्य से श्री पण्डित जी से कहा, "सीता रावण द्वारा बन्दी बनाई गई। रावण क्या सीता का बाप लगता था जो इतनी देर बन्दी रहने पर भी उसका सतीत्व बना रहा ?"

इस पर पण्डित जी को भी बड़ा जोश आया। झट से आपने भी मुसलमानी इतिहास की एक ऐसी घटना सुनाते हुए कहा "····· वह क्या उसका बाप लगता था ?"

इससे वह मुसलमान क्रोधित होकर बोला, "क्या आपको पता नही कि ऐसी बातों पर मुसलमान रक्तपात कर दिया करते है ?

पण्डित जी ने इसके उत्तर में कहा कि तुमने क्या मुझको इतना ही अधम, निर्लज्ज व स्वाभिमान रहित मनुष्य समझ रखा है कि तुम जो कुछ भी कहो मैं उसे सहन कर लूँ ? हम दूसरों के बड़ो का निरादर करने में कभी भी पहल नहीं करते परन्तु यदि कोई हमारे बड़ों का अपमान करे तो फिर हम भी किसी के सम्मान का ध्यान नहीं करते।[2] सच्च है कि संसार मे वही जी सकते है जो यथायोग्य व्यवहार करना जानते है।

---

१. देखिए, 'आर्य गजट', पृष्ठ ३, दिनाक १-२-१८९१ ई०।

२. देखिए, 'आर्य मुसाफ़िर', साप्ताहिक पृष्ठ दो पर प० विश्वनाथ जी का लेख दिनाक १८ मार्च १९३४ ई०।

वे स्वभाव से शान्त व गम्भीर भी थे

श्री पण्डित लेखराम जी के चाचा श्री गण्डाराम जी को पता चला कि युवक लेखराम आर्य समाजी बन गया है। यह सूचना पाकर वह बड़े क्रोधित हुए। रोष से कुछ पत्र भी भतीजे को लिखे। पत्र पाकर पण्डित जी चुप रहे, उत्तर न लिखा। मन में यही सोचा कि जब चाचा मिलेंगे तो बात करूँगा। चाचा के मन में रोष बढ़ता ही गया।

जब चाचा-भतीजा की भेंट हुई तो भतीजे ने अपनी मधुर वाणी व युक्तियों से चाचा जी को ऐसे प्रभावित किया कि श्री गण्डाराम जी का सारा क्रोध जाता रहा। वही चाचा जी जो भतीजे के आर्य-समाजी बनने पर इतने रुष्ट हो रहे थे आगे चलकर स्वयं एक विख्यात आर्य सेवक बने।[1]

निर्भीक मेधावी बालक लेखराम

श्री पण्डित विश्वनाथ जी सैदपुर (पण्डित जी के जन्म स्थान) में वेद प्रचार के लिए गये। वहा आपको महता गोपी नाथ जी सेवा निवृत्त थानेदार के दर्शन हुए। गोपीचन्द जी को पण्डित लेखराम जी का सहपाठी होने का गर्व प्राप्त था। महता गोपीनाथ जी ने बताया कि पण्डित जी अपनी कक्षा में प्रथम आते थे और मै (गोपीनाथ) द्वितीय स्थान पर रहता था। आपने बताया कि बालकाल में ही श्री पण्डित जी बड़े मेधावी व निर्भीक थे।

एक बार फारसी पढ़ाते हुए अध्यापक तुलसीदास जी ने निम्न पद पढ़ाया :—

राहे काबल खतरनाक अस्त,
आनांकि मेरवन्द सर बकफ मेरवन्द।

अध्यापक ने शिष्यों को इसका यह अर्थ करवाया :—"काबल का मार्ग खतरनाक है जो यात्री जाते हैं हाथ की हथेली टेक कर जाते है।'

यह सुनते ही पण्डित लेखराम जी झट से बोल उठे कि यह अर्थ ठीक नही है इसका अर्थ तो इस प्रकार से है :—

"काबल का मार्ग खतरनाक है जो पथिक जाते हैं वे सिर हथेली

---

१. 'आर्य मुसाफिर', साप्ताहिक पृष्ठ २, पर प० विश्वनाथजी का लेख, दिनाक १८ फरवरी, १९३४ ई०।

पर रखकर जाते हैं ।"

गुरु तुलसीदास जी शिष्य की योग्यता व साहस को देखकर चकित रह गये ।[1]

उन्हें वेद-वाणी पर ऐसी श्रद्धा थी

दिवगत श्री पण्डित घासीराम जी मेरठ वाले पण्डित जी के सम्बंध में अपना एक संस्मरण ऐसे लिखते है :—[2]

पंजाब में जब मांस भक्षण के प्रश्न को लेकर एक विवाद बड़ी उग्रता से चल रहा था, पण्डित लेखराम जी उन दिनों आगरा पधारे। पण्डित जी चारपाई पर बैठे हुए और आगरा कालेज के कुछ विद्यार्थी उनके पास बैठे हुए थे। पण्डित घासीराम जी भी तब आगरा में ही पढ़ते थे और वह भी इन विद्यार्थियों में से एक थे। पण्डित जी के साथ विभिन्न विषयों पर ये लोग बातें कर रहे थे।

बातचीत करते हुए घासीराम जी ने धर्मवीर से यह पूछ लिया, "मांस-भक्षण के पोषक यह कहते हैं कि वेदों में मांस खाने का विधान है।"

इतना सुनते ही पण्डित जी का मुख मन्यु से तमतमाने लगा। वे कड़ककर बोले, "जो ऐसा कहते है वे झूठ बोलते हैं।"

इस पर पण्डित घासीराम जी ने कहा, "कल्पना करो कि यदि वे यह सिद्ध कर दे कि वेदों में मांस भक्षण की आज्ञा है तो क्या आप मांस खाने लगेंगे ?"

पण्डित जी ने उत्तर देते हुए कहा, "यह असम्भव है परन्तु यदि कोई किसी प्रकार से इस समय मांस भक्षण का औचित्य सिद्ध कर दे तो मैं मांस खाने से तनिक भी संकोच नहीं करूंगा प्रत्युत्त इसी समय बाजार से मगवा कर मांस खाऊँगा।"

पण्डित लेखराम जी की वेद-वाणी पर ऐसी अडिग श्रद्धा थी कि मांस-भक्षण जैसे निकृष्ट कर्म को भी करने को तैयार थे यदि कोई ईश्वर की वाणी वेद से इसका औचित्य सिद्ध कर दिखावे परन्तु वेद से मांस-भक्षण के पक्ष मे प्रमाण खोजना व्यर्थ है। वेद में इसके विरोध में तो अनेक प्रमाण मिलते है।

---

१. देखिए 'आर्य मुसाफिर', साप्ताहिक पृष्ठ २, दिनाक १८-२-१९३४ ई०।

२. देखिए, वही, पृष्ठ ६, दिनांक १८-२-१९३४।

यहाँ यह बात स्मरणीय है कि १८९२ ई० में मूलराज रायबहादुर ने जब मांस-भक्षण का यह विवाद पैदा किया तो इससे एक वर्ष पूर्व १८९१ ई० में ही आर्य गजट में मांस भक्षण के विरोध में एक बहुत उत्तम लेखमाला प्रकाशित होती रही। आर्य गजट इस विवाद के पश्चात् कालेज पक्ष का मुख्य-पत्र रहा और मास भक्षण के कुछ पोषकों के कारण इस पक्ष को 'मांस पार्टी' नाम दिया गया परन्तु १८९२ ई० से पूर्व आर्य गजट में ही ऐसे सैकड़ों समाचार छपे मिलते है कि आर्यसमाज के प्रचार को सुनकर या आर्यसमाज में प्रवेश पाते हुए अमुक ने मांस-भक्षण छोड़ा, तमुक ने मांस-मदिरा छोड़ी। इतने व्यक्तियों ने दुर्व्यसन त्यागे, विशुद्ध शाकाहारी बने। इससे स्पष्ट है कि यह मांस का विवाद आर्यसमाज में फूट पैदा करने का एक सोचा-समझा षड्यन्त्र था।

पण्डित लेखराम जी के पुरुषार्थ से

डस्का जिला स्यालकोट (पजाब) में एक कूप गंगा के समान समझा जाता था। वहां नहाने वालों का मेला सा लगा रहता था। आर्य भाई भजन मण्डली बनाकर वहां प्रचार करने जाते। यह समाज बड़ा पुराना था। शिथिल हो गया। श्री पण्डित लेखराम जी जब-जब गुजरांवाला जाते, डस्का भी प्रचार करते। आपके पुरुषार्थ से यह समाज जीवित हो गया। आगे चलकर इस समाज ने ला० देवीदास व दीनानाथ जैसे सुयोग्य लेखक आर्यसमाज को दिये। आर्यगजट में छपा मिलता है कि यह समाज १८७८ ई० में स्थापित हुआ था। हमारे मत में यह अशुद्ध छपा है। यह समाज १८८८ ई० में बना होगा।[1]

ऋषि-जीवन की खोज—गुजरात में वेद प्रचार[2]

जनवरी सन् १८९३ ई० तक श्री पण्डित जी अहमदाबाद होते हुए टंकारा मौरवी आदि नगरों में ऋषि जीवन की खोज के लिए पहुचे। अहमदाबाद में एक गुजराती स्कूल मे श्री पण्डित लेखराम जी ने 'सनातन धर्म' पर एक व्याख्यान दिया।

श्री पण्डित जी ने यहाँ स्वामी नारायण मत वालों से भेंट की।

---

१ देखिए, 'आर्य गजट', पृष्ठ ७, दिनाक १५-४-१८९२ ई०।

२. देखिए, आर्य गजट', पृष्ठ ४-५, दिनांक २४-१-१८९३ ई०।

उनसे अपनी भेंट के सम्बन्ध में श्री पण्डित जी ने लिखा है :—

"यहां स्वामी नारायण मत वालों से मेरी मूर्त्ति पूजा पर चर्चा हुई परन्तु वे इसके अतिरिक्त कि यह उनके ग्रन्थ में लिखा है और कोई प्रमाण नही दे सकते। यह मत विक्रम सम्वत् १८५० के इधर एक व्यक्ति सहजानन्द ने चलाया है, जो अयोध्या के समीप के किसी ग्राम में रहता था और फिर साधु बनकर इस प्रदेश में आ गया। उसने व उसके चेलों ने उसको चतुर्भुज का अवतार प्रसिद्ध किया। इस भोले-भाले प्रदेश में उसका कुछ प्रचार हो गया। चेलों को लूट-लाट कर पर्याप्त साधन इन्होंने एकत्र कर लिये हैं।

हमारे उपदेशकों को जो गुजराती जानते हैं, उनको चाहिए कि वे इस प्रदेस में आवें और वैदिक धर्म का मण्डन और असत्य का खण्डन करें।"

फिर आगे लिखा है :—

"गोसाईंयों अर्थात् गृहस्थी सन्यासियों का बहुत प्राबल्य है। अत्यन्त भोले-भाले व झट विश्वास कर लेने वाले लोग है। प्रतिमा-पूजन में डूबे हुए हैं परमात्मा इन पर कृपा करें ताकि ये लोग सत्य मार्ग पर आवें।"

ठाकुर दीपसिंह जी से भेंट

बांकेनेर पहुंचकर पण्डित जी ने ऋषि-जीवन की खोज आरम्भ की। लोगों ने बताया था कि ठाकुर दीपसिंह जी से ऋषि जी से ऋषि के जन्म स्थान का अवश्य पता चलेगा परन्तु उनसे एतद्विषयक कोई विशेष जानकारी न मिली। ठाकुर जी को जो कुछ ज्ञात था, वह पण्डित जी को बता दिया परन्तु पण्डित जी की सन्तुष्टि न हुई। इससे स्पष्ट है कि पण्डित जी एक ऐसे सूझ-बूझ वाले गवेषक थे कि झट से किसी की बात को बिना जाँच-पड़ताल के सत्य नहीं मान लेते थे।

यह ठाकुर जी बॉकनेर के राजा के मामा थे। राजा की स्वल्प आयु होने के कारण तब वहाँ Resident (अंग्रेजी सरकार का प्रतिनिधि) ही प्रशासन चलाता था। ठाकुर दीपसिंह आर्यसमाजी विचार के थे। उनके पास ऋषि जी के कई ग्रन्थ थे। इनके धर्म भाव, स्वभाव व शिष्टाचार की पण्डित जी ने प्रशंसा की है।

पण्डित जी को बॉकनेर में पता चला कि करारा में एक बाई जी से ऋषि जी के बारे में कुछ पता चलेगा। पण्डित जी एक जोशी जी

को साथ लेकर बैलगाड़ी पर इस ग्राम में पहुँचे परन्तु कुछ भी जानकारी न मिली।

यहाँ एक पाखण्डी सिद्ध को कुछ सुधारा

"यहाँ एक पाखण्डी ब्रह्मचारी से जो धूप में पड़ा हुआ लोगों को जतला रहा था, बातचीत हुई। बातचीत करते समय पता चला कि वह वज्र मूर्ख है। मेरे समझाने से उठ खड़ा हुआ तथा जाकर भोजन बनाने की व्यवस्था की। ऐसे मूर्ख लोग, ऐसे मूर्ख गुजरातियों व काठियों को बहुत डराते व लूटते हैं। रात्रि को हम पुनः बाँकनेर लौट आए।

यहाँ कई लोगों से धर्म सम्बन्धी वार्ता हुई तथा दो-तीन के विचार आर्य भी हो गये।"

पण्डित जी की प्रचार की अद्‌भुत लग्न

श्री पण्डित जी की लग्न के बारे में हम क्या कहें और क्या न कहें। किसी भी लेखक की लेखनी में इतना सामर्थ्य नहीं है कि पण्डित लेखराम जी के धर्मानुराग, सत्यनिष्ठा व प्रचार की धुन को शब्दों में व्यक्त कर सके। श्रीयुत पण्डित जी बाँकनेर से रेल द्वारा मौरवी गये। जाते-जाते स्टेशन पर भी प्रचार में जुट गये। उन्हीं के शब्दों में पढ़िए :—"**रेलवे स्टेशन पर भी बहुत सी धर्म चर्चा होती रही।**"

ऐसे महामानव का गुणगान कोई कैसे करे ?
मौरवी का कुछ वृत्तान्त

श्री पण्डित जी की इस यात्रा का पूरा वृत्तान्त तो हमें मिला नही। जो कुछ मिला है वह उनके मौरवी पहुँचने तक है। जाते ही उनको अपने उद्देश्य में कोई विशेष सफलता न मिली। वे रात्रि आठ बजे रेल द्वारा मौरवी पहुँचे। रात्रि को वे एक धर्मशाला में ठहरे। अगले दिन भोजन करके नगर को गये। पण्डित जी श्री काशीराम जी एम० ए० मुख्याध्यापक मौरवी स्कूल से मिले। इन्होंने ही पण्डित जी का आतिथ्य किया। पण्डित जी यहाँ अनेक लोगों से मिले। पण्डित श्री शंकरलाल जी शास्त्री से भी आपने भेंट की। यह संस्कृत के

१. देखे, 'आर्य गजट', पृष्ठ ५, दिनांक २४-१-१८९३ ई०।

विद्वान् व संस्कृत तथा गुजराती में कई पुस्तकों के लेखक भी थे। इनसे कुछ सहायता मिली। धर्म सम्बन्धी विस्तृत चर्चा भी इनसे हुई। पण्डित जी ने राज्य के प्रबन्ध की तो प्रशसा की है परन्तु यह लिखा है कि स्वच्छता का यहाँ कोई ध्यान नहीं रखा जाता। बाजार अत्यन्त गन्दा। नदी में स्नान करो तो कीड़े शरीर को चिपट जाते हैं। पुल के नीचे वस्त्र धोने की व्यवस्था हो तो नदी में कीड़े इतना परेशान न करें। स्वच्छता व गन्दगी की इस चर्चा से यह स्पष्ट है कि श्री पण्डित जी को स्वच्छता से अत्यधिक प्रेम था। उन्हे अशुचिता किसी भी रूप में हो सर्वथा अप्रिय थी। वे अन्दर की हो या बाहर की सब प्रकार की गन्दगी से घोर घृणा करते थे।

अन्तिम दिनों का एक उत्सव

२५-२६-२७ दिसम्बर, १८९६ ई० को आर्यसमाज जालंधर का वार्षिकोत्सव सोत्साह मनाया गया। इस उत्सव पर श्री पण्डित जी भी आमंत्रित थे। इस शुभ अवसर पर २६ दिसम्बर को श्री पण्डित जी ने पवित्र वेद ज्ञान के प्रचार में बाधक तीन कारणों पर सविस्तार प्रकाश डाला। आपने बताया कि वेदो को समझने में अज्ञान एक बहुत बड़ी बाधा है अर्थात् अपनी अज्ञानता के कारण मानव जाति वेद से दूर-दूर है। अज्ञानता के कारण वेद विषय मे अनेक भ्रान्तियां हैं जिनका दूर होना बड़ा आवश्यक है।

दूसरा कारण यह है कि संस्कृत के नाटक आदि साहित्य जो अनार्ष काल में रचे गये, उनके कारण भी वेद के सम्बन्ध में भ्रान्तियां फैली हैं। ऐसा साहित्य भी वेद-प्रचार में बड़ा बाधक है।

पुराण तीसरा कारण है। पौराणिक विचारों ने बहुत वेद घात किया है। आज अनेक लोग पौराणिक कुरीतियों को ही वैदिक धर्म समझे बैठे हैं। पौराणिक बहु देवतावाद वेद के माथे ऐसा मढ़ा गया है कि लोग ईश्वर के वेदोक्त स्वरूप—ईश्वर एक है, सर्वव्यापक है, सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है, अजन्मा है, अमर है, नित्य है, पवित्र है और अनादि है—को सर्वथा भूल चुके हैं।

चौथा कारण यह है कि अवैदिक मत पंथों का पर्दा ऐसा आ गया है कि वेद का सद्ज्ञान मानव की दृष्टि से ओझल हो गया है। अपने व्याख्यान के अन्त में ओजस्वी वक्ता धर्मवीर पं० लेखराम जी ने आर्य

मात्र को प्रेरणा देते हुए कहा, "प्रत्येक पर्दे को सत्य के बल से हटाना हमारा मुख्य धर्म व कर्म होना चाहिए।" सांयकाल की कार्यवाही पूज्य पं० लेखराम जी के भाषण के साथ समाप्त हुई। पण्डित जी द्वारा बताये चारों पर्दों को उनके साहित्य के आधार पर हमने स्पष्ट किया है। व्याख्यान के वृत्तान्त में केवल ये चार पर्दे ही दिये है। इनका भाव छपा नहीं मिलता।[1]

सेवा धन के धनी से इतना लगाव

एक बार श्री पण्डित लेखराम जी गुजरात पधारे। वहाँ दो-तीन दिन प्रचार करके वजीराबाद चले गये। जब वे वजीराबाद जाने लगे तो सब सभासद उन्हें रेलवे स्टेशन पर विदाई देने के लिए जाने लगे। श्री पण्डित जी ने आग्रहपूर्वक सबको स्टेशन पर जाने से रोक दिया। सभासदों की हार्दिक इच्छा थी कि वे पूज्य पण्डित जी के साथ रेलवे स्टेशन तक जावें। जब आर्य भाइयों ने बहुत कहा सुना तो पण्डित जी ने केवल महाशय मूलराज जी चड्ढा को साथ चलने की अनुमति दी।

पण्डित जी ने मूलराज जी को स्टेशन तक साथ ले जाने की स्वीकृति क्यों दी? महाशय मूलराज जी उस क्षेत्र में अपने वैदिक धर्म-प्रेम के लिए बड़े प्रसिद्ध थे। आर्यसमाज के लिए उनकी तड़प अनुकरणीय थी। वह सेवा-धन के धनी थे। वह धन की दृष्टि से सम्पन्न नहीं थे परन्तु, ऋषि मिशन के प्रति प्रेम उनमें कूट-कूटकर भरा हुआ था, इसलिए पण्डित जी ने इस निर्धन परन्तु, सेवा धन के धनी आदर्श पुरुष को साथ ले जाने के लिए प्राथमिकता दी। जब धर्मवीर लेखराम ने कहा कि मैं मूलराज जी को साथ ले जाता हूँ तो किसी भी धनी-मानी पुरुष को इस चुनाव पर आपत्ति नहीं हुई। कारण सब जानते थे कि यह महाशय एक आदर्श आर्य हैं। पण्डित जी की ऐसी भद्र भावनाओं के कारण ही उनका आर्य जनता में इतना आदर था। जो विद्वान् व संन्यासी केवल सुविधाओं के लिए धनियो के व उनके बंगलों के चक्र काटते है जनसाधारण न उन्हें संन्यासी समझते हैं और न ही धर्मात्मा पुरुष। ऐसे लोग चन्दा चटोर तो हो सकते हैं प० लेखराम के मिशनरी नहीं।

यह घटना श्री महाशय शान्तिस्वरूप जी आर्य नगर खानेवाले ने

१. देखिए सद्धर्म प्रचारक-पृष्ठ ४-५ दिनाक १-१-१८९७ ई०।

६ मार्च सन् १९३८ को आर्य समाज बच्छोवाली लाहौर में पण्डित जी के बलिदान दिवस पर सुनाई। यह महाशय जी विद्यार्थी जीवन में पण्डित जी के सम्पर्क में आए और लाहौर व गुजरात में पण्डित जी को कई बार सुनने का इन्हें सौभाग्य प्राप्त रहा।[1]

उन्हें सबका ध्यान रहता था

आर्यसमाज शर्कपुर का प्रथम वार्षिकोत्सव था। पूज्य पण्डित जी श्री पं० शहजादानन्द जी तथा महाशय शान्तिस्वरूप जी लाहौर से इस उत्सव पर पधारे। उन दिनों में एक कच्ची सड़क रावी के बन बीच में से निकलकर जाती थी। ये तीनों सज्जन यक्का पर गये फिर रावी नदी को नौका द्वारा पार किया। इस यात्रा में श्री पण्डित जी पण्डित शहजानन्द जी को वृद्ध होने के कारण तथा शान्तिस्वरूप जी, को बालक होने के कारण सुविधाजनक स्थान पर बिठलाते थे। स्वयं तो कष्ट में भी प्रसन्न रहते थे परन्तु, दूसरों का बड़ा ध्यान करते थे।

यह घटना शान्तिस्वरूप जी ने लाहौर वाले व्याख्यान में सुनाई।[2]

उसे ऐसा धर्म रक्षक बना दिया

जम्मू आर्यसमाज के संस्थापकों में डा० जगन्नाथ जी भी एक थे। आपने ही महाराजा प्रताप सिंह को आर्यसमाज और सनातन धर्म का शास्त्रार्थ करवाने के लिए प्रेरित किया था। यह डा० जगन्नाथ आर्य धर्म से च्युत होने लगे थे। इनका मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी से पत्र व्यवहार था। श्री पं० लेखराम जी की कृपा से ही यह रत्न आर्य समाज को मिला था। न जाने ऐसे कितने व्यक्ति पण्डित जी के पुरुषार्थ से पतित होने से बच गये।[3]

जिस जम्मू राज्य में किसी आर्य का रहना व राज्य का कर्मचारी होना एक असम्भव-सी बात थी, वह कठिनाई ऐसे धर्मवीर के पुरुषार्थ से बहुत कुछ दूर हो गई परन्तु, इस डा० जगन्नाथ को धर्म सेवक बनाने वाले पं० लेखराम ही तो थे। यह घटना महाशय चिरंजी लाल जी प्रेम ने लाहौर में ६-३-१९३८ को अपने भाषण में सुनायी।

१. देखिए, 'आर्य मुसाफिर', साप्ताहिक पृष्ठ ८, दिनाक २७ मार्च, १९३८ ई०।
२. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफ़िर', पृष्ठ ८, दिनांक २७ मार्च, १९३८ ई०।
३. देखिए वही पृष्ठ ११, दिनाक २७ मार्च, १९३८ ई०।

मौलाना ने कहा आप सत्य कहते हैं

अमृतसर में मौलवी गुलाम अली नाम के एक बड़े प्रसिद्ध मुस्लिम विद्वान् थे। एक बार पण्डित लेखराम जी उन्हें मिलने गये। पता चला कि मौलाना मस्जिद में किसी को पढ़ा रहे हैं। पण्डित जी भी मस्जिद में चले गये। श्री गुलाम अली जी ने अपने शिष्य को पाठ पढ़ाते हुए कहा, "यशियाह नबी ने सायकाल होने के कारण सूर्य से कहा खड़ा रह मेरे कार्य की हानि होती है। सूर्य आज्ञा पाकर खड़ा रहा और अस्त न हुआ।"

यह सुनकर पण्डित जी ने कहा, आप तो एक फ़ाजिल आदमी हैं। उचित अनुचित को जानते हैं फिर इन बातों की आप कैसे शिक्षा देते है ? पहले तो मौलाना टालमटोल करते रहे फिर थोड़े समय के पश्चात् स्पष्ट स्वीकार किया कि यदि हम ऐसा न मानें तो लोग हमें काफ़िर मानेंगे। इससे पता चलता है कि हृदय से सब यह मानते हैं कि चमत्कारों में विश्वास अज्ञानता व मूर्खता है।[1]

१, देखिए 'कुलियात आर्य मुसाफ़िर', पृष्ठ ३४२।

"वे

आदर्श धर्म प्रचारक

थे।

उनकी आवश्यकता आज भी

विद्यमान है

और

वैदिक धर्म पुकार-पुकार कर

कह रहा है

लेखराम कहाँ हो?"

लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

'मृत्यु से जीवन मिले तो आरती उसकी उतारो'
धर्म की वेदी पर अद्भुत बलिदान

"१३ एवं १५ फरवरी १८९७ ई० के मध्य एक व्यक्ति ला० हंसराज जी के पास गया। फिर अगले दिन दयानन्द कालेज हाल में दिखाई दिया। वह पण्डित लेखराम जी की खोज में था। फिर पण्डित जी को जा मिला। उसने प्रकट किया कि वह पहले हिन्दू था। दो वर्ष पूर्व मुसलमान हो गया था। अब फिर अपने वास्तविक धर्म में आना चाहता है। आकृति निम्न प्रकार से थी।"[1]

नाटा, लगभग ५ फुट ५ इंच, काला रंग, मुख पर दाग छाई जो हड्डी गाल पर अधिक थे। नाक तनिक बैठी हुई थी। बोलते समय दो दाँत बाहर निकले हुए प्रतीत होते थे। आँखे छोटी, चेहरा गोल, गालें अन्दर को घुसी हुई। शरीर हल्का, सिर के बाल छोटे-छोटे, आयु लगभग २५ वर्ष, आकृति भयानक, देखने से बूचड़ प्रतीत होता था।

वह पण्डित जी के साथ छाया की भाँति रहने लगा। खाना भी प्राय: पण्डित जी के घर ही खाया करता था। यहाँ तक कि पण्डित जी प्रथम मार्च को मुलतान गये। पाँच मार्च को ईद का दिन था। घातक ने उसी दिन पण्डित जी के घर, रेलवे स्टेशन, आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में १८ या १९ चक्र लगाये। परन्तु पण्डित जी पाँच मार्च को मुलतान से न आ सके। इससे क्रूर का निश्चय ईद के दिन पण्डित जी को शहीद करने का था।

छ: मार्च को प्रात: ही पण्डित जी के घर पर जा पहुँचा। और फिर प्रतिनिधि सभा के कार्यालय से होता हुआ रेलवे स्टेशन पर गया। उस दिन पण्डित जी मुलतान से पधार चुके थे। घातक अपने प्राय: के व्यवहार विरुद्ध कम्बल ओढे हुए था। और बारम्बार थूकता था व काँप रहा था। पण्डित जी ने प्रश्न किया कि क्या ज्वर है ? उसने कहा कि हाँ साथ कुछ पीड़ा भी है। तब पण्डित जी उसे डॉ० बिशनदास जी

---

१. द्रष्टव्य, 'सद्धर्म प्रचारक', पृ० ३, मार्च १९, १८९७ ई०।

के पास ले गये। डॉ० जी ने कहा कि इसे ज्वर आदि तो कुछ नहीं, परन्तु रक्त में कुछ जोश है। डॉ० साहब ने प्लस्तर लगाने को कहा परन्तु उस छलिये ने इनकार कर दिया और कहा कि कोई पीने की औषधि दीजिए। तब पण्डित जी ने उसे डॉ० जी की अनुमति से शर्बत पिलाया। इसके पश्चात् पण्डित जी ने कुछ वस्त्र क्रय किया और घर को चले आए और वह आततायी भी साथ ही था। जिस घर में पण्डित जी काम करते थे वह बच्छोवाली लाहौर मे स्थित है।

पण्डित जी चारपाई पर जा बैठे और ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र के लिखने व क्रमबद्ध करने में लीन हो गये एवं क्रूर भी बायें ओर बैठ गया। इसी बीच ला० केदारनाथ जी थापर व ला० देवीदास जी भी आए और कुछ बातचीत करके चले गये। ठीक उस समय जब कि पण्डित जी ने महर्षि के जीवन के उस अन्तिम भाग को जिस समय कि उन्होने अपने जीवन को वैदिक धर्म के पथ पर बलिदान किया और कहा कि 'ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो' समाप्त किया और थकावट के कारण उठकर सात बजे सायं के समय अँगड़ाई ली। उस समय आततायी ने जो प्रातः से अवसर की घात में था इकदम उठकर पण्डित जी के पहलू में छुरा घोंप दिया। जिससे अन्तड़ियाँ बाहर निकल आईं। पण्डित जी ने एक हाथ से अन्तड़ियों को थामा और एक हाथ से छुरा छीन लिया। तब पण्डित जी की माता व पत्नी उसकी ओर दौड़ी। उस समय उस निर्दयी क्रूर ने पण्डित जी की वृद्धा माता को बेलना इस जोर से मारा कि वह अकस्मात् चोट लगने से अचेत होकर गिर पड़ीं। और वह अधर्मी घातक भाग गया।

पण्डित जी जब तक हस्पताल में जीवित रहे वेद मन्त्रों का पाठ करते रहे और अन्त में एक बजे रात्रि के लगभग अपनी मृत्यु इच्छा (Death will) कि 'आर्यसमाज मे लेखनी का कार्य बन्द न हो' व्यक्त की फिर आपका पवित्र आत्मा इस नश्वर देह का त्याग कर अमर पद को प्राप्त हुआ।"[१]

स्वामी दर्शनानन्द जी ने लिखा है कि पण्डित जी अलमारी से कोई पुस्तक लेने के लिए उठे थे कि घातक ने छुरा घोंप दिया।[२]

१. ९ मार्च १९८७ ई० के 'सद्धर्म प्रचारक' व ११ मार्च, १८९७ ई० के आर्य-गजट से 'दाफे ओहाम', पृष्ठ १७९-१८२ पर उद्धृत।

२. दाफे ओहाम, पृ० १८१।

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने लिखा :—

"१ मार्च को पण्डित लेखराम सभा की आज्ञानुसार मुलतान पहुँचे जहाँ ४ मार्च तक ४ व्याख्यान दिए। सभा ने सक्खर जाने के लिए तार भेजा परन्तु प्लेग के कारण मुलतान समाज के सभासदों ने वहाँ जाने से रोक लिया; उनको क्या पता था कि वे सदिग्ध कष्ट से बचाकर अपने वीर धर्मोपदेशक को सीधा मौत के मुँह में भेज रहे हैं। फिर पण्डित लेखराम मुजफरगढ़ के लिए तैयार हुए, परन्तु न जाने क्यों फिर सीधे लाहौर को लौट पडे जहाँ वह ६ मार्च को दोपहर को पहुँच गये।"[1]

स्वामी जी ने फिर लिखा है :—"एकदम से अभ्यस्त हाथ ने छुरी पेट के अन्दर घुसेड़ कर इस प्रकार घुमा दी कि आठ दस घाव अन्दर आए और अन्तड़ियाँ बाहर निकल पड़ीं।

परन्तु क्या आर्य पथिक इस निष्ठुर पिशाच के आक्रमण से विवश होकर गिर पड़े और अपनी चिल्लाहट से मोहल्ले को जगा दिया ? वहाँ न कोई हृदय बेधक आर्तनाद ही सुनाई दिया और न कोई चिल्लाहट की आवाज माता और धर्मपत्नी ने सुनी। यदि धर्मवीर में यह निर्बलता होती तो लोग दौड़ पड़ते और घातक उसी समय पकड़ा जाता। परन्तु वहाँ पतितों पर दया का भाव अभी तक स्थिर था जिसने घातक को स्पष्ट बचा दिया।"[2]

सिह घायल था। अन्तड़ियाँ बाहर निकल गई। एक आँत के तो कटकर दो टुकड़े हो चुके थे। आठ बड़े घाव थे और बहुत से छोटे घाव भी थे। परन्तु मुख पर दु:ख, शोक, व्याकुलता, मलीनता, उदासी का कोई चिह्न न था। घटना के पश्चात् जो लोग घटनास्थल पर पहुँचे उन्हे बड़े शान्त सरल ढंग से वीरोचित शब्दों मे कहा, "वही दुष्ट, जो शुद्ध होने आया था, मार गया।"

महात्मा मुशीराम उसी दिन अकस्मात् लाहौर पहुँच गये। कलेजा थाम कर हस्पताल को जा रही शहीद की शोभा यात्रा में सम्मिलित हो गये। इस वीर की अन्तड़ियाँ हाऊस सर्जन के हाथ में थीं तो मुशी अपने अग्रगामी (Fore-runner) के सामने आया। वीर लेखराम के दोनों हाथ तब सिर के नीचे थे। हाथ उठाकर करबद्ध नमस्ते की।

१ आर्य पथिक लेखराम 'सार्वदेशिक' का विशेषाक, पृ० १६८।
२. आर्य पथिक लेखराम 'सार्वदेशिक' का विशेषाक, पृ० १६६।

मुंशीराम नें जैसे-तैसे अपनी अश्रुधारा को रोका। वीरवर अपनी असाधारण वीरवाणी में बोले, "नमस्ते लाला जी, आप भी आ गये।" इस दृश्य ने मुंशीराम के वीर परन्तु भावुकतापूर्ण हृदय को दहला दिया।

लेखराम ने अपने प्यारे मित्र मुंशीराम को कहा, "लाला जी, बेअदबियाँ माफ करना।" भाव यह है कि भूल चूक क्षमा करना। मुशीराम जी ने कहा कि आप तो बड़े-बड़े संकटों में प्रभु का आश्रय ढूँढ़ा करते है, उसका ध्यान कीजिए। लेखराम जी ने पुन मित्र मुशीराम से अपने अपराध क्षमा करने को कहा और पवित्र गायत्री मन्त्र के तथा **"ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानी परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव।"**[1]

के जप में लग गए। इसी बीच **"परमेश्वर तुम महान हो, परमपिता इत्यादि शब्द बोलते रहे।"**

महात्मा मुशीराम जी लिखते है कि रात्रि दो बजे वीर ने देह त्याग किया। शव यात्रा का वर्णन किन शब्दों में हम करे।

"वे लोग, जिन्होंने आर्य मन्दिर में कभी पैर भी नहीं रखा था, इस जनसमूह में दिखाई देने लगे।"[2]

"चिर काल से सोई हुई आर्य जाति जाग उठी है और धर्म पर सर्वस्व न्यौछावर करने वालों का सत्कार करना सीखने लगी है।"[3]

महात्मा मुंशीराम के पवित्र हृदय से तब एक आवाज निकली थी कि वीर के रुधिर की एक-एक बूँद से एक-एक वीर उत्पन्न होगा जो आर्य धर्म की रक्षा व प्रसार में अपना जीवन देगा। इसमें सन्देह ही क्या है कि वीर लेखराम के बलिदान से आर्यसमाज को एक नया जीवन दिया। इस बलिदान ने आर्यसमाज को कई बलिदानी दिये। तुलसीराम से लेकर राजपाल, श्यामलाल, परमानन्द सुमेर सिह तक यह श्रृंखला चली आ रही है। स्वय मुंशीराम ने (श्रद्धानन्द महान) पूरी-पूरी मित्रता निभाई। अपने अग्रज के पद चिन्हों पर चलते हुए वीर गति पाई। राष्ट्र के लिए, मानव समाज के लिए और वैदिक धर्म के लिए कौन-सा कष्ट है जो मुशीराम ने न झेला हो? सगीनों की नोक पर सीने को अड़ा देना उसी का काम था। छाती पर तीन गोलियाँ

१, २, ३. 'सार्वदेशिक' का विशेषाक पृष्ठ १७१, १७२, १७३, १७४।

लिखवा कर 'ओ३म्' के तीन अक्षरों के महत्त्व व तत्त्व का प्रकाश करता हुआ वह भी उस पंक्ति में जो खड़ा हुआ, जिसमें ३० वर्ष पूर्व लेखराम अपना स्थान बना चुके थे।

विश्व इतिहास का यह तथ्य स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है कि किसी भी धार्मिक व सांस्कृतिक संगठन ने अपने जीवन के प्रथम सौ वर्षों में शान्तिमय ढंग से अपने विचारों का प्रचार प्रसार करते हुए इतने बलिदान नहीं दिये जितने कि आर्यसमाज ने। आर्य विचार-धारा को मानने वाले इस रक्तरंजित इतिहास पर जितना भी गर्व करें थोड़ा है। ३० अक्टूबर १८८३ ई० को महर्षि दयानन्द जी का बलिदान हुआ। एक दशाब्दी भी न बीती कि वीर चिरंजीलाल जी का २६ जुलाई १८९३ ई० को बलिदान हो गया। पाँच वर्ष भी न पूरे हुए कि ६ मार्च, १८९७ ई० को पण्डित लेखराम जी को वीर गति पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसके सात वर्ष के भीतर-भीतर वीर तुलसीराम जी ने धर्म की वेदी पर प्राण न्यौछावर करके आर्य जाति की ठण्डी रगों में उष्ण रक्त का संचार किया। कवि ने इन्हीं बलिदानी वीरों की भव्य भावनाओं का और बलिदान की अखण्ड परम्परा को ध्यान में रखते हुए लिखा है :—

साहसी को बल दिया है, मृत्यु ने मारा नहीं है।
राह ही हारी सदा, राही कभी हारा नहीं है॥
बिजलियाँ काली घटाओं से कहाँ रोके रुकी हैं।
डूबते देखे भँवर ही डूबती धारा नहीं है॥
जो व्यथायें प्रेरणा दें उन व्यथाओं को दुलारो,
जूझकर कठिनाइयों से रग जीवन का निखारो,
दीप बुझ-बुझ कर जला है, वृक्ष कट-२ कर बढ़ा है,
मृत्यु से जीवन मिले, तो आरती उसकी उतारो॥

पण्डित जी की शव यात्रा का आँखों देखा वृतान्त एवं अर्थी को कंधा देने के लिए एक होड़

महात्मा मुन्शीराम जी, महात्मा हंसराज जी व लाला लाजपत-राय सरीखे नेताओं ने पूज्य पण्डित जी की शव-यात्रा का आँखों देखा वृत्तान्त लिखा है। महात्मा मुन्शीराम जी ने तब 'सध्दर्म प्रचारक' में विस्तार से लिखा था। यहाँ हम एक आर्यवीर शान्तिस्वरूप जी के

शब्दों में रक्तसाक्षी की शव यात्रा का कुछ वृत्तान्त देते है—

सात मार्च रविवार के दिन पण्डित जी की शव यात्रा लाहौर के म्यू हस्पताल से निकली।

"हस्पताल से शाहआलमी द्वार तक जन-समुद्र उमड़ रहा था। महात्मा मुन्शीराम जी, महात्मा हंसराज जी तथा पण्डित रामभजदत्त जी आदि सब विशेष रूप से मार्ग दर्शन कर रहे थे। वीरकी अर्थी को कंधा देना प्रत्येक आर्य अपना पवित्र कर्त्तव्य समझता था। अनेक धक्के खाकर के भी प्रत्येक आर्य भाई अर्थी को उठाने का यत्न करता था। आह! वह दृश्य इन नयनो से देखने योग्य था। श्रद्धा की इक नदी सी उमड़ रही थी। मुझे स्मरण है कि जब मैं भी बड़ी कठिनाई से अर्थी को उठाने में सफल हुआ तो शाहआलमी द्वार के भीतर से आवाजें आई—ठहर जाओ, ठहर जाओ। कारण यह था कि दो वृद्ध आर्य सज्जन विनती कर रहे थे कि हमें अर्थी को हाथ ही लगा लेने दो मार्ग में अर्थी पर इतनी पुष्प वर्षा हुई थी कि अर्थी के भार से फूलों का भार कोई न्यून न था। दहन भूमि में जो दृश्य देखने को मिला वह भी दर्शनीय ही था। कोई नयन ऐसा न था जो सजल नहीं था। जिस समय अर्थी के अन्तिम दर्शन के लिए पण्डित जी की धर्मपत्नी को बुलाया गया तो उनके हाथों की अँगुलियों पर उस छुरी के घाव थे, जो पापी घातक को भागते समय पकड़ने के यत्न में हुए थे।"[1]

मृत्युञ्जय लेखराम को कई मित्रों ने हत्यारे के बारे में सावधान किया था। धर्मात्मा लोग अपनी भावुकता और हृदय की निर्मलता के कारण प्रायः सभी को अपने जैसा शुद्ध आत्मा समझ लेते हैं। पं० लेखराम जी भी एक ऐसे ही महात्मा थे। श्रीयुत शान्तिस्वरूप जी स्वय व उनका परिवार पण्डित जी के स्नेह का पात्र था। पण्डितजी के बलिदान के समय वह लाहौर में ही थे। इन्होंने भी कई बार हत्यारे को पण्डित जी के साथ घूमते-फिरते देखा। उस दुष्ट की आकृति से ही कई आर्य भाई उस पर सन्देह करते थे।

शनिवार की सांयकाल को पण्डित जी की हत्या की गई। इससे पहले २८ फरवरी वाले रविवार वे बच्छोवाली समाज के सत्सग में पधारे। सत्सग की समाप्ति पर श्री शान्ति स्वरूप जी पण्डित जी के

१. देखिए, 'आर्य मुसाफिर', साप्ताहिक लाहौर, पृष्ठ ८ व ११ दिनाक २७ मार्च सन् १९३८ ई०।

साथ ही उनके घर तक गये। मार्ग में जाते-जाते भी आपने पण्डित जी को इस सम्बन्ध में बहुत सचेत किया परन्तु पण्डित जी तो शुद्धि के लिए अत्यन्त कोमल हृदय रखते थे।

पण्डित जी का एक सरल-सा उत्तर था, "वह व्यक्ति हमारा मित्र है। शुद्धि के लिए आया है। हम कई दिनों से उसे देख रहे हैं।"[1]

वह छलिया तो ईद के मुसलमानी पर्व की प्रतीक्षा में था। पण्डित जी को उसकी दुर्भावना व कुचाल पर तनिक भी सन्देह न हुआ।

पण्डित जी के बलिदान के समय
जन्म के
एक मुसलमान की भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

"ऐ आर्यावर्त्त ! आज तू क्यों इतना शोकाकुल है ? सिर नीचे किये हुए क्यों है ? तेरा कलेजा क्यों फटा जा रहा है ? ऐ आर्यावर्त्त ! आज तू किस कारण से विरह के शोक से पारे के समान तड़प रहा है और ऋतुराज के मेघ की भाँति अश्रुकण टपका रहा है। ऐ पजाब ! ऐ भारत ! तेरा कौन-सा प्यारा तुझसे बिछुड़ गया है कि जिसकी जुदाई के शोक से तेरे सीने पर इक साँप-सा लोट रहा है। ऐ पजाब व भारत के बंधुओं ! आप किसके निधन के समाचार को पाकर यहाँ शोक सभा कर रहे हैं तथा अश्रुओं के स्थान पर रक्तकण टपका रहे हैं। मै इसी हैस बैस (लड़ाई व तंगी) उधेड़बुन में था कि आवाज देने वाले फरिश्ता ने परलोक से ऊँचे स्वर से कहा कि आज आर्यावर्त्त का ध्वज नीचे हो गया। आज आर्यावर्त्त की एक भुजा टूट गई अर्थात् आज पण्डित लेखराम जी इस नश्वर संसार से अमर लोक को चल बसे।

यह बात सुनते ही मेरे होश उड गये। पांचों इन्द्रियों ने साथ छोड़ दिया। शोक की सेना ने चहुदिश से मुझे घेर लिया। अनायास यह पद अधरों पर उत्तर आया—

जी की जी में ही रही बात न होने पाई।
एक भी मुलाकात न उनसे होने पाई॥

शोक ! महाशोक ! ऐ लेखराम तू तो आर्यावर्त्त का एक प्रज्वलित दीप था। ऐ लेखराम तेरे सदोपदेशों से पथभ्रष्ट मानव को सन्मार्ग दर्शन होता था। ऐ लेखराम ! तू तो सारे आर्यावर्त्त में एक ही वीर

१. देखिए, 'आर्य मुसाफिर' पृष्ठ ८, दिनाक २७ मार्च सन् १९३८ ई०।

सिंह के समान था। तेरी शुभ ज्ञान प्रसूता वाणी से निकला हुआ एक एक शब्द मार्ग-भ्रष्ट व्यक्ति को सत पथ पर लाता था। अंधेरे दिल में प्रकाश करना तेरा एक सहज कार्य था। हा! शोक! अन्यायी ने छल किया। एक मिनट का भी अवकाश न मिला। लेखक के मन की मन में ही रह गई और तू चल बसा।

लेखक को तेरी वाणी का वह माधुर्य, तेरे वह शुद्ध आचरण, तेरा वह मधुर शुभ स्वभाव, तेरा वह (दरय इलम) अथाह ज्ञान, तेरी वह करुणा व दया सब कुछ स्मरण है और मै इन्हें आजीवन न भूल सकूंगा। तुझे (फिर)[1] एक बार देखने की लालसा मन मे ही मचलती रह गई। बदबखत दुष्ट आततायी अपना कार्य कर गया।

ऐ क्रूर! तेरा सर्वनाश! ऐ हत्यारे! तेरा खाना खराब (घरबार नष्ट हो)। ईश्वर करे तेरी इच्छा[2] भी पूर्ण न हो। तेरा 'नखले मुराद' (प्रयोजन का वृक्ष) भी सूख सड़कर जड से कट जावे। तेरा खाना खराब (घर उजड़े, कुल नष्ट हो), तुझ पर ईश्वर की फटकार। ऐ परमात्मा! जिसने ऐसी ज्ञान की खान को लेखक से छीना है। तू भी उसको उसके परिवार, पत्नी व पुत्र सहित विनाश के भँवर में ऐसा डुबो कि प्रलय तक उसका कोई नाम लेवा पानी देवा[3] न रहे।

"ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!"

लेखक—पण्डित जी महाराज का एक ऋणी व कृतज्ञ मुसलमान तथा दर्शनों का इच्छुक दीनानगर से[4]

१- कोष्ठों मे भाव को सुस्पष्ट करने के लिए 'फिर' शब्द हमने जोडा है।

२- यहाँ लेखक ने मूल मे उर्दू का शब्द मुराद प्रयुक्त किया है जिसका अर्थ प्रयोजन, इच्छा आदि है।

३- यहाँ लेखक ने मूल में उर्दू में ता परलो नामो निशां न निक्ले ये शब्द हैं।

४- यह लेख बडी साहित्यिक सजीव उर्दू मे पण्डित जी के बलिदान के समय तभी 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ११ दिनांक मार्च १६ सन् १८९७ ई० में प्रकाशित हुआ था। इस लेख मे फ़ारसी के कई बोझिल शब्द हैं फिर भी लेखक ने ईश्वर, परमात्मा, परलो आदि शब्दों का प्रयोग किया। ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति से यह श्रद्धाञ्जलि समाप्त की। लेखक ने अपना नाम देना तब उचित न समझा। हमने श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज व शास्त्रार्थ महारथी प० शान्तिप्रकाश जी से अता-पता करने का यत्न किया परन्तु कोई सुनिश्चित जानकारी नाम के सम्बन्ध मे नही

पण्डित जी के बलिदान पर लाला लाजपतराय के उद्गार

"The assassin had originally come to him for shudhi (conversion to Hinduism). The Pandit lodged him in his own house and discharged all the obligations of hospitality Eventually when he found a suitable occasion he stabbed his host and ran away. That was how he paid back hospitality.

This event caused tremendous excitement among the Hindu populace of Northern India in general, and of the Punjab and Lahore in particular. All Hindus regardless of sect or creed stood by the Samaj. I have not seen in Lahore another funeral procession as huge as the one which marched behind Pandit Lekh Ram's bier. Different estimates put it at between twenty thousand and fifty thousand souls. The procession started from the medical college, for the Pandit had breathed his last in the Hospital where he had been removed immediately after stabbing The Hindu populace honoured Pandit Lekh Ram showing such high ragard for him. Thousands of Hindu women showered floweres and batashas on bier, or picked these up to be kept as holy relics."[1]

इसका भाव यह है कि घातक शुद्ध होने आया था। पं० जी के घर पर खाता पीता रहा। पण्डित जी ने आतिथ्य के सब कर्त्तव्य निभाए। जब उसने उपयुक्त अवसर देखा अपना आतिथ्य करने वाले को ही छुरा मारकर भाग गया। आतिथ्य का मूल्य ऐसे चुकाया। इससे उत्तर भारत के हिन्दुओं में सामान्यतया और पंजाब तथा लाहौर के हिन्दुओं में विशेष रूप से उत्तेजना उत्पन्न हुई। सब हिन्दू मत

मिल सकी। यह लेख 'आर्य मुसाफिर' के बलिदान अक मे पृष्ठ १६ पर दिनाक १०-१७ मार्च सन् १९३५ ई० को भी पुन. प्रकाशित हुआ परन्तु किसी पुस्तक मे प्रथम बार ही यह छप रहा है। 'सद्धर्म प्रचारक' मे लेखक ने लेख के अन्त मे यह 'नोट' दिया है—"जन्म का मुसलमान हूँ और पण्डित जी की कृपा से विचारो से दृढ़ आर्य हूँ। नाम मेरा प्रकट न करे।"

1. Lajpat Rai Autobiographical Writings, p. 74.

सम्प्रदाय के भेदभाव भुलाकर आर्यसमाज के साथ हो गये। मैंने लाहौर में कभी भी कोई ऐसी बड़ी शव यात्रा नहीं देखी जितनी बड़ी कि पं० लेखराम की अर्थी के पीछे थी। भिन्न-भिन्न अनुमान लगाने वाले इसे बीस व पचास सहस्र मनुष्यों के बीच बताते है। मैडीकल कालेज से शवयात्रा चली। पण्डित जी ने वहीं प्राण छोड़े थे। छुरा लगने के तुरन्त पश्चात् उन्हें वही लाया गया था। हिन्दू जनता ने उनके प्रति अत्यन्त आदर भाव दर्शाकर पं० लेखराम को श्रद्धांजलि समर्पित की। सहस्रों हिन्दू देवियों ने उनकी अर्थी पर फूल व बताशे वर्षाए अथवा ये पवित्र अवशेष समझकर उठा लिये।

अंग्रेज की कुचाल सफल रही

अंग्रेज भारतीय मुसलमानों को राष्ट्रीय धारा से पृथक रखना चाहता था। मिर्जा गुलाम अहमद को अपनी अंग्रेज भक्ति पर गर्व था ही। इस्लाम की आड़ लेकर पण्डित जी का वध करके मिर्जा जी ने कुछ मूर्ख मुसलमानों की सहानुभूति प्राप्त कर ली। घातक को बचाने के लिए मुसलमानों ने जो कुछ भी कर सकते थे किया। घातक कहा गया, किधर गया और उसका क्या बना इसके बारे में अब कुछ कहना व लिखना कठिन है।

लाला लाजपतराय जी ने लिखा है :

"The esccape was in many cases a good example of the Islamic brotherhood and unity on which the Muslims may well pride themselves."[1]

लाहौर के कुछ मौलवियों व श्रीमन्त मुसलमानों ने घातक को शरण दी। भागने में सहायता की। उसी की चर्चा करते हुए लाला जी ने उपरोक्त वाक्य लिखे हैं। इनका भाव यह है कि घातक का बच निकलना मुस्लिम भ्रातृभाव व एकता का एक अच्छा उदाहरण है और मुसलमान इस पर निश्चय ही गर्व कर सकते हैं।

महान मनीषी चमूपति के उद्‌गार

"वीर की अर्थी के साथ सहस्रों मनुष्यों का तांता लग रहा था।

1. Lajpat Rai Autobiographical Writings., p. 75.

लाहौर के नर-नारी इस निर्भीक युवक के बलिदान पर अत्यन्त क्षुब्ध थे। पृथ्वी पर हर जगह फूल ही फूल दीखते थे। गुलाब के पानी के कंटर पर कटर बहा दिये गये। आर्य जाति में एक नयी स्फूर्ति थी, नया आवेग था। प्रतीत यह होता था कि एक धर्मवीर के बलिदान ने सम्पूर्ण जाति को नया जीवन प्रदान कर दिया है। पवित्रता का पारावार था। उत्साह ठाठें मार रहा था। साहस की बाढ़ आ गई थी। जिधर देखो, कर्मण्यतापूर्ण वैराग्य था।"[1]

आर्यसमाज और आर्य जाति में इस तरुण तपस्वी महाबलिदानी के अद्भुत बलिदान से निश्चय ही नवजीवन व चेतना का सञ्चार हुआ। साहित्यकानन की कोकिल आचार्य चमूपति जी ने महावीर लेखराम के बलिदान के महत्त्व पर लिखते हुए आगे लिखा है—
"लेखराम के धर्म-बन्धु थे ला० मुन्शीराम, राय बहादुर ठाकुरदत्त और इनका 'धर्मात्मा' दल। इन्होंने लेखराम के नाम को उठा लिया और उसकी अमर स्मृति में 'लेखराम स्मारक निधि' स्थापित की। आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रचार विभाग को सबसे पहिली उर्वरा निधि यही थी। इसमें धर्मवीर का पवित्र रक्त था जो सैकड़ों रत्नागारों से अधिक बहुमूल्य था। धर्म की सच्ची सम्पत्ति धर्मवीर की अन्तड़ियों का खून था।

प्रतिनिधि सभा की प्रचार कामना को इस खून ने खूब सफल किया। धर्म-प्रचार की वाटिका इस खून के खाद से कैसे फली-फूली, कैसे इस बलिदान के फलस्वरूप उसका चौमुखी विस्तार हुआ ? यह कहानी अग्रिम काल में कही जायेगी। लेखराम काल मुंशीराम काल की तैयारी था।[2]

इस वीर विप्र के बलिदान का महत्त्व सबने जाना। इस ज्ञानी सत्यनिष्ठ विचारक की लेखनी का लोहा सबने माना। उसकी वाणी का प्रभाव अद्भुत था। कविवर 'बेताब' ने बहुत सुन्दर लिखा है—

लोहा जो मुकाबल थे सब मान रहे थे।
मुंह से न कहें दिल से मगर जान रहे थे।[3]

१-२ आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का सचित्र इतिहास, पृ० २०३-२०४।

३. 'आर्य मुसाफिर' उर्दू मासिक मार्च, १६०६ ई०, पृ० ७२।

एक ऐतिहासिक श्रद्धाञ्जलि

भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के वीर शिरोमणि अमर हुतात्मा रामप्रसाद 'बिस्मिल' के धर्म गुरु व क्रान्ति की घुट्टी पिलाने वाले वीर संन्यासी स्वामी सोमदेव जी एक कुशल लेखक व यशस्वी विद्वान् थे। वह एक सिद्धहस्त पत्रकार थे। खेद है कि आर्यसमाज ने अपने इस महान साधु का साहित्य सुरक्षित न किया। श्री स्वामी अनुभवानन्द जी ने जो सामग्री एकत्रित की, न जाने कहां गुम कर दी। लेखक भी वर्षों से उनके लेखों की खोज में लगा हुआ है। २८ सितम्बर, १९७७ ई० को रात्रि उनका एक ऐतिहासिक लेख 'धर्मवीर लेखराम का जीवन-चरित्र' हाथ लगा। इसे पाकर मैं झूम उठा।

यह लेख जिस प्रयोजन से लिखा गया, उसको पूरा करने के लिए लेखक ने जो श्रम किया है, वह पाठकों के सामने है। यह एक महापुरुष की दूसरे महापुरुष को श्रद्धाञ्जलि है। यह एक महापुरुष का लेख है। यह एक विचारक के लुप्त गुप्त साहित्य का अमूल्य पृष्ठ है। यह एक पूज्य साधु की संन्यास दीक्षा से भी पूर्व का उनका लेख है। यह उर्दू पत्रकारिता के पितामह स्वर्गीय महाशय कृष्ण के लंगोटिये मित्र का लेख है।[1] यह वीर शिरोमणि रामप्रसाद 'बिस्मिल' के पूज्य गुरु के पवित्र हृदय का चित्र है। यह उन प्रेरणाओं में से एक है जिनसे प्रेरित होकर महात्मा मुंशीराम जी ने अमर धर्मवीर लेखराम का जीवन चरित्र लिखकर आर्यसमाज को कृतघ्नता के कलंक से बचाया और वीर का प्रेरणाओं से भरा हुआ जीवन-चरित्र प्रस्तुत करके मानव जाति को अपने उपकार से लाद दिया। विलम्ब से मिलने के कारण इस लेख को प्रथम खण्ड में इसके उपयुक्त स्थान पर न दिया जा सका। इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखने के लिए इस ग्रन्थ से उपयुक्त और कौन-सा स्थान हो सकता है?

धर्मवीर लेखराम जी का जीवन-चरित्र

"आर्य पुरुषो! धर्मवीर आपके दिलों से भूल गया। यही छः वर्ष तीन महीने का कोई अधिक समय नहीं बीता कि धर्मवीर ने आपके लिए जीवन न्यौछावर कर दिया। धर्मवीर अपनी पुस्तकों में गहन खोज एवं सत्य का कोष आपके लिए छोड़ गया है। परन्तु मुझे खेद है

---

१. द्रष्टव्य 'अखण्ड ज्वाला', लेखक प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु।

कि अभी तक आपने हुतात्मा का मूल्यांकन नहीं किया। मैं नहीं चाहता कि इस समय आपको स्मरण कराने के लिए आपके सम्मुख धर्मवीर की मृत्यु का चित्र प्रस्तुत करूं। क्या आपको स्मरण नहीं कि धर्मवीर ने प्राण त्यागते हुए किसी प्रकार की सांसारिक चिन्ता नही की। क्या आपको धर्मवीर के अन्तिम शब्द भूल गए हैं ?

आर्यसमाज से लेखनी का कार्य बन्द न हो

हाय, आपके हृदय ऐसे कठोर हो गए हैं कि आपने धर्मवीर के अन्तिम शब्दों पर कतई ध्यान नहीं दिया। इसके उत्तर में सम्भवत: आप कहेंगे कि आर्य मुसाफिर मैगजीन धर्मवीर की अन्तिम इच्छा पूर्ण कर रहा है। इसमें सन्देह नही कि धर्मवीर की स्मृति में आर्य मुसाफिर मैगजीन ने बहुत कुछ कार्य किया परन्तु मैं कहूंगा और बड़े बल से कहूँगा कि आर्यसमाज ने अभी तक धर्मवीर के अन्तिम शब्दों पर पूरा ध्यान नही दिया। कोई और पुस्तकें लिखने की तो बात छोड़े अभी तक उस हुतात्मा का जीवन-चरित्र भी नही लिखा गया।

मैं तीन-चार वर्ष से सुन रहा हूँ कि धर्मवीर का जीवन चरित्र पं० रामभज दत्त जी लिख रहे हैं मैंने एक दो बार महात्मा मुशीराम जी से पूछा उन्होंने भी मुझे ऐसा ही बताया परन्तु अब तक भी प्रथम दिवस है कि कुछ प्रकट नही हुआ। मेरे विचार में ऐसा लगता है कि पं० रामभजदत्त जी व्यस्तता के कारण इस ओर ध्यान नही दे सकते हैं। इसलिए किसी और योग्य पुरुष को यह सौपना चाहिए। मेरे विचार में यह अच्छा होगा कि जीवन चरित्र लिखने का काम श्री वजीरचन्द विद्यार्थी सम्पादक आर्य मुसाफिर मैगजीन को दिया जावे अथवा स्वामी योगेन्द्रपाल को सौंपा जाए। इसमें कोई संशय नहीं कि धर्मवीर की पुस्तकें बहुत कार्य कर रही हैं। परन्तु नवयुवकों में युवकों की शक्ति बढ़ाने के लिए नवयुवकों में कर्मण्यता व दृढ़ता पैदा करने के लिए धर्मवीर के क्रियात्मक जीवन के चित्र की अत्यन्त आवश्यकता है। मैं इस बात को मानता हूँ कि स्वामी जी की पुस्तकों ने इस भूतल पर बड़ा भारी कार्य किया है। नास्तिक से नास्तिक उनके सत्यार्थ-प्रकाश को पढ़कर आस्तिक बन जाता है। परन्तु स्वामी जी के चरित्र क्रियात्मक जीवन ने स्वामीजी की पुस्तकों से कहीं अधिक कार्य किया है। सचमुच एक महात्मा का जीवन-चरित्र मनुष्य को बहुत कुछ

सुधार सकता है। जिस प्रकार हेरी वाल्टन बेंजमैन फ्रैंकलिन और श्री हैगन के जीवन चरित्र देखने से एक साधारण व्यक्ति परिश्रम व पुरुषार्थ करते हुए आर्थिक कठिनाइयों से मुक्त हो सकता है एवं भौतिक उन्नति में नाम पैदा कर सकता है।। इसी प्रकार धर्मवीरों के चरित्र पढ़ने से मनुष्य में आत्मिक बल उत्पन्न होता है तथा धर्म के कार्यों में दिन-प्रतिदिन प्रवृत्ति होती है। क्या धर्मवीर लेखराम जी का जीवन चरित्र नवयुवकों के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं होगा ?

क्या धर्मवीर का एक छोटे से ग्राम में जन्म लेकर एक साधारण पुलिस कान्स्टेबल से इतना उच्च कोटि का साहित्यिक जीवन बनाना और एक धार्मिक बलिदान की शिक्षा देना, हमारा पग बढ़ाने के लिए हमारे अन्दर धर्म के लिए सत्यनिष्ठा पैदा करने के लिए जीवन का एक आदर्श नहीं है ? क्या धर्मवीर का जीवन चरित्र हमारे जीवनों को पलटा देने के लिए पर्याप्त न होगा ? इसलिए ऐ प्यारे आर्य पुरुषो ! स्वर्गीय धर्मवीर का जीवनचरित्र लिखने का शीघ्र प्रयत्न करो अन्यथा स्मरण रखो धर्मवीर की आत्मा आपको धिक्कारेगी क्योंकि आपने उसका मूल्यांकन नही किया।"[1]

तार्किक शिरोमणि स्वामी दर्शनानन्द जी की दृष्टि में

श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज अद्वितीय वक्ता, कुशल लेखक शास्त्रार्थ महारथी और प्रकाण्ड पण्डित थे : महर्षि दयानन्द जी के पश्चात् आर्यसमाज की वेदी पर जो सबसे बड़ा दार्शनिक आया वह धर्म धुन का हिमालय दर्शनानन्द ही था।

आपकी ओर से धर्मवीर लेखराम के विख्यात ग्रंथ तकजीबे ब्राहीने अहमदिया (अहमदी युक्तियों का खण्डन) का विज्ञापन दिया गया। स्वामी जी तब कृपाराम शर्मा थे। आपने उस विज्ञापन के अन्त में लिखा है—

"जिन सज्जनों ने मिर्जा गुलाम अहमद की पुस्तकें देखी हैं उनके लिए इस पुस्तक का अध्ययन करना और सत्य असत्य का निर्णय करना परम आवश्यक है ! तात्पर्य यह है कि यह पुस्तक बेजोड़ है। यथा नाम तथा गुण है। जो सज्जन क्रय करना चाहें वे अपना प्रार्थना

१. 'सद्धर्म प्रचारक', साप्ताहिक वृजलाल वजीराबादी १९०३, पृ० १०।

पत्र आर्यसमाज अमृतसर के द्वारा पं० लेखराम के नाम भेजें।"[१]

पं० कृपाराम जम्मू से

स्मरण रहे कि इस विज्ञापन के आरम्भ में पं० लेखराम जी का नाम पं० 'लेखराज प्रधान आर्य समाज पेशावर' दिया है और विज्ञापन का जितना अंश हम ऊपर उद्धृत कर चुके हैं उसमें प० लेखराम दिया है।

इस विज्ञापन के शब्द इस बात के साक्षी हैं कि स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज जैसे दिग्गज विद्वान् भी प० लेखराम जी की लौह लेखनी और विद्वत्ता का कितना आदर करते थे। साहित्यकार लेखराम के साहित्य का मूल्याङ्कन करने वालों के लिए दार्शनिक दर्शनानन्द की सम्मति का विशेष महत्त्व जानकर हमने इसे यहां दे दिया है।

श्री ठाकुरदत्त धवन के उद्‌गार—विचार

"He knew no fear, the nerve, which according to the Phrinoelogists genelrates it, was apparently altogether absent from his brain. Of a frank and a confinding nature he paid not the least heed to warnings of danger and appeared to carry his life on the palm of his hands. He many a time cheerfully conversed on the certainty of his falling a victim to the treacherous stab of an assassin, but he took the thing as a matter of course..........."[२] पण्डित जी के बलिदान पर लिखे गये इन वाक्यों का सार यह है कि पण्डित जी नही जानते थे कि भय क्या होता है। कपाल विद्यावेत्ताओं के अनुसार भय को पैदा करने वाली नाड़ी तो उनके मस्तिष्क में थी ही नहीं। स्पष्टवादी आत्म विश्वासी इस वीर ने धमकियों की कब चिन्ता की। शीश तली पर धरकर चलने वाला यह नर केसरी हंसते हुए किसी घातक द्वारा अपने वध की चर्चा किया करता था। वह मौत को प्रभु का विधि विधान मानते थे।

१ 'आर्य समाचार' मासिक, पृष्ठ ३१६ माघ मास १६४३ विक्रम।

२. द्रष्टव्य, PublicS pirit : पृ० ३८ द्वितीय, सस्करण

वीरवर क्या थे ? :—बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखराम के चरित्र एवं उपलब्धियों के विषय में जितना भी लिखा जावे थोड़ा है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने तो यदा-कदा जब भी उन्हें अवसर मिला, धर्मवीर के सम्बन्ध में अपने हृदय के अपार प्यार व उद्‌गार प्रकट करते हुए बड़े मार्मिक वाक्य लिखे हैं। पण्डित जी के जीवन पर प्रथम ऐतिहासिक और खोजपूर्ण लेख बाबू मुंशीराम जी की लौह लेखनी से ही लिखा गया था। उसमें लिखा है :—

"वेद, वैदिक समाज, वैदिक सिद्धान्त और वेदाचार्य महर्षि दयानन्द के प्रति उनके हृदय में इतना आदर था कि लोग इसे उन्माद की अवस्था तक पहुँचा हुआ बतलाते थे परन्तु, धर्म के मार्ग पर यदि कार्य किया है तो दीवानों ने, इसलिए यह दीवानापन, यह उन्माद शुभ है। धन्य है।"[१]

यह लेख स्वामी जी ने पण्डित जी के बलिदान के ठीक दो मास एक दिन पश्चात् लिखा था।

पण्डित जी के वैदिक धर्म के अगाध प्रेम के कारण पण्डित जी के ब्राह्म समाजी मित्र ला० काशीराम जी उन्हें आर्यसमाज का 'अली' कहा करते थे।[२] ला० काशीराम पण्डित जी का बड़ा सम्मान करते थे।

हम पूरी जांच-पड़ताल व खोज के उपरान्त निश्चयपूर्वक यह लिख रहे हैं कि श्री महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द जी) का उपरोक्त लेख ही पं० लेखराम जी का सबसे पहला जीवन-चरित्र था। इससे पूर्व उनके जीवन पर कोई खोजपूर्ण लेख किसी पत्र-पत्रिका व पुस्तक में नहीं छपा था।

'ज्ञान कोष', 'आर्य अतिथि' लेखराम

उन्नीसवीं शताब्दी के पंजाब के सुप्रसिद्ध सुशिक्षित युवक व

---

१. 'हुजत-उल-इस्लाम' की भूमिका के साथ पण्डित जी के संक्षिप्त जीवन चरित्र, पृ० ८ पर।

२. हुजत-उल-इस्लाम' का १८९७ ई० का संस्करण, पृ० ८ तथा कुलियात 'आर्य मुसाफिर' का प्रथम संस्करण, पृ० ह देखें तथा 'आर्य मुसाफिर' मासिक अक्टूबर १९०३ ई०, पृ० १३-१६ तथा सद्धर्म प्रचारक, पृ० ३-६, मई २८, १८९७।

आर्यसमाजी नेता श्री ठाकुरदत्त धवन ने पण्डित जी के जीवन काल में उनके महान व्यक्तित्व के विषय में लिखा था—

"पण्डित लेखराम की ओर निहारिए। उनका अनुसंधान और साहित्य सूर्य के समान प्रकाशमान है। उनका धर्म भाव एवं उत्साह आर्य जगत से छिपा नहीं। ज्ञान का कोष है। व्याख्यान शक्ति की प्रत्येक व्यक्ति प्रशंसा करता है। अपने कुटुम्ब व जन्म स्थान से प्राय: दूर रहते हैं। जब देखो प्रतिक्षण समाज के किसी कार्य में संलग्न रहते हैं। विधर्मियों की यातनाएँ सही हैं। उनके विरुद्ध व्यवस्थाएं ('फतवे दिये गए') दी गई कि इतने समय में मर जावेगा। वीर ऐसा कि जान तक की चिन्ता नहीं की।

विरोधियों ने समाचार पत्रों में उन पर मिथ्या दोषारोपण किये। ऐसे धर्मात्मा विद्वान् को बीस-पच्चीस रुपये मासिक देना—क्या यह वेतन है और उनकी सेवाओं का पारिश्रमिक है ? यह वह महा-पुरुष है कि परिश्रम व जी-जान जुटाकर पुस्तक लिखकर उसका अधिकार (Copy Right) भी सुरक्षित नहीं रखते।

आज तक धन सग्रह का कभी ध्यान नहीं किया, किसी से कुछ माँगा नहीं। न कभी कोई ऐसा आचरण किया है जिस पर किसी को आपत्ति हो" (मूल ग्रन्थ में वाक्य की भाषा अटपटी है। ग्रन्थ लेखक का आशय हमने ठीक-ठीक दिया है)।[1]

इस ग्रन्थ में पण्डित जी की यह चर्चा 'पं० लेखराम जी आर्य अतिथि' शीर्षक के नीचे की गई है। 'आर्य अतिथि' की उपाधि से श्री ठाकुरदत्त जी ने ही पण्डित जी को विभूषित किया था। आचार्य चमूपति जी ने भी 'आर्य अतिथि' उपाधि का उल्लेख किया है।[2] धन्य थे वे सद्गृहस्थी जिनको इस बलिदानी ब्राह्मण का, इस जाति रक्षक का, इस आग्नेय पुरुष के आतिथ्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वह पूज्य विप्र भी धन्य था जिसके जीवन काल में उसकी सतत साधना को लोगों ने शीश निवाया।

आचार्य रामदेव जी के आदर्श—स्वतन्त्रता संग्राम के एक सेनानी

---

१. 'वैदिक धर्म प्रचार' उर्दू ग्रन्थ १९५२ विक्रमी मे प्रकाशित का पृ० २६७-२६८।

२. आर्यप्रतिनिधि सभा पजाब का इतिहास पृ० १९४।

और आर्य समाज के यशस्वी विद्वान् स्वर्गीय आचार्य रामदेव जी ने 'विशाल भारत' कलकत्ता में अपने संस्मरणों में प० लेखराम जी की चर्चा करते हुए लिखा है कि पण्डित जी का बच्छोवाली (लाहौर) आर्यसमाज में व्याख्यान था। आचार्य रामदेव जी साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित हुए। प्रथम बार पण्डित जी के दर्शन करके व व्याख्यान सुनकर विद्यार्थी रामदेव पर जो प्रभाव पड़ा उसका वर्णन उन्ही के शब्दों में पढ़िए :—"अपने पास बैठे हुए महाशय से मैंने पूछा—यह कौन है ? उसने आश्चर्य से उत्तर दिया—तुम्हें यह भी नहीं मालूम, यह आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रचारक पण्डित लेखराम जी है। मैं व्याख्यान सुनने लगा। सुनने क्या लगा, व्याख्यान ने स्वयं मुझे अपनी तरफ आकृष्ट कर लिया। पण्डित जी एक घण्टा तक बोले। उनका भाषण सचमुच ज्ञान का भण्डार था। अपने व्याख्यान में उन्होंने इतने अधिक वेद मन्त्रों, फारसी अरबी के वाक्यों तथा यूरोपियन विद्वानों के प्रमाण और उद्धरण दिये कि मैं आश्चर्य चकित रह गया। मेरे मन में आया यदि व्याख्याता बनना हो तो इसे आदर्श बनाना चाहिए। मैंने सचमुच उन्हे अपना आदर्श बनाया।"[1]

'The Arya Patrika' A Popular English Weekly

पण्डित जी के जीवन काल में एक भावभीनी श्रद्धांजलि

सुख साज सारा वार कर—श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने आर्य पथिक के जीवन-चरित्र में लाहौर से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'The Arya Patrika' आर्य पत्रिका में पण्डित जी के विषय में छपी कुछ पंक्तियों की ओर संकेत किया है।[2] उक्त पत्रिका के मूल शब्द नही दिये। हम अनुसधान प्रेमी पाठकों के लिए आर्य पत्रिका के मूल शब्द यहां देते हैं :—

"Pt. Lekh Raj of Peshawar is one of the most zealous members of the Arya Samaj, to the cause of which he has sacrificed all his comforts of life. He is an accomplished scholar

१. 'आर्य मर्यादा' साप्ताहिक ६ मार्च १९७७ ई० के अंक में आचार्य रामदेव जी के संस्मरण।

२. आर्य पथिक लेखराम लेखक स्वामी श्रद्धानन्द द्वितीय संस्करण पृ० ४६

of persian and Aratic, and is perfectly acquainted with Mahomedanism. When on his way to Amritsar to join the late anniversary, he stopped at several Arya Samajes to lecture and hold discussion with religious opponents. By his preaching the settlement clerks of Kahuta are desirous of opening an Arya Samaj there. He also lectured at Miani and Pind Dadan Khan to the great delight of the audience. At Majeetha his lecture convinced Lala Ganda Mal F. A. S. of the truth of the Arya Samaj He now goes to Cashmere for religious purpose."[1]

इस सम्पादकीय टिप्पणी का भावार्थ इस प्रकार से है :— पं० लेखराज आर्यसमाज के परमोत्साही सदस्यों में से एक हैं। इस समाज के लक्ष्य की पूर्ति के लिए उसने जीवन का सब सुख साज वार दिया है। वह फारसी अरबी का एक मूर्धन्य विद्वान् है और इस्लाम से सुपरिचित है। आर्यसमाज अमृतसर के पिछले वार्षिकोत्सव पर जाते हुए वह कई समाजो में भाषण व शास्त्रार्थ के लिए ठहरे। उनके प्रचार के कारण कहूटा के कई लिपिक आर्य समाज की स्थापना के इच्छुक है। पं० लेखराम ने मियानी व पिण्ड दादनखां में भी व्याख्यान देकर श्रोताओं को अति आनन्दित किया। मजीठा में पण्डित जी के भाषणों से प्रभावित होकर लाला गंडामल एफ० ए० एस० ने आर्यसमाज के सिद्धान्तों की सत्यता को स्वीकार किया है। अब पण्डित जी धर्म-प्रचार के लिए कशमीर की यात्रा पर गये है।

पाठक पीछे पढ़ चुके हैं कि आर्यसमाज के आदि काल के पत्रो में पण्डित जी का नाम लेखराज भी छपता रहा है। आर्य पत्रिका के इस सम्पादकीय में भी लेखराम के स्थान पर लेखराज ही छपा है। दोनों नाम तब चलते रहे।

पण्डित जी अपनी विद्वत्ता, प्रचार व बलिदान से ही प्रतिष्ठित नहीं हुए। अपने जीवन काल में ही अपने महान् त्याग, शूचिता, साधना व अद्वितीय लग्न के कारण वह सबके पूज्य बन गये। यह सम्पादकीय उनके आर्यसमाज मे प्रविष्ट होने के कुछ ही वर्ष बाद का है। उनके प्रति उस समय एक लोकप्रिय आर्य पत्र के सम्पादक की यह टिप्पणी सम्पूर्ण आर्य जगत् के भावों को प्रकट करती है। इससे

1. The Arya Patrika Lahore October 19, 1886, p. 5-6

स्पष्ट है कि उनके जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों के कारण उनमें आरम्भ से ही त्याग का उच्च भाव था। महर्षि ने 'सत्य व न्याय में प्रवृत्ति'[१] पर जो बल दिया है, लेखराम जी उसका जीता-जागता उदाहरण थे।

हुत्मात्मा की हुतात्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि

आर्य जाति का यशस्वी सेवक—एक सच्चा बलिदानी—पं० लेखराम जी से लाला लाजपत राय जी का कुछ विचार-भेद भी था। तथापि लाला जी ने उनके व्यक्तिगत चरित्र की उच्चता, स्वच्छता व शुद्धता को खुले हृदय से स्वीकार करते हुए लिखा है :

"His personal character was very high".[२]

अर्थात् उनका व्यक्तिगत चरित्र अत्यन्त उच्च था।

हिन्दू जाति के प्रति उनकी सेवाओं की भी लाला जी ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है।

"The services he rendered to Hinduism by saving Hindus from being converted to Islam or by reconverting to Hinduism those newly turned Muslim stand unique and deserve to be recorded in letters of gold. When one recalls further that he lost his life by fearless persistence in this work. one feels no hesitation in saying that Pandit Lekhram was a true martyr of the samaj."[3]

अर्थात् हिन्दुओं को मुसलमान होने से बचाने, व मुसलमान हो चुके हिन्दुओं को फिर से हिन्दू बनाने के लिए पं० लेखराम ने हिन्दू जाति की रक्षा का जो महान कार्य किया है वह स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है! उनकी यह सेवा अद्वितीय है। जब हमें इस बात का स्मरण होता है कि इसी पुनीत कार्य के लिए, निर्भीकता से कर्त्तव्य निभाते हुए पण्डित जी ने अपनी जान दे दी तो अनायास मुख से निकलता है कि पं० लेखराम आर्यसमाज के सच्चे रक्त साक्षी थे।

१. द्रष्टव्य सत्यार्थ प्रकाश: षष्ठ समुल्लास: अन्तिम पैरा का अन्तिम वाक्य।

२. Lala Lajpat Rai's Autobiographical Writings, P. 73-74.

३. Lala Lajpat Rai's Autobiographical Writings, p. 73-74.

पंडित जी के कादियाँ आगमन पर एक मुस्लिम विद्वान् के विचार

मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने स्वयं पं० लेखराम जी को कादियाँ आने का निमन्त्रण दिया। रफीक दिलावरी नाम के मुस्लिम लेखक व विद्वान् लिखते हैं—"इस निमन्त्रण के अनुसार पं० लेखराम सचमुच वहाँ जा धमके और विचाराधीन शर्तों पर बातचीत की। परन्तु मिर्ज़ा साहिब ने फिर बातें घड़कर टालकर काम निकालना चाहा, परन्तु दुर्भाग्य से उनका प्रतिपक्षी कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था जो सुगमता से पीछा छोड़ देता। पण्डित जी ने कादियाँ जाकर उनका नाक में दम कर दिया एव बुरी तरह गले का हार हुए। मिर्जा साहिब ने सहस्र यत्न किए कि किसी प्रकार यह जिन्न पीछा छोड़ दे परन्तु पण्डित जी वर्षों पुलिस की नौकरी कर चुके थे किसी प्रकार न टले और उनकी जान खा गये। वास्तव में मिर्ज़ा जी का पण्डित जी से कभी सम्पर्क नहीं हुआ था अन्यथा ऐसे बेढब व्यक्ति को जो जान का लागू बन गया था कभी मुँह न लगाते और आरम्भ से ही यह कह कर टाल देते कि आप मेरे साथ वार्ता के लिए उचित व्यक्ति नहीं (सही मुखातिब नही हो)।"[1]

यही लेखक आगे लिखते हैं कि मिर्जा जी ने तीन भयंकर भूलें की—(१) जो मुसलमान नहीं उनको एक वर्ष तक कादियाँ में निवास करके चमत्कार देखने का निमन्त्रण दिया। (२) "प० लेखराम जैसे दृढ़ प्रतिज्ञ व्यक्ति से पत्र-व्यवहार आरम्भ करके उनकी चाल में आ गये। (३) पंडित जी को अपने घर बुलाकर इस उक्ति के अनुसार 'आ बैल मुझे मार' बने।[2]

यही लेखक आगे लिखता है कि "पण्डित जी कादियाँ पहुँचकर हाथ धोके उनके पीछे पड़ गये थे। उन्होंने मिर्जा साहिब को ऐसे आड़े हाथों लिया कि जान बचानी कठिन हो गई।"[3]

'बतरस अज तेगे बुरानें मुहम्मद'

मिर्जा गुलाब अहमद ने उपर्युक्त शीर्षक से एक लम्बी फारसी कविता में पण्डित जी को मृत्यु की धमकी दी थी। यह कविता विज्ञापन के रूप में भी प्रकाशित हुई थी। उपर्युक्त पद का अर्थ है 'मुहम्मद

१-२-३ 'रईसे कादियाँ', भाग प्रथम, पृ० ९८।

की तेज काटने वाली तलवार से डर।' पण्डित जी ने इस लम्बी फारसी कविता का तीन पदों की (केवल ६ पंक्तियों में) फ़ारसी रचना में उत्तर दिया था। यह रचना बड़ी सरल व ओजस्वी भावपूर्ण भाषा में है। इन पंक्तियों के लेखक ने आर्य जगत् के तीन विख्यात हिन्दी कवियों से विशेष विनती करके पण्डित जी की कविता का हिन्दी पद्य में अनुवाद करवाया है। श्रद्धेय डॉ० सूर्यदेव जी शर्मा अजमेर, कवि-रत्न 'प्रकाश' जी तथा बंधुवर सत्यपाल जी 'सरस' ('बेदार' जी) की धर्मभावना प्रशंसनीय है। तीनों की कविताएँ इस पुस्तक में दी जा रही हैं। आर्य जाति की भावी पीढ़ियाँ अपनी राष्ट्रभाषा में प० लेखराम जी की गर्जना का गान किया करेंगी, इसी आशा से एक साथ तीन कवियों द्वारा किया गया अनुवाद दिया जा रहा है।

हमें बड़े दुःख से यह लिखना पड़ता है कि इस पुस्तक के प्रकाशित होने से पूर्व ही हमारे प्यारे कविरत्न 'प्रकाश' जी का निधन हो गया। पुस्तक के द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण के प्रकाशन के समय श्री डॉ० सूर्यदेव जी भी हमारे मध्य न रहे परन्तु, इन दोनों की ये रचनाएँ पं० लेखराम जी के नाम लेवा आर्यों को सदा सत्प्रेरणा देती रहेंगी।

धरा धाम धन वार दूँगा इसी पर

मुझे धर्म वैदिक है प्राणों से प्यारा।
सभी कष्ट इसके लिए हैं गवारा॥
कुटम्ब मित्रजन वार दूँगा इसी पर।
धरा धाम धन वार दूँगा इसी पर॥
मुझे सत्य आदेश प्रभु का निभाना।
नहीं रञ्च परवाह रूठे जमाना॥
भले ही कोई शीश धड से उतारे।
बहें इन रगों से लहू के फवारे॥
छुरे गोलियाँ तीर कोई चलाये।
धधकती हुई आग में भी जलाये॥
निकाले भले जान भी कोई तन से।
न निकलेगा प्रिय वेद का प्यार मन से॥

—रचयिता कविरत्न 'प्रकाश' जी

'राहें बदल सकते नहीं मेरी'

मुझे वे मार डालें या जला दें, किन्तु वे सुनलें ।
सुपावन धर्म वैदिक से कभी मैं मुँह न मोड़ूँगा ॥
प्रलोभन हों कि भय, राहें बदल सकते नहीं मेरी ।
है जब तक दम में दम, पाखण्ड के सब दुर्ग तोड़ूँगा ॥
सखा स्वामी सहायक, इक वही केवल वही मेरा ।
उसी पर हूँ मैं बलिहारी उसी से प्रीति जोड़ूँगा ॥
सिवा उसके किसी की भी नहीं परवाह है मुझको ।
भले सब रुष्ट हो जावें, सुपथ यह मैं न छोड़ूँगा ॥

—रचयिता प्राध्यापक सत्यपल जी 'सरस'

धर्मवीर की प्रतिज्ञा

१

पावन वैदिक धर्म हमारा, उसे कदापि न छोड़ूँगा ।
किसी प्रलोभन या धमकी से, उससे न मुख मोड़ूँगा ॥
कत्ल करो या मुझे जलादो, या विपदा का वज्र गिरे ।
वेद धर्म के पावन पथ से, मेरा पग फिर भी न फिरे ॥

२

दृढ़ विश्वास धर्म में मेरा, चाहे सब परिवार छुटे ।
धन दौलत सर्वस्व नष्ट हो, चाहे सब घर बार लुटे ॥
कौन शक्ति है भूतल पर जो धर्म प्रचार छुड़ाएगी ।
एक परम प्रभु में श्रद्धा है, आगे मुझे बढ़ाएगी ॥

३

असत् मतों को मिटा—ढोंग की ढोल पोल मैं खोलूँगा ।
बातिल परस्तियों से लड़कर, सदा सत्य ही बोलूँगा ॥
नहीं किसी का भय है मुझको, सिवा एक परमेश्वर के ।
अमर आत्मा है मेरा आश्रित सदैव सर्वेश्वर के ॥

४

क्या बध की धमकी देते हो, नहीं किसी से मैं डरता ।
आर्यवीर हूँ, धर्मवीर हूँ, सदा सत्य कहता करता ॥

लेखन कार्य रुके नहिं, निसदिन धर्म प्रचार करूँ।
अन्धकार को हटा जगत् में, वैदिक 'सूर्य' प्रकाश भरूँ॥
रचयिता—श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा, डी० लिट्० अजमेर

पण्डित जी का बलिदान एक मुसलमान विद्वान् की दृष्टि में

"There are no serious grounds to doubt that Lekh Ram was launched into eternity by one of Ghulam Ahamad's angels. The death of Lekh Ram infuriated the Hindus".[1]

अर्थात् इसमें सन्देह का कोई विशेष आधार नहीं कि मिर्जा गुलाम अहमद के एक फरिश्ते ने पण्डित जी को अमर कर दिया है। पं० लेखराम की मृत्यु से हिन्दू समाज क्रुद्धित हो गया।

हम इस विचार से तो पूर्णतया सहमत नहीं कि पण्डित जी अपनी मृत्यु के कारण ही अमर बने। उनका गौरवपूर्ण बलिदान भी उनको अमर बनाने का कारण बना। महात्मा गांधी ने श्रद्धेय स्वा० श्रद्धानन्द जी के बलिदान पर अपनी भावभीनी श्रद्धाञ्जलि भेट करते हुए एक मार्मिक वाक्य कहा था—

"He lived a hero and died a hero."[2]

अर्थात् वह वीरों का जीवन जिए और वीरोचित मृत्यु प्राप्त की। हम यही वाक्य पं० लेखराम जी के जीवन व बलिदान के विषय में प्रयोग कर सकते हैं।

हम इसी प्रसंग में श्री राजगोपालाचार्य जी के एक वाक्य को उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं कर सकते। प्राणवीर शूरता की शान श्रद्धानन्द जी महाराज को श्रद्धाञ्जलि भेट करते हुए आपने एक वाक्य कहा था। यह वाक्य महान् श्रद्धानन्द के आदर्श, आर्य-पथिक पर पूर्णतया चरितार्थ होता है—

"His great end fits in with his life work like the climax in a great tragedy."[3]

एक बड़े दु:खान्त नाटक की पराकाष्ठा के समान उनका अन्त उनके जीवन के कार्यों के अनुरूप ही है।

---

1. His Holiness by phoenix, page 35
2. ३. Swami Shradhanand Edited by M. R. Jambunathan, page 165, 167.

पं० लेखराम प्रभु की शरण में और मिर्जा साहिब पुलिस की शरण में

आस्तिक जीवन की पहिचान यही है कि मनुष्य में निर्भीकता आए। मृत्यु का भय मन से उतर जावे। महर्षि दयानन्द ने बड़े सारगर्भित शब्दों में स्तुति, प्रार्थना व उपासना का फल इस प्रकार से लिखा है—

"स्तुति से—ईश्वर में प्रीति, उसके गुण-कर्म-स्वभाव से अपने गुण-कर्म-स्वभाव का सुधारना। प्रार्थना से—निरभिमानता. उत्साह और सहाय का मिलना। उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।"[1]

प्राणों के निर्मोही लेखराम ने जीवन में पग-पग पर मृत्यु को ललकारा। निडर होकर वह धर्म-प्रचार में जुटे रहे। अशरण शरण वरुण करुण सुधा सिंधु सर्वशक्तिमान की छत्रछाया में मृत्यु का भय कैसे ?

वेद में आता है—

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपास्ते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥[2]

इसके विपरीत मिर्जा साहिब ने पुलिस का सहारा लिया। वह अंग्रेज सरकार की शरण में रहे। पं० लेखराम के बलिदान के पश्चात् मौत की आकाशवाणियाँ आनी—कुछ समय के लिए बन्द-सी हो गईं।

"He ceased for a time to glory in his prophecy and forgot its divine origin. He besought the British to police Qadian and guard his person. He amply deserved their gratitude, he told them, for it was his prayer that did not let the sun set on the British Empire."[3]

अर्थात् कादियाँ में अंग्रेजी सरकार की पुलिस मिर्जा जी की रक्षा के लिए बुलाई गई। मिर्जा जी सरकार का उपकार मानते थे।

---

१. सत्यार्थ-प्रकाश: सप्तम समुल्लास।

२ ऋग्वेद १०-१२-२

३. His Holiness, page 35.

कृतज्ञता का कारण तो था ही। अंग्रेजी साम्राज्य में सूर्य का अस्त न होना, मिर्जा जी अपनी प्रार्थना का फल मानते थे।

परन्तु अब तो सूर्य अस्त हो गया है। मिर्जा जी की प्रार्थना की सम्भवत: Term (अवधि) समाप्त हो चुकी है।

पं० लेखराम सम्बन्धी भविष्यवाणी

इस्लामी विद्वान् श्री फोनिक्स ने मिर्जा जी की भविष्यवाणियों के बारे में एक पाद-टिप्पणी दी है। हम इसे यहाँ देते है—

"Almost all his prophecies start blusteringly and end ingloriously. His prophecy concerning Lekh Ram is, to say the least, unchivalrous."[1]

इसका सार है–प्राय: मिर्जा जी की सब भविष्यवाणियाँ बड़ी गर्जना से आरम्भ होती हैं और टायें-टायें फिश होती है परन्तु पं० लेखराम सम्बन्धी भविष्य वाणी तो सबसे अधिक बोगस निकली है। ऐसी बेजान, साहस शून्य, कायरतापूर्ण कि कुछ न कहा जावे तो ठीक है।

दीपक तले अँधेरा
अर्थात्
कादियाँ के नबी की अज्ञानता का विज्ञापन

मिर्जा गुलाम अहमद ससार भर के लिए प्लेग, विशूचिका, भूकम्प आदि की भविष्ववाणियाँ करते रहते थे। अपने विचारों का खण्डन करने वालों को तो मौत का भय दिखाना और अपने आसमानी चमत्कारों और निशानों के विषय में लच्छेदार शब्दों में डींग मारते रहना, मिर्जा साहिब का एकमेव धंधा था।

इन्हीं मिर्जा साहिब के जीवनकाल में उनके स्कूल का एक तरुण विद्यार्थी जिसका नाम अब्दुल्ला था, कहीं गुम हो गया। मिर्जाई पत्रिका अलहुकम ने लिखा कि लड़का भला मानस और सदाचारी है, बड़ी खोज करने पर भी नही मिला।

---

1. His Holiness by phoenix, page 35 की पाद-टिप्पणी।

'पता बता दो'

स्थूल अक्षरों में शीर्षक देकर लिखा गया--"जिस भाई को पता मिले उसे अपने पास ठहराए और कार्यालय 'अलहुकम' में सूचना दे।"

'आर्य मुसाफिर' ने 'दीपक तले अन्धरा' शीर्षक से एक मार्मिक टिप्पणी देते हुए लिखा था, "हमें आश्चर्य है कि गुप्त से गुप्त भेदों के खोजी और स्वर्ग-नरक के समाचार घर बैठ मँगवा लेने की घोषणा (Claim करने वाले) करने वाले आपके पीर मुर्शद जब आपके पास है तो इस प्रकार का विज्ञापन क्या अर्थ रखता है? क्या यह उनका निरादर और धृष्टता नहीं है।"[1]

मिर्जा जी की इल्हामी चाल—मिर्जा जी प्रतिमास दो-चार नई विचित्र इल्हामी बातें सुनाने व बताने में अभ्यस्त थे। इसके बिना उन्हें चैन न आता था। एक बार आपने अपने इल्हामी गजट 'अलहुकम' में लिखा कि बीस करोड पुस्तकें इस्लाम के विरुद्ध प्रकाशित हो चुकी है। इस पर सम्पादक 'आर्य मुसाफिर' ने मिर्जा जी को एक सम्पादकीय टिप्पणी में चुनौती दी कि वह एक वर्ष के भीतर ऐसी एक करोड़ पुस्तकों के नाम, लेखक व सम्पादक के नाम सहित प्रकाशित करें।

सम्पादक आर्य मुसाफिर ने तो यहाँ तक छूट दी कि एक करोड़ नहीं तो एक लाख पुस्तकों के ही नाम छापें। दो सप्ताह तक इस चुनौती का उत्तर माँगा गया। उत्तर किसने देना था! मिर्जा जी का कथन व लेख सब इल्हामी व आसमानी था। आसमान वाले खुदा को धरती के प्रकाशनों का क्या पता? धरती की पुस्तकों के लिए आसमान में कोई पुस्तकालय थोड़ा खुला है। मिर्जा जी ने मुसलमान भाइयों में सस्ती लोकप्रियता के लिए और नबुवत चमकाने व चलाने के लिए यह बात लिखकर उत्तेजना पैदा करनी थी सो कर दी।

ऐसा था प्रतिपक्षी जिसको महान लेखराम ने धर्म-अधर्म के निर्णय के लिए ललकारा था।

कायर क्रूर घातक मिर्जाई मत के खलीफा की कसौटी पर—मिर्जा गुलाम अहमद ने स्वयं पं० लेखराम जी के बलिदान पर विचित्र

१. 'आर्य मसाफिर' मासिक, नवम्बर १९०६ ई०t पृ० १५२ देखें।

विचार प्रकट किये। कभी तो उन्हें हुतात्मा लिखा और कभी आर्यों को चिढ़ाने और भोले लोगों को फँसाने के लिए उनके वध को अपनी पैगम्बरी (Prophethood) का एक चिह्न बताया। एक कविता में तो अत्यन्त निम्न स्तर पर उतरकर यहाँ तक लिख दिया—

लेखू मरा था कट कर,
जिसकी दुआ से आख़िर।
घर घर पड़ा था मातम,
वह मीरजा यही है॥[1]

मिर्जा साहिब के पुत्ररत्न और सम्प्रदाय के द्वितीय खलीफा मिर्जा बशीर-उद्दीन महमूद अहमद ने १९३० ई० के अन्त में हुतात्मा हरिकिशन द्वारा पंजाब के अंग्रेज राज्यपाल के वध के विफल प्रयास की निन्दा की। मिर्जा साहिब का एतद्विषयक एक लेख १ जनवरी, १९३१ ई० के मिर्जाई पत्र साप्ताहिक 'अल्फजल' में प्रकाशित हुआ। मिर्जा जी के शब्द पठनीय हैं, "गवर्नर साहिब तो बच गये परन्तु एक हिन्दोस्तानी मारा गया। इससे अधिक बुरा और कायरता का कर्म और क्या हो सकता है कि एक व्यक्ति पर अकस्मात् प्रहार किया जावे। वीर का कार्य है कि सामना करे।...परन्तु भारतीय इन दिनों निर्दोष लोगों पर गोली चलाकर अपनी जाति का अपमान कर रहे हैं।"

पाठकवृन्द! अब मिर्जाई सम्प्रदाय की नैतिकता के दोनों माप देखें। पिता तो पण्डित जी की मृत्यु को अपनी दुआ (प्रार्थना) का फल, अपनी भविष्यवाणियों का परिणाम और अपना चमत्कार बता और जता रहा है। पुत्र व उत्तराधिकारी अंग्रेज गवर्नर पर एक क्रान्तिकारी, निःस्वार्थी, परमार्थी बलिदानी देशभक्त के गोली चलाने के कर्म को कायरता व पाप बता रहा है। तर्क यह है कि गवर्नर पर अकस्मात् वार किया गया। पं० लेखराम ग्रन्थ लिखने में निमग्न थे। थक गये और अँगड़ाई ली। अँगड़ाई ली ही थी कि घातक ने वार कर दिया। क्या इससे बढ़कर भी क्रूरता का कोई और कर्म हो सकता है।

कायरता का भी क्या यहाँ प्रमाण चाहिए? जिस घातक को

१. द्रष्टव्य 'दुर्रेसमीं' रचयिता मिर्जा गुलाम अहमद साहिब।

मिर्जा जी अल्लाह का भेजा हुआ फरिश्ता बताते रहे। वह घातक पण्डित जी के घर कई दिन विश्वासपात्र बनकर रहा। छुरा मारकर वह भाग गया। यदि वह स्वयं को पुलिस के समर्पण कर देता और न्यायालय में फाँसी का दण्ड पाकर, फाँसी के फन्दे को गले में एक बार लटका लेता और प्राण निकलने न पाते, या ठीक उस समय फाँसी के फन्दे सहित शव लुप्त हो जाता तो सारा विश्व मान जाता कि घातक कोई पिशाच, क्रूर कायर मनुष्य नहीं अपितु अल्लाह का Angel (फरिश्ता) है।

सारा संसार जानता है कि वीर पुण्यात्मा हरिकिशन तो गोली मारकर वहीं डटे रहे। आपने न्यायालय में अपनी निर्भीकता व योग्यता का अपने वक्तव्य की एक-एक पंक्ति में अच्छा परिचय दिया। ऐसे शूर प्रतापी को तो मिर्जा जी कायर व पापी लिख रहे हैं और आज पर्यन्त लेखराम के घातक की खुलकर निन्दा करने का मिर्जाइयों को साहस नहीं हो पाया।

पाठक यह भी स्मरण रखें कि मिर्जा गुलाम अहमद जी ने अपने जीवन में असंख्य लोगों की मृत्यु की भविष्यवाणियाँ कीं। अपने पश्चात् आने वालों की मृत्यु की भी भविष्यवाणियाँ कर गये। मिर्जाई भाई तो देश-विभाजन में मरने वाले लाखों प्राणियों की हत्या भी अपने पैगम्बर की भविष्यवाणी का ही फल बताते हैं।

किसी ने लिखा था—

मुर्दों को जिन्दा करते थे जो, वह तो मर गये।
जिन्दों के कत्ल को यह मसीह उज्जमां हुए॥

मिर्जा जी अपने को दूसरा मसीह (Promised Christ) बताते थे। मसीह जी के चमत्कार मृतकों को जिलाना विशेष रूप से उल्लेखनीय बताये जाते हैं। हमारे युग के मिर्जा जी क्या हिन्दू, क्या मुसलमान और क्या ईसाई, अपने से विचार-भेद रखने वाले सब विद्वानों की मौत का ही समाचार सुनाते रहे।

देश पर अंग्रेजों ने चाहे कितने अत्याचार किए। मिर्जा जी ने भूलकर भी कभी किसी अंग्रेज की हत्या अथवा मौत की भविष्यवाणी न सुनाई।

महाशय चिरञ्जीलाल 'प्रेम' जी एक पद सुनाया करते थे कि—

हों इल्हाम जिसको फ़कत मौत ही के,
नबी क्या बमुशकल वह इन्सान होगा।

मिर्जा साहिब बड़े गुणी थे। ऐसा हमारा मत है। परन्तु उनके गुणों का लाभ मानव समाज व देश को न पहुँचा। इसका मुख्य कारण यही है कि दूसरों को जीवन देने की बात करने के स्थान पर वह सदा प्राण लेने की, मौत की, विनाश की, रोग की, महामारी, भूकम्प की, युद्ध की और हत्या की ही आतंकित करने वाली भविष्यवाणियाँ किया करते थे।

इसी के फलस्वरूप एक बार मिर्जा गुलाम अहमद जी को लिखित रूप में एक अभियोग में अपने किये पर पछताना पड़ा। कानों को हाथ लगाने पड़े और यह विश्वास दिलाना पड़ा कि भविष्य में मैं ऐसी भविष्यवाणियाँ कदापि न करूँगा। यह लिखित आश्वासन पाठक इसी ग्रन्थ में पढ़ेंगे। यहाँ एक सीधा सा प्रश्न खड़ा होता है कि यदि यह भविष्यवाणियाँ अल्लाह की ओर से दिया गया ज्ञान था तो मिर्जा जी साम्राज्य के न्यायालय से डरकर और दबकर अल्लाह द्वारा सौंपा गया कार्य क्यों छोड़ बैठे? आसमानी डाकघर (Heavenly Post office) के वह जो कुछ भी थे—उन्हें वह कार्य निर्भीक होकर करना ही चाहिए था। अंग्रेज की स्तुति मे, उसके प्रति निष्ठा दर्शाने के लिए मिर्जा जी ने पृष्ठों के पृष्ठ लिखे और इस कार्य पर उनको असीम गर्व था फिर ऐसे शासन के दण्ड-विधान से भयभीत होना हमारी समझ से तो सर्वथा बाहर है। हम देखते है कि तिलक, गांधी, सावरकर, मालवीय, लाजपत, सुभाष, जवाहरलाल, पटेल, आदि राजनेताओं ने अंग्रेज के न्यायालयो और प्रशासन के भय की तनिक भी चिन्ता न की। गांधी जी ने तो एक बार यहाँ तक लिखा था—

"I will not betray my God to please the whole world."

अर्थात् मैं सारे ससार को तुष्ट करने के लिए भी भगवान् से छल न करूँगा, विश्वासघात न करूँगा। संसार तो राजनेता गांधी जी से भी अधिक अपने आपको पैगम्बर (Prophet) घोषित करने वाले से विशेष आशा करता है।

देशवासियों का नरसंहार और मिर्जा गुलाम अहमद जी

एक इस्लामी संस्था द्वारा प्रकाशित और एक विद्वान् मुसलमान भाई द्वारा लिखित एक पुस्तक का एक उद्धरण देना यहाँ बड़ा आवश्यक

है ।

"The Jallianwala firing in 1919 appeared to an Ahmadi author to be the direct outcome of a wanton insult that Amritsar had, in his estimation, once offered the Messiah."[1]

१६१६ ई० में जलियांवाला बाग में निर्दोष भारतीयों को डायर की गोलियों से भूना जाना किसको अच्छा लगा ? सारा सभ्य संसार तड़प उठा । मालवीय जी, रवीन्द्र कवीन्द्र, महान् श्रद्धानन्द, महात्मा गांधी जी आदि सभी महापुरुष इस काण्ड को सुनकर विह्वल हो गए । परन्तु एक मिर्जाई लेखक के अनुसार यह अमृतसर निवासियों के किए कुकर्म का फल था । कुकर्म क्या था ? यही कि किसी समय मिर्जा साहिब का वहाँ किसी ने अपमान किया था । मसीह के तिरस्कार का यह दण्ड था । लेखक आगे लिखता है—

"Ghulam Ahmad and his followers delight in the unhappiness of others and stretch it in their favour."[2]

अर्थात् गुलाम अहमद व उनके अनुयायी दूसरों के दुखी होने पर सुख-शान्ति अनुभव करते हैं और इसे खींचतान करके अपने पक्ष मे एक युक्ति प्रमाण के रूप में प्रयोग करते हैं ।

ईश्वर की व्यवस्था—दो आर्यों का निधन—कादियाँ का नबी

१६०७ ई० में दो प्रतिष्ठित आर्य पुरुषों का निधन हो गया । दोनों ही लेखराम नगर (कादियाँ) से सम्बन्ध रखते थे । एक थे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अन्तरंग सदस्य व 'शुभचिन्तक' पत्रिका के सम्पादक श्री सोमराज जी शर्मा व दूसरे लाला अच्छरमल जी व्यवस्थापक 'शुभचिन्तक' । दोनों के निधन का कारण था प्लेग का भयानक रोग ।

आश्चर्य व दुःख की बात तो यह है कि इन दो आर्यों के देहान्त पर भी मिर्जाई भाइयों ने हर्ष मनाया । वे इनके निधन को भी मिर्जा जी की शान और निशान समझ रहे थे । यद्यपि मिर्जा साहिब ने कभी भी इनके निधन के बारे में कोई भविष्यवाणी न की थी तथापि मिर्जाई मित्र मिर्जा साहिब के कुछ वाक्यों को बलात् इनकी मृत्यु की भविष्यवाणी बताकर नबुवत का ढोल पीटने लगे ।

---

1. His Holiness by Phoenix, page 198. The Islamic Literature Publishing House, Lahore.
2. His Holiness, page 199.

शोक ! महाशोक ! कितना बड़ा अज्ञान। ईश्वर के विधि-विधान का, परमात्मा की अटल व्यवस्था का इससे बड़ा तिरस्कार और क्या हो सकता है ? वैदिक धर्म और वेद के मन्त्रद्रष्टा ऋषियों एवं समस्त आर्य आचार्यों की यह मान्यता व घोषणा रही है कि किसी भी बड़े अथवा छोटे व्यक्ति के कथन व इच्छा से परमेश्वर अपनी व्यवस्था को भंग नहीं कर देता। किसी के कहने से किसी की मृत्यु हो, यह हास्यास्पद है। फिर किसी की मृत्यु पर हर्षोल्लास करना तो मूर्खता ही है। फारसी में एक सुन्दर पद है—

मा बमरग अदूए शादमानी नेस्त।
कि जिन्दगइए मा नीज जाविदानी नेस्त ॥

अर्थात् मुझे शत्रु की मृत्यु पर प्रसन्नता नहीं, कारण मेरा जीवन भी तो सदा का नहीं है। मेरा निधन भी तो इक दिन होगा ही।

मिर्जाई भाई भूल गए कि मिर्जा गुलाम अहमद जी की आँखों के सामने कादियाँ के 'अलबदर' का सम्पादक, सम्पादक का पुत्र व एक अन्य कट्टर मिर्जाई प्लेग से ही काल कराल के गाल में विलीन हो गए।[1] मृत्यु ने किसको छोड़ा ? इन तीनों की मौत किसकी भविष्य-वाणी का फल था ?

अल्लाह से निकट शासकों का दण्ड किया

राजकीय कोप और मिर्जा जी की आकाशवाणियाँ—पण्डित जी के बलिदान को अभी दो वर्ष भी न व्यतीत हुए थे कि मिर्जा साहिब पर एक विपक्षी ने अभियोग चला दिया। मिर्जा साहिब अपने नवीन पथ की पोल खोलने वाले व अपने से मतभेद रखने वालों के अनिष्ट व मृत्यु तक के लिए अल्लाह से प्रार्थनाएँ करते रहते थे। ऐसे इलहाम (आकाशवाणियाँ) वह उतारते रहते थे।

जनवरी १८६६ ई० में श्री जे० एम० डोई साहिब डिप्टी कमिश्नर डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के न्यायालय में अभियोग चला। इसका निर्णय २४ फरवरी, १८६६ ई० को सुनाया गया। अभियोग की संख्या १/३ और संख्या बस्ता कादियाँ १७२ थी।

'सरकार दौलतमन्द बनाम मिर्जा गुलाम अहमद साकन कादियाँ

---

१. 'आर्य मुसाफिर' मासिक, अप्रैल १६०७ ई०, पृष्ठ ५०३।

तहसील बटाला जिला गुरदासपुर ।'

इस अभियोग मे जिस इकरारनामे (आश्वासन) पर २४ फरवरी १८९९ को मिर्जा गुलाम अहमद ने हस्ताक्षर किए उस पर साक्षी रूप में मिर्जा जी के चेले खाजा कमाल उद्दीन बी० ए०, एल-एल० बी० ने हस्ताक्षर किए है—

(१) मिर्जा जी ने प्रथम आश्वासन यह दिया कि मैं ऐसी भविष्य-वाणी प्रकाशित करने से बचूँगा जिसके यह अर्थ लिये जा सकें कि किसी व्यक्ति को (चाहे वह मुसलमान हो अथवा हिन्दू अथवा ईसाई) अपमानित होना पड़ेगा किवा उस पर ईश्वरीय कोप होगा ।

(२) दूसरे आश्वासन में यह लिखकर दिया कि किसी की हानि अथवा किसी के कष्ट व अपमान के लिए दैवी कोपभाजन के लिए अल्लाह से ऐसी प्रार्थना भी न करूँगा ।

(३) आश्वासन दिया कि ऐसी बात को इलहाम (ईश्वर का दिया ज्ञान) बताकर प्रकाशित करने से बचूँगा जिसका भाव हो कि अमुक व्यक्ति अपमानित होगा अथवा कष्ट पाएगा। और भी तीन आश्वासन इस अभियोग में दिए गए। शासकों के दण्ड विधान के भय से मिर्जा जी ने अल्लाह के इलहाम लेने (Receive करने) से इन्कार कर दिया। अल्लाह भी सम्भव है समझदार बनकर अब दूसरों की हानि व मौत के इलहाम भेजने से पीछे हट गया। मिर्जा साहिब की नीति तो हमारी समझ में आती है। पंजाब मे कहावत है 'रब नेड़े कि घसुन नेड़े' अर्थात् भगवान् से निकट बलवान् का मुक्का है। जब विरोधियों ने न्यायालय में विधि-विधान का त्रिशूल दिखाया तो भविष्यवाणियों का आना-जाना बन्द हो गया।

ईश्वर के दूत पूत हों तो ऐसे ही। इस अभियोग के विषय मे और मिर्जा जी के उपर्युक्त लिखित आश्वासन पर आचार्य देवप्रकाश जी ने 'दाफे ओहाम' में अच्छा प्रकाश डाला है। विद्वान् गवेषक इस प्रसंग को वहाँ पढ़ें ।[1]

कुछ और प्रतिष्ठित मौलवियों की सम्मति

मौलाना मुहम्मद हुसैन साहिब बटाला निवासी ने लिखा है— 'जिस ढंग से यह हत्या की गई, वह सामान्य-सी बात है। न निराली,

१. 'दाफे ओहाम', पृ० ११४-११५।

न असाधारण, न सृष्टि नियम-विरुद्ध (खारक आदत)। ऐसी घटनाएँ सैकड़ों घटती रहती हैं।'[1]

स्वयं मिर्जा साहिब ने लिखा है कि आर्यों की भाँति मुसलमान भद्रपुरुष भी मुझपर (मिर्जा साहिब पर) पण्डित जी की हत्या के षड्यन्त्र का आरोप लगाते हैं।[2]

मौलवी मुहम्मद अब्दुल्ला साहिब मेमार अमृतसरी अपनी पुस्तक मुहमदीया पाकेट बुक, पृष्ठ २७६ पर मिर्जा जी की भविष्यवाणी को 'मिथ्या, निराधार, असत्य, झूठ सिद्ध हुई' लिखते है।[3]

विख्यात मुसलमान लेखक व विद्वान् मौलवी सनाउल्ला साहिब के भी वही विचार हैं, जो मौलवी मुहम्मद हुसैन जी के है। मौलवी मुहम्मद आलम आसी अमृतसरी ने भी अन्य निष्पक्ष विद्वानों के साथ सहमति प्रकट की।[4]

लखनऊ से प्रकाशित 'फैसला आसमानी' में भी सुयोग्य मुस्लिम विद्वान् ने इस हत्या को एक षड्यन्त्र का परिणाम बताया। मौलवी अहमद उद्दीन अमृतसरी का भी यही मत था।[5]

पण्डित जी के बलिदान पर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई भाइयों की प्रतिक्रिया जानने के लिए पाठकवृन्द आचार्य देवप्रकाश जी लिखित उर्दू पुस्तक 'दाफे ओहाम' पढ़ें।

पण्डित जी की दिनचर्या

अपने बलिदान के कोई दस मास पूर्व आर्यपथिक ने अपने जीवन की दिनचर्या इस प्रकार से लिखी है। जीवन निर्माण की अभिलाषा रखने वाले सब सज्जन इससे प्रेरणा लेना चाहें तो बहुत कुछ मिल सकता है।

(१) चार घड़ी अर्थात् सवा घण्टा रात रहे उठकर शौच के लिए जंगल में जाना, फिर दन्त धावन और स्नान तथा संध्या और अग्नि-होत्र सूर्य के उदय होने पर। अग्नि-होत्र लक्ष्मी जी (आर्य पथिक की धर्मपत्नी जी) कर लिया करें और कभी-कभी मैं स्वयं भी कर लिया करूँगा।

प्रत्येक दिन व्यायाम करना, ठीक ४० दण्ड।

१–५. 'दाफे ओहाम', पृष्ठ १८४-१८६।

(२) वेदपाठ एक घण्टा, कुरान, तौरेत, इन्जील का स्वाध्याय एक घण्टा व अन्य मतों सम्बन्धी पुस्तकादि। ग्रन्थ-निर्माण का कार्य ११ बजे तक।

(३) ११ बजे से दो बजे तक भोजन, विश्राम, गृहस्थ के कार्यादि और प्यारी लक्ष्मी को पढ़ाना।

(४) ३ से ५ बजे तक पुस्तकावलोकन तथा लेख विशेषत: ऐतिहासिक विद्या सम्बन्धी।

(५) मलत्याग, शौच, सन्ध्या, भ्रमण, व्याख्यान अर्थात् लोगों को सद्धर्म्म का उपदेश देना। अग्नि-होत्र, भोजन घर का प्रबन्ध—६ बजे से ९ बजे तक।

(६) अपने संशोधन के सम्बन्ध में विचार। सोने से पहले मुँह-हाथ-पाँव धोकर कुल्ला करना और परमेश्वर का ध्यान करना। रात को दस बजे सोना, पूरे छ: घण्टे सोना, कम सर्वथा नहीं। एक चारपाई पर न सोना चाहिए, ऋतुगामी होना चाहिए।

(७) मलत्याग के लिए अधिक समय न बैठना चाहिए, इससे बवासीर हो जाती है।

(८) खाना जहाँ तक हो सके चबाकर खाना चाहिए। ३२ बार यदि प्रत्येक ग्रास चबाया जाये तो कोई रोग नहीं होता। खाने के पश्चात् तत्काल ही लघुशंका के लिए बैठना चाहिए क्योंकि इससे मसाने का रोग नहीं होता।

(९) प्रात:काल उठकर पहले अनुमानत: आधा पाव बासी पानी नाक पकड़कर पीना चाहिए, जिससे अजीर्ण कभी नही होता।

(१०) पायजामे के अन्दर लंगोट बाँधकर रखना चाहिए और लंगोट समेत नहाना चाहिए। लघुशंका के पश्चात् जल व मिट्टी से शुद्धि करनी चाहिए, जिससे शरीर अपवित्र न हो। व्यर्थ क्रोध न करना चाहिए। कटुवचन तथा असत्य से पृथक् रहना तथा 'दीन इस्लाम' की विषयुक्त शिक्षा के बुरे प्रभाव को दूर करने का प्रयत्न, और इसी प्रकार दूसरे मतों का भी। वैदिक धर्म का प्रचार करना।

"ईश्वर मेरी इच्छा को आप पूर्ण कीजिए।"

वीर विप्र लेखराम के मन में सत्य की रक्षा, सत्य के प्रकाश और अन्धविश्वास व अन्य बुराइयों के नाश के लिए कैसा अदम्य उत्साह था, यह उनकी दिनचर्या व इसके अन्त में प्रभु से की गई प्रार्थना से

स्पष्ट है।

बुराई किसी भी समुदाय व मत में हो—वह उससे भिड़ने, लड़ने को हर घडी तैयार थे। प्रेमभाव से सबका सुधार उपकार उनके जीवन का लक्ष्य था। उनकी दिनचर्या एक जागरूक प्रभु-पुत्र की दिनचर्या है। उनको उपदेश की धुन थी। इसके पीछे इनका तपोबल, मनोबल कार्य करता था। अपने संशोधन (आत्म निरीक्षण) को वह कितना महत्त्व देते थे। यह इस दिनचर्या में संख्या छः में पुनः पढ़िए।

यद्यपि यह दस सूत्री कार्यक्रम व्यक्तिगत रूप से अपनाया गया परन्तु मानव स्वभाव सर्वत्र एक-सा ही होता है। यह दस सूत्री कार्यक्रम इतना व्यक्तिगत नही जितना सैद्धान्तिक है। यह सार्वभौमिक है। सबके लिए पण्डित जी की दिनचर्या एक उदाहरण है।

पण्डित जी का स्मारक

आर्य प्रतिनिधि सभा ने पं० लेखराम स्मारक निधि की स्थापना की। यह निधि अब तक भी है। इस निधि से वैदिक धर्म प्रचार का पवित्र कार्य कुछ-न-कुछ होता ही रहा है। पण्डित जी का एक और स्मारक भी स्थापित हुआ। यह था 'आर्य मुसाफिर' मासिक उर्दू। यह भी प्रतिनिधि सभा ने चलाया था। वर्षों तक यह सुन्दर पत्रिका निकलती रही। महात्मा मुन्शीराम जी का इसको विशेष सरक्षण प्राप्त रहा। इसके लेख उच्चकोटि के और प्रेरणाप्रद हुआ करते थे। देश विख्यात विद्वान्, गवेषक, लेखक व कवि महानुभाव अपनी लेखनी से इसकी सेवा करते रहे। इसका जन्म अक्तूबर १८९८ ई० में जालंधर में हुआ था।

इसी 'आर्य मुसाफिर' मासिक के सहयोग से पण्डित जी का एक और स्मारक भी स्थापित हुआ था। यह था 'आर्य मुसाफिर मिशन फण्ड'। दिसम्बर १९०६ ई० के 'आर्य मुसाफिर' में प्रसिद्ध कवि, लेखक व नाट्य कलाकार श्री प० नारायण प्रसाद 'बेताब' जी ने 'अपील' शीर्षक से एक मार्मिक लेख लिखा। आपने आर्य जनता को इस निधि में प्रतिदिन एक पाई अथवा आधी पाई की आहुति डालने की विनती की। समय-समय पर आपने अपनी भावपूर्ण कविताओं में भी इस फण्ड के लिए जनता को प्रेरित किया। 'बेताब' जी के मन में वैदिक धर्म-प्रचार के लिए उत्साह था, धर्मवीर लेखराम के लिए श्रद्धा

थी और आर्य जाति की रक्षा व उन्नति के लिए एक भावना थी।

इस अपील के अन्तिम शब्द इस प्रकार से है—"यदि आप वीरोचित साहस से स्वीकार करेंगे तो एक रस्से में एक तिनका, एक दीवार में एक ईट और एक घड़े पानी में एक बिन्दु आपके भाग में आएगा जिसे अकिंचन से अकिंचन भी बड़ी सुविधा से उठा सकता है।

मेरी विनय निम्न प्रकार से है (१) लेखराम स्मारक निधि की एक शाखा 'उपदेशक फण्ड' के नाम से कार्यालय 'आर्य मुसाफिर' में खोली जावे। (२) 'आर्य मुसाफिर' के समस्त ग्राहक उसके सहयोगी बनें। (३) सहयोगियों की दो श्रेणियाँ हों। (४) प्रथम श्रेणी में वे सज्जन हों जो अपनी पवित्र कमाई से एक पाई (१/१९२ रुपया) प्रतिदिन के दर से वर्ष भर राशि कार्यालय में भेजा करे। दूसरी श्रेणी में वे सज्जन हों जो १/२ पाई दैनिक के दर से भेजा करें। (५) महाशय वजीरचन्द जी सम्पादक पत्रिका इसकी देखभाल करें और शुल्क की प्राप्ति प्रतिमास पत्रिका मे प्रकाशित हुआ करे।

विनय करने के पश्चात् मैं यह देखने का उत्सुक हूँ कि जो दीपक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने प्रज्वलित किया, जिस दीपक में पण्डित लेखराम ने तेल की बजाए अपना रक्त डाल दिया उसी दीपक में कौन-कौन धर्मावलम्बी एक-एक बूँद तेल डालने को हाथ बढ़ाता है। जो अनुभवी महाशय मेरी विनती मे कुछ संशोधन-परिवर्तन करना चाहें, वे सहर्ष उक्त पत्रिका में लिख भेजें।"

प्रार्थी
नारायण प्रसाद 'बेताब'
ग्राण्ट रोड, बम्बई[1]

मार्च व मई १९०७ ई० के अक व अगले कई अंकों में 'आर्य मुसाफिर मिशन फण्ड' शीर्षक से सम्पादकीय लेख छपते रहे। देशभर से धर्मप्रेमी अपनी आहुति डालने के लिए आगे निकले। अपनी प्रसिद्ध कविता 'खूनी होली' मे भी 'बेताब' जी ने आर्यों को इस पवित्र कार्य में सहयोग के लिए प्रबल प्रेरणा दी और झंझोड़ा भी।[2] 'बेताब' जी

१. 'आर्य मुसाफिर', मासिक टाईटल पेज का अन्तिम पृष्ठ, दिसम्बर १९०६ ई०।

२. 'आर्य मुसाफिर' मासिक, मार्च १९०६ ई०, पृ० ७१, ७२, ७३, मई अंक के पृ० ५८३-८४।

ने स्वयं भी इस निधि में बहुत उदारता से आहुति डाली। जौनपुर के एक विद्यार्थी महाशय हरिदत्त शर्मा ने भी अपनी भेंट भेजी। अपने सेवकों के इसी धर्मभाव से आर्यसमाज का यश चहुँदिश फैला।[1]

महाशय पानीपति आर्य लिखित प्रसिद्ध पुस्तक 'कप्तान डाकू' इस 'आर्य मुसाफिर मिशन फण्ड' का प्रथम प्रकाशन था। यह पुस्तक जून १९०८ ई० से इसी निधि से छपी थी।

पं० लेखराम का नाम हटवा दिया

धर्मवीर पं० लेखराम जी के गौरवपूर्ण बलिदान और निष्कलंक जीवन से सारे वैदिक धर्मी प्रभावित हुए बिना न रह सकते थे। फिरोजपुर निवासी आर्यजनों को धर्मवीर के बलिदान और उपलब्धियों पर विशेष अभिमान था। इसका एक कारण था। सार्वजनिक जीवन के शैशव काल में आर्य गौरव लेखराम को जिस नगर में कुछ टिकना मिला, वह स्थान फिरोजपुर के अतिरिक्त दूसरा कोई और नहीं है। इस नगर से वीरवर 'आर्य गजट' साप्ताहिक का सम्पादन करते रहे। इस पत्रिका के प्रथम सम्पादक श्री गोविन्दलाल जी कायस्थ थे और उनके पश्चात् धर्मवीर पं० लेखराम जी ने इसका सम्पादन करना आरम्भ किया।

'आर्यगजट' को छोड़ा तो फिर ऐसे पथिक बने कि अपनी सुध-बुध ही न रही। इसी पथ पर सर्वस्व होम दिया। फिरोजपुर वालों ने इसी में अपना सम्मान समझा कि धर्मवीर के नाम पर कोई स्मारक बनाया जाये। पण्डित जी के नाम पर लेखराम स्कूल खोल दिया गया। महात्मा हंसराज जी (जो उस समय लाला हंसराज के नाम से जाने जाते थे) फीरोजपुर गये। आपने स्कूल के नाम के साथ लगा पं० लेखराम जी का नाम हटवा दिया। कारण क्या दिया, यह तो हमें भी पता नहीं परन्तु यह तथ्य है कि पण्डित जी के स्मारक रूप में स्थापित स्कूल से उनका नाम उड़ा दिया गया।[2]

हमारा ऐसा मत है कि हो सकता है महात्मा जी ने इस विचार से पण्डित जी का नाम उड़वा दिया हो, कि धुन के धनी लेखराम ने तो लेखनी व वाणी से अपने नाम को सार्थक किया है। इसलिए

१. 'आर्य मुसाफिर', मई, १९०७ ई०, पृष्ठ ५८३-८४।

२. चाचा गंडाराम जी लिखित पण्डित जी का जीवन-चरित्र, पृष्ठ २३४।

किसी स्कूल, कालेज के साथ उनका नाम जोड़ना अटपटा-सा लगता है। उनके नाम पर तो प्रकाशन मन्दिर खोला जाना ही अच्छा लगता है। उनका स्मारक वैदिक साहित्य के सद्ग्रन्थ ही हो सकते हैं।

महात्मा हंसराज पं० लेखराम जी के तप व बलिदान के महत्त्व को समझते व अनुभव करते थे। पण्डित जी के बलिदान पर अपने शिष्यों व मित्रों की भारी संख्या को साथ लेकर महात्मा जी वीर के शव के दर्शन के लिए आ गए। आर्यसमाज अनारकली में प्रार्थना के पश्चात् गले ऐसे रुँध गये कि कोई बोल न सका। पण्डित जी का नाम हटवाने में महात्मा जी का भाव[1]…ऋषि मिशन की तड़प रखने वाला प्रत्येक हृदय लेखराम का सच्चा स्मारक है। साहित्य पिता स्वर्गीय श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने श्री पण्डित जी को श्रद्धांजलि देते हुए लेखराम नगर (कादियाँ) में एक संस्मरण सुनाया था। एक बार किसी पत्रिका ने पं० लेखराम बलिदान विशेषांक पर उपाध्याय जी से एक लेख माँगा था। पूरे पृष्ठ पर निम्न पद लिखकर उपाध्याय जी ने भेज दिया। केवल यही पद और कुछ नहीं।

तसनीफ को समाज की ले जाओ हर तरफ़।
पैग़ाम वेद पाक का पहुँचाओ हर तरफ़॥

अर्थात् सब दिशाओं में वैदिक साहित्य को ले जाओ और वैदिक सन्देश सब दिशाओं में पहुँचाओ। श्रद्धेय उपाध्याय जी साहित्य को ही पण्डित जी का सच्चा स्मारक मानते थे। अतः महात्मा हंसराज द्वारा पण्डित जी का नाम हटाया गया तो किसी को भी इस पर आपत्ति न होनी चाहिए। पं० लेखराम का मिशन और था, सस्थावाद उसमें कतई साधक नहीं हुआ और न कभी होगा।

हमें प्यारो प्यारा ऋषि का मिशन है।
यही आन अपनी व जीवन मरण है॥

---

१. 'सद्धर्म प्रचारक', पृष्ठ ७, मार्च १९, १८९७ ई०।

हमारे सहयोगी बनो

"प्यारे भाइओ !

स्नेह से मिलकर,

दूई द्वेष को दूर कर

एक परमात्मा की भक्ति करें।

प्रायश्चित अर्थात् पुनर्मिलन का

द्वार खुला है।

जबर का जुआ गर्दन से उतारकर

(बलात धर्मच्युतहीन का

कलङ्क जो माथे पर लगा है,

वह अब धो दो)।

सत्य को धारण करो

तथा सद्धर्म के प्रसार में

हमारे सहयोगी बनो।"[1]

---

१. रसाला 'जहाद' के अन्त मे ये शब्द दिये हैं।

चतुर्थ खण्ड

नीर क्षीर विवेक

लेखक—शास्त्रार्थ महारथी पं० शान्तिप्रकाश जी

श्री मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयानी के चमत्कार

मिर्जा जी ने कई घोषणाएँ की हैं। 'वही हमारा कृष्ण' नामक ट्रैक्ट में हजरत इमाम जमाअते अहमदिया ने लिखा है कि—उसने (ईश्वर ने) हिन्दुओं की उन्नति और सुधार के लिए निष्कलंकी अवतार को भेज दिया है जो ठीक उस युग में आया है जिस युग की कृष्ण जी ने पहिले से सूचना दे रखी है—वही हमारा कृष्ण, पृ० ६

उस निष्कलंक अवतार का नाम मिर्जा गुलाम अहमद है जो कादयान जिला गुरदासपुर में प्रगट हुए थे। खुदा ने उनके हाथ पर सहस्रों निशान दिखाए हैं। जो लोग उन पर ईमान लाते हैं उनको खुदा ताला बड़ा नूर बख्शता है। उनकी प्रार्थनाएँ सुनता है और उनकी सिफारिशों पर लोगों के कष्ट दूर करता है। प्रतिष्ठा देता है। आपको चाहिए कि उनकी शिक्षाओं को पढ़कर नूर प्राप्त करें। यदि कोई सन्देह हो तो परमात्मा से प्रार्थना करें कि हे परमेश्वर ! यदि यह व्यक्ति जो तेरी ओर से होने की घोषणा करता है और अपने आपको निष्कलंक अवतार कहता है, अपनी घोषणा में सच्चा है तो उसके मानने की हमें शक्ति प्रदान कर और हमारे मन को इस पर ईमान लाने के लिए खोल दे। पुनः आप देखेंगे कि परमात्मा अवश्य आपको परोक्ष निशानों से उसकी सत्यता पर निश्चय दिलावेगा…तो आप सत्य हृदय से मेरी ओर प्रेरित हों और अपनी कठिनाइयों के लिए प्रार्थना करावें अल्लाह ताला आपकी कठिनाइयों को दूर करेगा। और मुराद(कामना)पूरी करेगा। अल्लाह आपके साथ हो। पृ० ६, ७, ८ 'वही हमारा कृष्ण।'

अहमदियों के प्रोपेगंडा का ढंग निराला है। किन्तु हिन्दू अब आर्यसमाज के विचारों के प्रभावाधीन हैं। वह अपना मित्रामित्र पहचानते हैं। अतः इन बातों से कुछ न बनेगा।

यदि मिर्जा जी श्री कृष्ण जी के अवतार हैं तो कृष्ण जी पुनर्जन्म, जीवात्मा को नित्य, वैदिक धर्म और ओम की भक्ति तथा गौरक्षा के लिए सारी शक्ति लगा गये तथा गीता के द्वारा अर्जुन का व्यामोह दूर कर गये। श्री मिर्जा जी मे इनमें से कौन-सी बात है ? हिन्दू अब इन हथकण्डों से सावधान हैं।

(२) चमत्कार अथवा भविष्यवाणी

श्री मिर्जा जी लिखते हैं कि "हमारे सत्यासत्य जाँचने के लिए हमारी भविष्यवाणी से बढ़कर कोई परीक्षा की कसौटी नहीं हो सकती।" आईनाए कमालाते इसलाम, पृ० २८८

"बमन ईं रा बराय सिदके खुद या किज्बे खुद मय्यार मे गरदानम" अंजामे आथम पृ० २२३ अर्थात् और मैं भविष्यवाणी को अपने सत्य और असत्य के जाँचने का मय्यार निश्चित करता हूँ।

"सो भविष्यवाणियाँ कोई साधारण बात नहीं, कोई ऐसी बात नहीं जो मनुष्य के अधिकार में हों" किन्तु प्रकाश स्वरूप ईश्वर के अधिकार में हैं। सो यदि कोई सत्येच्छुक है तो इन भविष्यवाणियों के समयों की प्रतीक्षा करे।" शहादतुल्कुरआन, पृ० ६५

(३) स्वप्न

मिर्जा जी ने स्वप्नों पर भविष्यवाणियों का भवन खड़ा किया है कि नबियों और वलियों का कोई स्वप्न गलत नहीं होता। किन्तु इसके साथ ही यह भी लिख दिया कि—

"कुछ गिरे व्यक्तियों और अति दुराचारियों को भी सत्य स्वप्न आ जाते है। प्रत्युत् कुछ महा दुराचारी और दुष्ट व्यक्ति अपने मुकाशफात (स्फुरण) वर्णित करते हैं कि अन्ततः वह सत्य सिद्ध होते है। किन्तु मैं यहाँ तक मानता हूँ कि अनुभव में आ चुका है कि कभी-कभी एक बहुत पतित दुराचारिणी स्त्री जो वेश्याओं के समूह में से है, जिसका समस्त यौवन बदकारी में व्यतीत हुआ है कभी सत्य स्वप्न देख लेती है और अधिक आश्चर्य यह कि ऐसी स्त्री कभी ऐसी रात्रि में भी कि जब वह मद्य में चूर और दुराचार रत होती है कोई स्वप्न देख लेती है और वह सत्य सिद्ध होता है।"

तौजीहुलमराम, पृ० ८३-८४

फलित बताने वाले ज्योतिषी जी की भी कोई बात घुणाक्षर न्याय से सत्य निकल आने की भाँति मिर्जा का भी कोई अंश सत्य निकल आए तो उसमें करामात की क्या बात रही ?

मिर्जा जी ने ब्राहीन जिल्द ५ में अपने लगभग दस लाख निशानों (चमत्कारों) की घोषणा की है।

यदि यह सत्य हो कि इतने चमत्कार घोषित हुए है। तो दिन भर यही धन्धा रहता होगा। ईश्वर भक्ति चमत्कारों में विलीन हो गई। पुनरपि कृष्णावतार होने के दावेदार।

(४) सामयिक मसीह

मिर्जा जी मसीह भी अपने आपको मानते है। हकीकतुल वही में अपने आपको मरयम मानकर मसीह की उत्पत्ति का उपक्रम किया है किन्तु मसीह ने तो इंजील में चमत्कारों का खण्डन करते हुए कहा है कि—

"पुन: फ़रीसी निकल कर उसकी परीक्षा लेने के लिए उससे कोई आसमानी चमत्कार की माँग करने लगे। उसने अपनी आत्मा में ठण्डा श्वास खींचकर कहा कि इस युग के लोग क्यों चमत्कार की माँग करते हैं ? मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि इस युग के लोगों को कोई चमत्कार दिया न जाएगा। और वह उनको छोड़कर पुन: तरनि में बैठकर पार जा पहुँचा।"

मरकस अ० ८ आयत ११ से १३

मसीह ने कुर्बानी का खण्डन किया और दया को स्वीकारा।

—मती ६।१३

यही अच्छा है कि तू मास न खाए, शराब न पिए।

—रूमियों १४।२१

अत: मसीह के साथ मिर्जा जी का सामंजस्य कैसा ?

(५) श्री आथम का उदाहरण

"यह पेशगोई मिर्जा जी ने ५ जून, १८९३ को अमृतसर में ईसाइयों के साथ शास्त्रार्थ की समाप्ति पर श्री आथम के सम्बन्ध में की थी कि—

"आथम १५ मास तक हाव्या में गिराया जायेगा और उसको

कठोर बदनामी पहुँचेगी। यदि यह सत्य की ओर न लौटे।···उस समय जब भविष्यवाणी पूरी होगी, कई अन्धे देखने लगेंगे, कई लँगड़े चलने लगेंगे और कई बधिर सुनने लगेंगे। जंगे मुकद्दस, पृ० १८८

"वह पन्द्रह मास के बीच आज की तिथि से कष्टदायक मृत्यु में न पड़े तो मैं प्रत्येक दण्ड भुगतने के लिए समुद्यत हूँ। मुझको जलील किया जाए, मुख काला किया जाए, मेरे गले में रस्सा डाल दिया जाए, मुझको फाँसी दिया जाए। प्रत्येक बात के लिए समुद्यत हूँ। शपथ खाकर कहता हूँ कि ऐसा ही होगा। द्यावाभूमि टल जायें किन्तु उसकी बातें न टलेंगी।" (जगे मुकद्दस का अन्त)

शोक कि श्री आथम १५ मास के व्यतीत हो जाने पर भी न मरे किन्तु उसके पश्चात् भी दो वर्ष जीवित रहे। तब मिर्जा जी ने उसकी मौत के पश्चात् लिख दिया।

"यदि किसी के सम्बन्ध में यह भविष्यवाणी हो कि वह १५ मास तक कोढ़ी हो जाएगा। पर अगर वह १५ मास के स्थान पर बीसवें मास में कोढ़ी हो जाए और नाक तथा समस्त अंग गिर जायें तो क्या उसका अधिकार है कि यह कहे कि भविष्यवाणी पूरी नहीं हुई। वस्तु स्थिति पर दृष्टि चाहिए। हकीकतुल्वही, पृ० १८५।

किसी ने कहा ही तो है कि—

हुआ था कभी सर कलम कासिदों का।
यह तेरे जमाने में दस्तूर निकला॥

किश्तीये नूह में लिख दिया कि "भविष्यवाणी में यह वर्णन था कि पक्ष-विपक्ष में से जो व्यक्ति अपने सिद्धान्त की दृष्टि से असत्य पर है वह पहले मरेगा। सो वह आथम मुझसे पहले मर गया।" पृ० ६

ऐसा कदापि नहीं इससे पूर्व ऐसा कही नही लिखा गया था। केवल १५ मास में बुरी मौत मरने की भविष्यवाणी थी जो सर्वथा गलत निकली।

अब पछताए क्या होत।
जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।

(६) आकाशस्थ विवाह

एक पवित्र सुकुमारिका के सम्बन्ध में विवाह सम्बन्धी भविष्य-वाणी करते हुए घोषणा की कि खुदा ने आसमान पर विवाह पढ़ा

दिया है। किन्तु पृथ्वी पर भी यह लड़की मेरे साथ ब्याही जाएगी, यह तकदीरे मुबरम (कभी न टल सकने वाला भाग्य) है। किन्तु संसार ने देखा कि ऐसा न हो सका।

(१) यह कन्या मिर्जा जी की चचेरी बहन की पुत्री थी।

(२) मिर्जा जी के ममेरे भाई की लड़की थी।

(३) मिर्जा जी के सुपुत्र फजल अहमद की धर्मपत्नी की ममेरी बहन थी।

आयु भी असमान थी जिस पर मिर्जा जी ने स्वयं लिखा कि—

"हाजिहिल्मखतूबतो जारियतन् हदोसतिस्सिन्ने
व कुन्तो हीनाहजिन जावज्तुलखमसीना।"

लड़की अभी छोकरी है और मेरी आयु इस समय पचास वर्ष से अधिक है। —आइनाए कमालाते इस्लाम, पृ० १७४।

अन्ततः वह सुकुमारिका पट्टी जिला लाहौर में मिर्जा सुलतान मुहम्मद से ब्याही गई जिस पर श्री मिर्जा जी ने उस पवित्र कन्या के पिता अहमद बेग के सम्बन्ध में तीन वर्ष तक मरने और इस देवी के पति सुलतान मुहम्मद के अढ़ाई वर्ष तक मरने की भविष्यवाणी की। किन्तु ऐसा न हो सका। श्री मिर्जा जी का स्वर्गवास १९०८ में हुआ और सुलतान मुहम्मद १९३२ तक जीवित रहे।

मिर्जा जी निराश नहीं हुए कि "यह लड़की वैधव्य प्राप्त्यनन्तर मेरे से अवश्य विवाहित होगी। यह भाग्य अपरिवर्तित है।"

—अंजामे आथम, पृ० ३२३

पुनः लिखा कि—"यह बात कि इलहाम में यह भी था कि इस स्त्री का विवाह आसमान पर मेरे साथ पढ़ा गया है। यह ठीक है किन्तु जैसा हम वर्णन कर चुके हैं इस विवाह को क्रियात्मकता के लिए जो आसमान पर पढ़ा गया। खुदा की ओर से एक शर्त भी थी पर जब इन लोगों ने इस शर्त को पूरा कर दिया तो विवाह टूट गया अथवा देरी में जा पड़ा।"

—हकीकतुल्वही का परिशिष्ट, पृ० १३२, १३३

विवाह टूट गया अथवा देरी में पड़ गया। इस अनिश्चितता के वातारण में श्री मिर्जा जी ईश्वर को प्यारे हो गये। माननीया मुहम्मदी बेगम की लाज ईश्वर ने रख ली। ईश्वरीय चमत्कार का यह परिणाम है?

(७) आयु सम्बन्धी निशान

"जैसा कि मैं इजालाए ओहाम में लिख चुका हूँ कि खुदा ताला ने मुझे सूचना दी है कि तेरी आयु ८० वर्ष अथवा इससे कुछ न्यून व अधिक होगी।" —सिराजे मनीर, पृ० ७९

अस्सी या उस पर पाँच चार अधिक व पाँच चार न्यून।

—हकीकतुल्वही, पृ० ९६

अर्थात् ७५ और ८५ के मध्य की भविष्यवाणी श्री मिर्जा जी की ठीक नहीं निकली क्योंकि उनका जन्म १८३९ ई० तथा स्वर्गवास १९०८ ई० है। अतः ६९ वर्ष की आयु हुई।

माननीय मिर्जा जी ने स्वयं लिखा है कि "जब एक बात मे कोई झूठा सिद्ध हो जाए तो पुनः दूसरी बातों में भी उस पर विश्वास नहीं रहता।" —चश्माए मुआरफत, पृ० २२२

(८) मौलवी सनाउल्ला साहब

मिर्जा जी का मौलवी सनाउल्ला के साथ मुबाहला हुआ था कि जो पहले मरे वह झूठा। मौलवी जी की ही जीत हुई थी। इसी विषय पर मौलवी साहब का अहमदियों के साथ लुधियाना में १५ अप्रैल, १९१२ में एक शास्त्रार्थ भी हुआ था जिसमें जीतने वाले को तीन सौ रुपए देने की शर्त थी। निर्णय के लिए एक मुसलमान, एक मिर्जाई मुन्सिफ और एक सिख साहब सरपंच थे। एक मुन्सिफ और सरपंच के मेल से विजय मौलवी सनाउल्ला की हुई। तीन सौ रुपए पारितोषिक मिला। शास्त्रार्थ लिखित जो पुस्तक रूपेण फातेह कादयान के नाम से छापा गया था।

(९) प्लेग

मिर्जा जी ने प्लेग से कादयान को भविष्यवाणी के द्वारा सुरक्षित घोषित किया था किन्तु शोक ऐसा न हो सका।

श्री मोहम्मद हुसैन बटालवी

इसके सम्बन्ध में जनाब मिर्जा जी ने "१५ दिसम्बर, १८९८ से ५ जनवरी, १९०० तक तेरह मास के समय तक "जिल्लत की मार संसार में रुसवाकर" ऐसी लम्बी-चौड़ी खुदा से दुआ की थी। तब

मिर्जा जी की भविष्यवाणी सुनकर मौलवी मुहम्मद हुसैन ने हथियार रखने के सम्बन्ध में कुछ सरकारी अधिकारियो से कहा कि मेरे सम्बन्ध में मिर्जा जी ने भविष्यवाणी की है। कहीं ऐसा न हो कि पं० लेखराम की भाँति मैं भी मारा जाऊँ। इसलिए आत्मरक्षा के लिए मुझे हथियार मिलने चाहिए।

इस पर मिर्जा जी को बुला लिया गया कि आकर बतायें क्यों उनसे शान्ति रक्षा की जमानत न ली जाए। बड़े जोरों पर यह अभियोग चलने लगा। आगे का हमें कुछ नही कहना कि क्या हुआ किन्तु निर्णायक धाराएँ निम्न हैं—

(१) मैं (मिर्जा) ऐसी भविष्यवाणी प्रकाशित नहीं करूँगा जिसके के अर्थ हों अथवा ऐसे अर्थ समझे जा सकें कि किसी व्यक्ति को (अर्थात् मुसलमान हो चाहे हिन्दू हो अथवा ईसाई हो) हानि पहुँचेगी अथवा उस पर कोई ईश्वरीय कष्ट आयेगा।

(२) मैं खुदा के पास ऐसी प्रार्थना भी नही करूँगा कि वह किसी व्यक्ति को (अर्थात् मुसलमान हो चाहे हिन्दू व ईसाई हो) जलील करने अथवा ऐसे चमत्कार प्रगट करने से कि वह ईश्वरीय गजब में आ चुका है वह प्रकट करे कि मजहबी शास्त्रार्थ में कौन सच्चा और कौन झूठा है।

(३) मैं किसी बात को इलहाम बताकर प्रकाशित नहीं करूँगा जिसका यह अभिप्राय हो अथवा जो ऐसा अभिप्राय रखने की युक्ति व कारण रखता हो कि अमुक व्यक्ति (अर्थात् चाहे मुसलमान हो, चाहे हिन्दू हो अथवा ईसाई) जिल्लत उठाएगा अथवा ईश्वरीय प्रकोप का भाजन होगा।

(४) मैं इस बात से भी पृथक् रहूँगा कि मौलवी अबू सईद मुहम्मद हुसैन अथवा उनके किसी मित्र व मुरीद के साथ शास्त्रार्थ करने में कोई गाली युक्त वाक्य व हृदय को दुखाने वाला शब्द प्रयुक्त करूँ अथवा कोई ऐसा लेख व फोटो प्रकाशित करूँ जिससे उनको दु:ख हो।

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि उनके सम्बन्ध में व उनके किसी मित्र अथवा मुरीद के सम्बन्ध में कोई शब्द दज्जाल, काफिर, झूठा व बतालवी (बटालवी का बतालवी लिखने से अर्थ बदल जाते है) नहीं लिखूँगा। मैं उनके निजी जीवन अथवा उनके पारिवारिक सम्बन्धों के

विषय में कुछ प्रकाशित नहीं करूँगा जिससे उनको कष्ट पहुँचने की सम्भावना हो।

(५) मैं इस बात से भी पृथक् रहूँगा कि मौलवी अबू सईद मुहम्मद हुसैन वा उनके किसी मित्र अथवा मुरीद को इस बात के मुकाबला के लिए बुलाऊँ कि वे खुदा के पास मुबाहला (एक-दूसरे के विरुद्ध दुआ करना) की प्रार्थना करें। जिससे वह प्रगट करे कि अमुक शास्त्रार्थ में कौन सच्चा और कौन झूठा है। न मैं उनको अथवा उनके किसी मित्र या किसी मुरीद को किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में कोई भविष्यवाणी करने के लिए बुलाऊँगा।

(६) जहाँ तक मेरी शक्ति के दायरे में है समस्त व्यक्तियों को जिन पर मेरा कुछ प्रभाव या अधिकार है प्रेरित करूँगा कि वह भी स्वयं इसी पद्धति पर आचरण करें जिस पद्धति पर आचरण करने का मैंने धारा १, २, ३, ४, ५, ६ में वचन दिया है।"

—इलहमाते मिर्जा मौलवी सनाउल्ला कृत पृ० ८४, ८५

हमने चाहा था कि हाकिम से करेंगे फर्याद।
वह भी किस्मत से तेरा चाहने वाला निकला॥

(११) शहीदे अकबर पं० लेखराम आर्यपथिक

आपने श्री अलखधारी की पुस्तक में पढ़ा कि जिस व्यक्ति को धर्म पर कोई सन्देह हो तो वह श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती से मिले तो परमात्मा की कृपा से अवश्य उसके सन्देहों की निवृत्ति होगी।

इसे वीर लेखराम ने पढ़कर सरकार से अवकाश लिया और पेशावर से अजमेर की ओर चल पड़े। १७ मई, १८८१ को प्रातः-काल उद्यान में जाकर श्री स्वामी जी के दर्शन किए। प्रश्नोत्तर से सन्देह सचमुच निवृत्त हो गए। वीर जी को सत्यगुरु के दर्शन हुए और वह वैदिक धर्म में पूर्ण शक्ति के साथ जीवन को लगा बैठे। पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना की। एक धार्मिक पेपर भी निकाला।

जब मिर्जा जी ने संसार के कुछ चुने व्यक्तियों के पास अपने निशान दिखाकर मुसलमान बनाने अथवा दूसरी अवस्था में १० सहस्र जुर्माना देने का इश्तहार निकाला तो आर्यसमाज के श्री मुरलीधर जी टीचर होशियारपुर के पास भी भेजा। उनके पास इन बातों के

लिए समय कहाँ था ? किन्तु वीर लेखराम जी ने इस मिर्जा जी के आह्वान को स्वीकार करके पत्र-व्यवहार शुरू किया तो मिर्जा जी ने अन्ततः पण्डित जी की दृढ़ता को भाँपकर टालने के लिए लिख दिया कि कादयान कोई दूर तो नहीं। यहाँ पहुँचकर बात करें। तब पण्डित जी सरकारी सर्विस से हटकर वैदिक धर्म के रक्षा-कार्य में संलग्न हो गये।

कादयान में पहुँचकर दो मास तक यत्न किया कि मिर्जा जी से कोई बात निश्चित हो। वह भ्रम फैलाने से हट जायें अथवा शास्त्रार्थ करें। परन्तु सन्तोषजनक उत्तर न पाकर आर्यसमाज की स्थापना की और कादयान के आर्यसमाज के सदस्यों में मिर्जा इमामुद्दीन व मुल्ला हुसैन भी शामिल हो गये।

श्री पण्डित जी ने श्री मिर्जा जी से चमत्कारों का विस्तार बार-बार माँगा कि चमत्कार आसमानी होगा वा जमीनी ? सूर्य को पश्चिम से उदय कर दें। वा सस्कृत मे श्री श्यामकृष्ण जी वर्मा को विजित कर ले अथवा ऐसा कोई अन्य सृष्टि नियम विरुद्ध कार्य दिखा दें तो मैं आपकी शर्त मानकर आपके आधीन होकर आपके मत को स्वीकार कर लूँगा। किन्तु श्री मिर्जा जी से कुछ न बन सका।

पण्डित जी ने यह भी माँग की थी कि छः शास्त्रों में से तीन के आर्षभाष्य नहीं मिल रहे। वह अपने अल्लाह की सहायता से ढुँढ़वा दें।

अथवा

मुझे बीस वर्ष से बवासीर का कष्ट है और मस्से हैं। अपनी दुआ से ईश्वर द्वारा मुझे रोगमुक्त कर दो तो मैं आपको चमत्कारी मान लूँगा। किन्तु श्री मिर्जा जी से कुछ न बन सका।

(१२) मुबाहला

श्री मिर्जा जी ने आर्यसमाज के विरुद्ध 'सुरमाए चश्मेआर्या' (आर्यों की आँख का सुरमा) पुस्तक लिखी, उसमें पण्डित जी को मुबाहला (एक-दूसरे के विरुद्ध किसी बड़े अजाब के लिए ईश्वर से प्रार्थना करना) के लिए ललकारा और एक वर्ष तक की मौत की घोषणा कर दी।

श्री पण्डित जी ने इस पुस्तक का उत्तर नुस्खाए खब्ते अहमदिया

(अहमदी खब्त का इलाज) नामक पुस्तक लिखी—यह पुस्तक १८८७ ई० में प्रकाशित हुई।

मुबाहला की भरी सभा में एक-दूसरे के विरुद्ध शपथ खाकर दुआ माँगने की पद्धति इसलामिक है जिस पर आर्यसमाज का कुछ भी विश्वास नहीं। पुनरपि मिर्जा जी ने 'सुरमाए चश्मे आर्या' में पण्डित जी के सम्बन्ध में लिखे हुए जब्बारो कहार खुदा यदि मेरा विरोधी लेखराम कुरान को तेरा कलाम नही मानता। यदि वह असत्य पर है तो उसे एक वर्ष के भीतर अज़ाब की मौत मार।"

—सुरमाचश्मे आर्या १८८६ ई०

किन्तु पूरे ११ वर्ष बीत जाने पर भी पण्डित जी पर मौत की छाया नही पड़ी। मिर्जा जी ने जब्बार और कहर बरसाने वाले खुदा को याद किया था।

पण्डित जी ने अपनी वैदिक सभ्यता को हाथ से नही जाने दिया। मिर्जा जी के सम्बन्ध में लिखा कि—

"हे परमेश्वर! हम दोनों में सच्चा निर्णय कर और जो तेरा सत्य धर्म है उसको न तलवार से किन्तु प्यार से यथोचित युक्तियों के आधार से जारी कर और विरोधी के हृदय को अपने सत्यज्ञान से प्रकाशित कर जिससे अविद्या तथा अत्याचार का नाश हो क्योंकि असत्यवादी सत्यवादी की भाँति तेरी शरण में प्रतिष्ठा नहीं पा सकता।"

इन दोनों प्रार्थनाओं में मिर्जा जी ने एक वर्ष तक की पण्डित जी के लिए अपने जब्बार खुदा से मौत की प्रार्थना १८८६ ई० में की थी।

किन्तु पण्डित जी ने अपनी प्रार्थना में मिर्जा जी के लिए सत्यधर्म पर आने के लिए समय की पाबन्दी न लगाई। वह अपने जीवन में किसी समय भी वैदिक सिद्धान्तों को स्वीकार करे।

अन्ततः पण्डित जी की प्रार्थना ईश्वर के हज़ूर में स्वीकार हुई क्योंकि मिर्जा जी ने अपने जीवनकाल में ही अपने स्वर्गवास से पूर्व वेद को पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान घोषित कर दिया था।

(१३) शहादत रंग लाई

ऋग्वेद में शहीद की शहादत की महत्ता प्रगट करते हुए लिखा है कि—

यदंग दाशुषे त्वग्ने भद्रकरिष्यसि ।
तवैतत्सत्यमंगिरः ॥

हे प्रिय परमात्मन् ! आत्म बलिदानी और धर्ममार्ग पर अंग-अग कटाने वाले शहीद का भला करते हो । हे अंग-अंग में रमे हुए भगवन् ! यह आपका नियम सत्य पर आधारित है ।

वेद में शहीद के लिए आत्म बलिदानी का प्यारा शब्द प्रयुक्त हुआ है जो धर्ममार्ग में अंग-अग कटाकर बलिवेदी पर बलिदान दे सके ।

परमात्मा का सच्चा मित्र हविष्मान् है । यह भी ऋग्वेद में लिखा है कि—

त्वांजना मम सत्येष्विन्द्र सन्त स्थाना विह्वयन्ते समीके ।
अत्रायुजं कृणुतेयो हविष्मान्ना सुन्वता सख्यं वृष्टिशूरः ॥

—ऋ० १०।४२।४

हे प्रभो ! युद्धों अथवा शास्त्रार्थ समर मे उतरने वाले जन अपने सत्यपक्ष के विजयार्थ आश्वासन करते हुए आपकी पुकार करते हैं । परमात्मा देव स्वय शूर है, दुरित निवारक है, हिंसक शक्तियों के ताड़क है । अतः आत्म प्रदाता हविष्मान् बलिदानी वीर को सच्चा सखा बनाकर अपने अमृतपद में लेकर उसे विजयी बनाते है ।

उपस्थास्तेऽनभी व अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घ न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्यामः ॥

—अथर्व० १२।१।६२

हे पृथिवी माता । हम तेरे पुत्र-पुत्रियाँ निर्दोष, रोगरहित तेरी रक्षा के लिए उपस्थित हैं । तेरे अन्न जलादि से दीर्घायु धारण करते हुए हम तुझ पर बलिहारी हों ।

इन तीनों मन्त्रों मे बलिदान की भावना को जाग्रत् करते हुए बलिदानी परमेश्वर का सखा बनकर अमर पदवी का अधिकारी होता है ।

ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो तनूत्यजः ।
ये वा सहस्र दक्षिणा स्ताश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥

--अथर्व० १८।२।१७

जो शूरवीर युद्ध भूमियों तथा शास्त्रार्थ समर में उतरकर राष्ट्र-रक्षा तथा धर्मरक्षार्थ शरीर की बलि देते हैं व सहस्रों के दान द्वारा

प्राण त्राण दक्ष बनते हैं। वह ईश्वरीय शुभ गुणों को प्राप्त करके अमरत्व को प्राप्त होते हैं।

वीर लेखराम के बलिदान का प्रभाव अपने उग्रतम विरोधी श्री मिर्जा गुलाम अहमद पर भी पड़ा।

"सो आसमानों और जमीर के मालिक ने चाहा कि लेखराम सत्य के प्रकाशनार्थ बलि हो और सत्य धर्म की सत्यता प्रगटनार्थ बलिदान हो जाए, सो वही हुआ जो खुदा ने चाहा।"

—सिराजे मनीर पृ० २९

—तब्लीगे रसालत जिल्द ६ पृ० ५७

माननीय लाला लाजपतराय जी ने लिखा है कि "पं० लेखराम जी के बलिदान पर ही उत्तर भारत और लाहौर में बहुत जोश उत्पन्न हुआ। पण्डित जी की अर्थी के साथ हमने जितनी भीड़ देखी है, वह आज तक लाहौर में किसी अन्य अर्थी के साथ नही देखी। लोगों की भीड़ पचास सहस्र की थी। जनता ने पण्डित जी को ऐसी पदवी देकर उनका मान किया और सहस्रों नर-नारियों ने फूलों और बताशों की वर्षा की—

किन्तु मिर्जा जी इस प्रतिष्ठा से भी घबराए जैसा कि उन्होंने चिढ़कर लिखा कि "रही लाश की इज्जत, तो डाक्टर के हाथ से चिरा जाना क्या यह इज्जत की बात है ?"

—तब्लीगे रसालत जिल्द ६ पृ० ६३

मिर्जा जी ने मरहम-पट्टी का नाम चीरा जाना रखा है किन्तु शहादत का महत्त्व उससे नष्ट नही हो पाया।

पण्डित जी को किसी से निजी शत्रुता नहीं थी। वह धार्मिक उपदेशक बने, अपने सत्य सिद्धान्त पर अटल रहे, सत्य धर्म पर प्राण न्योछावर करना ही शहादत है।

शहादत की महत्ता तो कुरान शरीफ में भी स्वीकार की गई है कि—

वला तहसबन्नल्लजीना कुतिलू फि सबी लिल्ला हे अम्बवातन् बल अह्याउन् इन्दा रब्बेसिम यूजिकून।

लाखौफून अलैहिम् वलाहुमयहजनून्।

—आल इमरान आयत १६-१७

तू मत समझ उनको जो ईश्वरीय मार्ग पर मारे गये—मरा हुआ।

किन्तु सदैव है। अपनें पालनहार से मोक्षानन्दों को प्राप्त करते हैं। उनको न कोई भय और न कोई शोक है।

पण्डित लेखराम ने धर्म पर बलिदान होने के लिए ही सत्य संबल हाथ में लेकर मिर्जा जी की भविष्यवाणियों को तार-तार कर दिया और इसके लिए सरकारी पद से भी त्याग-पत्र दे दिया।

(१४) आर्थिक अवस्था चित्रण

मिर्जा जी को तो निर्वाहार्थ ही मजहबी मैदान में आना पड़ा। अन्तरंमहदन्तरम्।

१८६१ मे मिर्जा जी स्यालकोट में अल्पवेतन पर मुहरिर थे।

—याकूब अली कृत हयात अहमद जिल्द १ सं० ३ पृ० ४२

—सीहतुलमहदी पृ० ३४-३५

वेतन की न्यूनता को दूर करने के लिए मिर्जा जी ने एक परीक्षा दी। उसमें वह अनुत्तीर्ण हुए तो मजहबी मैदान उनके अनुकूल पड़ा जिसके लिए उन्होंने स्वयं लिखा कि—

"मुझे केवल अपने भोजन की चिन्ता थी किन्तु अब…पोस्ट आफिस वालों से स्वयं पूछ लो कि कितना धन प्राप्त हुआ है? मेरे ज्ञान में दस लाख से न्यून नहीं। अब ईमान से कहो कि यह चमत्कार है कि नहीं।"

—नुजूलुलमसीह पृ० १८ (भविष्यवाणी १)

मैं था गरीबो बेकसोगमनामो बे हुनर।
कोई न जानता था कि कादयान है किधर।
लोगों की इस तरफ को जरा भी नजर न थी।
मेरे वजुद की भी किसी को खबर न थी॥
अब देखते हो कैसे रजूए जहान हुआ।
इक मीरजाऐ खास यही कादयान हुआ॥

—दुर्रे समीन पृ० ८६ बराहीने जिल्द ५ पृ० १

(१५) आर्यसमाज के साथ छेड़छाड़

आगल सरकार आर्यसमाज की बढ़ती हुई शक्ति से घबरा रही थी। सर सय्यद अहमद खान तथा पजाब और देश के मुसलिम नेता ऋषि दयानन्द का साथ दे रहे थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जब गौ रक्षा आन्दोलन चलाकर गौवध निषेध के लिए प्रयत्न किया तो मुसलिम नेताओं ने उनका साथ दिया। जब जोधपुर में ऋषि को विष देने और आर्यसमाज की शक्ति को नियन्त्रित करने का यत्न किया गया। परिणामत: आंगल सरकार ने अलीगढ़ युनिवर्सिटी खोलने के साथ-साथ पंजाब में आर्यसमाज के साम्मुख्य के लिए मिर्जा गुलाम अहमद को खड़ा कर दिया।

(१६) बरतानवी सरकार का पक्ष पोषण

"मैं इस इश्तहार के द्वारा सरकारी अधिकारियों को सूचित करता हूँ…कि मैं एक ऐसे वंश से हूँ जो इस सरकार का पक्का कल्याणेच्छुक हैं।" पृ० ३

मेरे पिता मिर्जा गुलाम मुर्तजा ने…१८५७ में अपनी शक्ति से बढ़कर अंग्रेज सरकार की सहायता की थी। पृ० ३

इन १७ वर्षों के समय में मैंने जितनी पुस्तकें निर्मित की उन सब में आंगल सरकार की वफादारी और सहानुभूति के लिए लोगों को प्रेरणा दी…पुनः मैंने उचित समझकर अरबी, फारसी में पुस्तकें प्रकाशित करके अरब, शाम, रोम, मिस्र, बगदाद, अफगानिस्तान में प्रसारित कीं जिनमें जिहाद का प्रबल खण्डन करते हुए इसे इसलामी सिद्धान्त के विरुद्ध घोषित किया। अतः स्पष्ट है कि मैं आंगल सरकार का अपनी आत्मा और हृदय से शुभेच्छु हूँ…मेरा सिद्धान्त यही है जो मेरे मुरीदों को मुरीद बनाने में आवश्यक नियम है। जैसा कि बय्यत (मुरीद बनाने की पद्धति) के नियमों में जो आवश्यक नियम है उसकी चतुर्थ धारा में इन बातों को स्पष्ट कर दिया है। पृ० ६

"हमारे समस्त उपदेशों का संक्षेप ईश्वर, लोगों से सहानुभूति और बरतानवी सरकार की सच्ची सहायता करना है। यही हमारी जमाअत का ध्येय है।"

—किताबुल्बरीयत पृ० १ से १३ का सक्षेप

"हमारी यह अंजमन आंगल सरकार की सच्ची कल्याणेच्छु है और सदैव शुभेच्छ रहेगी।……हम खुदावन्द तआला का धन्यवाद करते हैं कि जिसने ऐसी गवर्नमेंट की छाया तले हमें रखा है।

—किताबुल्बरीयत, पृ० १६

अतः सिद्ध है कि मिर्जा ने जो कुछ किया आँगल सरकार की वफादारी के लिए किया। सरकार ने मुसलमानों में आर्यसमाज के बढ़ते हुए प्रभाव को क्षीण करने का अचूक उपाय समझकर मिर्जाईयत की पदे-पदे सहायता की।

(१७) गौरक्षा का प्रश्न

सरकार ऋषि दयानन्द के एकता आन्दोलन से परेशान थी कि गौरक्षा के नाम पर हिन्दू मुसलमान एक होकर १८५७ के युद्ध की पुनरावृत्ति न करें अतः सरकार चाहती थी कि मुसलमानों को आर्य-समाज से दूर रखा जाए। इसके लिए मिर्जा जी ने अपनी सेवाएँ प्रदान की और हिन्दू मुसलमानों को परस्पर एक दूसरे से दूर करने के लिए गाय का प्रश्न ला खड़ा किया वह लिखते हैं कि—"जानकार पण्डितों को ज्ञात है कि किसी वेद में गाय का हराम होना निषिद्ध नहीं पाया किन्तु ऋग्वेद के प्रथम भाग से ही सिद्ध होता है कि वेद के युग में गाय का मांस सामान्य रूप से बाजारों में बिकता था, आर्य लोग प्रसन्नता के साथ खाते थे।"

—ब्राहीने अहमदिया दरसिलसिला पृ० २३५
तबलीगे रसालत जिल्द १.पृ० ४१

"यहाँ तक कि वेद के समस्त ऋषि मनु जी और व्यास जी ने गाय का···प्रयोग धार्मिक कर्त्तव्यों में प्रविष्ट किया है और पुण्यमय समझा है।" —ब्राहीन दरसिलसिला पृ० ४१

"और कभी आवश्यकता के अवसरों पर गोवध को उचित भी समझा जैसा कि इनके सत्यार्थप्रकाश और वेदभाष्य से प्रगट है।"

—ब्राहीन जिल्द ४ दरसिलसिला पृ० २३५१

यह सब कुछ 'मुसलमानों की नाजुक अवस्था और अंग्रेजी गवर्नमेंट' नामक विज्ञापन में लिखा गया जिसमें गौवध का प्रकरण लाने का कुछ भी अभिप्राय न था। केवल सरकारे अंग्रेजी को प्रसन्न करने के लिए हिन्दू मुसलमानों को लड़ाना ही प्रयोजन था।

(१८) मुसलमान और गौरक्षा

मिर्जा अहमद सुलतान, शमाए न्याजी, खाजा हसन निजामी आदि अनेक मुसलमानों ने गौरक्षार्थ आदि अपनी पुस्तकों में कुरान शरीफ और हदीसों के प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। कितने ही मुसलिम

समझते हैं कि कुर्बानी का भाव अपने नफस को मारना है। अपने मन को बुरे कार्यों से हटाकर शुभ कर्मों में प्रवृत्त करना है। सच्ची कुर्बानी वह है जिससे कुर्बे इलाही (ईश्वरीय प्राप्ति) सम्भव है।

कुरानशरीफ की सूरा यूसुफ की तफसीर में मौलवी अशरफ अली ने हजरत याकूब की कथा में स्पष्ट लिखा है कि उन्होंने गाय की आँखों के सम्मुख उसके दूध पीते बच्चे को जिबह कर दिया जिससे खुदाबन्द का जोश गजब आ गया और ईश्वर ने हजरत याकूब के प्रिय पुत्र यूसुफ को पृथक् कर दिया उसके वियोग में रोते-रोते इनकी आँखें जाती रहीं और कमर भी टेढ़ी हो गई।

इसका कारण पूछने पर खुदा ने हजरत याकूब को जिब्राईल द्वारा यथार्थ बता दिया कि हमने तुम्हारे ऊपर यह तीनों दुःख गोवत्स की हत्या के कारण दिये हैं।

अल्जमियत देहली के जिबहि अंक में लिखा था कि—

गाय बकरी तू हजारों जिबह करके खा गया।
जानवर ने नजर कर दी जान, तेरा क्या गया।।
बे अमल यह मजहका भी है, तमाशाही नहीं।
तू हकीकत नफ्से कुर्बानी की समझा ही नहीं।।
अपनी कुर्बानी का इस दुनिया में कुछ सामान कर।
खाहिशों को नफ्स की पेशे खुदा कुर्बान कर।।

—अल्जमीयत देहली जबहि अंक १८३७

कुरानशरीफ में ही लिखा है कि लन्यनालल्लाही लोहूमोहा वला दिमाओहा वलाकि न्यनाहोहुलकवा मिनकुम। सुराहज्ज अर्थात् खुदा को कुर्बानी के पशु का मांस और उसका रक्त कदापि नहीं पहुँचता, तुम्हारे मन की दया और परहेजगारी उसकी स्वीकार होती है।

अब रही वेद की बात। वेद के सम्बन्ध में सर्वमान्य सिद्धान्त है कि—यदिनो गां हंसि—तत्वा सिसेन विध्यामः।—अथर्व

गां माहिंसीरदितिं विराजम्।

गौ को मत मारो। यह अवध्या है राष्ट्र को चमका देती है अतः गौहत्यारा सीसे की गोली से मारा जाय। क्योंकि गौअदिती और यजु के प्रथम मन्त्र में ही श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ की साधिका होने से सदैव अघ्न्या है।

कुरान में सुराबकर की आयत है कि ईश्वरीय विधान है—जो

कोई किसी प्राणी की हत्या करे वह सारे मनुष्य समाज का हत्यारा समझा जाय।

पुनरपि मिर्जा जी ने बार-बार गाय का प्रश्न उपस्थित करके हिन्दू मुसलमानों के एकता सूत्र को विच्छिन्न करने का पूर्ण प्रयास किया। इसी में ही बरतानवी सरकार को लाभ था। जिससे स्वामी दयानन्द की गौरक्षा हेतु राष्ट्रीय एकता का विघात हो और बरतानवी सरकार दोनों की फूट से निश्चिन्त होकर राज्य करे।

(१६) पाकिस्तान में अहमदियत

अहमदियों की पाकिस्तान में यह फूट डालकर राज्य शासन सँभालने वाली नीति सफल नही हुई। पाकिस्तान में जाना ही उनकी भूल थी। जब वहाँ अहमदियों को मारा गया तो कई पत्रों में उनके सम्बन्ध में लेख छपे। ऐसे लेखों की माँग जनता में बढ़ती गई।

जनता इसका कारण जानना चाहती थी।

मेरे से भी अहमदियों के सम्बन्ध में लेख माँगे गये थे। किन्तु मैंने आपत्ति के समय उनके विरुद्ध लेख लिखना मरे को मारना उचित नहीं समझा।

मेरा दृढ़ विचार था कि मिर्जा जी ने निष्पाप पं० लेखराम को गोसालाएँ सामरी मानकर ईद से मिलते दिन में मारे जाने पर अपनी भविष्यवाणी के पूरा होने की दुहाई देकर जो खुशियाँ मनाई थीं अहमदी लोग प्रतिवर्ष ६ मार्च को पं० लेखराम सामरी गोसाला कहकर उनके वध की खुशियाँ मनाते हैं। यह उसी के अपराध में ईश्वरीय प्रकोप था। क्योंकि वेद में ईश्वर की आज्ञा है कि सच्चे विद्वान् की वाणी का तिरस्कार भयावह होता है।

ब्राह्मण की गौ अर्थात् वाणी हनन सर्वथा अहितकर है। हजरत मूसा की जाति तो गोवत्स की सुवर्णमयी मूर्त्ति की पुजारी बन गई थी जिसकी कुरान में चर्चा है। जिसे मिर्जा जी ने अजातशत्रु पं० लेखराम को यह नाम देखकर उनके वध पर भविष्यवाणी की सफलता का महल खड़ा कर दिया जो कि किसी भयंकर षड्यन्त्र का नाम था।

मेरे अभियोग में सरकार ने मुझपर चालीस दोषारोपण किये थे जिसमें से एक यह भी था कि पं० लेखराम जी का वध किसी बड़ी

साजिश से हुआ है जिसे पश्चात् फरिश्ता बना दिया गया। हाईकोर्ट से मैं सम्मानपूर्वक समस्त दोषों से मुक्त घोषित किया गया।

(२०) कसम और अजाब

हम आर्यों का यह दृढ़ निश्चय है कि पण्डित जी का वध तो साजिश का परिणाम है। इस पर श्री मिर्जा जी ने लिखा कि कोई आर्य कसम खाकर यह दोषारोपण करे और एक वर्ष तक उसको अजाब भरी मौत की प्राप्ति नही तो हमारी भविष्यवाणी असत्य और हम दोषी ठहरेंगे।

बद्दोमल्ली के प्रसिद्ध शास्त्रार्थ में मैंने अहमदियों के इस चैलंज को स्वीकार कर लिया था जो भरी जनता में ऐसा किया गया था कि मैं ईश्वर को सर्वत्र व्यापक मानकर अपना यह निश्चय दोहराता हूँ कि पं० लेखराम जी का बलिदान किसी बहुत बड़ी साजिश का परिणाम और श्री मिर्जा जी की पण्डित जी से सम्बन्धित भविष्यवाणी मिथ्या सिद्ध हुई। मैं भविष्यवाणियों पर कुछ भी विश्वास नही रखता। शपथ खाना वैदिक धर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध है। पुनरपि मेरा यह दृढ़-विश्वास है कि पण्डित जी सम्बन्धी मिर्जा जी की प्रार्थनाएँ और भविष्यवाणी सफल नहीं हुई किन्तु पं० लेखराम जी का बलिदान सत्य है। तथा पण्डित जी की प्रार्थना जो सच्चे हृदय से की गयी थी कि परमात्मा मिर्जा जी के विचारों को परिवर्तित करके वैदिक धर्म का प्रकाश उनके मन पर डाले। वह सत्य सिद्ध हुई क्योंकि श्री मिर्जा जी ने अपने स्वर्गवास से कुछ समय पूर्व ही वेद को ईश्वरीय ज्ञान घोषित कर दिया था।

यदि यह असत्य है तो मैं एक वर्ष के समय में ईश्वर की ओर से दण्डित होना स्वीकार करता हूँ किन्तु एक वर्ष तक ईश्वरीय दण्ड न मिलने की अवस्था में श्री मिर्जा जी की पं० लेखराम सम्बन्धी भविष्य-वाणी के मिथ्या होने और वैदिक धर्म के सत्य सिद्ध होने का प्रमाण होगा।

परमात्मा की कृपा से अहमदी भाइयों का यह लिखना और कहना भी मिथ्या सिद्ध हुआ कि ऐसी घोषणा करनेवाला आर्य अवश्य एक वर्ष में खुदा की ओर से पकड़ा जाएगा।

(२१) भविष्यवाणी की पूर्वपीठिका

श्री मिर्जा जी ने "ब्राहीने अहमदिया" नामी पुस्तक के लिए आर्यों के विरुद्ध चन्दा माँगकर उसकी चार जिल्दें छपवाई। पं० लेखराम जी ने इसका उत्तर तकजीबे ब्राहीने अहमदिया के द्वारा दिया। १८८६ ई० मे मिर्जा जी ने सुरमा चश्में आर्य प्रकाशित किया। १८८८ ई० में पण्डित जी ने इसके उत्तर में नुस्खा खब्ते अहमदिया प्रकाशित कराया। १८९२ ई० में पण्डित जी ने तकजीब की दूसरी जिल्द छपवाई। जिसके उत्तर के लिए मिर्जा जी ने हकीम नूरुद्दीन से सहायता माँगी किन्तु फिर भी उत्तर न बन सका। तब मिर्जा जी ने २० फरवरी, १८९३ का इश्तहार निकाला।

(२२) २० फरवरी, १८९३ का इश्तहार

इश्तहार के ऊपर फारसी में एक शेर लिखा कि—

अला ऐ दुश्मने नादानो बेरहा।
बतरस अज तेगे बुराने मोहम्मद॥

अन्त मे लिखा कि—

"छ: वर्ष के समय तक कठोर दु:ख जो खारिक आदत···आदत में मुब्तला होगा।

—आईनाएकमालाते इसलाम दरसिलसिला, पृ० २३००

"जिस बात का कोई दृष्टान्त न पाया जाय उसी को खारिक आदत कहते है।"—सुरमा दरसिल०, पृ० ५३६

"जो बात मानवी शक्ति से ऊपर हो वह खारिक आदत है।"

—मकतूबाते अहमदिया जिल्द ५ नं० २ पृ० १०६ मक्तूब सं० ७६

(२३) लेखराम पिशावरी

वअदनीरब्बी वस्तजाबादुआई फी रजुलिन् मुफसदिन् उदुवुल्ला हे वर्रसूलहिल्मुसम्मालेखरामुल्फिशावरी। अन्नाहू मिन्हालिकीना··· फ़बश्शिनी रब्बी बिमौतिही फ़ी सिश्रते सनतिन्। इन्नराफ़ी जालिका लआयतल्लिश्रालिबीन।" करामातेसादिकीन का अन्तिम पृष्ठ

(२४) समालोचना

यह खुदाईइलहाम नहीं हो सकता। क्योंकि ईश्वर भविष्यवाणियों के पचड़े से रहित है। चमत्कार के अर्थ ईश्वरीय नियमों का टूटना है।

अतः भगवान् में इसकी सम्भावना नहीं।

(२) इस अरबी प्रमाण में पण्डित जी को लेखराम पिशावरी लिखा है जो सर्वथा मिथ्या है। पण्डित जी सैदपुर जिला जेहलम के थे।

(३) सिश्ते सनतिन् में छे के साथ एक वचन असंबद्ध है।

(४) अरबी में इलहाम की आवश्यकता न थी।

(५) खारिक आदत अजाब मौत को नहीं कहते कत्ल तो सदैव होते ही रहते हैं। अतः जो बात सदैव होती रहती है वह खारिक आदत (ईश्वरीय नियम विरुद्ध चमत्कार) नहीं कहलाता है।

स्वयं श्री मिर्जा जी ने स्वीकारा है कि—

उस (मसीह) की भविष्यवाणियाँ क्या थी भूचाल, अकाल युद्ध-बस उस इस्राईली ने इनका नाम भविष्यवाणियाँ क्या रखा है। परिशिष्ट अंजामे आथम, पृ० ४

(२५) ईद के साथ मिला हुआ दिन

बशिशरनी रब्बी काला मुबश्शिरन्।

स तआरिफों यौमल्ईद व लूई दो अक्रबू॥

करामाते सादिकीन, पृ० २६७

इस सारे प्रकरण में पण्डित जी का नाम तक नहीं। यहाँ श्री मिर्जाजी के विरुद्ध व्यवस्था देने वाले मुस्लिम विद्वानों का ही प्रकरण है।

अतः मिर्जाजी का यह लिखना कि ईद के साथ मिले दिन को वध होगा—यह सारा भवन ही समाप्त हो गया।

"ईद के साथ मिला दिन" यह अर्थ भी ठीक नहीं किन्तु ईद बहुत निकट है। यह अर्थ है। अतः किसी प्रकार से भी पण्डित जी की भविष्य-वाणी के साथ ईद, वध और खारिक आदत का सम्बन्ध नहीं बनता।

(२६) भयानक फ़रिश्ता

श्री मिर्जा जी ने बरकातुद्दुआ के टाईटिल पर लिखा है कि मैं मस्जिद में बैठा था कि खुदा के भेजे हुए एक भयावह फरिश्ते ने मुझसे पूछा कि लेखराम कहाँ है? एक और व्यक्ति का नाम भी पूछा। किन्तु मैं दूसरे का नाम भूल गया। अन्यथा उसे सचेत करता।

बरकात टाईटिल

(२७) छः मार्च की रक्तरंजित सायं वेला

पण्डित जी मुलतान उत्सव से लाहौर लौटे। उनके पास एक व्यक्ति शुद्ध होने की प्रार्थना लेकर मास-भर से रह रहा था। पण्डित जी छः मार्च की प्रातः को ही लाहौर लौटे थे। ऋषि-जीवन का अन्तिम दृश्य अपनी लौह लेखनी से चित्रित कर रहे थे कि महर्षि जी ने योगयुक्त होकर ईश्वर उपासना में मग्न होकर दीवाली की सायं वेला में उच्चारण किया कि—

"ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो, तूने अच्छी लीला की।" इन शब्दों के साथ ओ३म् की ध्वनि लगाई और ईश्वर को प्यारे होकर मोक्षधाम को पधारे।

इतना लिख ही पाये थे कि माताजी ने तेल लाने का स्मरण कराया। पण्डित जी ने उठकर दोनों हाथ ऊपर उठा अँगड़ाई ली और विश्वासघाती, नमक हराम कातिल ने कसाइयों की भाँति पेट में छुरा घुमाकर अन्तड़ियों को काट दिया और पकड़ से छूटकर यह गया—वह गया—और भाग निकला।

दे वा यद्यज्ञंतन्वाना।—यजु०

घृतवज्जुहोत प्रचतिष्ठता।—अथर्व०

विद्वान् जब धर्म-मार्ग पर बलि देते हैं तो उसके बलिदानरूप स्नेहमय घृत से मानसिक संकल्पाग्नि चमककर सर्व-संसार में रोशनी चमका देती है।

परमेश्वर शहीद का भला करता है। यह भगवान् का सत्य नियम वेदमन्त्र के प्रमाण से पूर्व लिखा जा चुका है।

(२८) शहादत का परिणाम

शहीद की अर्थी जब उठी तो लाहौर 'वैदिक धर्म की जय', 'पं० लेखराम अमर रहे' के जयघोषों से गूंज उठा। जनता की अपार भीड़ थी। जिन कानों ने आर्यसमाज का नाम तक न सुना था वह खिंचे हुए जलूस में सम्मिलित हो रहे थे। कोई ५० सहस्र ठाठें मारता जन-समूह वैदिक नाद गुंजा रहा था।

(२९) पापी के मारने को पाप महाबली है

आर्यों ने इस ब्रह्महत्या को ईश्वर पर छोड़ दिया। किन्तु संसार ने मिर्जा जी की भविष्यवाणी की समालोचना करते हुए लिखा कि

भविष्यवाणी पूरी नहीं हुई। यह साजिश का केस है। पुलिस ने श्री मिर्जा जी और कुछ अन्य लोगों की तलाशी भी ली।

(३०) कातिल फरिश्ता था या नमक हराम

"सहस्रों यत्नों पर भी कातिल का कुछ पता न लगा मानो वह आसमान पर चढ़ गया।"

हकीकतुल्वही पृ० ३२१ चश्माएम आरफत पृ० १७६

अहमदी कातिल को फरिश्ता मानकर भविष्यवाणी खुदा के द्वारा पूरी होने की बात कहते हैं। उनकी युक्ति यह है कि फरिश्ता न होता तो पकड़ा जाता। किन्तु स्वामी श्रद्धानन्द जी को गोली लगने के पश्चात् अहमदियों ने पुस्तक लिखी कि फरिश्ता ने श्री मिर्जा जी से जिस दूसरे व्यक्ति का नाम पूछा था वह स्वामी श्रद्धानन्द जी ही थे। इस प्रकार स्वामी जी की हत्या भी मिर्जा जी की भविष्यवाणी के अधीन फरिश्ता के द्वारा हुई है। किन्तु पं० लेखराम जी के कातिल को न पकडे जाने के कारण उसे फरिश्ता बना दिया, अब स्वामी श्रद्धानन्द जी का कातिल अब्दुर्रशीद पकड़ा जाकर फाँसी पा गया तो खुदा के फरिश्तों की यही स्थिति और उनका यही चलन है। मिर्जा जी ने स्वयं सिराजेमनीर में कातिल को इन्सान माना है कि "किसी इन्सान के दिल को खुदा ने उभारा।" पृ० ३०

मानो खुदा अपने रसूल के लिए स्वयं उतरकर लड़ा।

—नजूलुलमसीह, पृ० १४४

मिर्जा जी भी कमाल कर रहे हैं। खुदा रसूल के लिए स्वयं उतर कर लड़ा तो श्री मुहम्मद हुसैन के लिए अदालती कार्यवाई में मिर्जा जी ने लिखकर क्यों दिया कि भविष्य में मैं कोई भविष्यवाणी इनके सम्बन्ध में न करूँगा। सारी शर्तें लिखकर दीं तब खुदा कहाँ चला गया था?

पण्डित जी की शहादत के पश्चात् आर्यों के बढ़ते हुए जोश से घबराकर मिर्जा जी ने पुलिस को अपनी रक्षा के लिए रखा था?

मेरे अभियोग में भी चालीस में से एक दोष यह भी लगा कि मैंने पण्डित जी की शहादत को साजिश का परिणाम कहा है। उसके लिए न्यायालय में प्रमाण भी प्रस्तुत किये गये थे, जिनके आधार पर हाईकोर्ट ने सब बातों से मुझे मुक्त घोषित किया था।

शहादत का परिणाम

(१) श्री मिर्जा जी ने अन्ततः पण्डित जी के वध को बलिदान होना स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि—

"सो आसमानों और जमीन के मालिक ने चाहा कि लेखराम सत्य के प्रकाशार्थ कुर्बान हो और सत्यधर्म की सत्यता प्रकट करने के लिए बलिदान हो जाए।" —सिराजे मनीर, पृ० २६

बलिदान का शब्द संस्कृत का है जो शहादत के लिए प्रयुक्त होता है।

माननीय पण्डित जी की प्रार्थना कि मेरे विरोधी को सत्य वैदिक धर्म से युक्त कर। सचमुच शहीद की शहादत रंग लाई और मिर्जा जी के विचार क्रमशः वैदिक धर्म के मूल सिद्धान्तों की ओर निरन्तर आकर्षित होते चले गये। देखिए--

(१) दोजख अबदी (सदैव के लिए) नहीं।

—चश्मा ए मसीही, पृ० २६-३०

(२) यह हम नहीं कहते कि अभाव से जीव उत्पन्न होता है।

—चश्माए मारफत, पृ० १५२

(३) देखो मैं एक आदेश लेकर आप लोगों के पास आया हूँ, वह यह कि अब से तलवार के जिहाद की समाप्ति है।

—गवर्नमेंट अंग्रेजी और जिहाद, प० २४

(४) अन्ततः मैं एक रोया देखता हूँ कि···मैं एक ऐसे स्थान पर बैठा हूँ, जहाँ चारों ओर वन हैं जिनमें बैल, गधे, घोड़े, कुत्ते, सूअर, भेड़िये, ऊँट आदि प्रत्येक प्रकार के विद्यमान है। मेरे मन में डाला गया कि यह सब मनुष्य हैं जो दुष्कर्मों से इन योनियों में है।

—नजूलुलमसीह, पृ० ३७

(३१) वेद को ईश्वरीय ज्ञान घोषित किया

श्री मिर्जा जी ने अपनी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व वेदों को ईश्वरीय ज्ञान घोषित करते हुए पैगामे सुलह में लिखा कि—

(१) हम अहमदी लोग वेद के समर्थक होंगे और वेद और उसके ऋषियों का मान तथा प्रेम से नाम लेंगे। —पृ० ३०

(२) इस बिना (आधार) पर हम वेद को खुदा की ओर से मानते हैं और उसके ऋषियों को महान तथा पवित्र समझते हैं। तो

भी ईश्वरीय शिक्षा के अनुसार हमारा दृढ़ विश्वास है कि वेद मनुष्य कृत नहीं हैं। मनुष्य की कृति में यह शक्ति नहीं होती कि कोटानु-कोटि जनों को अपनी ओर आकर्षित कर ले तथा एक सदैव का क्रम स्थापित कर दे। —पृ० २६

(३) हम इन कठिनाइयों के रहते भी खुदा के डर से वेद को खुदा का कलाम जानते हैं। जो कुछ उसकी शिक्षा में भूलें हैं वह वेद के भाष्यकारों की भूलें समझते है। —पृ० २६

(४) मैं वेद को इस बात से रहित समझता हूँ कि उसने कभी अपने किसी पृष्ठ पर ऐसी शिक्षा दी हो कि जो न केवल बुद्धि-विरुद्ध हो प्रत्युत परमेश्वर की पवित्र सत्ता पर कंजूसी और पक्षपात का दोष लगाती हो। —पृ० १६-२०

(५) इसके अतिरिक्त मेल चाहने वालों के लिए यह एक प्रसन्नता का स्थान है कि जितनी इस्लाम में शिक्षा पाई जाती है वह वैदिक शिक्षा की किसी न किसी शाखा में विद्यमान है। —पृ० १४

(३२) जो बोले सो अभय, वैदिक धर्म की जय

पं० लेखराम जी ने परमात्मा से सच्चे हृदय के साथ प्रार्थना की थी कि—

> "ऐ परमेश्वर ! हम दोनों में सच्चा फैसला कर (और जो तेरा सत्यधर्म है उसको न तलवार से किन्तु प्यार से जारी कर और विरोधी के मन को अपने सत्य ज्ञान से प्रकाशित कर जिससे अविद्या और पक्षपात, तथा अत्याचार का नाश हो) क्योंकि झूठा सत्यवादी की भाँति कभी तेरे सम्मुख मान नहीं प्राप्त कर सकता।"

अन्धेर है कि मिर्जा जी ने पण्डित जी की प्रार्थना हकीकतुल्वही में प्रकाशित करते हुए कोष्ठगत शब्दों को उड़ा दिया किन्तु सत्य है—शहीद की शहादत रंग लाई। श्री मिर्जा जी वैदिक विचारों का बीज इस असार संसार से जाते हुए साथ ले गए।

हम आर्यों और पण्डित जी के साथ जो भी किया सो किया किन्तु ये शुभ संस्कार उनके भविष्य के लिए हितकर होंगे।

प्रातः का भूला अपने जीवन की सायं वेला में अपने घर आने का यत्न करे तो ठीक ही है। ओ३म् शम्।

एक सरस कविता

हमारे पास धर्मवीर प० लेखराम जी के सम्बन्ध में उर्दू, हिन्दी व पजाबी के नामी कवियों की सैकड़ों कविताएँ हैं। उर्दू कवियों में से श्री तिलोकचन्द महरूम, महाशय जैमिनि जी 'सरशार', श्री मनोहर लाल जी 'शहीद', श्री वितस्ताप्रसाद जी 'फ़िदा', श्री महाराज बहादुर 'बर्क', श्री नारायण प्रसाद बेताब, श्री रौनकराम जी शाद व देशभक्त महाशय लालचन्द जी फलक आदि की चुनी हुई कविताएं हैं। महाशय चिरञ्जीलाल जी 'प्रेम' की भी कई भावपूर्ण कविताएँ है। पजाबी कवियों में श्री अजीतसिंह जी किरती आदि की कुछ उत्तम कविताएँ हमारे सग्रह में है। ऐसे ही आर्य व मुसलमान कवियों की भी मिर्जा साहिब के बारे में बीसियो उच्च कोटि की उर्दू फ़ारसी कविताएँ हमारे पास हैं।

हम यहाँ पर पं० लेखराम जी के चरणानुरागी श्रीयुत् पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री 'अमर' की एक सरस उर्दू कविता जनाब मिर्जा गुलाम अहमद के बारे में देने का लोभ संवरण नही कर सकते।

कादियानी नबी की शान

है पकड़ी हाथ में माला। मगर दुनिया पै मतवाला॥
कहे चन्दा इधर ला ला। वह मिर्जा कादियाँ वाला॥
न जिसको धर्म से उलफ़त। न था कुछ दीन से मतलब॥
न झगड़ों से जिसे फ़ुरसत। वह मिर्जा कादियाँ वाला॥...

नुबवत घर बुलाता था। नया फ़िरका चलाता था॥
मजाहब को लड़ाता था। वह मिर्जा कादियाँ वाला॥...

निगाहें मालो ज़र पर हैं।
व फन्दे हर बशर पर हैं।

यह हीलागर मुसिकर[1] पर हैं।
वह मिर्ज़ा कादियाँ वाला ॥…
थे खाबे मौत के आदी।
हमेशा सोच बर्बादी ॥
अजब महदी अजब हादी।
वह मिर्ज़ा कादियाँ वाला ॥…
निकाह मौला से पढ़वाया। यह रस्ता किसने बतलाया ॥
लगाकर ज़ोर शर्माया। वह मिर्ज़ा कादियाँ वाला ॥
अजब गुफ़तार उसकी थी।
अजब रफ़तार उसकी थी ॥
अजब हर कार उसकी थी।
वह मिर्ज़ा कादियाँ वाला ॥…
शहीद अकबर ने ललकारा।
बेचारा घर में ही हारा ॥
यह देखा सबने नज़्ज़ारा।
वह मिर्ज़ा कादियाँ वाला ॥…
यह फिर बलिदान दिन आया,
बलि अपनी चढ़ाओ तुम।
शहीदी वेदी पर मर कर,
'अमर' बनकर दिखाओ तुम ॥[2]

पण्डित जी के बलिदान के बारे में खलीफ़ा महमूद की विचित्र बातें

पण्डित जी के बलिदान के सम्बन्ध में वैसे तो मिर्जाई लोग एक से बढ़कर एक गप्प गढ़ते आए हैं। अत्यन्त भ्रामक, अश्लील, हृदय को दुखाने वाली तथा परस्पर विरोधी बातें लिखते व कहते आए है परन्तु आश्चर्य तो इस बात का है कि मिर्जा गुलाम अहमद साहब के बेटे व मिर्जाई जमात के दूसरे खलीफा दिवंगत मिर्जा महमूद साहब ने 'तोहफत उलमलूक' पुस्तक-माला की तीसरी पुस्तक 'दावत-उल

१. मस्ती, नशा।
२. श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी की यह कविता आर्य मुसाफिर के शहीद अंक, पृष्ठ १३ पर दिनाक १५ मार्च सन् १६३७ ई० को प्रकाशित हुई थी।

अमीर' में भी मिर्जा गुलाम अहमद की भविष्यवाणियों व अपनी जमात की डींगें मारते हुए पं० लेखराम जी के बलिदान की चर्चा छेड़कर कई गप्पें मारी हैं।

यह पुस्तक अफगानिस्तान के शासक अमान उल्ला खाँ को सम्बोधित करके लिखी गई थी। अफगानिस्तान में एक मिर्जाई नेमत उल्ला खाँ को काफिर घोषित करके पत्थर मार-मारकर इस्लामी विधि से (संगसार किया गया) मारा गया। मिर्जा महमूद ने अपने चेलों को इस्लामी प्रकोप से बचाने के लिए इस पुस्तक में यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि मिर्जाई ही वास्तविक व सच्चे मुसलमान हैं। सच्चा मुसलमान होने का एक प्रमाण यह भी दिया गया कि एक हिन्दू लेखराम को मिर्जा साहब ने भविष्यवाणी करके मरवाया। उसकी अन्तड़ियाँ काटी गई। अल्लाह के फरिश्ते ने उसको मारा। इसी में लिखा है कि "उसको तेगे मुहम्मदी कत्ल करेगी। सो वह कत्ल किया गया।"[1]

अब प्रबुद्ध पाठक विचार करें कि क्या अल्लाह के फरिश्ते द्वारा मारा जाना व 'मुहम्मदी तलवार उसकी हत्या करेगी', यह एक ही बात है ?

आगे मिर्जा महमूद पण्डित जी की हत्या की घटना का इन शब्दों में वर्णन करता है—"एक व्यक्ति उसके पास आया, जिसके सम्बन्ध में यही बताया जाता है कि उसकी आँखों से लहू टपकता था और उसने आकर कहा कि वह मुसलमान से हिन्दू होना चाहता है। लेखराम ने लोगों के समझाने पर भी कि इसको अपने पास रखना ठीक नहीं, उसको अपने पास रखा और उस पर उसको अत्यन्त विश्वास हो गया और अन्त में उसने वही दिन, जिस दिन वह मारा गया— "उसके आर्य बनाने के लिए नियत किया।" शनिवार के दिन वह कुछ लिख रहा था कि उसने उसे किसी पुस्तक को देने के लिए कहा।

उसने जाहिर तो यह किया (प्रकट तो यह किया) जैसे कि वह उस वस्तु को उठाकर ला रहा है परन्तु समीप पहुँचते ही उसने उसके पेट में खंजर मारा और फिर उसको कई चक्र देकर हिलाया ताकि अन्तड़ियाँ कट जायें और फिर वह व्यक्ति जैसा कि लेखराम के सम्बन्धियों का कथन है, लुप्त हो गया।"[2]

---

१. दावत-उल अमीर, पृष्ठ २२० देखें।

२. देखिए 'दावत-उल अमीर', लेखक मिर्जा महमूद, पृ० २२१।

मिर्जाई सम्प्रदाय के संस्थापक के पुत्र तथा खलीफा साहिब की पुस्तक के इस लम्बे उद्धरण में पाठकों ने देख लिया कि एक बार भी श्री पं० लेखराम जी के साथ कोई आदरसूचक शब्द नहीं जोड़ा गया। मिर्जाई बार-बार यह झूठ बोलते व लिखते है कि दूसरों के बड़ों का सम्मान करते हैं। इनका यह कथन दूसरों को मूर्ख बनाने व छलने के लिए है।

मिर्जा महमूद स्वयं हत्यारे के क्रूर रूप का वर्णन करते हुए स्वीकार करते है कि हत्यारे ने हिन्दू बनने की इच्छा प्रकट की। पण्डित जी के विश्वास को जीता या ऐसा कहिए कि पण्डित जी ने उस पर विश्वास किया। हत्यारे ने विश्वासघात किया। अल्लाह और उसके कादियानी पैगम्बर की आज्ञा से ही तो विश्वासघात किया। फरिश्ता के विश्वास-घात पर मिर्जाई गर्व करते हैं। मिर्जाइयों का अल्लाह तो इससे भी बड़ा विश्वासघाती ठहरा।

खलीफा साहिब स्वीकार करते हैं कि फरिश्ता ने पुस्तक उठाकर लाने का दिखावा किया। ओह ! अल्लाह मियाँ के फरिश्ते ऐसे छलिए !

खलीफा साहिब ने यह निराधार कपोल-कल्पित बात लिखी है कि पण्डित जी की हत्या के दिन हत्यारे (फरिश्ते) को शुद्ध किया जाना था। न जाने यह गप्प किस प्रयोजन से घड़ी गई ? कोई प्रमाण तो दिया होता ?

आगे खलीफा साहिब ने लिखा है कि घातक ने पण्डित जी पर खंजर से वार किया। यह भी काला झूठ है। खंजर तो छुपाया न जा सकता था। वह पाजी छुरा छुपाए बैठा था। मिर्जा महमूद लिखते हैं कि हत्यारा गायब (लुप्त) हो गया। जी हाँ ! वह कायर भाग गया। खुदाई फरिश्ता था तो वहीं रुकता, लोग उसको पकड़कर पुलिस को सौंपते तो फाँसी का फन्दा गले में डाला जाता तो अल्लाह मियाँ तब अपना चमत्कार दिखाता। फरिश्ता फाँसी से न मरता।

आगे खलीफा साहिब बडी रोचक बात लिखते हैं—"लेखराम मकान की दूसरी मंजिल पर था और उसके मकान के नीचे द्वार के पास उस समय बहुत से लोग एकत्र थे परन्तु कोई व्यक्ति साक्षी नहीं देता कि वह व्यक्ति नीचे उतरा है। उसकी पत्नी व उसकी माता को यही विश्वास था कि वह घर में ही है परन्तु लोगों ने उस समय

आकर तलाशी ली किन्तु कोई व्यक्ति न मिला। पता नहीं कि धरती में गायब (लुप्त) हो गया अथवा आसमान पर चढ गया।"[१]

पण्डित जी के घर के नीचे लोगों की भीड़ पहले से ही थी, यह सर्वथा झूठ है। इस मनघड़न्त गप्प का मिर्जाई प्रयोजन यह जतलाता है कि भीड़ को पण्डित जी की हत्या के पश्चात् फरिश्ता लुप्त होता दिखाई ही न दिया। क्या मिर्जाइयों में हिम्मत है कि वे तत्कालीन किसी प्रत्यक्षदर्शी का किसी पत्रिका से प्रमाण दिखा सकें कि पण्डित जी की हत्या से पूर्व ही उनके द्वार पर भीड़ खड़ी थी। झूठ बोलने, लिखने तथा झूठ को पचाने की मिर्जाइयों की अद्भुत क्षमता (Stamina) है। फिर यह Colourful statement (चटपटा वक्तव्य) तो और भी विचित्र है कि पण्डित जी की पत्नी व माता को यही विश्वास था कि घातक घर के भीतर ही है। पाठक पुस्तक में अन्यत्र माता जी व सती लक्ष्मी का एतद्विषयक वक्तव्य पढ़कर नबी के पुत्र की सत्यनिष्ठा की प्रशंसा करें।

आगे फिर खलीफा साहिब ने मिर्जाई Style (शैली) में लिखा है कि लोगों ने घर की खोज की पर वह व्यक्ति न मिला। पता नहीं धरती में समा गया अथवा आकाश (आसमान) पर चढ़ गया। वाह! वाह!! फरिश्ता तो आसमान पर चढ़ गया और खलीफा देश-विभाजन के समय कादियाँ से आसमान पर क्यों न चढ़ गया? सब मिर्जाई आसमान पर ही तब चढ़ जाते और वहाँ से पाकिस्तान पहुँच जाते। फिर जब पाकिस्तान में तेगे मुहम्मदी (मुहम्मदी तलवार जिसकी दुहाई हिन्दुओं की हत्या के लिए मिर्जा गुलाम अहमद व सब मिर्जाई देते आए हैं) चमकी तो न कोई मिर्जाई जमीन में गायब हुआ और न आसमान पर चढ़ सका। खलीफा साहब पाकिस्तान से भागकर किसी और देश में शरण लेने पर विवश हुए।

किसी हत्यारे का पकड़ा न जाना अथवा बच निकलना इस बात का प्रमाण नहीं कि वह अल्लाह का दूत है। आज भारत व विश्व के अनेक देशों में प्रति वर्ष सहस्रों हत्यारे अपराध करने के पश्चात् पकड़ में नहीं आते और कोई उन्हें फरिश्ता नहीं कहता। पाकिस्तान में मिर्जाइयों के हत्यारों को (जो पकड़े नहीं गये) क्या मिर्जाई फरिश्ता मानते हैं? यह दोहरा मापदण्ड क्यो?

---

१. देखिए 'दावत-उल अमीर', लेखक मिर्जा महमूद अहमद, पृ० २२१।

मिर्जा महमूद की मुसलमानों को भड़काने की घृणित कुचाल

आज अपने खोटे कर्मों के फलस्वरूप मिर्जाई पाकिस्तान में पिट रहे हैं। अब ये लोग अपने आपको शान्तिप्रिय बताते हैं। 'पैगामे सुलह' (शान्ति-सन्देश) बड़े उच्च स्वर में देते हैं। पाकिस्तान के विपक्ष के पठान नेता खान वली खाँ की प्रकाशित होने वाली पुस्तक की चर्चा दैनिक पत्रों में आई है। इसमें खान वली खाँ ने सिद्ध किया है कि बर्तानिया (Britain) की प्रेरणा से सर जफर उल्ला (मिर्जाई नेता व पाकिस्तान के एक पूर्व विदेश मन्त्री) ने भारत-विभाजन की सारी योजना तैयार की। जिन्नाह को इसी व्यक्ति ने राष्ट्र-हत्या के लिए अधिक प्रेरित किया। मुसलमानों में घृणा-द्वेष फैलाने के लिए इस सम्प्रदाय ने कोई अवसर हाथ से जाने न दिया। इस सम्प्रदाय ने इस्लाम की दुहाई देकर सदा हिन्दुओं व ईसाइयों को छेड़ा। जब किसी ने उत्तर न दिया तो 'रसूल को गाली दी गई' का झूठा शोर मचाया और मुसलमानों को भड़काया।

मिर्जा गुलाम अहमद ने मुसलमानों व हजरत मुहम्मद एवं कुरान के विषय में कैसे-कैसे अश्लील शब्दों का प्रयोग किया—इस पर मुस्लिम विद्वानों ने अनेक बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखी हैं।

'दावत-उल-अमीर' पुस्तक में स्थान-स्थान पर मिर्जा महमूद ने हिन्दुओं पर चोटें करके अपनी जमात की इस्लामी कट्टरता का परिचय देने का प्रयास किया है, साथ ही मुसलमानों को भड़काने के लिए रक्त-साक्षी श्री पं० लेखराम जी के सम्बन्ध में यह निराधार झूठी बात लिख दी है, "हजरत अकदस ने उसके साथ अनेक बार वार्तालाप की तथा उसे इस्लाम की सच्चाई का मानने वाला कायल (Convince) किया परन्तु वह अपने हठ में बढ़ता गया तथा ऐसे-ऐसे गन्दे अनुवाद कुरान करीम की आयतों के प्रकाशित करता रहा कि उनको पढ़ना भी एक भले पुरुष के लिए कठिन है।"[1]

इस उद्धरण में तीन बातें कही गई हैं। (१) मिर्जा गुलाम अहमद ने पण्डित जी से कई बार वार्तालाप किया। यह काला झूठ है। वास्तविकता यह है कि पण्डित जी ने मिर्जा से वार्तालाप किया। वह स्वयं मिर्जा के घर गये जैसाकि पाठक अन्यत्र पढ़ चुके हैं। मिर्जा को

---

१. देखिए 'दावत-उल-अमीर', पृष्ठ २१८।

अपने आप कभी पण्डित जी से वार्तालाप करने व उनका सामना करने का साहस ही न हुआ। अनेक मुस्लिम विद्वान् इस तथ्य को स्वीकार करते हैं।

(२) मिर्जा गुलाम अहमद पं० लेखराम जी से अपने विचार कभी न मनवा सके। उन्हें पण्डित जी के सामने निरुत्तर ही होना पड़ा। अतः यह भी झूठ है कि मिर्जा महमूद के बाप कभी पण्डित जी को कायल (Convince) कर पाए। पण्डित जी ने तो मिर्जा साहब की पुस्तकों के उत्तर अविलम्ब छापे परन्तु मिर्जा साहब को पण्डित जी का उत्तर देने के लिए हकीम नूरउद्दीन को भी सहायता के लिए बुलाना पड़ा और अन्त समय पं० लेखराम जी की मूलभूत मान्यता को स्वीकार करते हुए लिखना पड़ा—"हम खुदा से डरकर वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते है।"[1]

निष्पक्ष पाठक अब स्वयं समझ लें कि किसने किसका सिद्धान्त स्वीकार किया ?

(३) पण्डित जी ने कुरान की आयतों के गन्दे-गन्दे अनुवाद प्रकाशित किए, यह कतई झूठ है। पण्डित जी ने कुरान का अनुवाद किया ही नहीं। अपनी पुस्तकों में यदि कुरान का कोई प्रमाण दिया है तो अर्थ अपना नहीं दिया। कुरानी आयतों का अनुवाद मुसलमान आलमों द्वारा लिखित व प्रकाशित किसी प्रसिद्ध तफसीर (यथा तफसीरे हुसैनी आदि) से दिया है। मियाँ महमूद एक भी ऐसा प्रमाण नहीं दे सके कि पण्डित जी ने अमुक आयत का मनमाना अर्थ दिया है। रही मियाँ जी की यह बात कि "आयतों को प्रकाशित करता रहा कि उनको पढ़ना भी एक भले पुरुष के लिए कठिन है" सो इसके बारे में तो हमें इतना ही कहना है कि मिर्जा साहब ने लिखा है कि "हजरत······हालत में मुझे अपनी रान पर बिठाया"। क्या कोई भला पुरुष मुसलमान अथवा हिन्दू मिर्जा जी की इस अमृत-वाणी को पढ़ना-सुनना पसन्द करेगा ?

यदि फिर भी मिर्जा महमूद श्री पण्डित जी द्वारा उद्धृत कुरान की आयतों के अर्थों को गन्दा बताते हैं तो उनका यह आरोप पण्डित जी पर नही प्रत्युत् उन माननीय मुसलमान आलमों पर है जिन्हे पण्डित जी ने उद्धृत किया है।

---

१. द्रष्टव्य 'पैगामे सुलह', मिर्जा गुलाम अहमद की अन्तिम कृति।

मिर्जा गुलाम अहमद की स्वीकारोक्ति

हत्यारा मनुष्य था, खुदा का फरिश्ता नहीं

मिर्जाई हठ व दुराग्रह से भले ही पण्डित लेखराम जी के क्रूर व विश्वासघाती हत्यारे को मनुष्य की बजाय खुदा का फरिश्ता ही कहें। वे अन्धविश्वास के जाल से न निकलना चाहें तो कोई क्या कर सकता है ? परन्तु सच्चाई तो सहस्रों पर्दे फाड़कर भी प्रकट हो जाती है ।

स्वयं मिर्जा गुलाम अहमद ने लिखा है, "अतः स्पष्ट है कि इस भविष्यवाणी में किसी इन्सान के दिल को खुदा ने उभारा ताकि उसकी हत्या करे तथा प्रत्येक दृष्टि से उसको अवसर दिया **ताकि वह अपना कार्य सिरे तक पहुँचावें**।"[1]

वास्तविकता तो यह है कि श्री पं० लेखराम जी को ऐसी मृत्यु प्राप्त हुई जिसकी कामना स्वयं हजरत मुहम्मद साहिब किया करते थे परन्तु चाहना मात्र से ही तो किसी कार्य की सिद्धि नहीं हो जाती। ऐसी मृत्यु तो किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त हुआ करती है। श्री प० ताराचन्द जी वकील ने पण्डित जी पर अपने विद्वत्तापूर्ण लेख मे बड़े मार्मिक शब्दों में लिखा है—

"**जिक्र उलशहादत** का लेखक लिखता है कि आँहजरत की यह कामना थी कि वह वीरगति पावें तथा पुन: जीवित हों और फिर शहीद हों व पुनः जन्म पावें तथा फिर वीरगति पावें। परन्तु किसी मसलेहत (भलाई) के लिए खुदा ने आँहजरत को यह ऊँचा पद प्रदान करना उचित न जाना। विचारणीय बात है कि जिस उच्च पद के लिए आँहजरत तक तरसते चले गए, हमारे महान् रक्तसाक्षी को ऐसे अधम मनुष्य के हाथों से नसीब (प्राप्त) हो गया कि वह जिसे इस बात की कल्पना तक न थी कि इस मृत्यु का क्या परिणाम होगा।" निश्चय हजरत मुहम्मद की दृष्टि में बलिदान का पद बड़ा गौरवपूर्ण है।[2]

---

१. देखिए 'सराजे मनीर', उर्दू पुस्तक, लेखक, मिर्जा गुलाम अहमद, पृ० २८।

२. देखिए 'आर्य पत्रिका', उर्दू, लाहौर, पृ० २५, दिनांक १-८ मार्च, सन् १९१९ ई०।

एक पादरी की साक्षी

पण्डित जी की हत्या करवाई तो किसने ?

मिर्जा गुलाम अहमद को पादरी अब्दुल्ला आथम के साथ एक शास्त्रार्थ में नीचा देखना पड़ा। अपनी खीज उतारने के लिए मिर्जा साहिब ने यह भविष्यवाणी कर दी कि पादरी अब्दुल्ला आथम पन्द्रह मास के भीतर मर जावेगा परन्तु पादरी साहिब इस भविष्यवाणी की तिथि से ३७ मास पश्चात् इस संसार से गये अर्थात् वह मिर्जा साहिब द्वारा निर्धारित उनके निधन की तिथि के २२ मास बाद तक जीवित रहे।

इस पर मिर्जा साहिब ने यह कहना आरम्भ कर दिया कि क्योंकि पादरी अब्दुल्ला आथम भविष्यवाणी की भयानकता से भयभीत था अतः अल्लाह मियाँ ने उसे और अवसर दिया।

ईसाई पत्रिका 'उलमायदा' के नवम्बर १६३३ ई० के अंक में इसके बारे में ऐसा छपा था—

"अब्दुल्ला आथम से किसी ने पूछा कि आप मिर्जा कादियानी के चेलों से डरते क्यों हैं ? तो आपने कहा कि मृत्यु से तो डरता नहीं परन्तु ये जो मलकउलमौत के कारिन्दे (यमदूत के कार्यकर्त्ता) हैं, वे अपने पीर व मुरशद को सच्चा सिद्ध करने के लिए **लेखराम वाला हाथ करने से कब बाज रह सकते हैं।**"[1]

इन शब्दों से स्पष्ट है कि सारा संसार मिर्जा साहिब को ही पण्डित जी की हत्या के लिए उत्तरदायी मानता था।

लाहौर के **'पैसा'** अखबार के सम्पादक मौलवी महबूब आलम साहिब को मिर्जाइयो ने कादियाँ में आमन्त्रित किया तो उन्होंने कहा, "क्या मुझे कादियाँ बुलाकर मेरी हत्या करना अभिप्रेत है कारण मेरी मृत्यु की भविष्यवाणी भी तो हो चुकी है।"[2]

हों इल्हाम जिसको फ़कत मौत ही के।
नबी क्या बमुशकल मुसलमान होगा।।

—'प्रेम' जी

१-२. देखिए 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक, पृ० ६, दिनांक १८-२-१६३४।

ईश्वर का विधि-विधान देखिए

पं० लेखराम जी का बलिदान और मिर्जा गुलाम अहमत की मौत

पाठकवृन्द ! श्री पण्डित जी का बलिदान सन् १८९७ ई० में लाहौर में हुआ। १९०८ ई० में उसी लाहौर नगर में मिर्जा गुलाम अहमद की मृत्यु हुई। पण्डित जी के चाचा श्री पण्डित गंडाराम जी ने अपने कुल के गौरव, धर्मरक्षक और जातिसेवक युवा भतीजे लेखराम की निर्मम हत्या को सहन किया। उन्होंने श्री पण्डित जी के जीवन-चरित्र में एक बड़ी सरल, स्पष्ट परन्तु विचारणीय बात लिखी है। वृद्ध चाचा का एक-एक वाक्य हृदयस्पर्शी है। हम एक उर्दू कवि के शब्दों में मिर्जाई भाइयों से कहेंगे—

दर्द में एहसास दिल में दर्द पैदा कीजिए।
फिर किसी बेदर्द पर मरने का दावा कीजिए॥

मिर्जाई भाई दिन-रात पण्डित जी के हत्यारे को फरिश्ता कहते हुए नहीं थकते। वे हत्या के कुकृत्य को अल्लाह के इलहाम का चरितार्थ होना बताते हैं। हम मिर्जा गुलाम अहमद के शब्दों को उद्धृत करके बता चुके है कि पाजी घातक एक मनुष्य था। पण्डित जी के चाचा ने लिखा—

"सर्वशक्तिमान् परमेश्वर को इस निष्पाप की हत्या का बदला लेना था। क्योंकि कल्पित इलहामों में उनको[1] भी साथ कुख्यात किया गया था। 'देर आयद दुरुस्त आयद'[2] 'सहज पके सो मीठा होवे' वाली उक्ति है। अन्त में उन्होंने यमदूत द्वारा (फ़रिश्ता मौत) मिर्जा साहिब को कादियाँखाना खुद से पकड़वाकर प० लेखराम जी के हत्या के स्थान (मौका कत्ल) खास लाहौर मँगाया तथा ऐसे भयानक रोग विशूचिका से ग्रस्त किया कि हकीम नूरुद्दीन व कई अन्य शीर्षस्थ डाक्टरों ने पूरा-पूरा यत्न किया परन्तु किसी की दाल न गली। पेट ढोल हो रहा था। नीचे का द्वार बन्द था। हाय-हाय करते हाथ-पाँव मार रहे थे....।"[3] पण्डित जी का धर्म पर बलिदान जहाँ सबके लिए एक प्रेरणाप्रद घटना है, वहाँ मिर्जा जी की मृत्यु भी कोई कम शिक्षाप्रद नहीं। जिनके नयन खुले है उन्हें देखना चाहिए। बुद्धिमानों को, सुहृदय-जनों को ईश्वर के विधि-विधान से डरकर पाप से बचना चाहिए।

---

१. अल्लाह को। २. फारसी लोकोक्ति है।
३. देखिए चाचा गण्डाराम लिखित पण्डित जी की 'स्वानेह उमरी', पृ० १३।

पंचम खण्ड

"नई-से-नई बातों

का पता लगाने में

उनकी रुचि

अत्यधिक थी।

वे ऊहावान् और वाग्मी थे।

उनकी लेखनी

बिना रुके

स्वपक्ष का मण्डन

और प्रतिपक्ष का

खण्डन

करती थी।"

पूज्यपाद आचार्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज
कार्यकर्त्ता प्रधान
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

"Physically
he was a giant,
but spiritually an
angel, he never
cared for popular
applause, or what men
said about him...
He was ever active championing Right
and combating with Wrong wherever
and in whomsoever found. Look
at the vast amount of priceless
literature which he has
bequeathed to us, and
remember he was not
a professional
book-maker.
He was
eminently a
man of
extensive research,
and his books will
ever remain a monument of
his great industry and learning."

—श्री ठाकुरदत्त धवन

"पण्डित जी
उर्दू के बड़े
जबरदस्त लेखक
थे। जिस धड़ल्ले का
व्याख्यान देते थे, उसी
धड़ल्ले की उर्दू लिखते थे।
उनके अधिकांश लेख तथा ग्रंथ
या तो दार्शनिक विषयों के सम्बन्ध
में हैं अथवा मुसलमानों और विशेषतः
कादयानी मुसलमानों के विषय में लिखे
गये। वह सबको खरे और अप्रिय सत्य
कह डालने वाले समालोचक थे। उनके
ग्रन्थ प्रायः हमारे ही सद्धर्म
प्रचारक यन्त्रालय में छपा करते
थे। जहाँ तक मुझे याद
है उनका कातिब एक
मुसलमान था, जो
हमारे प्रेस का
कातिब था।"

—श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

उनके साहित्य के सम्बन्ध में

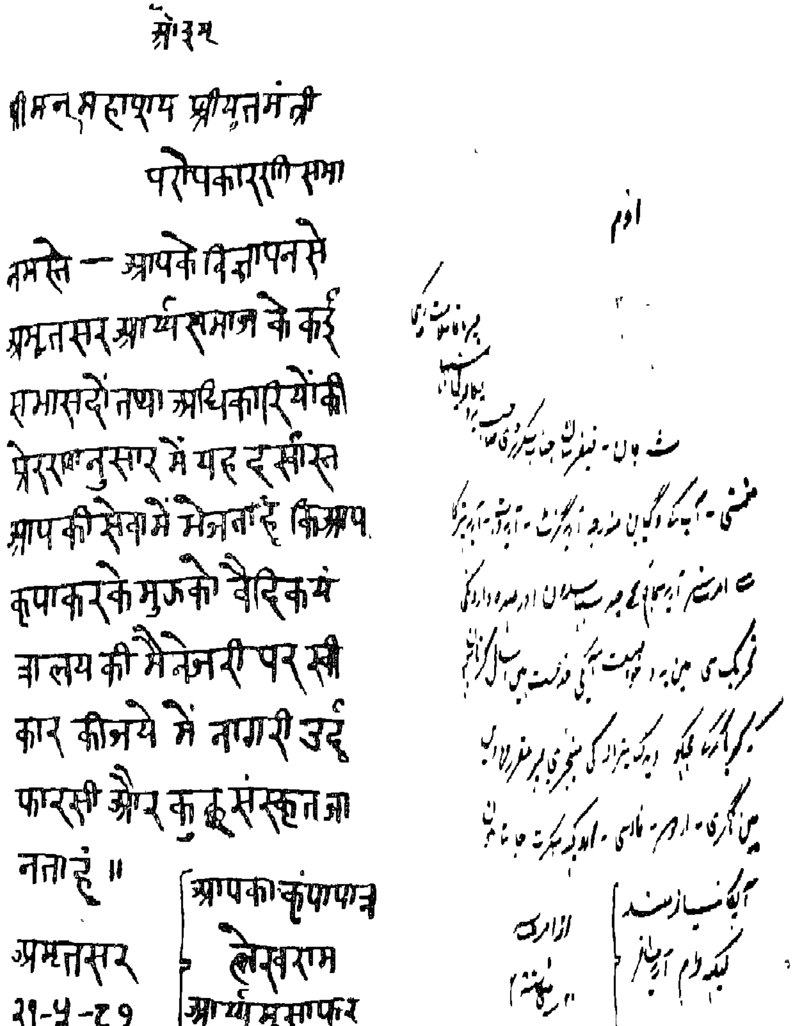
आह ! उनकी प्रतिभा व सेवा का लाभ न उठाया गया

'आर्य गजट' का सम्पादन-कार्य आरम्भ करने से कोई २$\frac{1}{3}$ मास पूर्व पूज्य श्री पण्डित जी ने महर्षि द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा को वैदिक यन्त्रालय के लिए अपनी सेवाएँ समर्पित कीं। पाठकवृन्द ! तनिक पण्डित जी के हृदय-मन्दिर में घुसकर देखिए कि यह प्रार्थना-पत्र भेजते हुए पण्डित जी के मन में क्या-क्या भाव करवटें ले रहे थे ! उस धर्मदीवाने के हृदय में ऋषि मिशन के लिए साहित्य-सृजन व प्रकाशन के लिए कितनी तड़प थी। उस प्रतिभा सम्पन्न दार्शनिक ने किस आशा व अभिलाषा से परोपकारिणी सभा को अपनी सेवाएँ भेंट की होंगी ?

उस समय तक वे विख्यात हो चुके थे। वक्ता व लेखक के रूप में उनकी आर्य जगत् से बाहर भी धूम मची हुई थी। वैदिक धर्म व ऋषि दयानन्द के प्रति अपनी असीम श्रद्धा का परिचय वे सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर दे चुके थे। उन दिनों उक्त सभा को Sincere निष्ठावान् सच्चे आर्य कर्मचारी मिलते ही न थे। ऐसी स्थिति मे भी पं० लेखराम जी को न लिया गया ? आर्यसमाज की सभाओं ने समय-समय पर ऐसे कई रत्नों की सेवाओं को ठुकराया यथा आचार्य उदयवीर जी शास्त्री सरीखे तपोनिष्ठ विद्वान् की सेवाएँ अनुसन्धान विभाग के लिए श्री महात्मा हंसराज सरीखे सूझबूझ वाले नेता ने स्वीकार न कीं और फिर पछताए।

जब पण्डित जी ने परोपकारिणी सभा को अपनी सेवाएँ समर्पित कीं तब वहाँ रायबहादुर मूलराज का बोलबाला था। पण्डित जी भी तब तक अन्य आर्यों के समान उसे ऋषिभक्त ही मानकर उसका सम्मान करते थे परन्तु श्री रायसाहिब मूलराज तो जानते थे कि प० लेखराम एक सच्चा, पक्का व दृढ़ आर्य है अत. कपटी मूलराज ने पण्डित जी को परोपकारिणी सभा के पास तक न फटकने दिया। पण्डित जी का हस्तलेख—उनकी प्रार्थना व आर्यसमाज अमृतसर के

इतिहास के हस्ताक्षर


ओ३म्

श्रीमन् महाशय श्रीयुत मंत्री

परोपकारिणी सभा

नमस्ते — आपके विज्ञापन से अमृतसर आर्य्य समाज के कई सभासदों तथा अधिकारियों की प्रेरणानुसार मैं यह दरखास्त आप की सेवा में भेजता हूं कि आप कृपा करके मुझको वैदिक यंत्रालय की मैनेजरी पर स्वीकार कीजिये मैं नागरी उर्दू फारसी और कुछ संस्कृत जानता हूं॥

अमृतसर
२१-५-८९

आपका कृपापात्र
लेखराम
आर्य्य मुसाफर

प: लेखरामजी द्वारा मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर को वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धक पद हेतु प्रेषित उर्दू व हिन्दी आवेदन-पत्र की प्रतिकृति।

आर्यसमाज अमृतसर के प्रधान एव मन्त्रीजी द्वारा प. लेखरामजी की की गई अभिशंसा वाले पत्र की प्रतिकृति भी साथ दी है।

ओ३म्

जो कि पंडित लाव राम जी अुड्डा वाले विश्व आर्य्य पुरुष हैं पिशावर के कठार सर द द्दी देश में उन ही के सत्योपदेशों से उत्तम आर्य समाज स्थित होकर उसकी उन्नति पर हैं और सत्य सनातन आर्य्य धर्म की वृद्धि में तत्पर होने से सरकारी नौकरी का बन्धन छोड़ दिया कई पुस्तक आर्य्य धर्म तथा देशोन्नति के लिये बनाये उन शुभ गुणों अधिक चतुर स्वच्छ बुद्धि फारसी उर्दू के विद्वान नागरी हिन्दी भाषा में लिखना पढ़ना हिसाब किताब का काम जानते हैं युवावस्था परिश्रम चातुर्य युक्त उद्योगी हैं वेद के यंत्रालय की मनेजरी का काम जो ध र्म संबन्धी है प्रीति से करेंगे और कर सक्ते हैं। इसलिये अमृत सर आर्य्य समाज की अन्तरंग सभा की सम्मति से यह याचना पत्र श्रीयुत मंत्री परोपकारिणी सभा के सेवा में उक्त पं॰ जी की दरख्वास्त के साथ भेजा जाता है कि उक्त पं॰ जी को यंत्रालय में मनेजर के काम पर नियत करेंगे तो निश्चित आशा है कि

यंत्रालय को बहुत लाभ होगा ॥

ता- २१ - मयि सं १८८७ - ई॥

दस्तखत पं॰ धर्म चन्द प्रधान आर्य्य समाज अमृत सर ॥

गोपालदास मंत्री आर्य्य समाज अमृतसर

साहित्यकार पण्डित लेखराम

'धर्मवीर महान थे शर, लेख राम समान थे'

महर्षि दयानन्द जी अद्भुत वक्ता व साहित्यकार थे। उन्होंने साहित्य के महत्त्व को बहुत अच्छी प्रकार से समझा। उनके पश्चात् आर्यसमाज के आदिकाल में लेखनी के कई धनी कार्यक्षेत्र में आगे आए। जिन विभूतियों व विद्वानों ने अपनी लेखनी से वैदिक धर्म-प्रचार की धूम मचा दी। पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, पं० लेखराम व पं० कृपाराम शर्मा (स्वामी दर्शनानन्द), महात्मा मुन्शीराम, पं० आर्यमुनि जी उनमें सबसे अग्रिम पंक्ति में हैं। पं० लेखराम जी की लेखनी के विषय में डा० सूर्यदेव जी ने बड़ी मार्मिक पंक्ति लिखी है—

"धर्मवीर महान् थे शर, लेख राम समान थे' अर्थात् आर्य पथिक लेखराम के लेख ही श्री राम के बाण के सदृश थे। जो कार्य श्री राम के बाण करते थे, वही काज लेखराम जी के लेख करते थे। इसका एक दूसरा अर्थ भी है—

उनकी लेखनी के कार्य की ओर संकेत करते हुए महाकवि नाथूराम 'शङ्कर' शर्मा जी ने अपनी एक प्रसिद्ध रचना में लिखा है—

शुद्ध भावों में भयानक भावना भरना नहीं।
बोधवर्द्धक लेख लिखने में कमी करना नहीं॥

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने लिखा है कि महर्षि दयानन्द के साहित्य के पश्चात् आर्य सामाजिक साहित्य में पं० लेखराम कृत ग्रन्थों की ही सर्वाधिक माँग रही है। पं० लेखराम का साहित्य निष्पक्ष मुसलमान भी चाव से पढ़ते थे। हिन्दुओं में मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी के उर्दू साहित्य को जो लोकप्रियता प्राप्त थी, वही सम्मान पं० लेखराम के साहित्य को प्राप्त हुआ। इन तीनों बातों का कारण स्वामी जी ने स्वयं बताया है—"पं० लेखराम की शैली ही केवल मात्र लोकप्रिय नही अपितु, उनका एक-एक शब्द सच्चे हृदय से निकला है, इसलिए पढ़ने वाले पर अद्वितीय प्रभाव अङ्कित करता है।"[1]

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पण्डित जी की लेखनी के प्रभाव की तुलना मुन्शी इन्द्रमणि जी के साहित्य से करते हुए दोनों का भेद भी

---

१. 'कुलियात आर्य मुसाफिर', प्रथम संस्करण भूमिका, पृष्ठ अल्फ।

बताया है। मुन्शी जी की लेखनी विरोधियों को परास्त तो कर सकती थी परन्तु विपक्षी की मान्यताओं को जड़मूल से हिलाने में सक्षम न थी। पं० लेखराम की शैली का अपना ही निरालापन था। अपने पक्ष के लिए बीसियों प्रमाण, उदाहरण, युक्तियाँ प्रस्तुत करके वह एक रंग जमा देते थे, विरोधी को हिला देते थे। स्वामी जी ने ठीक ही लिखा है "अतः उनकी लेखनी के ओज को वही न्यायप्रिय सज्जन जान सकते हैं जिनकी मान्यताओं को उनकी लेखनी ने समूल हिला दिया था।"[1]

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पण्डित जी के सम्पूर्ण साहित्य को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है। यह वर्गीकरण सर्वथा उपयुक्त है और दोषरहित है। आर्यसमाज के एक स्वर्गीय विद्वान् लेखक 'श्री पानीपति आर्य' ने भी ऐसा ही वर्गीकरण किया है।[2]

प्रथम भाग में वे पुस्तक-पुस्तिकाएँ हैं जो वैदिक मन्तव्यों के मण्डन में निकाली गई। द्वितीय भाग में वह साहित्य है जो अवैदिक मतों के वैदिक धर्म पर किए गये आक्रमणों के उत्तर में प्रकाशित किया गया। तृतीय भाग में ऐसी पुस्तक-पुस्तिकाएँ है जो मुसलमान भाइयों के आक्षेपों के उत्तर में लिखी गई। इनमें वह साहित्य भी है जो इस्लाम से निष्कासित मिर्जाई अथवा अहमदिया सम्प्रदाय के आक्रमणों के उत्तर में लिखा गया।

पण्डित जी की एक पुस्तिका हिन्दी भाषा में है शेष सारा साहित्य उर्दू में है। हाँ, एक पुस्तिका फारसी भाषा में है। यह है 'आईनाए शफायत' अर्थात् 'क्षमा दर्पण'। मुसलमान भाई यह मानते हैं कि हम कितने भी पाप क्यों न करें हजरत मुहम्मद साहेब की कृपा से सब क्षमा हो जावेंगे। इस मान्यता की समीक्षा बड़ी सरल, सुबोध, सरस, सजीव शैली में की गई है। छोटी-सी पुस्तिका में प्रमाणों की झड़ी लगा दी गई है। यह २५ अप्रैल, १८९५ ई० को लिखी गई।

पण्डित जी ने लगभग १२ वर्ष धर्म-प्रचार का कार्य किया। दिन-रैन वेद-प्रचार के लिए घूमते रहे। इस कठोर कार्य को करते हुए धुन के धनी ने सहस्रों पृष्ठ लिख दिये। साहित्य भी ऐसा कि मौलिक व

---

१. 'कुलियात आर्य मुसाफिर' प्रथम, संस्करण, पृष्ठ अल्फ।

२. 'आर्य मुसाफिर' मासिक उर्दू का फरवरी १९०६ ई० का अङ्क, पृ० ३७७-३९० तक।

स्थायी महत्त्व का। दो-तीन सहस्र पृष्ठ की सामग्री तो ऋषि-जीवन की एकत्रित कर गये। यह बृहद् आकार में अब देवनागरी अक्षरों व हिन्दी भाषा में आर्यसमाज नया बाँस देहली ने छपवाया है। पृष्ठ संख्या १०४० है। इसकी यदि अनुक्रमणिका ही कोई तैयार करें तो हमारे विचार में इसी ग्रन्थ के आकार के ३२ पृष्ठ से कम होने का प्रश्न ही नहीं उठता। जो साहित्य वीरवर छपवा गये वह कुल मिलाकर दो सहस्र (२०००) पृष्ठ बनता है। जो अप्रकाशित छोड़ गये उसके आठ-नौ सौ पृष्ठ बनते हैं।[1]

इसके साथ यदि उनके 'सद्धर्म प्रचारक', 'आर्य गजट', 'धर्मोपदेश' व विजय आदि में प्रकाशित लेख भी सग्रह कर लिए जावें तो हमारी धारणा है कि एक सहस्र पृष्ठ का साहित्य और हो जाता। इस प्रकार बारह वर्षों[1] में सरस्वती के इस वरद पुत्र ने लगभग सात सहस्र (७०००) पृष्ठ की सामग्री दी है। यह मध्यमान संसार में विरले साहित्य सेवियों का ही बनता है। आर्यसमाज के दिवंगत लेखकों में केवल पं० गगाप्रसाद जी उपाध्याय को यह सौभाग्य प्राप्त हो सका।

पण्डित जी का प्रथम लेख

जब इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण छप रहा था तो पण्डित जी की दो महत्त्वपूर्ण कृतियों का हमें पता चला। इनमें से एक इस ग्रन्थ मे हमने अनूदित करके दे दी है। यह है श्री पण्डित जी का प्रथम लिखित भाषण 'आर्य धर्म के सार्वभौमिक होने के प्रमाण और उसकी भावी उन्नति के दृढ़ चिह्न'। यह अपने आप मे एक ट्रैक्ट बनता है। पण्डित जी ने अपने मित्र गगाराम जी के सामने इसे लिखा और उन्हीं के पास यह पड़ा रहा।

पण्डित जी की जिस दूसरी कृति की खोज में हम सफल हुए हैं, वह है 'आइनाए इजील'। यह सोलह पृष्ठ की खोजपूर्ण पुस्तिका है। इसके अन्त में पण्डित जी की लिखी एक गजल—

'क्यों रे गाफिल तुझे कुछ खबर है कि नहीं'

इसी के पृष्ठ १२ पर पण्डित जी की प्रसिद्ध कविता—

'नगाड़ा धर्म का बजता है आए जिसका जी चाहे'

---

१ 'कुलियात आर्य मुसाफिर' उर्दू संस्करण भूमिका पृष्ठ हे।

छपी है। यह पुस्तिका कुलियाति आर्य मुसाफिर में नहीं दी गई। पता नहीं महात्मा मुन्शीराम जी व मास्टर लक्ष्मण जी के हाथ क्यों न लगी। लेखक के पास इसके सन् १८८८ ई० में प्रकाशित प्रथम संस्करण की एक प्रति है। यह भी स्मरणीय है कि इस पर पण्डित जी का नाम पण्डित लेखराज छपा है।

पण्डित जी के आरम्भिक युग की ये दोनों कृतियां स्वाध्याय व योग्यता का अच्छा परिचय देती हैं। १८८८ ई० तक तो वे आर्य गजट के सम्पादक के नाते विख्यात हो चुके थे। १८८४ ई० में तो उनके सार्वजनिक जीवन का आरम्भ ही था।

इन दो के अतिरिक्त पण्डित जी की ३३ पुस्तकें उपलब्ध हैं जो अधिक प्रसिद्ध हुईं। नौ पुस्तकें वैदिक मन्तव्यों के मण्डल में लिखी गई हैं।

छः पुस्तकें आपने हिन्दुओं के पौराणिक विचारों के विषय में लिखी हैं। इनमें 'रामचन्द्र जी का सच्चा दर्शन' भी एक है। 'इतरे रूहानी' भी इसी में से एक है। इसकी लिपि फारसी है परन्तु भाषा हिन्दी। यह पुस्तिका पद्य में है।

ईसाई मत पर आपने सात पुस्तकें लिखी। पण्डित जी के साहित्य ने ऐसी धाक जमाई कि उनके जीवन के अन्तिम दिनों में क्रिश्चन विद्वानों ने आर्यसमाज पर फिर प्रहार करने का साहस न किया।

मुसलमानों के बारे में आपने ग्यारह पुस्तकें लिखीं। जिस फारसी पुस्तिका की पीछे हमने चर्चा की है, वह मुसलमानों को प्रीतिपूर्वक वैदिक धर्म को ग्रहण करने का सादर निमन्त्रण है। यह एक अपील है। इन ग्यारह के अतिरिक्त एक और पुस्तिका हमें 'रक्त साक्षी लेखराम' लिख चुकने के पश्चात् प्राप्त हुई है। यह पुस्तिका है 'मुहमदियों का मुता'। यह उर्दू में कोई २८ पृष्ठ की है और हिन्दी में ३६ पृष्ठ बनेंगे। पुस्तिका खोजपूर्ण व मौलिक है। पण्डित जी के बलिदान के पाँच वर्ष पश्चात् 'आर्य मुसाफिर' में छपी थी और

---

१. श्री पं० लेखराम जी ने ११ मई सन् १८८१ ई० को आर्यसमाज मे प्रवेश पाया था। इस दृष्टि से यदि उसी दिन से हम उनकी सामाजिक व साहित्यिक सेवाओ का लेखाजोखा करें तो यह साहित्य उनके १६ वर्ष के परिश्रम का फल है। पण्डित जी स्वयं ऋषि-दर्शन के दिवस से समाज में प्रवेश मानते हैं।

पाँच मार्च, १९७७ ई० को पण्डित जी के बलिदान के ठीक अस्सी वर्ष पश्चात् हम इसकी खोज कर पाये है।

उनकी स्थिति व उनका साहित्य

पं० लेखराम जी ने जिन परिस्थितियों में साहित्य का सृजन किया यह उन्हीं की दक्षता, कार्यकुशलता, उत्साह, चाह व लग्न का चमत्कार है। साधारण पुरुष परिस्थितियों से घिरकर दबते हैं परन्तु महापुरुष अपनी अन्तःस्थिति के कारण परिस्थितियों की प्रतिकूलता में चमकते एवं उभरते हैं। पं० लेखराम जी ने कभी भी परिस्थितियों का रोना नहीं रोया। वैदिक धर्म के इस दुर्गपाल की एक टिप्पणी पढ़कर लेखक भावविभोर होकर अनायास पुकार उठा—

तेरी हिम्मत पै बलिहारी

वह टिप्पणी है—"जिन पुस्तकों पर यह चिह्न हैं वे तैयार हो चुकी हैं परन्तु एक स्थान पर अधिक न रहने के कारण अभी छपी नहीं। शेष समस्त पुस्तकें पुस्तकाध्यक्ष, आर्यसमाज लाहौर और लाला रामचन्द्र जी वैश्य, लाला का बाजार, मेरठ और सम्पादक महोदय, वैदिक विजय, अजमेर और कार्यालय, आर्य गजट पत्रिका, फिरोजपुर छावनी से प्राप्त हो सकती हैं।"[1]

इस टिप्पणी से यह भी पता चलता है कि पण्डित जी का साहित्य लगभग सभी आर्य पुस्तक बिक्री केन्द्रों से उपलब्ध था। उनके जीवन काल में ही उनकी सभी पुस्तकें प्रायः एक से अधिक बार प्रकाशित हुईं। उनके बलिदान के पश्चात् भी एक-एक पुस्तक कई-कई बार निकली। 'कुलियात आर्य मुसाफिर' एक बार महात्मा मुन्शीराम जी ने छापी और एक बार मास्टर लक्ष्मण जी ने।

समर्पण भाव

पण्डित जी के सम्पूर्ण साहित्य के सर्वेक्षण को यहाँ देने की तो इच्छा थी परन्तु ग्रन्थ के आकार विस्तार का भय भी लेखक को सता रहा है अतः यह विचार तजना पड़ा। मनीषी लेखराम ने साहित्य के सृजन व प्रकाशन में जिस भक्ति भाव व त्याग का प्रकाश किया वह वन्दनीय है। इसका एक पहलू और भी है। पण्डित जी ने अपने कई

१. 'तारीखे दुनिया' हिस्सा अव्वल, प्रथम संस्करण के पृ० ७६ का अन्त।

ग्रन्थ गुणियों को समर्पित करके अपने पुनीत, विनीत व समर्पण भाव को दर्शाया है। 'श्रीराम का सच्चा दर्शन' महात्मा हंसराज को समर्पित किया (परन्तु अट सहित conditional)—'तारीखे दुनिया' मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी को इन शब्दों के साथ समर्पित किया गया था।[1]

अर्पण - लेखक इस पुस्तक को अपने प्रतिष्ठित विद्वान् आर्य भाई पं० गुरुदत्त जी स्वर्गवासी के अर्पण करता है।"

विनीत
लेखराम आर्य पथिक

पण्डित जी की पुस्तक 'तारीखे दुनिया' प्रथम भाग का हिन्दी अनुवाद 'ऐतिहासिक निरीक्षण' नाम से १८९४ ई० में प्रयाग से प्रकाशित हुआ था। अनुवादक के नाम का पता नहीं। पं० भीमसेन शर्मा व्यवस्थापक सरस्वती प्रेस प्रयाग से प्राप्त होती थी। सम्भव है अनुवादक भी वही हों। पं० भीमसेन की आरम्भिक शिक्षा उर्दू मे ही हुई थी। लेखक का अब यही मत है कि यह अनुवाद पं० भीमसेन ने ही किया था। 'सद्धर्म प्रचारक' में छपी समालोचना से पता चलता है कि अनुवाद की भाषा व छपाई भी बढिया थी।[2]

पण्डित जी की पुस्तक 'मूर्त्ति प्रकाश' का सिंधी भाषा मे भी अनुवाद छपा था। यह अनुवाद बाबू बीचाराम जी के पुरुषार्थ से सक्खर आर्यसमाज ने छापा था।[3]

समय-समय पर कई नगरों से उत्साही धर्मप्रेमियों ने पण्डित जी के साहित्य का (मूल व अनुवाद) प्रकाशन किया परन्तु आर्यसमाज ने इन प्रकाशनों की सुरक्षा की व्यवस्था नहीं की। इन पंक्तियों के लेखक ने यथासम्भव अधिक-से-अधिक जानकारी प्राप्त करने का जो यत्न किया वह पाठकों के सामने है।

पण्डित जी के साहित्य का सौन्दर्य एक ही वाक्य में बताने के लिए हम मराठी भाषा में प्रयुक्त तीन शब्दों का प्रयोग करते हुए लिखेंगे कि उनके शब्दो में प्रचण्ड नाद, माधुर्य व अर्थ माधुर्य है।

पण्डित जी ने स्वयं किसी भी मत पर पहिले कुछ नहीं लिखा।

---

१. वही टाईटल का पृष्ठ सख्या चार प्रकाशन का सन् १८९० ई०।
२. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', १० अगस्त, १८९४ ई०, पृ० ५।
३. वही, २८ जुलाई, १८९४ ई०, पृ० ५।

सब पुस्तकें विधर्मियों के आक्षेपों के उत्तर में लिखी गई। इसलिए महात्मा मुन्शीराम जी के शब्दों में उन पर कठोरता का आरोप लगाना निराधार व अन्यायपूर्ण है।

पण्डित जी के कई ग्रन्थों का तो कई-कई बार राष्ट्रभाषा में अनुवाद छप चुका है परन्तु लगभग सम्पूर्ण 'कुलियात आर्य मुसाफिर' का तो एक ही बार दो खण्डों में अनुवाद छपा है। इसमें से कुछ पुस्तकों का तो श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री ने अनुवाद किया और अधिकतर का अनुवाद विख्यात शास्त्रार्थ महारथी पं० लेखराम जी के मिशन के लिए आजीवन कार्यरत रहने वाले श्री प० शान्ति प्रकाश जी ने किया है। यह अनुवाद आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के विभाजन से पूर्व उक्त सभा द्वारा प्रकाशित करवाया गया। इसका श्रेय श्री पं० शान्तिप्रकाश जी, श्री स्वामी ओमानन्द जी व श्री प्रो० रामसिह जी पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को ही जाता है। 'स्त्री शिक्षा' भी एक से अधिक बार राष्ट्रभाषा में छपा है परन्तु इसका अनुवाद सर्वथा दोषयुक्त है। इसे सन् १६३३ में लाहौर से भक्त प्रवर हुतात्मा वजीरचन्द शर्मा जी ने प्रकाशित किया था।

गोविन्दराम हासानन्द की ओर से भी वर्षों पूर्व इस दिशा में कुछ कार्य हुआ था। पण्डित जी के मस्ताने अनुगामी स्व० मास्टर लक्ष्मण जी ने भी कुछ पुस्तके हिन्दी में अनूदित करके छपवाई थी।

पण्डित जी के बलिदान सम्बन्धी साहित्य

मिर्जाई भाई धृष्टता का परिचय देते हुए छः मार्च का दिन अपने नबी की नबुवत का एक प्रमाण और निशान मानते हुए, विजय दिवस के रूप में मनाते रहे है। लेखराम नगर (कादियाँ) में तो धूम-धड़ाका करके वे आर्यों के घाव हरे कर दिया करते थे। आर्यसमाज ने इस विषय पर मिर्जा जी के अनुयायियों से कई शास्त्रार्थ किये। बीसियों छोटी-बड़ी पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं। श्री स्वामी योगेन्द्रपाल जी देव-भवन (दयानन्द मठ) दीनानगर, महता जमनादास जी बी० ए०, श्री सोमराज शर्मा, श्री शामलाल जी पटियाला निवासी, श्री महाशय चिरञ्जीलाल 'प्रेम', श्री पं० भोजदत्त जी आर्य पथिक आगरा, श्री प० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी, श्री आचार्य देवप्रकाश जी, वेदविद् स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ (अन्तिम दिनों में सरस्वती लिखा

करते थे)[1], आचार्य चमूपति जी, स्वर्गीय मास्टर श्री लक्ष्मण जी रामनगरी आदि विद्वानों ने बड़ी योग्यता से एतद्विषयक साहित्य का सृजन किया।

पण्डित जी के बलिदान के पश्चात् जिन महानुभावों ने सर्वप्रथम इस विषय पर लेखनी उठाई वे थे श्री महता जैमिनि जी (स्वामी ज्ञानानन्द), स्वामी योगेन्द्रपाल जी, श्री पं० सोमराज शर्मा लेखराम नगर (कादियाँ) श्री स्वामी दर्शनानन्द जी आदि। भूमण्डल प्रचारक जैमिनि जी उन दिनों बटाला में रहते थे। यह नगर कादियाँ से केवल १७ किलोमीटर की दूरी पर है। मिर्जा गुलाम अहमद ने पण्डित जी के बलिदान के पश्चात् घावों पर नमक छिड़कते हुए कुछ ट्रैक्ट, पर्चे व विज्ञापन प्रकाशित किये। जैमिनि जी ने इनका युक्तियुक्त उत्तर दिया।

पण्डित जी के बलिदान पर आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के कुछ उत्साही कर्णधारों ने लेखराम स्मारक समिति बनाई। राय ठाकुरदत्त घवन इसके मन्त्री थे। इसी समिति ने श्री जैमिनि जी के सात ट्रैक्ट प्रकाशित करके मिर्जा गुलाम अहमद के नवीन मत की पोल खोली।[2] उन ट्रैक्टों के नाम निम्नलिखित थे—

(१) 'पं० लेखराम की शहादत'

(२) मिर्जा साहिब की पेशगोइयों की लुगवियत' पृष्ठ संख्या ३२ है।

(३) 'मिर्जा साहिब की दोजखी चालें'

(४) 'मिर्जा साहिब का जाल'

(५) 'मिर्जा साहिब की नबुवत'

(६) 'मिर्जा साहिब के इलहाम और कारस्तानियाँ'

(७) 'मिर्जा साहिब के फरिशते'।

इन सात ट्रैक्टों की खोज में इन पंक्तियों के लेखक ने घोर परिश्रम किया। अनेक विद्वानों से पूछताछ की परन्तु कुछ भी अता-पता न चला। सौभाग्य से अलभ्य साहित्य की खोज में पं० लेखराम जी की

---

१. द्रष्टव्य सन्ध्या लोक आदि पुस्तकें।

२. द्रष्टव्य जीवन-चरित्र श्रीमान महता जैमिनि जी वैदिक मिशनरी, पृ० ७५-७६, लेखक श्री मास्टर गुरुदित्ता मल जी कमालिया निवासी।

प्यारी गंगोह नगरी जाना पड़ा। वहाँ पण्डित जी के वीर शिष्य दानी और ज्ञानी स्व० श्री रहतू लाल जी प्रधान के संग्रह से इनमें से पाँच ट्रैक्ट मिल गये हैं। लेखक का नाम तब जैमिनि नहीं था। तब वह जमनादास बी० ए० मुख्याध्यापक थे। एक-एक ट्रैक्ट ओजस्वी भाषा में लिखा गया है। बड़े खोजपूर्ण हैं। खेद है कि आर्यसमाज ने यह सारी माला सुरक्षित न रखी। जो पुस्तकें हमें मिली हैं उनके नाम निम्न हैं। विद्वान् पाठक मास्टर गुरदित्ता मल जी की दी नाम सूची से स्वयं इनको मिला ले। नामों में इतना भेद बड़ा खटकता है।

(१) 'श्रीमान पं० लेखराम जी की काबले यादगार शहादत' पृ० संख्या १६ है। (२) श्रीमान पं० लेखराम जी की शहादत और उसके अमली नतायज' पृ० संख्या २४ है। (३) 'पं० लेखराम की शहादत और मिर्जा' साहिब की चालाकियाँ' पृ० संख्या ३२ है। (४) पं० लेखराम की शहादत और मिर्जा कादियानी के इशतहारात का फोटो पृ० संख्या १६ है। (५) 'रब उल कादियानी पेशगोइयों की लुगवियत' पृष्ठ संख्या ३२ हैं।

इसी पुस्तक माला के दो और पुष्प लेखक को श्री रहतूलाल जी प्रधान के पुस्तकालय से मिले हैं। (१) पं० लेखराम आर्य मुसाफिर का धर्म पर सच्चा बलिदान' पृष्ठ संख्या २४ है। लेखक हैं श्री बनवारी लाल जी वैश्य करनाल। (२) 'आर्य धर्म की तौहीन और बेअदबी करने में इस्लाम की पेशकदमी' लेखक एक आर्य। पृष्ठ संख्या ३२। ये सारी पुस्तिका 'सद्धर्म प्रचारक' में भी एक लेख के रूप में छपी मिलती हैं।[1]

इस पुस्तकमाला का द्वितीय पुष्प मुन्शीराम जी का लिखा 'वैदिक धर्म को एक और सख्त धक्का लगा' पुस्तिक थी। लेखक ने इसे सद्धर्म प्रचारक के सम्पादकीय के रूप में क्रमशः छपा देखा व पढ़ा है।[2]

जमनादास जी की पुस्तकाएँ भी कुछ तो 'सद्धर्म प्रचारक' में तब छपी थीं। १९३५ ई० में प्रकाशित हुई श्री पं० देवप्रकाश लिखित पुस्तक 'दाफे ओहाम' इस विषय की सर्वोत्तम पुस्तक है। यह एक

१. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', पृ० ५–१२ तक २० अगस्त, १८९७ ई०।
२. वही, १२ व १९ मार्च, १८९७ ई०।

अद्‌भुत शोध ग्रन्थ है। आर्यसमाज लेखराम नगर (कादियाँ) द्वारा प्रकाशित 'हको वातिल का फैसला' ट्रैक्ट भी महत्त्वपूर्ण है। इसके लेखक थे मौलवी अनायत उल्ला साहिब। वह कादियाँ निवासी थे। श्री पं० शान्तिप्रकाश जी ने इस विषय पर जो व्याख्यानों, लेखों व पुस्तिकाओं द्वारा कार्य किया है, उसका अपना ही एक महत्त्व है। श्री पं० शान्ति प्रकाश जी व श्री पं० निरञ्जन देव जी दोनों पर मिर्जाइयों ने अभियोग भी चलाए। पं० शान्तिप्रकाश जी ने कारावास का कठोर दण्ड भुक्ता, पाँव में बेड़ियाँ तक डाली गईं। पण्डित जी की टाँगों पर इससे घाव हो गये। श्री पण्डित जी लाहौर हाईकोर्ट से निर्दोष घोषित होकर छूटे। श्री प० निरञ्जन देव जी पर भी लेखराम नगर (कादियाँ) में वीर लेखराम के बलिदान के गौरव पर एक खोजपूर्ण ओजस्वी व्याख्यान के कारण अभियोग चलाया गया। यह घटना देश-विभाजन के पश्चात् की है। आर्यसमाज पर किया गया यह वार भी बेकार हो गया।

यह भी स्मरण रहे कि देश-विभाजन से पूर्व 'आर्य मुसाफिर, मासिक, 'प्रकाश' साप्ताहिक व 'आर्य वीर' साप्ताहिक 'आर्य पत्रिका' उर्दू लाहौर ने जो शहीद विशेषांक निकाले वे बड़े उपयोगी व उच्च स्तर के थे। 'आर्यवीर' साप्ताहिक जालंधर ने मार्च १९५३ ई० में जो विशेषांक निकाला वह इस परम्परा की अन्तिम कड़ी था। वैसा अंक फिर देखने-पढ़ने को नही मिला। सम्पादक महोदय के अनुसार इस अंक में तीन लेख सर्वोत्तम थे। इन तीन लेखो के लेखक थे श्री शान्तिप्रकाश जी, श्री प० निरञ्जन देव जी तथा राजेन्द्र 'जिज्ञासु'। इस अंक में स्थायी महत्त्व की सामग्री है।

पं० लेखराम जी का एक ऐतिहासिक कार्य
महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र

महर्षि दयानन्द जी महाराज से कई बार उनके घर-बार, माता-पिता व अन्य स्थान आदि के बारे में पूछा गया। महाराज इन प्रश्नों को टालते ही रहे। इसके अनेक कारण थे। एक मुख्य कारण तो यह था कि संन्यासी दयानन्द लोकैषणा की खाई को लाँघ चुके थे। मान-प्रतिष्ठा की भूख पर जिसने विजय पा ली, वह इन बातों से बहुत ऊपर उठ जाते हैं। एक कारण और भी था। महर्षि के शब्दों में

पढ़िये, "यहाँ अपने पिता का और निज निवास स्थान के प्रसिद्ध नाम इसलिए मैं नही लिखता कि जो माता-पिता आदि जीते हो मेरे पास आवें तो इस सुधार के काम में विघ्न हो।"[१]

महर्षि ने भक्तों के बार-बार के आग्रह से पूना नगरी में अपने विषय में अत्यन्त संक्षेप से कुछ कहा। 'थियोसोफिस्ट' पत्रिका में भी एक संक्षिप्त स्वलिखित आत्म-चरित प्रकाशनार्थ भेजा। लोकोपकार में रत महामानव दयानन्द का जीवन-चरित्र पढ़ने की लाखो व्यक्तियों की चाह थी। महर्षि के जीवनकाल में ही उनका चरित्र लिखने के कुछ प्रयास आरम्भ हो चुके थे। श्रीमान पं० गोपालराव हरि शर्मा कृत 'दयानन्द दिग्विजयार्क' पुस्तक भाग प्रथम व द्वितीय तो ऋषिवर के निर्वाण से पूर्व ही छप गये थे। तृतीय भाग भी प्रकाशित हुआ। परन्तु यह प्रयास उत्तम होने पर भी अधूरा ही था। महर्षि के बलिदान के पश्चात् तो उनके जीवन-चरित्र के लेखन व प्रकाशन की माँग और भी बढ़ गई। १८८४ ई० में महाराणा सज्जनसिंह जी के दुःखद निधन के कारण परोपकारिणी सभा का द्वितीय वार्षिकोत्सव न हो सका।[२] दूसरा वार्षिकोत्सव २८ व ३९ दिसम्बर, १८८६ ई० को अजमेर में महाराणा उदयपुर की कोठी मे हुआ।[३] इस उत्सव में परोपकारिणी सभा के सदस्यों के अतिरिक्त कई समाजों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हुए थे।

इस उत्सव पर समाजों के प्रतिनिधियों ने श्री पण्डित मोहनलाल विष्णुलाल जी पंडिया से प्रार्थना की कि वह स्वामी दयानन्द जी महाराज का जीवन-चरित्र लिखें। श्री पंडिया जी ने यह प्रार्थना इस अट (शर्त) के साथ स्वीकार की कि सब समाजे स्वामी जी महाराज के सम्बन्ध में, जो-जो घटनाएँ जिस-जिसको ज्ञात हों, मुझे लिखकर भेजें।[४]

---

१ महर्षि का स्वलिखित जन्म-चरित की चित्रलिपि पृष्ठ एक 'परोपकारी' मासिक का मार्च १९७५ ई० का विशेषाक। तथा ऋषि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ और प्रवचन पृष्ठ ४४७।

२. 'आर्य समाचार' मासिक मेरठ, पौष मास, १९४२ विक्रम, नम्बर १०, पृ० ३१४।

३ 'आर्य समाचार' मासिक, पौष मास, १९४२ विक्रम, नं० १०, पृ० ३१४।

४ 'आर्य समाचार' मासिक, पौष, १९४२ विक्रम, पृ० ३१७।

पंडिया जी भी यह कार्य न कर पाए। समाजो की चिन्ता बढ़ रही थी। 'आर्य समाचार' में एक टिप्पणी 'दरखास्त' (प्रार्थना) शीर्षक से प्रकाशित हुई। उसमें सम्पादक ने लिखा है कि बड़े खेद की बात है कि महर्षि के निर्वाण के दो वर्ष पश्चात् भी किसी आर्य भाई से उनका सम्पूर्ण जीवन-चरित्र नहीं लिखा जा सका।

सम्पादक जी ने आगे चलकर लिखा है कि इस समय तो यह कार्य सुगमता से हो सकता है। जब दस-बीस वर्ष और निकल जायेंगे तब यह बात कठिन व असम्भव हो जायेगी। सम्पूर्ण जीवन-चरित्र न लिखा जा सकेगा। सारा संसार इसे पढने के लिए उत्सुक है।[1] बात भी ठीक थी। तब तो ऋषि को जानने वाले असंख्य व्यक्ति जीवित थे। दस-बीस वर्ष के बीतने पर किससे जानकारी ली जावेगी।

लाला लाजपतराय जी तब आर्यसमाज रोहतक के मन्त्री थे। आपने भी तब ऋषि जीवन-चरित्र लिखने का दृढ़ संकल्प किया। आपकी भी अट वही थी कि समाजे लाला जी को सब जानकारी लिखकर भेजे।[2] लाला लाजपतराय जी ने उर्दू में ऋषि जीवन-चरित्र लिखा। यह प्रकाशित हुआ। हिन्दी अनुवाद भी छपा। यह उपयोगी पुस्तक है परन्तु महर्षि के जीवन व उपलब्धियो के अनुरूप यह पुस्तक नहीं। इस महान् कार्य के लिए सुख-सुविधा तजकर कौन आगे आए? नगर-नगर, डगर-डगर घूमना होगा। पत्र-पत्रिकाओं को देखना, व्यक्तियों से मिलना, ऋषि के पत्रों की खोज आदि कितने ही कार्य थे। समय का बलिदान तो चाहिए ही था, योग्यता भी तो चाहिए। लिखने की योग्यता भी चाहिए, इतिहास के अन्वेषण की, पूछताछ और जाँच-पड़ताल की बुद्धि भी चाहिए।

कई बार जानने वाले लोगों को घटना का ज्ञान होता है, बताने का ढंग नहीं आता और कई बार घटना ही भूल जाते है, स्मृति में संस्मरण आते ही नही। जनसाधारण की बात तो क्या कई सुशिक्षित, पण्डित और ज्ञानी भी इस कोटि मे आ जाते है। आर्यसमाज के स्वर्गीय विद्वान् प० धर्मपाल जी सिद्धान्तभूषण से हमने आचार्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के सम्बन्ध मे सस्मरण पूछे तो उन्हें कोई

---

१. 'आर्य समाचार' मासिक, माघ मास, १९४२ विक्रम, पृ० ३५०।

२. वही।

विशेष घटना स्मरण ही न थी। फिर भी हमने उनके कई महत्त्वपूर्ण संस्मरण उनकी स्मृति में उतारने में सफलता पाई। लताला निवासी श्री बलभद्र जी ने कहा जो कुछ मुझे ज्ञात था मैं बता चुका। उनसे भी कई और रोचक शिक्षाप्रद घटनाएँ लेकर ही आए। ऐसे अनेक विद्वानों का हमें ध्यान है। बलिदानी स्वामी सोमानन्द जी (पण्डित नरेन्द्र जी हैदराबाद) भी उन्ही में से एक थे। यह तो लेखक की सूझ व योग्यता पर निर्भर है कि वह यह कार्य करने में सक्षम है या अक्षम।

महर्षि जीवन-चरित्र के लिए यह भागीरथ प्रयत्न कौन करे? किसमें ऐसी सूझ, लग्न व योग्यता है? आर्य जाति के मनीषी विद्वानों, नेताओं व कार्यकर्त्ताओं सबने एक स्वर से इस पुनीत कार्य के लिए लेखनी के धनी पं० लेखराम जी को पुकारा। जिसने रोम-रोम ऋषि के महान् काज के लिए समर्पित कर रखा था, वह वीर सुधीर तपस्वी ब्राह्मण लेखराम इस कार्य के लिए आगे निकला।

सूर्य का प्रचण्ड तेज, चन्द्र की शीतल रश्मियाँ, धरती का धैर्य और इतिहास के पृष्ठ साक्षी है कि लेखराम ने इस कार्य मे अद्भुत कौशल दिखाया। एक आदर्श, एक मर्यादा आर्य लेखको व इतिहास के गवेषकों के सामने स्थापित करके रख दी। इस दिशा में उनका तप हम जैसे आस्तिकों, ऋषि-भक्तों, जीवनी-लेखकों के लिए सदैव प्रेरणा का स्रोत रहेगा।

आर्यसमाज मुल्तान की अन्तरंग सभा ने अपनी १२ अप्रैल, १८८८ की बैठक में एक प्रस्ताव पारित करके आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब को भेजा कि ऋषि-जीवनी की खोज का कार्य पं० लेखराम जी को सौंपा जावे। आर्य प्रतिनिधि सभा, पजाब की अन्तरंग सभा ने एक जुलाई, १८८८ ई० को यह कार्यभार पण्डित जी को सौंपने का निश्चय किया। पण्डित जी तब आर्य गजट फीरोजपुर के सम्पादक थे। सभा ने यह कार्य उनको सौपकर जिन्हें 'आर्य पथिक' पद का अधिकारी बना दिया। नवम्बर, १८८८ ई० में पण्डित जी ने इस पुनीत कार्य को विधिवत् आरम्भ कर दिया।[1]

स्वामी दयानन्द का जीवन कोई साधारण जीवन न था जिसका

---

१. महात्मा मुंशीराम लिखित ऋषि जीवन-चरित्र की भूमिका।

वृत्तान्त केवल एक या दो स्थानों पर जाने से विदित हो जाता। इस जीवन का वृत्तान्त जानने के लिए एक ऐसे अन्वेषी स्वभाव के व्यक्ति की आवश्यकता थी जो जहाँ एक ओर निरन्तर यात्रा करता रहता तो दूसरी ओर विदित हुए वृत्तान्त से ठीक निष्कर्ष निकालने की योग्यता रखता। ऐसा व्यक्ति पण्डित लेखराम के अतिरिक्त उस समय दूसरा दिखाई नहीं देता था।"[1]

देवेन्द्र बाबू द्वारा संग्रहीत सामग्री के सम्पादक विद्वान् लेखक श्री घासीराम जी एम० ए० ने ऋषि जीवन की भूमिका में लिखा है—

"ऋषि के जीवन-चरित्र का कोई भी लेखक पं० लेखराम कृत जीवन-चरित्र की सहायता के बिना एक पग भी आगे नही रख सकता।"[2]

विद्वान् लेखक ने आगे लिखा है, "यदि पं० लेखराम कृत जीवन-चरित्र प्रकाशित नहीं हुआ होता तो ऋषि के जीवन-चरित्र को पूर्ण लिखना असम्भव हो जाता। इसलिए हमें सदा के लिए पं० लेखराम का नितान्त आभारी रहना होगा।"[3]

शास्त्रार्थों में जाते रहे, उत्सवों को भी सफल बनाते रहे, ग्रन्थों का प्रकाशन भी साथ-साथ होता रहा। आर्यपत्रो में अपनी एतदर्थ यात्राओं पर विद्वत्तापूर्ण पठनीय लेख भी देते रहे और आर्य जाति की रक्षा एवं शुद्धि के पवित्र कार्य में भी संलग्न रहे। इतने महत्त्वपूर्ण कार्यों को हाथ में लेकर ऋषि के जीवन-चरित्र की खोज का ऐतिहासिक कार्य कर दिखाना, यह लेखराम जैसे पुरुषार्थ व परमार्थ के पुतले से ही हो सकता है। इसी कार्य को करते हुए प्राणों के निर्मोही ने धर्मवेदी पर प्राणोत्सर्ग करके अमर पद को प्राप्त कर लिया।

इस जीवन-चरित्र के विषय में ऋषि-जीवनी के एक अन्य लेखक और यशस्वी साहित्यकार के शब्द उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नही कर सकते, "आर्यपथिक ने महर्षि के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली जो जानकारी इकट्ठी की वह महर्षि के आज तक लिखे गये सभी जीवन-चरित्रों की आधारशिला है। अन्य लेखकों ने भाषा या

---

१ पं० लेखराम लिखित ऋषि जीवन-चरित्र हिन्दी अनुवाद की महात्मा मुन्शी राम जी लिखित भूमिका, पृ० २।

२. देखिए देवेन्द्र बाबू कृत ऋषि जीवन-चरित्र, पृ० २।

३. वही।

क्रम में परिवर्तन किया हो या सम्भव है कोई घटना भी नयी जोड़ दी हो परन्तु जीवन-चरित्र की रूप-रेखा आज भी वही है जो आर्यपथिक ने बना दी थी। यह उनके उग्र परिश्रम और सत्यनिष्ठा का ज्वलंत प्रमाण है।"[1]

आधुनिक भारत के तपस्वी मनस्वी पुत्र और प्रसिद्ध सुधारक विचारक मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी ने महर्षि के जीवन-चरित्र (हिन्दी) मे पण्डित जी के इस ऐतिहासिक कार्य के सम्बन्ध में जो उद्‌गार व्यक्त किए हैं, वे पठनीय हैं।

"पं० लेखराम से जिज्ञासु और सच्चे धर्मवीर ने, जिसका कि नाम भारत में विख्यात है, कठिन से कठिन यात्रा करने के कारण यात्री (मुसाफिर) के उस पद को धारण करते हुए उस सामग्री को किस निष्पक्ष भाव से एकत्र किया उसको समझना सहज नहीं है। यदि अमेरिका मे प० लेखराम होता और इस निष्पक्ष भाव से जो कुछ सामग्री प्राप्त हुई बिना नमक मिर्च लगाए सर्वसाधारण के सन्मुख रख देता तो पश्चिम के बुद्धिमान उसकी प्रशंसा करते, परन्तु इस अभागे देश मे चटनीदार नमक-मिरच के लेखों का मान है...।"[2]

श्री प० युधिष्ठिर जी मीमांसक इस जीवन-चरित्र को बेजोड़ व मूल चरित मानते है। उन्होंने लिखा है कि इस ग्रन्थ का मूल्य कोई इतिहासज्ञ ही समझ सकता है।

सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन में सहयोग

स्वल्पकाल में लेखराम क्या कुछ कर गए इसका ध्यान करके हमें तो अत्यन्त आश्चर्य होता है। उनकी शारीरिक क्षमता, मानसिक शक्ति और आत्मबल का परिचय उनके जीवन के महान कार्यो से हमें मिलता है। महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन को त्रुटिरहित बनाने के लिए समय-समय पर बड़े-बड़े विद्वानों का सहयोग लिया जाता रहा है। महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा अजमेर ने सत्यार्थप्रकाश के पञ्चम सस्करण के प्रकाशन के निरीक्षण व शोधन का कार्य पं० लेखराम जी आर्यपथिक

---

१ आर्य समाज का इतिहास, प्रथम भाग, लेखक, प० इन्द्र जी, पृ० २३४।

२. महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र, लेखक आत्माराम अमृतसरी, उपोद्‌घात, पृ० १२४।

को सौंपा। आपने अनेक प्रमाणों के अते-पते, जो पहले उल्लिखित नहीं थे, खोजकर दिए। इससे पता चलता है कि पण्डित जी के गहन अध्ययन व विद्वत्ता की उस युग में सब पर छाप थी। वह केवल इस्लाम व ईसाई मत के विशेषज्ञ नही थे। अपितु आर्य ग्रन्थों के भी अधिकारी विद्वान् थे।

'उपदेश मञ्जरी'—'पूना प्रवचन और प० लेखराम—महर्षि जब पूना पधारे तो उनके प्रवचनों का वहाँ गहरा प्रभाव पड़ा। धर्मनिष्ठ जनता तो उनके प्रवचनों से अनुप्राणित हुई ही, विरोधी भी उनके व्यक्तित्व, विद्वत्ता, तेजस्वी मुखमण्डल, ओजस्वी वाणी, भीमकाय शरीर की प्रशसा किये बिना न रह सके। श्री विष्णु शास्त्री चिपलूणकर के ग्रन्थ निवन्धमाला में महर्षि की तीक्ष्ण आलोचना की गई है परन्तु श्री चिपलूणकर भी महर्षि के तेज, ओजस्वी वाणी की प्रशसा किये बिना नही रह सके। वह भी लिखते है कि श्रोताओं को ऋषि ने मुग्ध कर लिया। इन ऐतिहासिक प्रवचनो को श्री गणेश जनार्दन आगाशे बी० ए० ने मराठी में लिपिबद्ध किया। यह संग्रह मराठी से गुजराती में भी प्रकाशित हुआ था।

पं० गणेश रामचन्द्र जी, पूर्व उपदेशक जोधपुर समाज, ने इन प्रवचनों का हिन्दी में अनुवाद किया। इनमे से नौ प्रवचन श्री रामविलास सार्डा जी ने राजस्थान सभा की ओर से छपवा दिये। महात्मा मुन्शीराम जी का विचार है कि सम्भवत: प० लेखराम जी की प्रेरणा से ठाकुर गोविन्दसिह जी व पं० श्रीनिवास राव जी धाराशिव ने कलंब के पं० भगवती प्रसाद शुक्ल जी से पूना के १५ प्रवचनों का हिन्दी अनुवाद करवाया।[1]

महात्मा मुन्शीराम जी ने प० गणेश रामचन्द्र व पं० भगवती प्रसाद जी के अनुवादों को देखकर उपदेश मञ्जरी का उर्दू अनुवाद १८९८ ई० में छपवाया था। इसका दूसरा संस्करण १९०२ ई० में प्रकाशित हुआ था। दूसरे सस्करण की भूमिका महात्मा जी ने मई १९०२ ई० को लिखी थी।

इसमें दो मत नही कि प० लेखराम जी की दिव्यदृष्टि, ऋषि

---

१ उपदेश मञ्जरी, दूसरा सस्करण, उर्दू में, प्रथम संस्करण की भूमिका, पृ० १-२।

भक्ति और साहित्य से अनुराग ही 'उपदेश मञ्जरी' को अव्यक्त अवस्था से व्यक्त अवस्था मे ले आया। श्री प० लेखराम जी का इसमें क्या योगदान है इसके सम्बन्ध में हम महात्मा मुन्शीराम काल के एक प्रसिद्ध आर्यसमाजी श्रीमान श्रीनिवासराव जी के एक लेख के कुछ अंश यहाँ उद्धृत करते है—

"१८९४ ई० को मै तथा गोविन्दसिंह जी लाहौर के वार्षिकोत्सव में आए थे। उस समय आर्यसमाज मन्दिर बच्छोवाली में मैं अत्यन्त रुग्ण पड़ा था। रातभर नीद नही आई थी। पं० लेखराम जी सारी रात मेरे बिस्तरे के पास ही थे। बातचीत में इस पुस्तक का पूरा इतिहास उनको सुना दिया। उन्होने कहा उसका हिन्दी अनुवाद करके मेरे पास भेज दें तो शेष सारा कार्य मैं कर लूँगा। वापस आने के पश्चात् मैने अपनी रुग्णता के कारण पं० भगवती प्रसाद जी शुक्ल को कार्य सौंपा। गोविन्दसिंह जी के और मेरे आग्रह पर उन्होंने तैयार करके हमारे पास अनुवाद भेज दिया।

मैंने इसे पं० लेखराम जी के पास जालन्धर नगर में उनके पत्र के अनुसार भेज दिया।"[1]

अथक परिश्रम करके श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने ऋषि के जीवनकाल में मराठी मे प्रकाशित पूना के इन प्रवचनों की खोज करके उनका हिन्दी अनुवाद करके एक प्रामाणिक संस्करण निकाला है। इसमें पण्डित जी की पाण्डित्यपूर्ण टिप्पणियाँ पठनीय हैं।

महान् लेखराम की सूझ और लग्न के कारण इन प्रवचनों का कई भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। एक-एक भाषा में कई-कई संस्करण छप चुके हैं। वीरवर लेखराम अपने आचार्य के प्रवचनों को ग्रन्थ रूप में इस प्रकार छपते व प्रसारित होते न देख पाये। उनके बलिदान के लगभग एक वर्ष बाद उनके सखा मुन्शीराम ने उनकी उत्कट इच्छा को मूर्त्तरूप देकर इसका प्रथम उर्दू संस्करण निकाल दिया। आदियुग के आर्यसमाज के निर्माताओं व नेताओं ने सब करणीय कार्यों को अदम्य उत्साह से किया। साधनों का अभाव उनके मार्ग में बाधक न बन सका। वे गंगा को पूर्व से पश्चिम की ओर मोड़ने का साहस व सामर्थ्य रखते थे। अपने धर्म और ध्येय पर तिल-

---

१. 'सद्धर्म प्रचारक', २७-१-१८९९ ई० के अक मे पृष्ठ ९-१० पर रावजी का पत्र।

तिल जलने वाले दिल जलों की सतत सफल साधना का एक प्रमाण 'उपदेश मञ्जरी' ग्रन्थ का प्रचार-प्रसार है।

गुरुवर विरजानन्द जी दण्डी स्वामी का जीवन-चरित्र

यह तथ्य भी निर्विवाद है कि दण्डी स्वामी विरजानन्द जी का सर्वप्रथम जीवन-चरित्र पं० लेखराम ने ही लिखा। यह जीवन-चरित्र भी ऋषि जीवन-चरित्र का ही एक भाग है। आपके पश्चात् स्वर्गीय वजीरचन्द जी शर्मा सम्पादक 'आर्य मुसाफिर' मासिक ने दण्डी जी का चरित्र लिखा था। यह दूसरा प्रयास था।

पण्डित जी ने दण्डी जी के जन्म-स्थान की उस समय खोज की थी जब करतारपुर में अभी आर्यसमाज की स्थापना भी न हुई थी। आपके पराक्रम, उत्साह, लगन व त्याग से ही तो करतारपुर मे समाज स्थापित हुआ था। लाला मुन्शीराम जी के उद्योग-सहयोग को भी इसका श्रेय जाता है। इस समाज की स्थापना की कहानी पाठक अन्यत्र पढ चुके है।

बूँदी विजय के पश्चात् जब वीरवर जालन्धर लौटे तो १८ अप्रैल, १८९३ ई० को आपने एक व्याख्यान में बताया था कि गुरु विरजानन्द जी दण्डी का जन्म-स्थान करतारपुर के निकट एक ग्राम है।[1]

पं० लेखराम के साहित्य पर प्रतिबन्ध

हैदराबाद राज्य में निजाम उस्मान के शासनकाल में आर्य धर्म व संस्कृति सम्बन्धी जिन १७ पुस्तक-पुस्तिकाओं पर प्रतिबन्ध लगाया गया था, उनमें से एक श्री पं० लेखराम लिखित हुजत-उल-इस्लाम' पुस्तक भी थी।[2] राज्य में इसका प्रचार व प्रकाशन निषिद्ध घोषित किया गया। स्मरण रहे कि इस पुस्तक के लेखक का नाम सार्वदेशिक सभा के उर्दू प्रकाशन में प० लेखराज छपा है। अंग्रेजी में Nizam Defence Examined And Exposed में प० लेखराम छपा है। आर्य जाति के महापुरुषों पर किये गए दोषारोपण का इसमें मुँहतोड़ उत्तर है। यह उत्तर भी मतान्ध शासन से सहा न गया। १९३९ ई० के

---

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का इतिहास, पृष्ठ १९५-१९६।

२. 'निजामशाही और आर्यसमाज' सार्वदेशिक सभा का प्रकाशन, पृ० ८२ तथा Nizam Defence Examined And Exposed, page 51.

प्रचण्ड सत्याग्रह व ३६ के लगभग धर्मवीरों के बलिदान से आर्यसमाज विजयी हुआ और यह प्रतिबन्ध भी समाप्त हुआ।

लेखनी न्याय की तुला पर

(१) अमृतसर के कुछ मतान्ध लोगों ने पण्डित जी की पुस्तक 'तकजीबे ब्राहीने अहमदिया' व 'नुसखा खब्ते अहमदिया' पर अभियोग चलाना चाहा। परन्तु वकीलों ने ऐसा करने की अनुमति न दी। यह घटना १८८७ ई० की है।

(२) दूसरा वार मिर्जापुर के शुकरुल्ला नाम के व्यक्ति ने किया। उसने इन्हीं दो पुस्तकों पर जिला मजिस्ट्रेट के न्यायालय में आवेदन-पत्र दे भी दिया। प० लेखराम जी के बिना बुलाए यह अभियोग भी रद्द कर दिया गया।

(३) प्रयाग मे भी ऐसा ही हुआ।

(४) चौथा प्रयास १८९३ ई० में लाहौर में किया गया। इस बार 'जिहाद' आदि पुस्तकों पर अश्लीलता का दोष लगाया गया। पण्डित जी की ओर से लाला लाजपतराय जी वकील के रूप में अभियोग लड़ते रहे। इस बार भी विपक्षी पराजित हुए।

(५) मेरठ में भी जनसाधारण को उत्तेजित किया गया परन्तु वकीलों ने अभियोग न चलाने की अनुमति दी।

(६) १८९६ ई० मे कप्तान डेविस साहिब डिप्टी कमिश्नर देहली के न्यायालय में अभियोग चलाया गया। इसका कुछ वृत्तान्त हमने पीछे दिया है। डेविस साहिब ने वे पुस्तके मँगवाकर सुनीं, जिनके उत्तर में पण्डित जी ने लेखनी उठाई थी। यहाँ भी पण्डित जी को बिना बुलाए अभियोग रद्द हो गया। डेविस साहिब के निर्णय का पुन: निरीक्षण भी कराया गया, परन्तु न्यायाधीश ने यह अभियोग खारिज किया।

(७) बम्बई में भी १८९६ ई० में पण्डित जी के बिना बुलाए अभियोग समाप्त हो गया।[1]

जब इन अभियोगों मे विपक्षी विफल हुए तो उनके विरुद्ध बड़ा विष वमन किया गया। आर्य भाइयों ने पण्डित जी को अपने जीवन की रक्षा के लिए पत्र लिख-लिखकर सावधान किया परन्तु देवता

१. 'सार्वदेशिक' का विशेषाक, पृ० १६४-१६६।

स्वरूप भाई परमानन्द जी के शब्दों में भय वाली धमनी तो आर्य-पथिक में थी ही नहीं।

पत्रकार लेखराम की आर्य सामाजिक पत्रकारिता को देन

'यथा नाम तथा गुण' की उक्ति जिन व्यक्तियों पर पूर्णतया चरितार्थ होती है, पं० लेखराम जी उनमें से एक थे। सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करते ही वैदिक धर्मप्रचार हेतु आपने 'धर्मोपदेश' मासिक उर्दू पत्र पेशावर से निकाला। इसकी चर्चा हम अन्यत्र कर चुके हैं। इसका घाटा उनको ही पूरा करना पड़ता था। कुछ समय के पश्चात् यह पत्रिका बन्द हो गई।

पण्डित जी सरकार की सेवा से मुक्त होकर समाज-सेवा में लगे तो आर्य गजट के सम्पादक नियुक्त हुए। प० इन्द्र जी ने लिखा है कि "गजट निकलता तो उससे पहिले भी था परन्तु उसकी ख्याति तभी हुई जब पण्डित जी के तर्क और जोश से भरे हुए लेख उसमें निकलने लगे। उन दिनों का आर्य गजट आर्यपथिक का लिखित चित्र होता था।"[1]

पण्डित जी की प्रेरणा से अजमेर से 'आर्य विजय' मासिक निकाला गया। उन दिनों अब्दुर्रहमान नाम का एक भाई शुद्ध होकर वैदिक धर्म में प्रविष्ट हुआ। मुसलमानों को तो यह शुद्धि चुभती ही थी, पौराणिक भी सटपटा रहे थे। पोंगापन्थियों की उत्तेजना से कुछ दुष्टो ने आर्य लोगों के धार्मिक समारोह पर धावा बोल दिया। वैदिक धर्म में प्रविष्ट होने वाले वीर सोमदत्त जी ने बड़ी शूरता से दुष्टों का सामना करके उन्हें पराभूत दिया। यह 'आर्य विजय' पत्र उस संघर्ष का परिणाम था।

पण्डित जी के लेख अन्य आर्य पत्रों मे भी निकलते रहे। खेद का विषय है कि आर्यसमाज ने अपने इस प्राणवीर, महाविद्वान् के लेखों का संकलन न किया। सद्धर्म प्रचारक मे वह लिखते ही थे। 'आर्य समाचार' मेरठ में प्रकाशित उनके एक लेख का अंश इस जीवन-चरित्र में हमने दिया ही है।

महर्षि के जीवनकाल में जो पत्रकार वैदिक धर्म की सेवा को

---

१. 'आर्यसमाज का इतिहास', प्रथम भाग, पृ० २४७, लेखक पं० इन्द्र विद्या-वाचस्पति।

निकले लेखराम उनमें से एक थे। हम यदि यह लिख दें कि वास्तव में वही प्रथम आर्य पत्रकार थे तो यह भी कोई अत्युक्ति नहीं। 'आर्य समाचार' के बाबू आनन्दी लाल जी व मुन्शी कल्याण राय जी भी ऋषि के जीवनकाल में ही वैदिक-धर्म के प्रचार मे आगे आए। उनकी सेवा अविस्मरणीय है परन्तु लेखराम तो लेखराम ही थे।

यह आश्चर्य की बात है कि जिस आर्य गजट को पण्डित जी के कारण लोकप्रियता मिली उसी आर्य गजट में पण्डित जी के विरुद्ध १८६५-६६ ई० में कई लेख छापे गये। पण्डित जी के भक्तों ने इन लेखों की निन्दा की परन्तु पण्डित जी ने इस विषय में कुछ भी न कहा, न लिखा।

पं० लेखराम जी की विद्वत्ता व प्रभावशाली लेखो के कारण आर्य जगत् मे सदा ही उनके लेखों की माँग रहती थी। उनके आर्य सामाजिक जीवन के शैशव काल में ही हम 'आर्य समाचार' के एक सम्पादकीय में उस युग के कुछ आर्यसमाजी विद्वानों व नेताओ के लिए एक अपील पढते है। ऋषि मिशन की उन्नति व वैदिक-धर्म प्रचार के लिए सम्पादक ने जिन महानुभावों से 'आर्य समाचार' के लिए निरन्तर लेख भेजने की प्रार्थना की है उनमें धर्मवीर लेखराम, मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी का नाम भी हम पाते है।[1] पं० लेखराम तब केवल २० वर्ष के थे। पं० गुरुदत्त जी तब कालेज के विद्यार्थी थे। 'आर्य समाचार' में उनके लेखों की विशेष माँग दोनों की असाधारण योग्यता व व्यापक प्रभाव के कारण है।

आर्यसमाज में पत्रकारिता के इतिहास में इन दोनों विभूतियों की अमिट छाप है। इतिहास व साहित्य का कोई भी विद्यार्थी लेखराम की पत्रकारिता को देन की उपेक्षा नही कर सकता।

एक पत्रकार की दृष्टि में पत्रकार पं० लेखराम

पण्डित जी के बलिदान के थोड़े दिनों पश्चात् स्वर्गीय महता जैमिनी जी भूमण्डल प्रचारक (तब जमनादास बी० ए०) ने अपनी एक पुस्तिका मे पण्डित जी की पत्रकारिता को देन पर यह महत्त्वपूर्ण पंक्तियाँ लिखी—

"आर्य गजट' फीरोजपुर के सम्पादक का कार्य-भार आपने सँभाला

---

१. आषाढ़ १९४२ विक्रमी के आर्य समाचार का पृ० १०६।

तो आर्य गजट का प्रकाशन (circulation) व प्रतिष्ठा बहुत बढ गई। उस काल में आर्य गजट ने आर्यसमाज के मिशन को फैलाने में बड़ी भारी सहायता दी।

'वैदिक विजय पत्रिका', 'आर्य समाचार' मेरठ, 'आर्य समाचार' बरेली, 'उन्नीस हिन्द' मेरठ, 'सत धर्म प्रचारक' जालन्धर नगर, 'भारत सुधार' लाहौर आदि में भी आपने बड़े उपयोगी व महत्त्वपूर्ण लेखों से लोगों को लाभान्वित किया। आपका प्रत्येक लेख ज्ञानवर्द्धक गहन अध्ययन व गवेषण का परिचायक होता था।"[1]

लेखक ने बड़ा यत्न करके यह पता लगाया कि पण्डित जी के लेख किन-किन पत्रों में छपते रहे। केवल महता जमनादास ने ही ऐसे पत्रों का उल्लेख किया है। महता जी की यह पुस्तक भी तो कहीं नही मिलती। श्री रहतूलाल जी गंगोह उत्तर प्रदेश के सग्रह से इसकी एक दुर्लभ प्रति प्राप्त हुई है।

राष्ट्रभाषा के उन्नायक, गोरक्षक पं० लेखराम

१८८२ ई० में महर्षि दयानन्द जी ने पं० लेखराम जी को दो पत्र लिखे। गो-गुहार सुनकर करुणानिधि ऋषि दयानन्द तड़प उठे और आपने प्रजा से हस्ताक्षर करवाकर महारानी विक्टोरिया की सेवा मे एक ज्ञापन देने का निश्चय किया। ऋषि ने पं० लेखराम जी को भी हस्ताक्षर करवाने की प्रेरणा दी।

दूसरे पत्र में पंजाब में राष्ट्रभाषा के लिए हस्ताक्षर करवाने का दायित्व सौपा गया। उत्साह के अंगारे लेखराम ने दोनों कार्य अपने सर्व सामर्थ्य से किए। वह रायसाहिब मूलराज की भाँति वाणी से कुछ, मन से कुछ और कर्म से कुछ और न थे। जो कार्य लोकोपकार और देशहित के लिए महर्षि ने सौपा, लेखराम ने जी-जान से वह कार्य करके दिखाया।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के इतिहास-लेखकों ने आर्यसमाज की एतद्-विषयक सेवाओं की प्रशंसा तो की है परन्तु अभी इस विषय में लेखकों को बहुत कुछ और जानकारी की आवश्यकता है। वीर लेखराम पहिले लेखक है जिन्होंने उर्दू को राष्ट्रभाषा के निकट लाने का प्रयास किया और उर्दू के माध्यम से राष्ट्रभाषा के प्रचार का सफल

१. 'पं० लेखराम जी की शहादत और उसके अमली नतायज', पृ० ८-९।

प्रयत्न किया। वह उर्दू फारसी गद्य-पद्य दोनों पर अच्छा अधिकार रखते थे। अरबी का भी गहन अध्ययन था। आपने उर्दू में फारसी-अरबी शब्दों के एकाधिकार को चुनौती दी। आपकी कई पुस्तकों के नाम ही इसका प्रमाण है; यथा—देवी भागवत परीक्षा, मूर्त्ति प्रकाश, श्रीराम का सच्चा दर्शन, नारी शिक्षा (कुमारी शिक्षा), स्त्री शिक्षा, निश्चल मत दर्पण, पतित उद्धार, साँच को आँच नही आदि-आदि।

दुर्भाग्य से आज दासता की प्रवृत्ति अथवा आत्महीनता के कारण देश के सुपठित लोग हिन्दी में तो अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग सगर्व करते है परन्तु अंग्रेजी मे हिन्दी शब्द के प्रयोग की हँसी उड़ाई जाती है। भारतीय भाषाओं का अनादर फिर क्यों न हो ? उर्दू वाले फारसी-अरबी के बोझिल शब्दों का तो प्रयोग करते हैं, देशी भाषाओं के लोकप्रिय अति सरल शब्दों यथा सत्य, सरल, नमस्ते, सदा, शान्ति, युद्ध, पाप, पुण्य, बहिन, पिता, माता, भूमि, स्वर्ग, नरक आदि का प्रयोग करते हुए भी डरते है। 'हुजत-उल-इस्लाम' पुस्तक का आरम्भ ईश वन्दना से होता है—

बनाम आँकि नामश ओंकार अस्त।
अनादि ओ अनन्त ओ निरविकार अस्त॥

कुलियात में अन्यत्र भी ऐसे पद मिलते हैं।

'इतरे रूहानी' पुस्तिका तो है ही हिन्दी पद्य-रचना। लिपि चाहे फारसी है। इस प्रकार उन्नीसवीं सदी के नामी पुरुषों में पंजाब में हिन्दी के वही प्रथम कवि थे, वही प्रथम उन्नायक थे।

श्रद्धाराम फिलौरी का साहित्य तब इतना प्रचारित नही था। ऋषि जीवन-चरित्र व 'कुलियात आर्य मुसाफिर' में गद्य में भी राष्ट्र-भाषा के शब्दों का अच्छा प्रयोग किया है। यदि आज सभी राष्ट्र-वादी लेखक व कवि राष्ट्रभाषा में प्रादेशिक भाषाओं के शब्दों को खपाने लग जावें और प्रादेशिक भाषाओ मे राष्ट्रभाषा के शब्दों को प्रयुक्त करें तो सब भारतीय भाषाएँ समृद्ध होंगी। भारतीय भाषाएँ एक-दूसरे के निकट आएँगी और भारत मे राष्ट्रीय एकता भी बढ़ेगी। यही कार्य था जो इस दिशा में लेखराम, मुशीराम, हंसराज, नवीनचन्द्र, तिलक, गुरुदास बैनर्जी, वीर सावरकर, सुभाष, विवेका-नन्द, कोण्डा वैंकट पैया आदि नेताओं ने अपने हाथ में लिया था।

श्री स्वामी अच्युतानन्द जी एक संस्मरण सुनाया करते थे कि जब पं० लेखराम जी नये-नये आर्यसमाज में प्रविष्ट हुए तो स्वामी अच्युतानन्द जी को राष्ट्रभाषा में एक पत्र लिखा जिसमें कृपा शब्द को 'किरपा' लिखा। वही लेखराम अपने तपोबल से कुछ ही वर्षों में वेदमन्त्रों, शास्त्रों के सूत्रों, उपनिषद् के मन्त्रों, स्मृतियों के श्लोकों व व्याकरण के नियमों की अधिकारपूर्वक चर्चा करने के योग्य बन गया। १८८७ ई० में आर्य गजट का सम्पादक बनने से पूर्व वह कुछ समय तक लाहौर आर्यसमाज में रहकर संस्कृत व्याकरण पढ़ते रहे।[1] राष्ट्रभाषा से लेखराम जी का अनुराग सबके लिए अनुकरणीय है।

बटाला से एक ऐतिहासिक विज्ञापन

'एलान का बतलान'—मिथ्या घोषणा

"जो विज्ञापन कि मिर्जा गुलाम अहमद कादियाँ निवासी ने हमारे सम्बन्ध में प्रकाशित किया है कि हम इस्लाम मत की सत्यता व चमत्कार जानने के लिए एक वर्ष की प्रार्थना करते हैं, क्योंकि वह सर्वथा निराधार है अतः हम सर्वसाधारण को छलछद्म से सावधान करने के लिए स्पष्ट करते हैं कि हममें प० बहारा मल, विष्णुदास, पं० निहालचन्द, सन्तराम, फतहचन्द, व पं० हरकरणदास जिनके नाम उस पत्र में अंकित हैं उर्दू-फारसी से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। लक्ष्मीराम, ताराचन्द, बैजनाथ व विष्णुदास सुपुत्र हीरानन्द थोड़ा-सा शिक्षित हैं और कोई ऐसा नहीं जो इस लेख जैसा अथवा थोड़ा अधिक लेख बना सके अपितु हममें तो इतनी योग्यता ही नहीं है जो इस लेख को भली प्रकार समझ सके। उस लेख को समझने के लिए भी मिडल, मैट्रिक की योग्यता चाहिए। वह लेख मिर्जा जी का स्वयं का घड़ा हुआ है और हमको अनुनय-विनय करके अपने चोबारा अर्थात् ऊपर के कोठा में वैसे ही बहाना से बुलाकर एक कागज पर इस मन्शा से हस्ताक्षर कराये कि हराम (इल्हाम) बतलाया जावेगा। तुम साक्षी रहना। न हमको इल्हाम के अर्थ आते हैं न बतलाए गए थे। न हमको पवित्र वेद के अतिरिक्त किसी इल्हामी पुस्तक या मानवीय इलहाम पर विश्वास है। चूँकि हमें मिर्जाजी द्वारा दिये गए विज्ञापन के विषय का इससे पूर्व ज्ञान न था। अब हमें उससे पूरी

---

१ 'हुजत-उल-इस्लाम' मे पण्डित जी का जीवन-चरित्र, पृ० ६।

जानकारी मिली तो पता चला कि वह सब मिर्जाजी के अपने मस्तिष्क की उपज है। हम वेद के अतिरिक्त कोई भी ईश्वर का ज्ञान स्वीकार नही करते। न हमें किसी अन्य ईश्वरीय ज्ञान की चाह है। और चूँकि मिर्जाजी की कार्यवाही हम पर भली प्रकार से स्पष्ट है। मिर्जा जी को और हमें क्षणभंगुर जीवन का तनिक भी तो भरोसा नही। इसलिए निरर्थक एक वर्ष के लिए कल्पना के लोक में विचारो के लड्डू बनाना और लोगों को धोखे के जाल में फँसाना हमें स्वीकार नहीं। आगे मिर्जा जी जानें और उनकी आय-व्यय के इलहाम जानें। अब जिसको आत्मा को अँधेरे में डालना हो और कृत्रिम इलहाम से सांसारिक कार्य निकालना हो उसे मिर्जा साहिब को सौंपते हैं और ईश्वर से प्रार्थी हैं कि परमेश्वर इस प्रकार के कल्पित इलहामों से हिन्दु भाइयों को सुरक्षित रखे।"[1]

पं० निहालचन्द, विशनदास खत्री, मेलाराम बकलम खुद, पं० बहारामल, बिशनदास ब्राह्मण, सन्तराम, फतहचन्द खत्री, लक्ष्मीराम बकलम खुद, हरकरण ब्राह्मण बैजनाथ बकलम खुद, लछमनदास बकलम खुद।

अल्पशिक्षित भोले-भाले भाइयों ने कादियाँ में जो वक्तव्य पण्डित जी को दिया वह पण्डित जी ने विज्ञापन द्वारा जनता के सामने रख दिया। इस पर किसी भी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। ईश्वर के नाम पर, धर्म के नाम पर क्या-क्या किया जाता है, यह उसका एक उदाहरण है। मिर्जाजी अकारण इस्लाम की दुहाई देकर हिन्दुओ पर डोरे डालते रहे। सम्भवतः मुसलमानों को प्रभावित करने के लिए मिर्जाजी उनको दिखाना चाहते थे कि मैंने हिन्दुओं को अपने धर्म से दूर किया है।

इससे मनुष्य जाति का भला नही हो सकता। सत्य का प्रकाश हुए बिना व सदाचार की स्थापना के बिना सुख-शान्ति असम्भव है। चतुराई और बात है और धर्म-प्रचार और बात है। हमारा इस विज्ञापन को यहाँ देने का यही उद्देश्य है कि मानव मात्र इतिहास से कुछ सीखे परन्तु डा० राधाकृष्णन् के शब्दों में खेद से लिखना पड़ता

१. 'आर्य समाचार', पृ० २१६-२१७, भाद्रपद १९४२ विक्रमी (१८८५ ई०), जीवन चरित्र पं० लेखराम, लेखक महाशय शामलाल, पृ० ६५। कुलियात आर्य मुसाफिर।

है—"A man has learnt from history that mankind has learnt nothing from history."[1] अर्थात् एक मनुष्य ने इतिहास से यही कुछ जाना है कि मनुष्य जाति ने इतिहास से कुछ भी नहीं सीखा।

साहित्य विषयक उनकी एक चाह और उनका उत्साह

अपने बलिदान से कुछ समय पूर्व की बात है कि पण्डित जी एक दिन आर्यसमाज मन्दिर बच्छोवाली लाहौर के साप्ताहिक सत्संग में पधारे। सत्संग की समाप्ति के पश्चात् श्री पण्डित जी आर्यसमाज में ही रुक जाया करते थे और जो विद्यार्थी सत्संग में आते थे, उनसे वे मिला करते थे। उनका यह नियम था कि समाज में आने वाले प्रत्येक युवक से वे वार्तालाप किये बिना अपने घर नहीं जाया करते थे। उस दिन श्री मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी ने पण्डित जी के हाथ में एक अंग्रेजी पुस्तक देखकर पूछा, "पण्डित जी, आपके हाथ मे यह अंग्रेजी की पुस्तक कैसे ?"

पण्डित जी ने कहा, "मै इस पुस्तक का अनुवाद अंग्रेजी से उर्दू में करवाने की सोच रहा हूँ। जब अनुवाद हो जावेगा तो उसे लागत मात्र मूल्य पर बेचा जावेगा। मैं इस पुस्तक को बड़ा सम्भालकर रखता हूँ।"

मास्टर आत्माराम जी ने विनती की, "क्या मैं इस पुस्तक का मुखपृष्ठ देख सकता हूँ ?"

पूज्यपाद पण्डित जी ने कहा, "अवश्य देखिए।"

जब आत्माराम जी ने पुस्तक हाथ मे ली तो अंग्रेजी की उस पुस्तक का नाम था—'The Maharaj Libel Case' अर्थात् महाराज लायबल केस। सुशिक्षित स्वाध्यायशील व इतिहास प्रेमी सज्जन जानते है कि इस पुस्तक मे वैष्णव गोकुलिये गोसाईयों के महाराज जादूनाथ जी वृजरत्न द्वारा 'सत्यप्रकाश' पत्र के सम्पादक व मुद्रक पर बम्बई हाईकोर्ट में चलाए गये अभियोग का वृत्तान्त है। वल्लभाचार्य सम्प्रदाय का यह गुरु अपनी चेलियों से जो अनाचार करता रहा, उसकी उस दुष्ट लीला का हाईकोर्ट में भाण्डा फूटा। ऋषि

---

१. 'धर्मभास्कर' मराठी मासिक का डा० राधाकृष्णन् विशेषांक, पृ० ६४, १९७६ ई०।

दयानन्द जी ने इन कुकर्मो के लिए इन्हें बहुत लताडा।[1] श्री पण्डित जी समाज कल्याण के लिए इस पुस्तक का प्रकाशन चाहते थे। अपने जीते जी तो वह इस कार्य को पूरा न करवा सके। पाप निवारण के लिए उनकी चाह व उत्साह वन्दनीय था।[2]

पण्डित जी के बलिदान के थोडा समय पश्चात् ही सन् १८९८ में उनके एक भक्त और प्रसिद्ध आर्य नेता लाला जयचन्द्र जी ने यह कार्य पूर्ण कर दिया। आपने न केवल इस उपयोगी पुस्तक का अनुवाद ही कर दिया प्रत्युत्त उसको सुन्दर कागज पर प्रकाशित करके प्रसारित कर दिया। मूल्य भी उचित ही रखा गया। लाला जयचन्द्र जी अच्छे लेखक व स्वाध्यायशील सज्जन थे। पं० लेखराम जी के जीवनकाल में ही वह कुछ न कुछ लिखते रहते थे। हमारा यह दृढ़ मत है कि लाला जयचन्द्र जी को इस कार्य की प्रेरणा करने वाले धर्मवीर लेखराम ही थे।

इस पुस्तक का उर्दू अनुवाद महर्षि दयानन्द के प्रिय शिष्य लाला जीवनदास जी (महर्षि के देहत्याग के समय प० गुरुदत्त जी के साथ अजमेर गये थे) को समर्पित किया गया। समर्पण के शब्द बड़े हृदय स्पर्शी हैं। लाहौर मे पण्डित जी इन्हीं लाला जीवनदास जी के घर मे रहते थे।

यद्यपि पं० लेखराम जी के जीवन से तो इस बात का कोई सम्बन्ध नही तथापि समर्पण के शब्दों मे लाला जीवनदास जी के सम्बन्ध मे दिये गये दो वाक्य हम यहाँ उद्धृत किए बिना नही रह सकते--"दूसरे की तहरीर व तकरीर की (लेखनी व वक्तव्य) गल्तियाँ जिस कदर जल्द आपको सूझती है दूसरों को नही सूझती।[3]

आपको इस पुस्तिका की भाषा सर्वथा भद्दी प्रतीत होगी तथा सम्भव है आप इसमे सैकड़ो त्रुटियाँ पावेंगे परन्तु क्योकि यह पुस्तिका

१ गोकुलिये गोसाईं अपने मत को 'पुष्टि मार्ग' कहते है। ऋषि ने लिखा है यह "पुष्टिमार्ग नही, किन्तु कुष्ठिमार्ग है।" सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास, पृष्ठ ५७८, रामलालकपूर ट्रस्ट शताब्दी सस्करण।

२. देखिए 'श्रद्धानन्द' उर्दू साप्ताहिक लाहौर, पृष्ठ ६, दिनाक १६ मार्च, १६३२ ई०।

३. लाला जीवनदास जी की इस गुण के कारण भी धाक थी। किसी भी पुस्तक व लेख की भाषा में अशुद्धियाँ, न्यूनता व दोष दर्शाने मे वह प्रवीण थे।

सर्वथा आपकी इच्छा के अनुसार लिखी गई है अतः मैं नम्रतापूर्वक इसको आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ।"

आपका सेवक जयचन्द्र ।

अन्तिम वाक्य से प्रतीत होता है कि श्री पण्डित जी ने लाला जीवनदास जी को भी इस कार्य की विशेष प्रेरणा दी होगी। लालाजी एक सुदक्ष अनुभवी अनुवादक थे। उन्होंने लाला जयचन्द्र जी को आज्ञा देकर पण्डित जी की इच्छा पूर्ण करवाई।

प्रसिद्ध ईसाई पत्रिका 'नूर अफ़शां' ने लिखा—

"पण्डित लेखराम की

योग्यता की हम भी

प्रशंसा करते हैं

कि आर्य होकर

कुरान की इतनी जानकारी प्राप्त की।

पृष्ठ ७६—७७ में[1] पण्डित जी ने

मुहम्मदियों के इस दावा

'फातो बसूरत'

का ऐसा उत्तम प्रतिवाद किया है

कि हमनें आज तक किसी की

पुस्तक में नहीं देखा

और न किसी ईसाई से सुना

तथा न कभी सूझा-सोचा।"

['नूर अफशां' दिनांक १५ मार्च, सन् १८८८ ई०]

---

१. प० लेखराम जी के ग्रन्थ 'तकजीबे ब्राहीने अहमदिया', को पढ़कर 'नूर अफशां' ने अपनी सम्मति मे लिखा था।

तेरे उर में इक ज्वाला थी,
शब्दों में तेरे जीवन था।
तेरी गतियों में सौरभ थी,
तेरी तरुणाई मस्तानी।
छुरियों की छाया में रहकर,
सन्देश सुनाया स्वामी का।
प्राणों से तुझको प्यारी थी,
वेदों की वाणी कल्याणी……

वैरी कायर ने समझा था,
फूँकों से दीप बुझा दूँगा।
पर ज्वाला थी यह धधक उठी,
तेरे जीवन से नर नामी……

पथ पर हम तेरे धर्मवीर,
जीवन 'जिज्ञासु' वारेंगे।
अज्ञान तिमिर को चीरेंगे,
बोलेगी जन जन की वाणी……

शहीद लेखराम ने धर्म पै जो निसार की[1]।
सदा मताबिअत[2] रही रजाए करदगार[3] की।
वह आबे जाँफिजा[4] हुई जो धार थी कटार की।
निसार ऐसी मौत पर है जिन्दगी हजार की।
यह खातिमा है सुस्तहिक[5] कमाल अहतराम[6] का॥

—माननीय त्रिलोकचन्द 'महरूम'

---

१. वार दी, २ अधीन, आज्ञापालन, ३. ईश्वरेच्छा, ४. जीवन अमृत, ५. अधिकारी, पात्र, ६. अत्यन्त श्रद्धा, सम्मान।

धर्मवीर की धर्मपत्नी सती माता लक्ष्मी का जीवन वृत्तान्त

पण्डित लेखराम जी के कुटुम्ब के सब व्यक्ति चाहते थे कि पण्डित जी गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करें। पण्डित जी अपने राजकीय कार्यों को करके भक्ति में लीन रहते। काशी से गीता मँगाई। कृष्ण-कृष्ण जपा करते। पण्डितजी की सगाई कर दी गई। अब वहाँ से दबाव पड़ने लगा कि विवाह की तिथि निश्चित की जावे। घर वालों ने चाचा गडाराम जी को यह कार्य सौंपा कि वह लेखराम को मनाएँ। परन्तु उनका चाचा जी को एक ही उत्तर था कि मैं विवाह नही करूँगा।

चाचा जी के बार-बार कहने-समझाने पर आपने कहा, "गृहस्थ और भक्ति एक साथ नही चल सकते।"[1] एक दृष्टान्त भी इसके लिए चाचा जी को दिया था।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने भी पण्डित जी के जीवन-चरित्र में यह घटना दी है।

चाचा गडारामजी ने पण्डित जी की प्रवृत्ति के बारे में अपने बड़े भ्राता को पत्र लिख दिया। विवश होकर घर वालों ने उस कन्या की सगाई पण्डित जी के छोटे भाई श्री तोताराम जी से कर दी। कुछ समय के पश्चात् तोताराम जी का विवाह भी हो गया।

कुछ समय के पश्चात् पण्डित जी वैदिकधर्मी बन गये तो घर वालों की निरन्तर प्रेरणा को स्वीकार करते हुए आपने गृहस्थ मे प्रविष्ट होना मान लिया। तब कुटुम्ब वालो ने कु० लक्ष्मीदेवी जी के साथ आपकी सगाई कर दी और विक्रम संवत् १९५० में आपका विवाह भी हो गया। आप देश-जाति की व्यथा को देखकर घर-गृहस्थी के दायित्व ठीक-ठीक नही निभा पाते थे। दिन-रैन सामाजिक कार्यो व धार्मिक सम्मेलनों में व्यस्त रहते। कई बार तो आप चाचा जी से कह देते थे कि आपने मुझे गृहस्थी बनाकर फँसा दिया। यह दायित्व

---

१. चाचा गडाराम जी लिखित जीवन-चरित्र, पृ० ८४।

न होता तो मैं स्वतन्त्र होकर धर्म-प्रचार करता ।[1]

२८ मई, १८९५ ई० को पण्डित जी के घर पुत्ररत्न का जन्म हुआ।[2] उस समय आपकी पत्नी कहूटा में थीं। २६ सितम्बर को अपने चाचा जी को आपने लिखा कि मैंने पुत्र का नामकरण संस्कार कर दिया है। सुखदेव नाम रखा गया। चाचा गंडाराम जी लिखते है कि पुत्र सुखदेव की मृत्यु २८ अगस्त, १८९६ ई० को हुई।[3] सुखदेव की आहुति भी तो धर्म-सेवा व जाति-रक्षा के महान यज्ञ में ही दी गई थी। इसका वृत्तान्त पाठक अन्यत्र पढ़ें।

पण्डित जी चाहते थे कि देवी जी वैदिक धर्म के प्रचार कार्य में आगे आएँ। उनका उत्साह बढ़ाने के लिए उनको आर्यसमाज के उत्सवों में साथ ले जाने लगे। अम्बाला छावनी व मथुरा के उत्सवों पर वह साथ गई थीं। वहीं से सुखदेव कुछ अस्वस्थ लौटा था।

माता लक्ष्मी देवी एक सीधी-सादी भारतीय महिला थीं। महात्मा मुन्शीराम जी के अनुसार सती लक्ष्मी का जीवन धूम-धड़ाके का जीवन न था परन्तु वह उन सतियों में से एक थीं जो समय-समय पर अपने तप व साधना से देश को गिरावट की ओर जाने से बचाती रही हैं। लक्ष्मी का जन्म मरी पर्वत की गोदी में किसी ग्राम में हुआ था। १६ वर्ष की आयु में आपका विवाह प्रणवीर लेखराम से हुआ था। वह अत्यन्त मित-भाषिणी थीं। अपना दुःख किसी को न बताया करती थी। कोई दूसरा ही उनकी पीड़ा को जान करके निदान कर दे तो ठीक, अन्यथा वह अपने कष्ट के लिए किसी को कष्ट देना नहीं जानती थी।

धर्मवीर अपने मन्तव्यों के अनुरूप देवी जी को सुशिक्षित करके धर्म-प्रचार के क्षेत्र में लाना चाहते थे। पण्डित जी ने जब कभी और जहाँ कहीं भी अपने जीवन का कोई कार्यक्रम बनाया, तो उसमें लक्ष्मी जी का नाम और स्थान साथ ही होता था। यदि वानप्रस्थ का ध्यान आया तो आगामी जीवन में वानप्रस्थ की वेला में भी देवी जी का स्थान उनके प्रोग्राम में था।

---

१ आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का इतिहास, पृ० १९६।

२. चाचा गंडाराम लिखित जीवन-चरित्र, पृ० ९९।

३. चाचा गंडाराम लिखित पण्डित जी का जीवन-चरित्र, पृ० १४।

वीराङ्गना लक्ष्मी का साहस

जब धर्मवीर लेखराम पर पिशाच घातक ने छद्मछल से छुरे का वार किया तो देवी जी ने साहस से छुरा छीनने का प्रयत्न किया। इस छीना-झपटी में आर्य देवी के हाथ पर घाव भी आए। मार्च १८९७ ई० के पत्रों में बलिदान की घटना के साथ इसका प्रेरक वृत्तान्त प्रकाशित हुआ था।

जब आर्यों के आगे-पीछे मौत मँडराती थी, उन दिनों आर्यों के आगे-पीछे मौत मडराती थी, प्रत्येक प्रतिष्ठित आर्य का जीवन संकट मे था। लक्ष्मी जी कुछ समय के लिए तो सास के साथ रावलपिण्डी चली गई। महात्मा मुन्शीराम जी की प्रार्थना पर माताजी अपनी पुत्रवधू को लेकर कुछ समय के लिए जालन्धर में आ गई। वहीं शरीर शिथिल होने लग गया। वीर पति का असह्य वियोग देवीजी के स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध हुआ। पतिव्रता आर्य ललना से यह दु:ख सहा न जा सका।

महात्मा मुन्शीराम जी ने जब प्रचार-यात्रा करते हुए सती लक्ष्मी को रावलपिण्डी में देखा तो वह सूखकर काँटा बन चुकी थीं। पण्डित जी के चाचा गडाराम जी की प्रेरणा से महात्मा जी ने धर्मवीर लेखराम जी की माता से आज्ञा लेकर देवीजी को कन्या महाविद्यालय जालन्धर में लाने की व्यवस्था कर दी। देवी जी अब यहाँ रहकर पति के अधूरे कार्य को पूरा करने की तैयारी में जुट गई।

देवी जी अचेत हो गई

१७, १८ दिसम्बर, १८९९ ई० को आर्य समाज रावलपिण्डी का वार्षिकोत्सव था। सिकन्द्राबाद की भजन-मण्डली ने वीर के बलिदान पर ऐसे गीत गाये कि सुनकर श्रोताओं के नयनों से अश्रुधारा चल पड़ी। ये गीत सुनाने, मण्डली सती लक्ष्मी के निवास पर पहुँची। गली-मुहल्ले की महिलाएँ भी करुण रस व वीर रस से सने इन भजनों को सुनकर फूट-फूटकर रोने लगी। देवी जी पति की बलिदान-गाथा सुनकर अचेत हो गई।

आर्यसमाज के उत्सवों पर जब कभी वीर जी पर किसी ने कोई ऐसी कविता, भजन या गीत सुनाया तो देवी सुनते ही अचेत हो जाया करती थीं। छ: मार्च, १९०१ ई० को जालन्धर में एक दिल दहलाने

वाली श्रद्धाजलि को सुनकर पति-प्रेम की प्रतिमा लक्ष्मी वहीं बेसुध हो गई। महात्मा मुन्शीराम जी ने तब देवी जी की उपस्थिति में धर्मवीर की चर्चा न करने की समाजों को प्रेरणा दी।

पति के नाम पर

रावलपिण्डी के उत्सव पर जब वेद-प्रचार के लिए बलिदान होने वाले लेखराम के नाम पर वेद-प्रचार निधि के लिए अपील की गई तो देवी जी ने कानों से स्वर्ण की बालियाँ उतारकर दे दीं। सम्बन्धियों ने बुरा भी मनाया परन्तु विरोध से विमुख देवी ने अपने सकल्प को मूर्त्त-रूप दे ही दिया।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने देवी जी व माता जी की पैंशन लगा दी। किसी को आशा भी न थी कि देवी जी सास के लिए इतनी उदारता दिखा सकेंगी। देवी जी ने स्वयं सभा को कहा कि पण्डित जी की माताजी को इस राशि से दस रुपया मासिक दिया जावे।

वह कन्या महाविद्यालय में ऋषि-कृत ग्रन्थों के अध्ययन में लग गई। उन दिनों कन्या महाविद्यालय में एक वैद्यक की कक्षा खोली गई। देवी जी ने वैद्यक में भी अच्छी प्रगति की। महात्मा मुन्शी-राम जी की पुत्रियाँ व पण्डित इन्द्र जी विद्यावाचस्पति जी की ताई देवी लक्ष्मी जी को कभी-कभी भ्रमण के लिए बाहर अपने साथ ले जाती। स्वास्थ्य कुछ सुधरा भी, परन्तु रोग फिर भी उनका पीछा न छोड़ते थे। महात्मा जी की सुपुत्री वेद कुमारी जी से देवी जी का विशेष स्नेह था। महात्मा मुन्शीराम जी ने डॉ० गंगाराम जी से उनकी चिकित्सा आरम्भ करवाई। संस्कृत का अध्ययन अच्छा चल रहा था।

देवी लक्ष्मी जी दो वर्ष पश्चात् कन्या महाविद्यालय मे अध्यापन-कार्य आरम्भ करने का विचार रखती थी। कन्या आश्रम का भार आपने अपने ऊपर ले लिया। व्यवस्था करने में वह सफल सिद्ध हुई। अपनी लजीली प्रकृति के कारण वह किसी को अपना कष्ट न बताया करती थीं, इस कारण फिर रुग्ण हो गई। महात्मा जी की पुत्री वेद कुमारी के साथ वह एक बार गुरुकुल भूमि में भी गई। उधर भी उपचार-निदान की कुछ व्यवस्था हुई। लाभ भी हुआ परन्तु वह वहाँ से चली आई।

अपने पास पति के बीमा आदि से प्राप्त तीन सहस्र की राशि में

से दो सहस्र दान कर देने का संकल्प कर लिया। सर्वमेध यज्ञ करने वाले लेखराम की पत्नी का यह त्याग आर्यसमाज के इतिहास में अपूर्व था। महात्मा मुन्शीराम जी ने ऐसा करने से रोका भी, परन्तु वह न रुकी। सभा के उस समय के प्रधान श्री चौ० रामभज दत्त जी ने भी महात्मा जी से कहा कि देवी जी को पुर्नविचार के लिए प्रेरित करें। देवी जी का एक ही उत्तर था—"भ्राता जी ! जीवन का विश्वास नहीं। क्या पता, कब प्राण निकल जाएँ। यदि ससार के कहने का विचार किया जावे तो कोई कार्य ही न हो सके।"

पण्डित रामभज दत्त जी सभा-प्रधान ने इस दान की घोषणा करते हुए वचन दिया कि वह सभा को प्रेरित करेंगे कि इस दान-राशि से एक स्थायी छात्र-वृत्ति गुरुकुल में स्थापित कर दी जावे। पण्डित लेखराम जी के नाम पर इसी छात्रवृत्ति से तैयार होकर जो प्रथम स्नातक निकला, वह था प्रसिद्ध वैदिक विद्वान्, सुकवि, सुवक्ता, गवेषक लेखक पण्डित बुद्धदेव विद्यालकार। स्नातक बनने पर आपको विचार आया कि प्रथम भाषण लेखराम नगर (कादियाँ) में ही दिया जावे। उनका प्रथम भाषण लेखराम नगर में ही हुआ था। हुतात्मा के नाम पर छात्रवृत्ति पाने व पढ़ने का उनको बडा स्वाभिमान था।

देवी जी को सम्बन्धियों ने दो सहस्र दान करने पर बड़े कटु व्यग्य कसे। सब-कुछ सहन करके वह पुनः जालन्धर आ गई। देवी जी को क्षय रोग हो गया। महात्मा जी ने उपचार-निदान की व्यवस्था करवाई परन्तु गरुकुल के कार्यों में उनकी व्यस्तता उनको टिकने न देती थी। रोपड़ के वीर सोमनाथ रोपड़ में सती लक्ष्मी को रखकर सेवा करने को तैयार थे। जालन्धर में ही श्री वजीरचन्द जी विद्यार्थी की देखरेख में उपचार का कार्य आरम्भ हो गया। उन दिनों क्षय रोग असाध्य-सा था। देवी जी को न बचाया जा सका। मृत्यु से पूर्व वह अपनी इच्छा (death will) लिखवाकर सब कुछ दान कर गई। कुछ राशि सास को दे गई। कुछ एक अनाथ कन्या के विवाह के लिए और छः सौ के लगभग आर्यपथिक निधि से सभा को दे गई। पूर्ण वैदिक रीति से आपका अन्त्येष्टि संस्कार किया गया। ३ जुलाई, १६०२ ई० को वह इस नश्वर देह का त्याग कर गई। आर्य पुरुषों ने श्रद्धापूर्वक उनकी अन्त्येष्टि करके अपने कर्त्तव्य का पालन किया।

अपना सर्वस्व धर्म पर अर्पण करके लक्ष्मी देवी जी ने वैदिक

धर्म-प्रचार के इतिहास में एक स्वर्णिम अध्याय जोड़ा। वह सच्चे अर्थों में सती थीं। उनकी सतत साधना आने वाली पीढ़ियों को सदा प्रेरणा देती रहेगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की श्रद्धांजलि

हम यहाँ आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वर्ष १६०१-१६०२ ई० के वार्षिक वृत्तान्त से मे देवीजी के प्रति श्रद्धाञ्जलि के कुछ शब्द देते हैं। इससे पाठक अनुमान लगा सकेंगे कि समकालीन आर्य पुरुषों के जीवन पर देवीजी के पवित्र जीवन की कितनी गहरी छाप थी।

"हमारे धर्मवीर श्रीमान पण्डित लेखराम जी आर्यपथिक की अकाल-मृत्यु से जो दुःख आर्य पुरुषों को पहुँचा था, वह अभी भूला ही नहीं था कि उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवीजी, जो कि एक धार्मिक सुशील व पूर्ण आर्य विचार वाली देवी थीं - तीन जुलाई १६०२ ई० को इस असार संसार से चल बसीं। इस आर्य देवी ने जिस साहस, धीरज से अपने सुयोग्य पति के वियोग के दुःख को सहन किया और जिस दृढ़ता से वह आर्यधर्म के पालन में प्रतिक्षण कटिबद्ध रहीं, वह आर्य पुरुषों से छिपा नहीं है।

इस देवी ने प्रण किया था कि यदि उसकी आयु ने साथ दिया तो वह एक दिन अपने धर्मवीर आर्योपदेशक की भाँति श्री स्वामी जी कृत ग्रंथों को पढ़कर आर्य धर्म के फैलाने में स्त्री समाज के अन्दर वैसा ही कार्य कर दिखावेगी। श्रीमतीजी ने इस प्रण के पूर्ण करने में अपने स्वास्थ्य के रुकावट बनने पर भी दृढ़ता से यत्न किया और सम्पूर्ण सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका का बहुत सा भाग पढ लिया।"[1]

माता लक्ष्मी जी इतिहासकार इन्द्र जी की दृष्टि में

महात्मा मुन्शीराम जी के सुपुत्र पण्डित इन्द्रजी अपने बाल्यकाल का एक संस्मरण लिखते हैं—"यह स्मरण है कि एक दिन पण्डित लेखराम जी अपनी धर्मपत्नी सहित कोठी में आए। उनकी धर्मपत्नी का

१. आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का वर्ष १६०१-१६०२ का वृत्तान्त, पृष्ठ १७-१८।

नाम लक्ष्मी था। यह भी स्मरण है कि वह बहुत लज्जाशील थीं। उसके पश्चात् पण्डित जी का हमारे यहाँ रहना बन्द हो गया, क्योंकि उन्होंने कोट राधाकिशन में घर ले लिया।[1]

एक दु:खद घटना

साहित्यकार को कभी कुछ ऐसे कर्त्तव्य भी निभाने पड़ते है, जिन्हें वह अपने ऊपर नहीं लेना चाहता। इतिहास-लेखक को तो विशेष रूप से कई बार कुछ ऐसे तथ्यों व घटनाओं का उल्लेख करना पड़ता है, जिनकी चर्चा करने से उसे संकोच सा होता है। इस जीवन-चरित्र के लेखक को, न चाहते हुए भी, यहाँ यह लिखना पड़ता है कि जिस 'आर्य गजट' साप्ताहिक के पण्डित लेखराम जी सम्पादक रहे, जिस आर्य गजट को पण्डित जी के कारण कीर्ति मिली, उसी आर्य गजट में पण्डित जी को अथवा उनके परिवार को अपयश देने के लिए कुछ पत्र आदि छापे गये। पण्डित जी की धर्मपत्नी मान्या लक्ष्मी देवी जी व चाचा गंडाराम जी को इस घातक नीति के विरुद्ध रोष प्रकट करना पड़ा। आर्य गजट मे हेरफेर व दुर्भावना से माता लक्ष्मी जी का एक पत्र छापा गया। इसे छापना आपत्तिजनक था। इसे छापने की कोई आवश्यकता न थी। इसे हम एक भोली-भाली देवी से खिलवाड़ कहेंगे या एक पुण्य आत्मा रक्त साक्षी का अपमान कहेंगे। पूज्या माता लक्ष्मी जी के पत्र की एक-एक पंक्ति लेखक ने पढ़ी है। इस पत्र से अनुचित लाभ उठाने का विफल प्रयास एक दु:खदायी घटना ही तो थी।[2]

'आर्य गजट' की इस भूल पर चाचा गंडाराम जी ने एक कड़ा लेख लिखा। एक आर्य सज्जन सीताराम जी ने भी एक लेख में इस अपराध की घोर निन्दा की और इसे लक्ष्मी देवी के साथ एक अत्याचार की संज्ञा दी।[3]

आर्यसमाज में समझदार समझे जाने वाले लोग भी कैसे-कैसे अक्षम्य अपराध करते आए है, यह घटना उसी का एक उदाहरण है।

---

१. 'मेरे पिता', लेखक पण्डित इन्द्र जी, पृ० १६, 'जन-ज्ञान' मासिक का दिसम्बर १९७६ ई० का अंक।

२. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक', ८ जुलाई, १८९८ ई०, पृ० ७।

३ 'सद्धर्म प्रचारक', १२ अगस्त, १८९८ ई०, पृ० ४-५।

जब से निकला दोश[1] पर,
लेकर सदाकत[2] का अलम,
ताक में तेरी रहा,
खंजर[3] हमेशा मौत का।

जादाए तहकीक[4] पर
दायम[5] रहा साबत[6] कदम,
दायें बायें गो रहा
मन्जर[7] हमेशा मौत का॥

तिशनाए[8] शौके शहादत[9]
था अज़ल[10] से तू कोई,
सर बकफ़[11] तेरी तरह
दुनिया में फिरता कौन है?

हम भी कुछ-कुछ जानते है,
थी तुझे जो लौ लगी,
शमे रोशन[12] पर बजुज़[13]
परवाना गिरता कौन है?

—महाकवि तिलोकचन्द 'महरूम'

---

(१) कधा, (२) सत्य, (३) ध्वज, (४) सत्यान्वेषण का मार्ग, (५) सदैव (६) अडिग, (७) दृश्य, (८) प्यासा, (९) बलिदान की चाहना, (१०) अनादिकाल से, (११) शीश तली पर धर कर, (१२) जलता हुआ दीपक, (१३) अतिरिक्त।

षष्ठम् खण्ड

सुरभित उद्यान

गद्य एवं पद्य में पंडित जी की विचार-सौरभ

(१) प्रभो ! हम तेरे हैं तू हमारा है

"जगत्स्वामी ! हम जो कुछ मागेंगे वह आप ही से चाहेंगे। कौन है, इस सकल ब्रह्माण्ड में जिससे हम आपके अतिरिक्त प्रार्थना कर सकें ?"

(२) पुरुषार्थ

जो क्रियमाण कर्म नये-नये करता जाता है, उसका संचित और प्रारब्ध भी नया-नया होता जाता है।"

(३) वेद-वाणी सबके लिए

"जब परमेश्वर ने सर्वोत्तम पवित्र वेद-विद्या का सबके लिए उपदेश करना लिखा है तो हम कौन है जो सबको वंचित रखें और उसका उपदेश न करें ? यह तो वही दृष्टान्त है कि दाता दान करे और भण्डारी का पेट फटे।"

(४) मांस-मदिरा का निषेध

"सब वैदिक धर्मियों के लिए उचित है कि यथार्थ सत्य शास्त्रों की रीति-अनुसार मदिरा-मांस आदि अभक्ष्य बुरी वस्तुओं का त्याग, करें।"

(५) हिन्दुओं की अवनति के कारण[1]

(१) वेद-ज्ञान से द्वेष, (२) एक ईश्वर की पूजा को तजना, (३) पाषाण-पूजा (४) असामयिक दया, (५) स्त्रियों को न

१. श्री पण्डित जी जाति को जगाने व जिलाने के लिए इस विषय पर प्राय: बोलते व लिखते रहते थे। अपने प्रथम लिखित व्याख्यान में भी इन बातो पर बल देकर आपने इन दोषों व दुर्बलताओं को दूर करने की प्रेरणा दी थी। यह भाषण इस ग्रन्थ मे दिया गया है।

पढ़ाना, (६) विधवाओं का विवाह न करना, (७) बाल-विवाह, (८) दान का अनुचित समय पर देना, (९) फूट, (१०) गुण-कर्म की अवहेलना का जन्म की जातपात।"[1]

(६) ईश्वर की प्रतिमा नहीं

"श्री कृष्ण, रामचन्द्र, हनुमान, भैरों, देवी, शिवजी, ब्रह्मा, विष्णु, दुर्गा, जगन्नाथ, बद्रीनारायण, काल आदि पूर्वजों की सब मन्दिरों में मूर्तियाँ दिखलाई देती हैं परन्तु परमात्मा पारब्रह्म की प्रतिमा किसी मन्दिर में नहीं है। इससे स्वत: सिद्ध है कि ईश्वर की कोई मूर्त्ति नही।"

(७) प्रभु-भक्ति

"सिदक दिल से करो भक्ति प्रभु की वेद के द्वारे।
विगरना शर्मसारी को उठाए जिसका जी चाहे॥"

(८) ज्ञान क्या ? अज्ञान क्या ?

"एकता जीव और ब्रह्म की निपट असम्भव जान।
यह सरापा भरम हैं नही ज्ञान·········· अज्ञान॥"

(९) पशु समान

"विद्या बिन कब होवे ज्ञान।
बिन विद्या नर पशु समान॥"

(१०) निष्कलंक श्री कृष्ण

"भोग लिखे जो कृष्ण के गोपियों के संग जान।
वे सब भागवतकार के कपोल-कल्पित जान।"

(११) "यदि संसार के कहने का विचार किया जावे तो कोई कार्य ही न हो सके।"

(सती माता लक्ष्मी जी)

श्री पण्डित लेखराम जी के तीन प्रिय पद

श्री पण्डित जी को कई वेद मन्त्र व सैकड़ो श्लोक कण्ठस्थ थे जिन्हें

१. पण्डितजी के प्रथम लिखित भाषण से।
वचन-सख्या १-४ व ६-१० तक सब 'कुलियात आर्य मुसाफिर' से उद्धृत।

वे अपने व्याख्यानों में सुनाया करते थे और लेखों व ग्रन्थों में जिनको उद्धृत किया गया है। ऐसे ही उन्हें उर्दू-फ़ारसी के सैकड़ों कविता-पद भी कण्ठस्थ थे। अपनी पुस्तकों में उन्होंने ऐसे कई पद दिये हैं। निम्न तीन फारसी पद उनको अत्यन्त प्रिय थे—

अगर पीर मुर्दा बकार आमदे।
ज़े शाहीन मुर्दा शिकार आमदे ॥[1]

अर्थात् यदि मरा हुआ पीर (गुरु) कामनाएँ पूरी कर सकता है तो फिर मरे हुए बाज़ नाम के पक्षी से भी शिकार होना चाहिए।

गर न बीनद रोजे रोशन शपरा चश्म[2]
चश्माए आफताब रा चे गुनाह?

अर्थात् यदि दिन के प्रकाश में उल्लू की आँख नहीं देख सकती तो इसमें सूर्य का क्या दोष ?

कुफ़र अस्त दर तरीकते मा कीना दाशतन।
आइने मास्त सीना चो आईना दाशतन ॥

अर्थात् हमारे पंथ (धर्म) में हृदय में द्वेष रखना अधर्म है। हमारी मर्यादा, हमारा नियम तो यह है कि हृदय को दर्पण के समान स्वच्छ-निर्मल रखा जावे।

आर्य सन्तान को सम्बोधित कर ये तीन पद कहा करते थे—

तुम्हीं अपनी मुश्किल को आसाँ करोगे।
तुम्हीं अपनी मंजिल का सामाँ करोगे ॥
तुम्हीं दर्द का अपने दिरमाँ करोगे।
करोगे तुम्हीं कुछ अगर याँ करोगे ॥
छुपा दस्ते हिम्मत में दस्ते कजा है।
मिसल है कि हिम्मत का हामी खुदा है ॥[3]

अर्थात् अपनी समस्याओं का समाधान तुम्हीं करोगे। ध्येय-धाम पर पहुँचने के सब साधन तुम्हें ही जुटाने होंगे। तुम्हीं अपने रोग का निदान करोगे। करना है तो फिर तुम्हें ही यहाँ करना पड़ेगा। यह

१. सम्भव है यह पद पण्डित जी का स्व-रचित हो। हमने फारसी के किसी ग्रन्थ में इसे कभी नहीं पढ़ा। पद बड़ा सुललित, सरल व भावपूर्ण है।

२. 'कुलियात आर्य मुसाफिर' पृष्ठ ३५५ पर यह पक्ति ऐसे दी है, **'गर न बीनद बरोज शपरा चशम'** इससे भी अर्थ में कोई भेद नहीं पड़ता।

३. लगता है कि ये पद भी स्व-रचित है।

उक्ति प्रसिद्ध है कि ईश्वर पुरुषार्थी का साथी है। पुरुषार्थी के पीछे ही भाग्य का हाथ रहता है।

तो विश्व का एक ही धर्म होता

"वेदों का श्रेष्ठ धर्म तथा शास्त्रों की पवित्र मर्यादा, जिसके लिए विरोधी व अनुयायी अभी तक उनकी पवित्रता के गीत गा रहे है, यदि आज तक संसार में प्रचलित रहती अर्थात् लोग उनके अनुसार आचार-व्यवहार करते रहते तो यह निश्चित है कि कोई और मत-पथ पैदा न होता और न ही कोई नवीन सम्प्रदाय जन्म लेता।"[1]

+ + +

"यदि मैं डरने लगूँ तो उपदेश का कार्य नहीं कर सकता।"[2]

धर्म का मार्ग

"जो लोग कहते हैं कि धर्म का मार्ग कठिन है, वे भूल करते है। धर्म का मार्ग अति सरल है और स्वाभाविक है। कठिन मार्ग अधर्म का है जिसके लिए षड्यन्त्रों, कुटिल निश्चयों, टेढ़ी चालों और छल-छद्म के लिए तैयारियाँ करनी पड़ती हैं और उनको निभाना पड़ता है तथा प्रकट होने का भय दुःखदायक होता है। धर्म करने में न उनकी आवश्यकता है, न दुःख, न भय अपितु मन को शान्ति, आत्मा की प्रसन्नता तथा लोगों का प्यार सदा प्राप्त होता है।"[3]

सत्य विद्या

"मनुष्य जो प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ कहलाता है, वह केवल सत्य विद्या ही के कारण है अन्यथा अज्ञानी मनुष्य बड़ा अधम प्राणी है, किसी अवस्था में अच्छा नही है। उस सर्वज्ञ प्रभु ने बाह्य सूर्य के समान आन्तरिक सूर्य भी उत्पन्न किया है। बाह्य सूर्य में भौतिक प्रकाश है और आन्तरिक में आत्मिक। सृष्टि-नियम जो सर्वशक्तिमान की पूर्णता का प्रत्यक्ष प्रमाण है, इससे सिद्ध है कि सत्य ज्ञान वही है

---

१. आर्य मुसाफिर साप्ताहिक के शहीद-अंक के मुख-पृष्ठ से, १०-१७ मार्च, १९३५।

२. वही, पृष्ठ ३।

३. वही, मार्च १९१४ का अंक तथा लेखक द्वारा लिखित 'धर्मवीर पण्डित लेखराम और उनका बलिदान', मुखपृष्ठ।

जो ज्ञान व बुद्धि (विज्ञान व विवेक) प्रत्युत सृष्टि-नियम के अनुसार हो।

बुद्धि के विरुद्ध, विज्ञान के विरुद्ध, प्रत्यक्ष के अनुभव के विरुद्ध कोई ज्ञान ईश्वर का नहीं हो सकता। जिस प्रकार से भानु के सामने सब चन्द्र, तारागण, दीपक व मोमबत्तियाँ फीकी व अनुपयोगी हैं वैसे ही सच्चे ईश्वरीय ज्ञान के सामने किसी का चमकना असम्भव है।"[1]

वेद का निर्भ्रान्त पवित्र ज्ञान

"पवित्र वेद दोष व परिवर्तन से रहित, पूर्ण रूप से ईश्वरीय ज्ञान है, सुस्पष्ट ईश्वरीय वाणी है जिसकी एक भी बात बुद्धि व विज्ञान के विरुद्ध नहीं है प्रत्युत् सब आदेश सर्वज्ञ व ज्ञानस्वरूप परमेश्वर द्वारा प्रकाशित है। सब सद्ज्ञान (बीज रूप में) व आत्मोन्नति के सर्व साधन इसमें स्पष्ट रूप से दिये हैं। मानव बुद्धि इन्हे बिना ज्ञान प्राप्त किये नहीं जान सकती। सबसे प्राचीन होने पर भी आजपर्यन्त परिवर्तन (काँट-छाँट) का न होना और सदा सहस्रों-लाखों वेदपाठियों (जिन्होंने इसे कण्ठ करके सुरक्षित रखा) का होना इसकी पूर्णता का लक्षण है।"[2]

आर्य जाति में जागृति

"आर्य जाति समय-समय पर जागती व सँभलती रही। चीनी, पारसी, यहूदी, बाबलियों व कुतबियों की भाँति सर्वथा निष्प्राण नहीं हो गई। धर्म से पतित हुए लोगों को जब वस चला, शुद्ध करके वापस लेती रही। मुसलमानों, ईसाइयों की शुद्धि का कार्य ऋषियों के सिरताज श्रीस्वामी दयानन्द जी महाराज ने शास्त्रानुसार अब आरम्भ कर दिया है। जो दिन-प्रतिदिन आर्यसमाज के पवित्र प्रयत्नों से उन्नत हो रहा है। इस प्रकाश के युग में आर्यजाति का जागरण केवल वेद की देन है।"

विवेक से सद्ज्ञान प्राप्त करो

"मेरे भाइयो ? पूर्वाग्रह की नयनक उतारो। विवेक-बुद्धि जो

१. 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक, १२ अगस्त, १९३४ ई० के मुखपृष्ठ से।
२. देखे वही, मुखपृष्ठ, दिनांक ७ अक्टूबर सन् १९३४ ई०।

सत्य व असत्य में भेद करे, वह प्राप्त करो। सोचो व समझो। पवित्र वेद की शिक्षा पर न्याय से विचार करो। पवित्र यजुर्वेद में क्या सुन्दर उपदेश है, हे मनुष्यो! तुम हृदय में प्रार्थना करो। ऐ सच्चिदानन्दस्वरूप! सत्य के ऋत के स्वामिन आनन्दस्वरूप! आप हम सबको सन्मार्ग पर चलने का उपदेश दीजिए ताकि हम शुद्ध बुद्धि से इसपर दृढ़ रहकर आपके पवित्र सन्देश को गाते हुए परमधाम को सिधारे।"[1]

हमारे बिछड़े बन्धुओ!

"बिछड़े हुए भाइयो! आर्य सन्तान के टुकड़ो और भारत के सपूतो!! जन्मभूमि के प्यारो!!! परमात्मा ने आपको व हमको एक ही प्रकार के पंच तत्त्व से बनाया। एक ही प्रकार का अन्न व जल हमारे लिए प्रयुक्त हुआ है। एक ही वायु से हम जी रहे है। एक ही भूमि पर रह रहे हैं परन्तु इस सबके होते हुए एक दूसरे के रक्त के पिपासु हैं। भाइयो को कसाइयों से बड़ा विरोधी जानते हैं।

स्वाभाविक सम्बन्धों के होते हुए भी हम परस्पर विरोधी दिशाओं के पथिक बने हुए है। इस विनती से मेरा जो उद्देश्य है, उसे गम्भीरता से पढ़ो, सुनो, विचारो और अध्ययन करो। हृदय में स्थान दो और हमारे पूर्वज एक ही थे। रक्त एक ही था। किसी प्रकार का द्वेष न था। भली प्रकार से सद्धर्म फैल रहा है।

"प्रिय बंधुओ! आओ मिलो!! प्रेम से सोचो विचारो!!!"[3]

मुसलमान बंधुओं के प्रति

"बिना किसी उचित कारण के मुझसे रुष्ट होते हैं और मुझे कष्ट देना चाहते है। वे अकारण मुझसे द्वेष करते है और केवल भूल से मुझे अपना शत्रु समझते हैं जबकि वास्तविकता यह है कि मेरे हृदय में उनके प्रति जितना प्रेम है और किसी के लिए नही है। मेरी प्रबल इच्छा है कि जो जो भ्रान्ति पूर्ण विश्वास उनके हृदयों में बैठ गये है,

१. देखिए 'आर्य मुसाफ़िर', मुखपृष्ठ, १४-१०-१९३४ ई०।
२. देखिए वही, मुखपृष्ठ, २ सितम्बर सन् १९३४ ई०।
३. देखिए मुखपृष्ठ 'आर्य मुसाफिर', पाँच अगस्त सन् १९३४ ई०।

वे सभ्यता, ज्ञान, बुद्धि, युक्ति व तर्क से उनका सुधार कर लेवें।"[1]

पण्डित जी के अपने शब्दों में उनकी मिर्ज़ा जी से 'खारक आदात' विषयक वार्ता

हम यहाँ 'सुरक्षित उद्यान', में उद्धृत कर रहे है। इसी ग्रंथ में यह घटना पृष्ठ ५०-५१ पर पाठक पढ चुके है तथापि यहाँ पण्डित जी के अपने शब्द उद्धृत करने में हमारे कई प्रयोजन है।

"एक दिन कस्बा कादियाँ ख़ास में मिर्जा साहिब के निवास पर बैठे हुए एक वर्षपर्यन्त वहाँ ठहरने की शर्तों का निर्णय हो रहा था। वार्तालाप के मध्य शब्द 'खारक आदात' की व्याख्या होने लगी। संवाददाता[2] की ओर से यह दावा था कि खारक आदात कहते हैं आदत अथवा स्वभाव के तोडने को। चाकू में चाक (काटने) करने का स्वभाव है तथा अग्नि में जलाने का, वृक्ष में स्थिर रहने का तथा मनुष्य में चलने आदि का। आप यदि इन आदतों को परमात्मा की देन (बरकत) से तोड़ देवें तब मुसलमान हो जाऊँगा अन्यथा आप आर्य हो जावें तथा मिथ्या घोषणाओ (दावों) से बाज आवें (तज दे)। मिर्ज़ा साहिब ने कहा, "कुरान की परिभाषा में इसके ये अर्थ नहीं है। संवाददाता ने कहा यह शब्द ही कुरान मे नही अन्यथा बतलाओ यदि कही है? मिर्जा साहिब ने इकरार किया (दृढ़तापूर्वक कहा) कि कुरान में अवश्य है। संवाददाता के पास कुरान था; तत्काल प्रस्तुत किया कि भगवान् के लिए निकालिये तथा इलहाम की फ़ाल डालिए।[3] कुछ मिनिट तक मिर्जाजी पृष्ठ उलटते-पुलटते रहे परन्तु, कुरान से वह शब्द कतई न निकाला और तोअन व करहन (हारकर व धींगा-धांगी से अर्थात् विवश होकर) कहा, "मै दावा छोड़ता हूँ, कुरान मे यह शब्द नही है।"[4]

---

१. वही, पृष्ठ ६, दिनाक १२ अगस्त सन् १६३४ ई०।

२. पण्डित लेखराम जी।

३. ज्योतिषयो की भाँति ही रमाल होते है जो फ़ाल डालकर भाग्य बताते है।

४. पण्डित लेखराम जी का कुरान पर इतना अधिकार था कि उन्होने 'आर्य गजट', दिनाक आठ मई सन् १८९३ ई०, पृष्ठ सख्या पाँच पर अपने लेख मे मिर्जा जी को बताया कि कुरान मे १६ बार मोजजात (चमत्कारो) व खारक आदात (स्वभाव के तोडने या टूटने से इनकार किया गया है। उनके इस सूक्ष्म अध्ययन की मुसलमान व ईसाई भी प्रशसा किया करते थे।

उस समय हकीम किशनसिंह साहिब तथा लाला निहाल चन्द साहिब एव हकीम दयाराम साहिब और पण्डित जयकिशन साहिब तथा पण्डित लछमी सहाय साहिब एवं मिर्जा कमालउद्दीन साहिब और मुन्शी मुराद अली साहिब एवं एक वृद्ध यात्री बैठे हुए थे जिससे सम्भवत: मिर्जा साहिब को भी इनकार न होगा ।"[१]

मैं वैदिक धर्म पर जीवन आहूत करने वाला सेवक हूँ

"ब्राहीन अहमदिया के लेखक ने धनोपार्जन का एक निराला ढंग निकाला है तथा आठ वर्ष के समय को कई प्रकार के मकरोफरेब तथा बहानो में टाला है। पुस्तक में कहीं ब्राह्मो मत वालों से गाली-गलौच हो रही है, किसी स्थल पर ईसाइयों को कोस रहे हैं। किसी स्थान पर मसीह को अल्लाह का अवज्ञाकारी पुत्र बता रहे है और किसी स्थल पर आर्यों को बुरा भला बता रहे हैं।

मुझे यहाँ किसी और से कुछ भी लेना-देना नहीं, न मैं किसी अन्य का वकील हूँ। हाँ ! आर्य धर्म का अनुयायी हूँ और वेदोक्त सत्य पर जीवन निछावर करने वाला सेवक।[२] अत: अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि 'ब्राहीने अहमदिया' को मेज़ाने इनसाफ़ (न्याय तुला) में तोलूँ और उनकी परीक्षा करूँ।[३]

प्रभु से एक विनती

"ऐ बाल-बच्चों से पाक (अर्थात् प्रभु जिसका सुत-दारा नही) व जन्म-मरण के बन्धन से रहित ! ऐ कल्पित आसमानो पर न रहने वाले ! ऐ दु:ख-पीड़ा न सहने वाले ! ऐ रासलीला करने व वनवास फिरने से मुक्त ! ऐ सदा शुद्ध बुद्ध-मुक्ति स्वभाव ! हे वेदों का सदुपदेश व सद्ज्ञान देने वाले परमात्मा ! स्त्रियों के आत्मा को अज्ञान से मुक्त करके, उत्तम शिक्षा, सदाचरण, श्रेष्ठ जीवन, सुव्यवस्था

---

१. देखिए 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ३४८।

२. श्री पण्डित जी के हृदय के धधकते, अगारों का यह एक ऐतिहासिक चित्र है और यह चित्र उन्होने स्वयं खीचा है। ऐसे पुण्यात्मा को ही मृत्युञ्जय कहते हैं।

३. द्रष्टव्य 'कुलियात आर्य मुसाफिर' में 'तकजीब ब्राहीने अहमदिया' के 'लेखन के कारण' विषय, पृष्ठ संख्या ३२६।

(गृह के प्रबन्ध-कौशल) तथा अपनी भक्ति के आभूषणों से अलंकृत कर। मिथ्या ग्रहो, कल्पित भयभूतों, कृत्रिम अन्धविश्वासों, कुरीतियों फकड़[1] तथा निरर्थक वाक्यों से उन्हें बचाकर सभ्यता के सुमार्ग पर चला। कोटिशः धन्यवाद पारब्रह्म को है जिसकी कृपा से आज यह पुस्तक समाप्त हुई और जितना भी स्त्रियों के हित के लिए उचित जाना, लिख दिया। मुझे इससे प्रसिद्धि की इच्छा नहीं केवल मानवीय हित के लिए विनय है।"[2]

वर्तमान स्त्रियाँ

"भारत की स्त्रियों की प्राचीन व वर्तमान अवस्था में बड़ा अन्तर है जिस पर लोग विचार नहीं करते। स्त्रियों का बाल-विवाह करना, बहुपत्नी, प्रथा का होना, विधवा का पुनर्विवाह न करना, सती होना, स्त्री को अशिक्षित रखना तथा उसको घर से बाहर न निकलने देना तथा साधुओ, पुजारियों तथा भाइयो (गुरुद्वारे के ग्रंथियो) की सेवा का निर्देश करना—ये सारी बाते है कि पूर्व काल मे इनमे से एक भी न थी।"[3]

सर्वव्यापक कभी एकदेशी नहीं हो सकता

"जिस प्रकार से नदी को लोटे मे बन्द नहीं किया जा सकता वैसे ही सर्वव्यापक कभी एक स्थान पर नही रुक सकता और मूर्तिपूजा होने से सर्वव्यापक (प्रभु) भी कभी सर्वव्यापक नही रहता।"[4]

प्रार्थना

"ऐ परमात्मा! अपनी महान कृपा व दया से सत्य का लोगो के हृदय मे प्रकाश कर तथा हमारे सब सामाजिक भाइयों को सद्धर्म के प्रचार में तत्पर कर दीजिए ताकि हम अपने धर्म का आपकी प्यारी

१. विवाहों पर अश्लील शब्दो मे कन्यापक्ष की स्त्रियाँ वर को सिठनियाँ दिया करती थी। यह उसी की ओर संकेत लगता है।

२. 'स्त्री शिक्षा' पुस्तक का अन्तिम पैरा तथा देखे कुलियात आर्य मुसाफिर, पृष्ठ १६४।

३ कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ १५१।

४. वही, पृष्ठ १६० देखें।

प्रजा में प्रचार कर सकें।"[1]

द्वेष का विनाश हो, सत्य का प्रकाश हो

"किसने खोजा जिसे प्राप्त न हुआ ? किसने चाहा जिसे दिखाई न दिया ? सच्चाई व स्नेह से अध्ययन करो ताकि द्वेष दूर होवे और आप तथा हम भाई बनें। ईश्वर आपको सामर्थ्य दें।

ऐ परमात्मा ! हमारी विनती है कि हमारे मुहम्मदी भाइयों के हृदयों में सामान्यत: तथा मिर्जा साहिब के हृदय में विशेष रूप से यह अंकित करे ताकि द्वेष का विनाश और सद्धर्म का प्रकाश हो।"[2]

ये सब अन्ध विश्वास है अतः त्याज्य है

"केवल यही पवित्र धर्म है जिसमें परमात्मा की सत्ता का प्रमाण बौद्धिक युक्तियों व दार्शनिक तर्कों से दिया जाता है। मूर्ति-पूजा, कबर व तावीजों द्वारा प्रार्थना, ईश्वर का साकार मानना, ईश्वर का किसी में उतरना, किसी को ईश्वर के तुल्य मानना, और किसी को ख़ुदा का रसूल, कलीम, आत्मा, सफ़ी (मित्र—हज़रत आदम की उपाधि) अथवा ख़लील (मित्र) आदि जानना, ये बातें सर्वथा मूर्ति-पूजा हैं और वेदानुसार निषिद्ध है।"[3]

विनय

"ऐ परमेश्वर ! तू अपने सद्धर्म को तलवार से नहीं प्रत्युत प्यार से और औचित्य एवं युक्तियों के द्वारा प्रचारित कर और विरोधी के हृदय को अपने सद्ज्ञान से प्रकाश कर।"[4]

आर्य सन्तान से—'उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत'

"सद्धर्म वेद की ओर ध्यान न देना कितने दुर्भाग्य की बात है यदि इस समय भी आपने करवट न बदली तथा वैदिक ध्वनि सुनकर भी आपके कान न खुले तथा पूर्ववत् मूर्तिपूजा प्रत्युत् वाममार्ग की घिनौनी

१. देखिए 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक पृष्ठ आठ दिनांक ५ अगस्त सन् १९३४ ई०।

२. वही पृष्ठ, प्रथम दिनांक २३ सितम्बर सन् १९३४ ई०।

३. वही मुख पृष्ठ दिनांक ३० सितम्बर सन् १९३० ई०।

४. 'आर्य मुसाफ़िर' मुखपृष्ठ २५ नवम्बर से २ दिसम्बर १९३४ का अंक।

शिक्षा के रक्तपात से[1] हृदय कलुषित और मदमस्ती से चूर और सुध-बुध खोय रहे तो महाप्रलय तक भी जागना कठिन है।"[1]

सन्ध्या क्या है और क्या नहीं

"जहाँ तक सन्ध्या और उसके पवित्र मन्त्रों को देखा गया है, (उसमें) ब्रह्मा, विष्णु, महेश का अथवा किसी भी देवी-देवता का नाम निशान नही। परमात्मा के अतिरिक्त इनमें किसी और की चर्चा नही तथा न ही ईश्वर के अतिरिक्त किसी से सम्बन्ध। मन को बाह्य जगत् से हटाकर प्राणायाम के द्वारा ईश्वर की ओर लगाना तथा सर्व इन्द्रियों को वश में करके जगदीश के गुणगान में लीन हो जाना, इसी का नाम सन्ध्या है जैसा कि सन्ध्या शब्द के अर्थ भी यही हैं कि भली प्रकार से ध्यान किया जावे परमेश्वर का जिसमें[2] उसको सन्ध्या कहते है।

इसमें किसी की आकृति व मूर्ति की कतई आवश्यकता नहीं प्रत्युत् विघ्न का कारण[3] क्योंकि सब आकृतियाँ व मूर्तियाँ नाशवान् हैं और प्राकृतिक हैं। परमात्मा मूर्तियों (चित्रों) से रहित है (अमूर्त है)। वह शरीरधारी (सकाय) नहीं कि उसके ध्यान के लिए किसी बैत अल्लाह (खुदा का घर अर्थात् काबा) अथवा महराब या मूर्त की आवश्यकता हो। मन को अभिमान से रहित करके परमात्मा के तेज का ध्यान करना, नाभि से प्राणों को उठाना, सारे शरीर में घुमाकर दृढ़ता से मन को स्थिर करना, हृदय को द्वेष रहित करके दर्पण के समान स्वच्छ रखना तथा अपने हृदय में सर्वशक्तिमान प्रभु का ध्यान करके उसके गुणों का स्मरण करना सन्ध्या का वास्तविक अर्थ है।"[4]

---

१. देखिए 'साँच को आँच नही' तथा 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ २०६।

२ मूलवाक्य की रचना को हमने नही बदला। तब उर्दू में ऐसी शैली बड़ी लोकप्रिय थी। पाठको को शैली का परिचय करवाने के लिए इसे यथावत् रखा है।

३. मूल मे फ़ारसी शब्द 'कद्रूरत' है जिसका शब्द अर्थ मैल है। हमने भावार्थ लिया है।

४. 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ६३० देखिए।

वाममार्ग व पुराणों के कारण वेद-सम्बन्धी भ्रान्तियाँ फैलीं

"वाममार्ग के प्रचलन व पुराणों के फ़तूर (विकार) के कारण पर्याप्त समय से लोगों ने सब प्रकार के अन्ध-विश्वास वेदों के माथे मढ़ने आरम्भ किए। देवताओं के लिए बलि और मूर्तियों के लिए रक्तपात भी लोग वेदों के नाम पर करने लगे। महीधर तथा सायणाचार्य सरीखे वाममार्गियों ने सैंकड़ों प्रकार के कलंक वेदों पर लगाए तथा यत्न किया उनकी भ्रष्ट शिक्षा को वेदोक्त स्वीकार किया जावे। मनमानी काल्पनिक कहानियाँ घड़कर उन्हें वेदों से प्रमाणित करना तथा दन्त-कथाएँ रचकर उन्हें वेद-प्रणीत ठहराना कितना घोर व घृणित पाप था, परन्तु, नास्तिक लोग किञ्चित न चूके तथा मन में तनिक भी भय न लाए।"[1]

ईश्वर का सद्ज्ञान वही है

ईश्वर का सद्ज्ञान वही है जो परमेश्वर की न्याय-व्यवस्था पर किसी प्रकार का कलक न लगने दे तथा परमात्मा को सब प्रकार के कलंकों व न्यूनताओं से रहित सिद्ध करे तथा वह धर्म उचित युक्तियों से ऐसा प्रमाणित करे ताकि निरर्थक गाथाओं, से छल, कपट, चमत्कार, सांसारिक प्रलोभनों, सिफ़ारिशी बातों और सृष्टि-नियमों के टूटने आदि सेजिनका प्रमाण उससे भी सहस्रगुणा अधिक कठिन है। सत्य का पालन करते हुए संकटों से भयभीत होना कायरों का कार्य है। उसके मिटाने (अधर्म को मिटाने) में जी-जान से ध्यान देना तथा सासांरिक प्रतिष्ठा एवं दिखावे, उपेक्षा व अपमान से कर्तव्य-च्युत न होना बुद्धिमानों व सज्जनो की रीति है।

हमारे भोले-भाले सैंकड़ों हिन्दू भाई पादरियों की चाटुकारिता पर फूले न समाते हुए अपनी सूझ-बूझ व विद्या को गिरवी रख चुके हैं तथा लोक पर परलोक का एव—धन पर धर्म की बोली दे चुके हैं—वार चुके हैं जिस कारण से सर्वस्व खो चुके हैं तथा जब कुछ भी पास न रहा तो आगे ईश्वर भला करे, मेम साहिबा की बग्घी हाँकने के योग्य हो गये। वे जन धन्य हैं जो लोभ के लिए जीवन नष्ट नहीं करते तथा छद्म (कृत्रिम) सन्तोष से बचकर वास्तविक शान्ति की खोज करते

---

१. देखिए 'कुल्लियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ २७९-२८०।

है तथा किसी अन्धकूप में नहीं गिरते तथा जो शास्त्र की इस आज्ञा पर आचरण करते है—'सत्यमेव जयते नानृतम् ।"[1]

आर्य धर्म को चमत्कारों की आवश्यकता नहीं

"आर्य धर्म को चमत्कारों तथा तमाशों की आवश्यकता नहीं, नास्तिकों को है। आर्य धर्म को आर्यत्व ही पर्याप्त व पूर्ण (काफ़ी व वाफ़ी) है।

नहीं मोहताज जेवर का जिसे ख़ूबी ख़ुदा ने दी,
फलक पर कैसे ख़ुश लगता है देखो चाँद बिन गहने।"[2]

ऋषि ने विषपान किया, जान दे दी, परन्तु सत्य-पथ को नहीं छोड़ा

"आप सुनिए और विचारिए कि उन्होंने क्या किया। पहले संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की। ईश्वर की भक्ति में लीन हुए। जगत् के सुधार का विचार आया। झट आराम को तज दिया। जगत् के सुधार में जुट गये। जाति ने पत्थर मारे। तलवारें लेकर गला काटने आये। गालियाँ दीं। जान के शत्रु हो गये। विष दिया परन्तु, उस ईश्वरेच्छा में जीवन बीताने वाले[3] ने साहस न छोड़ा। हिजरत (एक स्थान छोड़कर दूसरे स्थान पर सुरक्षा के लिए जाना) नहीं की और न ही सत्य का परित्याग करके चल बसे। जाते ही क्यों? उनका तो ईश्वर पर विश्वास था। नारायण के आश्रय थे। क्षणभंगुर जीवन को परोपकार में व्यतीत न करते तो क्या करते? सब कष्टों को सहन किया और सब प्रकार से विपदाओं का तन तानकर सामना करते हुए सत्य को सिद्ध किया।"[4]

---

१. 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ २७६।
२. देखे वही, पृष्ठ ४००।
३. यहाँ 'मरदे मैदान रजा' फारसी के ये अत्यन्त सारगर्भित शब्द है जिनका शब्दार्थ है 'ईश्वरेच्छा के मैदान का वीर पुरुष'।
४. देखिए 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ४७६।

यदि पाप कर्म का कर्त्ता जीव नहीं है तो फिर पुण्य कर्मों का भी कर्त्ता नहीं हो सकता

"कर्म करना चेतन का गुण है। जब तक चेतन चेतन है वह जब तक चाहे, कर्म कर सकता है। जड शरीर चेतन आत्मा के निकलने के पश्चात् कुछ भी नहीं कर सकता। पाप अथवा पुण्य कर्म मनुष्य के अपने किये हुए हैं, किसी अन्य की प्रेरणा व शक्ति से नहीं और यदि पाप मनुष्य का किया हुआ कर्म नहीं, शैतान का है, तो पुण्य कर्म भी मनुष्य के द्वारा किया हुआ नहीं होगा, खुदा का ही होगा।

इस अवस्था में मनुष्य न शुभ कर्म करता है और न पाप। दोनों से छुटकारा हुआ। सजा व जजा (सुख-दुःख रूपी फल) का कोई अस्तित्व न रहा—न कोई उसका भोगने वाला, और यदि कोई उसका भोगने वाला है तो पाप का फल भोगने वाला शैतान तथा पुण्य का रहमान (भगवान्) हुआ।"[1]

जीव अनादि है नित्य है, पैदा नहीं होता

"जो कहते हैं नये जीव आते हैं तो यह ज्ञान बुद्धि व अनुभव के विपरीत है। कारण निम्न हैं—

(१) जितने शरीर बनते हैं, इसी प्रकृति से निर्मित होते हैं जो धरती पर पहले विद्यमान है। कोई नयी प्रकृति (matter) नहीं आती।

(२) जितनी वर्षा होती है उन्हीं वाष्प-कणों से होती है जो धरती से उठते हैं, जो इससे पूर्व स्वयं जल थे। कहीं से नयी पैदा नही होती।

(३) जितने वृक्ष उत्पन्न होते हैं उसी विद्यमान प्रकृति से उत्पन्न होते हैं। अभाव से भाव कभी नहीं होता।

(४) जितनी नदियाँ बहती है उसी जल से जो पहले समुद्र में गया। कहीं अभाव से भाव अस्तित्व में नहीं आया।

(५) जितने भवन बनते हैं, वे सब उसी मिट्टी से व उसी ईंट तथा उसी पत्थर से जो पहले धरती पर किसी न किसी रूप में विद्यमान हैं। 'कुन'[2] कहने से उत्पन्न नहीं होते।

---

१. देखिए 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ २७२।

२. 'कुन' शब्द का अर्थ है 'हो जा' और अल्लाह के कुन कहने से यह सृष्टि बन गई। ऐसा कुरान का मत है। अल्लाह ने किसे कहा कुन, जबकि अल्लाह के अतिरिक्त किसी और की सत्ता कुरान को मान्य ही नहीं।

जब सब शरीर उसी प्रकृति से बनते हैं जिससे पहले सहस्रों बन चुके है अत: सुस्पष्ट है कि जीव भी वही आता है जो पहले किसी शरीर से सम्बन्ध-विच्छेद कर चुका है।"[१]

'नर जन्म का उद्देश्य न केवल विलास है'

"मनुष्य संसार में इसलिए नहीं आया कि खावे, लड़े, सोवे तथा चल बसे। प्रत्युत इसका सबसे बड़ा लक्ष्य अपनी भलाई की खोज करना है जो शारीरिक व आत्मिक दो भागों में विभक्त है और इसका आधार धर्म है। जहाँ तक विचार किया जाता है, सत्य धर्म भलाई का कारण और असत्य व अधर्म विकार का कारण है। कौन चाहता है कि उसे दु:ख हो ? कौन चाहता है कि वह कष्ट या क्लेश में जीवन बितावे ? सब जन सुख चाहते है। सभी आनन्द की इच्छा करते हैं। मोक्ष के लिए हाथ-पाँव मार रहे हैं।

सबकी इच्छा होने पर भी, प्राप्त करने वाले बहुत थोड़े हैं। ध्येय-धाम पर सकुशल पहुँचने की सबकी चाह है। परन्तु सहस्रों-लाखों मार्ग में ही लुट जाते हैं। ठग भी मित्र बनकर इस प्रकार की सान्त्वना देते है। जान तक लुटा देने की बातें कहते हैं परन्तु वह सान्त्वना नहीं, छुपा हुआ छल है। उनका वास्तविक उद्देश्य धन-सम्पदा बटोरने का और यात्री को नरक में फैंकने का है।

संसार में ठगा जाना सम्भव है। मनुष्य धोखा खा सकता है। इसके करोड़ों उदाहरण हैं। फिर मन व मस्तिष्क रखते हुए, बुद्धि व आँखों के होते हुए हम किसी का अन्ध अनुकरण क्यों करें ? क्या हम अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी नहीं ?"[२]

ईसाई बंधुओं से एक विनती

"हम अपने कृपालु ईसाई भाइयों की सेवा में कर-जोड़ विनती करते हैं कि वे हमारे निवेदन को पूर्वाग्रह से नहीं, प्रत्युत न्याय से सत्यान्वेषी दृष्टि से देखें। औचित्य को सामने रखकर इसका अध्ययन करें। इस पुस्तक का स्वाध्याय करते समय दर्शन को मन से विसार न दे। विज्ञान को अपने अन्तरात्मा (जो सर्वथा सत्य का पोषक है)

---

१ 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ८६।

२. 'क्रिश्चियन मत-दर्पण' की भूमिका से 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृ० २२०।

से परे न करें। कारण, हम व आप भाई है। आर्य सन्तान हैं। बहुत समय से बिछड़े हुए मिले है। धर्म-सम्बन्धी मतभेद वास्तव में बहुत बड़ा मतभेद है। क्या ही अच्छा हो यदि सत्यनिष्ठ होकर, स्वार्थ को तजकर, ज्ञान व बुद्धि से कार्य लेकर विवेक का प्रयोग करे। आर्य-समाज के सभासद् सच्चे हृदय से तत्पर हैं कि असत्य को त्याग दें परन्तु क्या आप लोग भी किसी प्रकार से उद्यत हो सकते हैं? गलेल्यू (गैलीलियो) आदि तत्त्ववेत्ताओं को दुःख देने वाले अपवित्र विचार अभी तक आपके हृदय से नहीं गये जो धर्म जैसी समुचित वस्तु को अनुचित पैमानों से नापते हों तथा दर्शन को एक ओर रख देते हों। यह बात न्याय के सर्वथा विपरीत है।

पाठक वृन्द! अपनी वर्षों की खोज आपकी सेवा में प्रस्तुत करने का प्रयोजन सत्य का प्रकाश करना व कराना है। किसी का हृदय दुखाना नहीं। बाइबल से सम्बन्धित वर्षों के परिश्रम से हमें जो लाभ हुआ, वह सब आपकी भेंट है। जगत्-पिता परमात्मा इसको लोक-प्रिय बनावे ताकि सत्य का प्रकाश तथा असत्य का नाश हो।"[1]

जो पाप में लीन रहते है

'स्याही जे मू रफ़त व अज रू न रफ़त'[2]

अर्थात् बालों का कालापन तो चला गया, किन्तु मुख से कालिमा न उतरी।

(टिप्पणी)—वृद्धावस्था तक जिनकी पाप की प्रवृत्ति बनी रहती है और जो आत्म-सुधार के लिए कुछ भी नही करते, ऐसे पाप-लीन जनों के लिए पण्डित जी ने फ़ारसी की यह पंक्ति लिखी है। यह भाव-पूर्ण वाक्य पण्डितजी का अपना ही प्रतीत होता है। हमने फ़ारसी ग्रंथों मे कही नही पढ़ा।

धर्मवीर श्री पण्डित लेखराम जी का प्रथम लिखित व्याख्यान[3]

"श्रोतागण! आज यह कैसा शुभ व आनन्ददायक दिवस है जिसमें

१. देखिए भूमिका क्रिश्चियन मत-दर्पण। 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ २२० देखिए।

२. देखिए, 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ५२२।

३. श्री पण्डित शान्तिप्रकाश जी व श्री प्रभाकर देव जी की प्रेरणा से प्रथम बार यह लेख आर्य भाषा मे अनूदित होकर छप रहा है।

सम्मिलित होने का विनीत को भी सौभाग्य प्रदान किया गया है। मैं यहाँ धर्म के सार्वभौमिक स्वरूप तथा भविष्य में उसकी उन्नति के लक्षणों (निशानात) के सम्बन्ध में कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।

सज्जनवृन्द ! जिस प्रकार से एक ही परमात्मा सारे विश्व का कर्त्ता व स्वामी है ऐसे ही उसका धर्म भी सार्वभौमिक अर्थात् सब जगत् के लिए एक ही होना चाहिए। यहाँ यह प्रश्न अवश्य पैदा होता है कि वह धर्म कौन-सा है ? बुद्ध है, जैन है, मुहम्मदी, ईसाई, ब्राह्मो अथवा कोई और ?

सर्वप्रथम बुद्धमत को लीजिए। यद्यपि यह नैतिकता सिखलाता है, तथापि अधूरा है। वैद्य (हकीम) तो बनाता है परन्तु अधकचरा (नीम-हकीम) हकीम जीवन के लिए एक सङ्कट होता है। इसकी शिक्षा हमारी भावी उन्नति के लिए अत्यन्त अधूरी है। हम रूखे-सूखे वचनों के अतिरिक्त बौद्धों से कुछ नहीं सीख सकते। वास्तविक आनन्द व परम शान्ति से यह हमें सर्वथा अछूता रखता है। हमारे बल, बुद्धि, ज्ञान को सत्य के एक उच्च सोपान से हटाकर बुद्धमत हमें घोर-अंधकार के गढ़े में गिराता है।

सबसे बढ़कर बुद्धमत हमको कल्पित महात्माओं की ओर, जिन का घर तो चीन में है ओर नौका इंगलैण्ड में है—भटका-भटका कर भूतों-प्रेतों के कल्पित लोक व अंधविश्वासों के जगत् में जकड़ देता है जिनसे मुक्त होना अथवा शान्ति पाना लोहे या पीतल से स्वर्ण बनाने वाले Alchemists (रसायनविज्ञों) आदि के झाँसा के समान असम्भव, अव्यावहारिक है अतः इसका सार्वभौमिक होना भी एक तथ्य विरुद्ध व कपोल-कल्पित बात है।

दूसरा नम्बर जैन मत का है। इनका घोष है 'जय जैनेन्द्र देव की।' इसी से इसकी वास्तविकता का भली प्रकार से परिचय मिल जाता है। तो भी इनकी एक बात अच्छी है कि पशु हिंसा व मांसाहार से यह बहुत बचते हैं। इसके साथ ही इनमें एक बहुत बड़ा दोष भी है कि सच्चे पथ-प्रदर्शक परमात्मा को यह नहीं मानते। दस तीर्थकरों[1] को ही परमेश्वर मान बैठे है। सृष्टि को बिना कर्त्ता के मानते है। इसलिए जब कर्त्ता ही नहीं और न कोई कर्मफल का दाता है तो सुख

१ जैन महावीर स्वामी को २४वाँ तीर्थकर मानते है। यहाँ दस अशुद्ध छपा है।

व दुःख कहाँ ? अर्थात् इनके यहाँ अपराध करना कोई अपराध ही नहीं। इसलिए ऐसे धर्म को सार्वभौमिक अथवा सुखदायक अथवा सन्तोष-दायक अथवा मुक्तिदाता नहीं कह सकते।

तीसरा है मुहम्मदी मत। इनके कुरानशरीफ़ में ही लिखा है—।[१]

अर्थात् खोज पड़ताल से वास्तविक कुरान किसी लुप्त पुस्तक में है उसको नहीं जानता कोई हृदय परन्तु पवित्र होवे। वह पुस्तक उतरी हुई है सृष्टि के पालनकर्त्ता से परन्तु आज पर्यन्त भाष्यकार अथवा व्याख्याकार स्पष्ट रूप से यह सिद्ध नहीं कर सका कि वह पुस्तक (किताब) कौन-सी है। कहाँ है ? इसके अतिरिक्त मुक्ति (निजात) के बारे में वहाँ इससे बढ़कर कोई आयत नहीं है—'सूरते बकर'…।[२]

अर्थात्—"शुभ सूचना उनको जिन्होंने ईमान लाया तथा भले कर्म किये, इस बात के, कि उनके लिए उद्यान हैं, उनके नीचे नदियाँ बहती है। जिस समय उनको दी जावेगी यहाँ से आजीविका—मेवे से कहेंगे, यह वही है, जो हमने दिया था, आगे उससे, और लाई जावेगी उनके पास वह आजीविका एक दूसरे के समान और उनके लिए उस स्थान पर स्त्रियाँ पवित्र की हुई है तथा वहाँ सदा रहेंगी।"

परमात्मा की प्रजा को उसके मानने वालों ने गाजर मूली के समान काटा है तथा विशेष रूप से ख़ुदा व खुदा की कार्यवाही को प्रायः मक्का-निवासियों तक ही सीमित रखा है। इनका सार्वभौमिक सिद्ध होना भी एक टेढ़ी खीर है।

चौथा इसाई मत है। कहने को कहा जा सकता है कि यूरोप, अफ्रीका, अमरीका व एशिया में प्रायः यूरोपियनों का ही प्रभाव है, अतः सार्वभौमिक है, परन्तु नहीं। अंग्रेजों ने जितनी भी उन्नति की है, व्यापार से की है। व्यापार ने उन्हें सम्पत्ति दी है, सम्पदा से वीरता, वीरता से धैर्य, धीरज से अनुभव, अनुभव से आविष्कार, आविष्कार यह मत से सज्जनता, सौजन्य से गुणों का सम्मान, गुणों के आदर से उत्साह-लग्न, लग्न से पर्यटन, पर्यटन से विजय, विजय से साम्राज्य प्राप्त हुआ है। सांसारिक उन्नति में तो भले ही अंग्रेज चरम शिखर तक पहुँच गये हैं परन्तु धार्मिक क्षेत्र में ये अधूरे के अधूरे व कोरे के कोरे है।

बड़ी बायबल का प्रथम पृष्ठ ही देख लीजिए, जहाँ पर लिखा है

१-२. कुरान की आयतें यहाँ उद्धृत की गई।

कि ईसा से ४००४ वर्ष पूर्व प्रथम छ' दिन में खुदा ने सृष्टि को बनाकर सातवें दिन विश्राम किया और खुदा की रूह (Spirit) जलों पर तैरती थी। ऐ सज्जनवृन्द ! इनकी गणना से ४००४+१८८४=५८८८ वर्ष धरती को उत्पन्न हुए हो चुके है। साथ ही आपतनिक रामचन्द्रजी, कृष्णचन्द्रजी, हरिश्चन्द्रजी के इतिहास पर दृष्टि तो डालें। चलो ! वह तो हमारा इतिहास है। अंग्रेजो के ही इतिहास पर थोड़ा विचार कर लें। भूगर्भ विद्या के विशेषज्ञों ने यह तथ्य प्रमाणित किया है कि एक लाख वर्ष में एक हीरा पैदा होता है। इसलिए सज्जनवृन्द ईसाई लोग धार्मिक इतिहास में सर्वथा पक्के नही [अर्थात् धर्मविषय में इनके विचार कच्चे हैं]।

बायबल में योहन्ना की इञ्जील के चौथे अध्याय से ईश्वरीय उपदेश आपके सामने रखता हूँ—"उसके पश्चात् जो मैंने दृष्टि डाली तो देखिए आकाश पर एक द्वार खुला है तथा प्रथम आवाज जो मैंने सुनी, नरसिंघे की ही थी जो मुझसे बोलती थी। उसने कहा इधर ऊपर आ और मैं तुझको वे बाते दिखलाऊँगा कि उसके पश्चात् अवश्य होंगी तब वही मैं रूह में (Spirit में) सम्मिलित हो गया फिर क्या देखता हूँ कि आसमान पर एक सिहासन धरा है और उस सिंहासन पर कोई बैठा है और जो बैठा था वह देखने में लाल पत्थर सा था और एक हरे रंग का धनुष सा था उस सिंहासन के चारों ओर और उस सिंहासन के निकट २४ सिहासन थे तथा उन सिंहासनों पर मैंनें २४ महानुभाव (बुजुर्ग) श्वेत वस्त्र धारण किये हुए बैठे देखे। उनके सिरों पर स्वर्ण मुकट थे। बिजली, गर्जना तथा आवाजे उस सिंहासन से निकलती थी तथा अग्नि के सात दीपक उस सिंहासन के आगे प्रज्वलित थे। खुदा की सात रूहें हैं तथा उस सिहासन के आगे शीशा का समुद्र बिलोर के समान था और सिंहासन के मध्य व सिंहासन के चहुँ ओर जन्तु थे जो आगे पीछे आँखों से युक्त थे। प्रथम जन्तु बबर समान था, दूसरा जानदार बछड़े जैसा और तीसरे का मुख मनुष्य के समान था तथा चौथा जानदार उड़ते बाज जैसा था। इन चारों जानदारों में से एक-एक के छः-छ. सिर थे तथा इनके चारों ओर व भीतर आँखे ही आँखें थी। रात-दिन उन्हें अवकाश नही परन्तु कहते रहते हैं कद्दूस-कद्दूस-कद्दूस (परमात्मा का पवित्र नाम), परमात्मा, सर्वशक्तिमान जो था और जो है और जो आनेवाला है तथा जब वह जानदार

जो सिंहासन पर बैठा है तथा सदा-सदा के लिए जीवित है, बुजुर्गी व सन्मान व कृतज्ञता प्रकट करते है तब वे चौबीस महानुभाव उसके सामने जो सिंहासन पर बैठा है गिर पड़ते हैं और उनको जो सदा के लिए जीवित है झुककर उसका आदर (सिजदा) करते है तथा अपने मुकट यह कहते हुए उस सिंहासन के सामने डाल देते हैं कि ऐ परमेश्वर! तू ही तेजस्वी है, सन्मान व कुदरत के योग्य है क्योंकि तूने ही सब कुछ पैदा किया है और वे तेरी ही इच्छा से हैं और पैदा हुई हैं।"

देखिए महानुभाव, जब इनका ईश्वर ही एकदेशी (ससीम) है, लाल पत्थर के रंग जैसा सिंहासन पर विराजमान है तो फिर ईसाई मत का सार्वभौमिक होना सर्वथा मिथ्या है। जितनी भी पुस्तकें बायबल के विरुद्ध लिखी गई है, इनमें से किसी का भी पादरियों ने सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया। इसलिए हम कैसे कह सकते हैं कि बायबल सन्तोषजनक है ?

हजरत लूत व हजरत मूसा आदि नबियों का वृत्तान्त पढ़कर हृदय सिहर उठता है अतः मैं बायबल को कदापि सन्तोपप्रद नहीं कह सकता और न ही सार्वभौमिक कह सकता हूँ। क्योंकि खुदा वहाँ पर कबूतरी के समान कू-कू करता है, सम्भवतः किसी साहेब बहादुर का शिकार हो चुका होगा।

(५) अब हमारे ब्राह्मो साहिबान। वे प्रत्येक बात से वञ्चित है। लोगों से उधार माँग-माँग उन्होंने एक सम्प्रदाय बना लिया है। उनमें सब अंग्रेजी पठित हैं। उनकी इबारत (लेख–Drafting) पूर्णता से रहित है और उनकी कार्यवाही अव्यावहारिक है और विशेष रोचक बात यह है कि उनमें से प्रत्येक पर इलहाम उतरता है (उन्हें ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होता है)। उनकी नेचर (स्वभाव) ही न्यारा है। उनको वही आता है[1] कि लड़के शिक्षित क्यों पैदा नहीं होते ? इन्होंने इस **बात पर आचरण कर रखा है कि···[2] मनुष्यों का मत वही है जो राजा का है। इनको ईसाइयों की बात-बात पर गर्व है** तथा प्राचीन महात्माओं के पृष्ठ-पृष्ठ पर व्यंग्यात्मक घृणास्पद बाण वर्षा। इनका इलहाम नित्य नये-नये गुल खिलाता है।

---

१. इतने वाक्य का भाव स्पष्ट नहीं है।

२. यहाँ अरबी का एक प्रमाण दिया है।

गहे बर तारम आला नशीनन्द।
गहे बर पुशते पाए खुद न बीनन्द ॥

अर्थात् कभी तो बहुत ऊँची अट्टालिका पर बैठते हैं और कभी अपने पशु (गधे-घोड़े) की पीठ पर भी दिखाई नहीं देते। यह लोग परमात्मा को सर्वज्ञ व अनादि नहीं मानते हैं यही कारण है सदा ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता जानते हैं। नेचरल पार्टी को कल्पित कहानियों की भाँति नित्य प्रति नवीन बनाना चाहते है। बुद्धि को मानते हैं परन्तु मादर पिदर आजाद[1] माता-पिता से स्वतन्त्र–स्वच्छन्द अर्थात् बिना ज्ञान के वे इस विशाल ब्रह्माण्ड के लिए अन्धा-धुन्ध अर्थात् जिसकी लाठी उसकी भैंस वाला व्यवहार चाहते है। वे चरम चक्षुओं के लिए तो इस पूरे सूर्य को मानते है परन्तु हृदय की शुद्धता —बुद्धि के प्रकाश के लिए प्राचीन सद्ग्रन्थो को नहीं जानते अर्थात् सदुपदेश, ज्ञान अथवा शिक्षा की आवश्यकता ही नही समझते। अतः कोई कैसे कह सकता है कि यह सार्वभौमिक धर्म है ?

सार्वभौमिक धर्म के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि वह चूक-(दोष)-रहित हो परन्तु इनका इलहाम राजकीय नियमों (Acts) की भाँति अथवा स्कूली पुस्तकों (Text Books) के समान नित्यप्रति परिवर्तित होता रहता है। जो वस्तु पूर्ण नहीं, वह सन्तोषजनक नहीं तथा जिसमें धैर्य नहीं वह उत्साह (हिम्मत) नही दे सकता। क्योंकि यह स्वयं डगमग है अतः सार्वभौमिक नही हो सकता तथा हमें भी शान्ति व सत्य नहीं दे सकता।

इसलिए ऐ बन्धुओ ! आओ देखें कि वह सार्वभौमिक धर्म कौन-सा है ? प्रथम इस बात पर विचार कीजिए कि जैसा उसका नाम सार्वभौमिक हो वैसे ही सदा से भी हो अर्थात् उसकी नित्यता की साक्षी मिल सके। क्योंकि विभिन्न स्रोतों से यह सिद्ध हो चुका है कि आर्यावर्त्त की जनसंख्या सर्वप्रथम हुई। इसलिए इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि शिक्षण-प्रशिक्षण (ज्ञान के अदान-प्रदान) का क्रम यहीं से आरम्भ हुआ।[2] संस्कृत से जिसको अरबी में 'उम उल्लसान' (भाषाओं की माता) कहते हैं वास्तव में सब भाषाओं की माता है। संस्कृत में

---

१. यह एक प्रसिद्ध फारसी प्रयोग है।

२. आर्यों के साहित्य में किसी विदेशी साहित्य की चर्चा नही है। विदेशी साहित्य में वेद व वैदिक शिक्षा की प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से चर्चा है।

जितना भी साहित्य है उनमें सबसे प्राचीन वेद के पुस्तक हैं। एक सुयोग्य अंग्रेज ने जो प्रख्यात इतिहासज्ञ हैं यह लिखा है कि संसार में सबसे प्राचीन पुस्तक वेद है।[1]

देखिए ज्योतिष (Astronomy) के अनुसार एक अरब छयानवे करोड़ आठ लाख बावन सहस्त्र नौ सौ अड़तालीस वर्ष हो चुके है जिसकी प्रामाणिकता आर्य जाति के नित्य पढ़े जानेवाले सङ्कल्प से ही स्पष्ट है। अब देखना यह है कि वेद हमें क्या उपदेश देता है और क्या सिखाता है। ऋग्वेद अष्टक एक मन्त्र तीन में मनुष्य जाति के चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र बताए गये हैं। वैदिक रीति के अनुसार मनुष्यों के दो भेद है—एक आर्य, दूसरा दस्यु इस मन्त्र में ईश्वर आज्ञा देता है कि हे मनुष्य तुम उत्तम सुख आदि गुणों के उत्पन्न करने वाले व्यवहार की सिद्धि के लिए एक आर्य अर्थात् श्रेष्ठ विद्वान् तथा दूसरा दस्यु (दस्यु वह है जो परपीड़ा करने वाला अधर्मी दुष्ट मनुष्य है) इनके दो भेद जानकर धर्म की सिद्धि के लिए दुष्टों का सामना कर तथा उनको सदुपदेश देने में सदा तत्पर रहो। इसका उपदेश विशेष रूप से समाज के प्रकरण में जहाँ सभापति का उल्लेख है, किया गया है।

जब ऋग्वेद ही हमें आर्य धर्म की प्रेरणा देता है तो अब हमको सच्चे आत्मा से वेदों के उपदेशों पर विचारना चाहिए कि ये कैसे है। वेद कहता है—

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ँ शुद्धमपापविद्धम्।

—यजुर्वेद ४०।८

फिर वेद कहता है—

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपास्ते प्रशिषं यस्य देवाः।

—ऋग्वेद १०।१२१।२

फिर वेद कहता—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः। —यजुर्वेद ३२।३

वेदवाणी कहती है—

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्न धातमम्॥ ऋग्वेद १।१।१

---

२. एक नहीं अनेक विद्वान् ऐसा ही मानते है। इस विषय में अधिक जानकारी के लिए स्वामी विद्यानन्दजी कृत भूमिका भास्कर अवश्य पढ़िए।

परमेश्वर का ज्ञान वेद कहता है—

हिरण्यगर्भः समवर्ततग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत ।

—ऋग्वेद १०।१२१।१

वेद कहता है—

यो भूतं च भव्यं च स्वर्यस्यचाधितिष्ठति ।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।।

—अ० १०।८।१

स्वयं वेद के ही अर्थ स्पष्ट कर रहे है कि वे ज्ञान की खान हैं। विज्ञान का सागर है। अग्नि ऋषि से लेकर आज पर्यन्त जितने भी विद्वान् हुए वे सब इस बात को मानते हैं कि जितना ज्ञान मानवीय आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त था, वह सब प्रकार से वेद में दिया है।

'अज आँ दम ता ई दम'[1]

तबसे लेकर आज पर्यन्त वेद में कोई किसी प्रकार की चूक सिद्ध नहीं कर सका तथा न कर सकेगा। शस्त्रकारों के अनुसार 'नास्ति मूल कुतो शाखा' जिसका मूल ही न हो शाख कहाँ होगी। और पुस्तकों वालों ने किसी आयत को खारज (निकाली गई) किसी को मनसूख (निरस्त) उलतलावत (पाठ) मान लिया। परन्तु वेद सूर्य समान पूर्ववत् प्रकाशमान है। चूक आदि से रहित। वेद का कोई उपदेश कभी ईश्वर ने (तन्सीख) निरस्त नही किया। सत्य से परिपूर्ण। मलीन दृष्टि दूर। वेद की शिक्षा किसी वर्ग विशेष, देश विशेष अथवा सम्प्रदाय विशेष के लिए नही है। न ही यह किसी व्यक्ति विशेष से जुड़ी हुई है। इसलिए इसमे सन्देह नही कि सार्वभौमिक धर्म वेद के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं है। आर्य धर्म ही सार्वभौमिक है, यह स्पष्ट है।

हमारे हिन्दू भाइयों की अवनति के निम्न कारण हैं—

पहला—वेद ज्ञान से अज्ञानी होना, या वेद के प्रति श्रद्धा का अभाव। दूसरा—एक परमात्मा की उपासना को तजना। तीसरा—पाषाण पूजा। चौथा—असामयिक दया अर्थात् दया का मिथ्या भाव [दया के यथार्थ स्वरूप को न समझकर जहाँ दया नही चाहिए वहाँ दया करना]। पाँचवाँ—वेद का स्वाध्याय न करना। छठा—

१. फारसी का एक साहित्यिक प्रयोग है।

विधवाओं का विवाह न करना। सातवाँ—बाल विवाह। आठवाँ—बिना अवसर के कुपात्रों को दान। नवाँ—संगठन न होना। दसवाँ—जन्म का जातिवन्धन। कर्म की अवहेलना।

जगत् के उपकारक परमहंस परिव्राजिकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने सर्वाङ्गीण उन्नति का उपदेश देने वाले सब सत्य विद्याओं के भण्डार वेद का भाष्य करके हमें सब दोषों से सावधान कर दिया है। अब इन सब कुरीतियों को दूर करने के लिए ईश्वर की कृपा और हमारा पुरुषार्थ चाहिए। शीघ्र सब बखेड़ा दूर हो जावेगा।

अब अन्त में यह निवेदन करना चाहता हूँ कि बाबा नानक जी व स्वामी दयानन्द जी के उपदेशों में कुछ अन्तर है अथवा नहीं।

मुख्य रूप से छः विषय विचारणीय हैं—

पहला--वेद, दूसरा -परमात्मा, तीसरा—अवतार, चौथा—श्राद्ध, पाँचवाँ—मूर्त्तिपूजा, छठा—देवी-देवताओं की पूजा। स्वामी जी का जो सच्चा उद्देश्य था वह तो सब पर प्रकट ही है।"

इससे आगे इन छः सैद्धान्तिक विषयों पर श्री प० लेखराम जी ने श्री गुरु नानकदेव की वाणी से कई प्रमाण देकर यह सिद्ध किया कि बाबा नानक जी का आशय भी वेदानुकूल ही था। वह वेद को ईश्वर का पवित्र अनादि सच्चा ज्ञान मानते थे।

परमात्मा को बाबा जी भी एक और अकाय मानते थे। ईश्वर को सर्वव्यापक और अजन्मा मानते थे। वह ईश्वर का अवतार भी नहीं मानते थे। मृतक श्राद्ध में भी विश्वास नहीं करते थे। इसकी पुष्टि में भी श्री पण्डित जी ने कई प्रमाण प्रस्तुत किये।

यह तो सर्वविदित है कि गुरु नानक की वाणी में मूर्त्ति पूजा का खण्डन है। देवी-देवताओं की पूजा में भी उनका अविश्वास था। इन सब विषयो पर गुरुजी का दृष्टिकोण गुरुजी के शब्दों में ही रखा। गुरु ग्रन्थ साहिब से और भी कई प्रमाण दिये।

हमने यहाँ पण्डित जी द्वारा प्रस्तुत प्रमाण इसलिए उद्धृत नहीं किये, क्योंकि ये सब फारसी लिपि में हैं। फारसी लिपि ऐसी दोष-युक्त है कि लिखा कुछ जाता है और पढ़ा कुछ जाता है।

प्रमाणों के अशुद्ध छपने से पण्डित जी के लेख का गौरव घट जाता है। प्रबुद्ध पाठक इन सब विषयों पर 'आर्य सिद्धान्त और सिख

गुरु' पुस्तक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज लिखित अवश्य पढ़ें। हम यहाँ उसी में से कुछ प्रमाण दे देते है—

दीवा बले अन्धरा जाइ। वेदज्ञान मति पापाँ खाइ।
असंख ग्रन्थ मुखि वेद पाठ।

वेद वखिआन करत साधुजन भागहीन समझत नहीं।
चार वेद होए सच्चिचार।

चचे चार वेद जिन साजे चारे खानी चार जुगा।[1]

अपने इस लिखित भाषण के अन्त में पण्डित जी ने कहा—

"मेरे विचार में तो गुरु जी वेदोक्त धर्म को उन्नत करनेवाले थे। जहाँ तक सम्भव हो सका उन्होंने आर्य धर्म के फैलाने में बहुत यत्न किया परन्तु उस काल में न रेल थी न तार आदि। इसलिए उन्होंने प्राय. पैदल ही यात्राएँ की। हरिद्वार आदि पर जाकर वहाँ के पण्डों से भी वाद-विवाद करके उनकी पोल खोली। बाबा जी व ऋषि दयानन्द जी के पवित्र विचार एक से ही थे और दोनों के पवित्र निश्चय भी एक से ही थे। इसलिए सब सिख भाइयों को उचित है कि आर्यो के साथ मिलकर धर्म कार्यो मे तत्पर होवें तथा राष्ट्रीय व जातीय उन्नति के जो-जो दृढ़ चिह्न यथा वैदिक कालेज[2] बनने वाले हैं, उनकी सहायता में पीछे न रहें। कारण दोनों की भावी पीढ़ियाँ इसके बिना (ऐक्य के बिना) लाभान्वित न होंगी। वैदिक कालेज की शिक्षा किसी ज़ात (जाति) विशेष के लिए न होगी प्रत्युत्त आर्यावर्त्त के चारों वर्ण उसमें शिक्षा पावेगे। विद्या दान से वड़ा इस धरती पर कोई दान नहीं। देखिए यह विद्या का लाभ नहीं तो और क्या है कि हमारे हिन्दू भाई जो इतने समय से मुहम्मदी व ईसाई बन रहे थे अब एकदम रुक गये है। जो भूल-चूक से विधर्मी हो रहे थे वे वापिस आ रहे है। हमारी शिक्षा जो मौलवियों के हाथ में थी वह वेदोक्त

---

१. इनमे से कुछ प्रमाण पण्डित जी ने भी अपने लेख में दिये।

२. प्रथम डी॰ ए॰ वी॰ कालेज से आर्यो ने क्या-क्या आशाएँ लगाई थी, यह पण्डित जी के इन वाक्यों से पता चलता है। विस्तार के लिए पाठक महात्मा हंसराज ग्रन्थावलि का प्रथम खण्ड देखे।

धर्म के मानने वालों के हाथ में आ जावेगी।[1] इसलिए हमारी उन्नति में क्या सन्देह रहा ? वैदिक कालेज सबकी उन्नति का दृढ़ चिह्न है। परमात्मा करे यह चिरजीवी हो।[2]

ओ३म् शान्ति !

कादियाँ की यात्रा का वृत्तान्त
पण्डित जी के अपने शब्दों में

"वहाँ आर्यसमाज भी नहीं था। उसकी स्थापना भी उस क्षेत्र में आवश्यक समझी। क्योंकि मिर्जा साहिब ने उचित उत्तर देने से इन्कार किया इसलिए संवाददाता दूरस्थ स्थान की यात्रा के कष्ट सहकर कादियाँ में गया तथा पूरे दो मास वहाँ ठहरा। उन्हीं दिनों ईश्वर की कृपा से आर्यसमाज भी स्थापित हो गया। प्रतिदिन पवित्र वेद का उपदेश होता रहा।

मिर्जा साहिब को किसी अट (शर्त) पर टिकाने के लिए तीन वार इलहामी कोठे (मिर्जा जी के चबारे—बालाख़ाना) पर भी गया परन्तु मिर्जा साहिब किसी भी शर्त पर न ठहरे। एक दिन से लेकर दो वर्ष तक रहने की शर्तों को भी स्वीकार किया परन्तु मिर्जा साहिब किसी भी वचन पर न टिके।

यदि कुछ चमत्कारों का नाम व निशान भी होता तो ठहरते परन्तु वहाँ तो आसमानी निशान का नाम व निशान नहीं है। हाँ! ईश्वर की कृपा से इतना अवश्य हुआ कि उनकी आय के सब अनुचित साधन बन्द हो गये। यक्कों में बैठकर सदूरस्थ स्थानों से यात्रियों का पीर साहिब के दर्शनार्थ (ज्यारत) आना और भेंटें चढ़ाना कतई न्यून हो गया।

---

१. अब डी० ए० वी० कालेजों में वेदोक्त धर्म को मानने वालो का मिलना अति कठिन ही नही है प्रत्युत कटु सत्य तो यह है कि इन संस्थाओं में किसी आर्य के लिए जीना भी दूभर हो चुका है। कहीं-कहीं जुआ खेला जाता है ताकि संस्था को धन मिल जावे।

२. देखिए 'सद्धर्म प्रचारक' २ जुलाई, १८९७ ई० व ९ जुलाई, १८९७ ई० के अङ्क तथा 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक का १०/१७ मार्च, १९३५ का अङ्क। उर्दू में इसका शीर्षक था 'आर्य धर्म के आलमगीर होने के सबूत और उसकी आइन्दा तरक्की के निशान मजबूत।'

अन्त को स्थिति यहाँ तक आ पहुँची कि सब सञ्चित धन को खा चुके और कुछ ऋण लेकर अम्बाला की ओर हिजरत (चले गये) कर गये।"

इस वृत्तान्त के पश्चात् पण्डित जी ने एक कविता भी मिर्जा की नीति-रीति पर लिखी है। हम यहाँ इस कविता का एक पद देते है—

नजूमी लोगों को बतलाता था फ़लक के हाल,
बला में डाला है उसे कहरे आसमानी ने।[1]

श्री पण्डित लेखराम जी से पौराणिकों का लिखित प्रश्नोत्तर

पौराणिक पक्ष का प्रश्न—जीव व प्रकृति को उत्पन्न करने वाला ईश्वर है अथवा नहीं ? तथा ईश्वर में जीव व प्रकृति को उत्पन्न करने की शक्ति है या नहीं ?

पण्डित जी का उत्तर—जीव व प्रकृति की उत्पत्ति नहीं हुई, कारण उत्पत्ति का शब्द वही चरितार्थ होता है जहाँ दो अथवा दो से अधिक अवयवों को लेकर कोई सावयव वस्तु बनाई जावे। क्योंकि जीव व प्रकृति सदा ही निरावयव हैं इसलिए वे उत्पन्न नहीं हो सकते। क्योंकि कोई निरवयव वस्तु तर्कीब पंजीर (संयोग से व्यवस्थापूर्वक रचना) नहीं हो सकती तथा विज्ञान अर्थात् वैशेषिक शास्त्र की पदार्थ विद्या के अनुसार अभाव कोई वस्तु नहीं। इसके अतिरिक्त आधुनिक विज्ञान भी इसका साक्षी है। देखिए 'मुबादी उलालूम' पत्रिका आदि।[2]

और जो वस्तु मिश्रित होती है, वह टूट भी जाती है। जीव क्योंकि टूटता-फूटता नहीं अतः (अवयव) मिश्रित नहीं और क्योंकि वह (अवयव) मिश्रित नहीं अतः अनादि है। ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सर्वव्यापक, सर्व प्रतिपालक है। वह एक देशी नहीं है तथा जीवों के कर्मों का फल प्रदाता है। जीव कर्म करता है। फल भोगने में ईश्वर पर आश्रित है तथा कर्म करने के लिए प्रकृति पर आश्रित है···जीव प्रजा हैं, ईश्वर महाराजा है केवल यही नहीं प्रत्युत्त ईश्वर एक और

---

१. देखिए 'कुलियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ४०६।

२. इसी को आर्य दार्शनिक नित्य कहते हैं। 'सदाकारणवन्नित्यम्' अर्थात् जिसका सद्भाव हो और जिसका अन्य कारण न हो उसको नित्य कहते है। देखें वैशेषिक दर्शन।

जीव असंख्य है। इन बौद्धिक युक्तियों के अतिरिक्त वेद ज्ञान में भी स्पष्ट बताया गया है कि जीव, ईश्वर व प्रकृति अनादि है। देखें ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १६४ मन्त्र २० तथा उपनिषद् का वाक्य 'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां···।' आदि[1] इसलिए बौद्धिक युक्तियों अर्थात् विज्ञान तथा धार्मिक युक्तियों अर्थात् वेद तथा उपनिषद् दोनों से सिद्ध है कि तीनों पदार्थ अनादि हैं।

प्रश्न—किस शब्दकोश से आप राम के अर्थ दास व चोर के बतलाते हैं तथा रमीदन धातु संस्कृत भाषा में है अथवा फ़ारसी में ?

पं० लेखराम जी का उत्तर—मैंने राम का अर्थ चोर नहीं किया। आपने मेरे उस दिन के भाषण को नहीं समझा। श्रोताओं ने भी पुष्टि की थी। राम संस्कृत के किसी कोश में अथवा किसी प्राचीन उपनिषद् तथा महाभारत काल के किसी प्रामाणिक सर्वमान्य पुस्तक में परमेश्वर या अवतार के अर्थों में अथवा पूजा के योग्य पदार्थ के लिए प्रयुक्त नहीं हुआ तथा ऐसा ही कृष्ण नाम जिसका अर्थ काला श्याम यथा कृष्ण नक्षत्र व कृष्ण पक्ष।

शेष रहा राम वह संस्कृत में वाटिका व रमण, सुन्दर के अर्थ में तथा फारसी में दास, आश्रित व भागने के अर्थों में प्रयुक्त होता है और आप चूँकि उर्दू जानते हैं आपको ज्ञात ही होगा कि 'रमीदन' (भागना) फारसी भाषा में एक धातु है। क्योंकि संस्कृत व फारसी भाषा शास्त्र के विद्वानों की दृष्टि में एक ही मूल की भाषाएँ हैं इसलिए बतलाया गया था कि जिस राम को संस्कृत वाले उद्यान के अर्थों में प्रयुक्त करते है तथा राम संस्कृत में रम् धातु से निकला है जो रमणे के अर्थ में हैं। देखो धातु पाठ।[2]

प्रश्न—पण्डित की क्या परिभाषा है ?

पण्डित जी का उत्तर—बुद्धिमान।

प्रश्न—निन्दक पुरुष भी बुद्धिमान कहलाया जा सकता है ?

पण्डित जी का उत्तर—निन्दा का अर्थ आपने यथार्थ नही समझा। जो बात न हो उसको कहना और जो हो उसको न कहना, सुरापान करने वाले को भला मनुष्य तथा भले मानस को सुरा पीने वाला कहना, यह निन्दा है। ऋषि-मुनियों पर व्यभिचार व झूठ तथा छल-

१. देखिए श्वेताश्वतर उपनिषद् चतुर्थ अध्याय मन्त्र संख्या पाँच।
२. आप्टे के संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश मे राम के अर्थ 'मनोहर, सुन्दर, धूमिल व काला आदि दिये हैं।

चोरी, परस्त्रीगमन आदि कलंक लगाना, यह निन्दा है। ऐसी बाते पुराणों में लिखी है। भागवत मे वर्णित चीरहरण लीला का, शिव पुराण के ४२वें अध्याय में वर्णित ऋषियों की स्त्रियों के साथ व्यभिचार करने और कार्तिक माहात्म्य के वर्णित विष्णु का वृन्दा जालन्धर की स्त्री के साथ व्यभिचार इनका पुराणों के खण्डन के लिए वर्णन करना निन्दा नहीं है। कारण पुराणों में ऐसा ही लिखा है। इसे छुपाना अपराध है जिस प्रकार कि बम्बई हाईकोर्ट में गोकलइए गोसाइयों पर व्यभिचार का अभियोग चला।[1] इसे वे अपनी भाषा में 'ब्रह्म सम्बन्ध' और इसी प्रकार डेरा जात[2] की बोली में केसरी स्नान कहते है जिसके बिना पति अपनी पत्नी के हाथ का अन्न ग्रहण नही करता। ये सब कुछ 'महाराज लायबल केस' नाम की एक बड़ी पुस्तक में प्रमाणसहित प्रकाशित हो चुका है।

ऐसी-ऐसी बातें लोगों को बुराई से बचाने तथा व्यभिचार छुड़ाने तथा ऋषि-मुनियों की श्रेष्ठता बतलाने एवं धूर्तों की पोल खोलने के लिए बतलाना निन्दा नहीं है प्रत्युत्त यथार्थ है। निन्दा है स्त्रियों को भागवत सुनाना और विशेष रूप से दसवाँ स्कन्ध। 'निन्दा है प्रेम सागर की कथा करना। निन्दा है रासलीला' तथा निन्दा है चीरहरण लीला बनाना। क्योंकि शास्त्र में निन्दा शब्द के अर्थ ही यही हैं कि जिसमें जो हो वह छुपाना और जो न हो वह बताना जैसाकि पार्वती के विवाह में शिवपुराण मे लिखा है कि पार्वती के पाँव की अंगुली देखकर ब्रह्मा जी का वीर्य स्खलन हो गया। देखिए शिवपुराण नवलकिशोर प्रेस द्वारा उर्दू काव्य में प्रकाशित।

श्री गौरी की अंगुशिते हनाई।
सरे दस्त अंजमन में देख पाई।
गिरा तुख़्मे श्री ब्रह्मा जमीं पर।
मुजस्सम हो गया कतरा वहीं पर॥

शिव पुराण की दूसरी घटना—

ब्यां करते है यूँ[3] नेको जात।
सुनो यह इत्फ़ाके वक्त की बात॥

१ देखिए पुस्तक 'महाराज लायबल केस' उर्दू-अंग्रेजी मे।
२. पश्चिमी पजाब में डेरा गाजी खाँ आदि तीन जिले थे।
३. यहाँ एक शब्द ठीक-ठीक पढा नही गया। अनुमान से अशुद्ध लिखना भी ठीक नही।

रखीशर एक जा ख़िलवत[1] नशीं थे।
सरे कैलाश पर मसकन गज़ीं थे ॥[2]
हुआ शिवजी के दिल को जोशे मस्ती।
हुए आमादाए इशरत परस्ती ॥[3]
जनों के पास से ताबाना पहुँचे।
कि जैसे शमा के पास परवाना पहुँचे ॥
हुईं गायब हज़ारों सूरते होश।
हज़ारों ने शराबे वसल की नोश ॥[4]
ब्याबां से रखीशर फिर कर आए।
शगुफ़ता गुञ्चा पुयमर्दा[5] पाए ॥
हुए ग़व्वास दरयाए कलक में।[6]
दुआ यूँ की सदा शिवजी के हक़ में ॥
कि लिङ्ग शिव गिरे कटकर जमीं पर।
न रग़बत हो किसी ज़ुहरा जबीं पर ॥[7]
वहीं पर लिङ्गे शङ्कर गिर पड़ा साफ़।
जुदा कालब से होकर गिर पड़ा साफ़ ॥

क्योंकि आप संस्कृत नहीं जानते इसलिए मैं संस्कृत के प्रमाण नहीं देता। संकेत के लिए प्रथम श्लोक······[8] आदि आदि।

प्रश्न—आपने दूसरे व्याख्यान में कहा था कि पद्मपुराण में पार्वती को महादेव कहते हैं कि ऐसा झूठा शास्त्र छलछद्म से, (दर पर्दा बौद्ध) बौद्धमत, मैंने रचा है आदि असत्य है।

उत्तर पं० लेखराम·–पद्मपुराण में शिव तथा पार्वती का संवाद

---

१. एक ऋषि कहीं एकान्त में बैठे थे।
२. डेरा लगाए रहता था।
३. भोग विलास, मौज मारने को उद्यत हुए।
४. सहस्रों ने मिलन की सुरा का पान किया।
५. खिले पुष्प मुर्झा गये।
६. असन्तोष के समुद्र मे डुबकियाँ लगाईं।
७. किसी सुन्दरी के प्रति आकर्षण न हो।
८. यह रिक्त स्थान छोड़ना पड़ा। उर्दू में लिखा यह श्लोक शुद्ध नहीं पढ़ा जाता।

है। उसमें माया का विशेष उल्लेख है। ऐसा जो झूठा शास्त्र बौद्ध मत के पर्दा में, वह मैने ही कलियुग में ब्राह्मण का रूप धारकर लिखा है, जिसमें वैदिक सिद्धान्तों का विपरीत वर्णन किया गया है ताकि वेद की निन्दा हो तथा उसमें कर्मों के सर्वथा त्याग देने का वर्णन है और उसमें सब कर्मों से……[1] को ही निष्कर्म लिखा है।[2] और परमात्मा व जीव की एकता है जिसमें पारब्रह्म को जीवों से पृथक् किया है, वह मैंने ही कलियुग में वेद अर्थ के समान प्रकट हो इस गुप्त प्रयोजन को पूर्ण करने के लिए ऐ देवी रचा है। वास्तव में वह ठीक नही है।[3]

[देखिए पद्मपुराण बम्बई में प्रकाशित पार्वती महादेव संवाद] और यही वर्णन पण्डित विज्ञान भिक्षु ने सांख्यशास्त्र की टीका की भूमिका के पृष्ठ ७ व ८ पर लिखा है। [देखिए जीवानन्द प्रेस कलकत्ता से प्रकाशित]

प्रश्न पौराणिकों का—ऋग्वेद के १५४ सूक्त मन्त्र दो में नरसिंह अवतार तथा बावन अवतार सिद्ध होते है। पण्डितों से उसके अर्थ जो मैने सुने हैं, वे ये है—

नरसिंह रूपधारी परमेश्वर अपने पराक्रम द्वारा स्तुति को प्राप्त होता है। पृथ्वी मे विचरता है। नरसिंह आदि रूप से कैलाश में शिवरूप से निवास करता हुआ परिविक्रम अवतार तीन पॉव से धरती को कम्पायमान करता है और आपने कहा है कि वन से आकर सिंह ने हिरण्यकश्यप को मारा। मेरी समझ में यह वाक्य आपका वेद विरुद्ध है कि नरसिंह अवतार नहीं हुआ जिसके प्रमाणस्वरूप उपर्युक्त वेद मन्त्र प्रस्तुत करता हूँ।

उत्तर पं० लेखराम जी—इस आपके उपर्युक्त वेद मन्त्र में न तो किसी अवतार का वर्णन है[4] और न ही चारो वेदों में कहीं अवतार शब्द है यही कारण है कि निरुक्तकार यास्क मुनि और निरुक्त के

---

१. रिक्त स्थान मूल में ही छोड़ रखा है।

२ निष्कर्म का भाव यहाँ सम्भवतः निष्काम कर्म है।

३. पुराण के इस प्रमाण की भाषा अटपटी है। पिछले दो वाक्यो का भाव हमारी समझ में नहीं आया। पुराण मे जीव ब्रह्म की एकता का अवैदिक सिद्धान्त घुसेड़ा यह तो समझ में आता है आगे के वाक्यों का अर्थ स्पष्ट नही है।

४. जिस वेद मन्त्र की यहाँ चर्चा है यह ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में है।

टीकाकार पण्डित सत्यव्रत सामश्रमी ने निरुक्त में जो Asiatic Society एशियाटिक सोसायटी कलकत्ता ने छपवाया है, लिखा है कि 'अवतार की बातें पुराणों की कहानियाँ हैं।' वेद के मानने वालों को उनका सम्मान नहीं करना चाहिए। इस मन्त्र में परमात्मा की सृष्टि और उसकी शक्ति (सामर्थ्य) का वर्णन है। कोई शब्द ऐसा नहीं जिसका अर्थ सिंह हो तथा कोई भी शब्द ऐसा नहीं जिसका अर्थ बौना व्यक्ति हो। इसके अतिरिक्त सर्वव्यापक ईश्वर के लिए अवतार शब्द का प्रयोग ही अशुद्ध है। सृष्टि में तीन प्रकार के विकार होते हैं। सत्वगुण, रजोगुण, तमोगुण इन तीनों का ही इसमें वर्णन है।

किसी नरसिंह का इसमें कतई वर्णन नहीं। आपको सम्भवत. भाषा के मृग शब्द से भ्रान्ति हुई है परन्तु मृग सब जंगली जन्तुओं के अर्थ में है जिसमें गीदड़, कुत्ता, बिल्ला, भेड़िया, चीता, रीछ व बन्दर आदि सब सम्मिलित हैं। सिंह के लिए शब्द मृगेन्द्र आता है न कि मृग और इसके अतिरिक्त और भी कई शब्द उसके लिए हैं। मृगराज भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त वेद मे अवतार का खण्डन बड़ा सुस्पष्ट मिलता है। [देखिए यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का आठवाँ मन्त्र][1]

---

१. ये प्रश्नोत्तर हिन्दू धर्म सभा बन्नू सीमा प्रान्त (पाकिस्तान) के मन्त्री व श्री पं० लेखराम जी के मध्य १८ नवम्बर को हुए थे। श्री पण्डित जी के बलिदान के पश्चात् बन्नू के प्रसिद्ध आर्य विद्वान् लेखक गुरु प्यारा जी ने इन्हे 'आर्य मुसाफिर' मार्च सन् १८९९ ई० के अंक में पृष्ठ ३०-३४ तक छपवाया। श्रीयुत गुरुप्यारा प्रश्नोत्तर का सन् लिखना भूल गये। हमारे विचार में १८९४ ई० का वर्ष था। देखिए इसी पुस्तक का पृष्ठ ९८। जाँच पड़ताल के लिए इस समय सम्बन्धित अक 'सद्धर्म प्रचारक' का नही मिल सका।

खण्ड सप्तम्

बूझो तो हम जानें

इस खण्ड में क्या है ?

मिर्जा गुलाम अहमद के सब छोटे-बड़े चेले मिर्जा साहिब की नुबवत का ढोल पीटते हुए मिर्जा साहिब के इलहामों की जाँच-पड़ताल करने की बजाए संसार की प्रत्येक विपत्ति यथा भूकम्प, दुष्काल व महामारी को मिर्जा साहिब की भविष्यवाणी का परिणाम मानते है और मानवों की प्रत्येक विपदा को मिर्जा साहिब की पैगम्बरी का निशान व प्रमाण मानते है। भारत का विभाजन हुआ तो लाखों जन मारे गये। देश-विभाजन के पश्चात् कादियाँ में मिर्जाइयों के वार्षिकोत्सव पर लेखक ने एक से अधिक बार मिर्जाई वक्ताओं के मुख से यह सुना कि मिर्जा साहिब ने इसकी भी भविष्यवाणी की थी कि पश्चिम से एक **'सायका'** बिजली गिरेगी सो इंगलैण्ड एक पश्चिमी देश से विभाजन की बिजली गिरी।

आश्चर्य तो यह है कि देश-विभाजन से पूर्व मिर्जा साहिब व उनकी सारी जमात अंग्रेज के गीत गाते हुए न थकते थे। यह बिजली गिर पड़ी भी तो तब जब एक मिर्जाई सर जफर उल्ला खाँ ने श्री खिजर हयात खाँ प्रधान मन्त्री पंजाब से त्यागपत्र दिलवाकर देश की हत्या का मार्ग प्रशस्त कर दिया। इस घिनौने षड्यन्त्र में **खलीफा महमूद भी सम्मिलित थे।**[1]

पं० लेखराम पर छुरा चला तो मिर्जा साहिब की पैगम्बरी प्रमाणित हो गई। प्लेग का रोग फैला तो पैगम्बरी चमक उठी। बिहार में भूकम्प आया तो पैगम्बरी की शान बन गई। प्रथम विश्व युद्ध में लाखों जन मरे तो पैगम्बरी का बोलबोला हो गया। 'जमींदार' लाहौर की जमानत जब्त हुई अथवा मौलाना जफर अली को अंग्रेज ने बन्दी बनाया तो मिर्जा जी के इलहामों की सच्चाई सिद्ध हुई।

---

१. द्रष्टव्य डा० गोकुलचन्द्र नारंग लिखित 'Transformation of Sikhism.'

इस खण्ड में हम मिर्जा साहिब, तथा उनके बेटे खलीफा महमूद की कई भविष्यवाणियों व निशानियों तथा कुछ अन्य तथ्यों की चर्चा करेंगे। मिर्जाजी की भविष्यवाणियाँ कई बार पञ्चतन्त्र की कहानियों से भी अधिक रोचक होती हैं। दार्शनिक कसौटी पर मिर्जाई इन्हें कसते तो कुछ बात भी बनती। यहाँ तो एक-एक बात ऐसी विचित्र है कि बूझो तो हम जानें वाली उक्ति चरितार्थ होती है। मिर्जा जी की बुझारतें समझना कोई सरल बात नहीं। इनमें कुछ भविष्यवाणियों की चर्चा दुहराई गई है परन्तु, इसका एक कारण प्रसंग तथा दूसरा मिर्जा साहिब का एक ही बात को अदल-बदलकर तथा घटा-बढ़ाकर लिखने का स्वभाव है। हम भी विवश हैं। परमात्मा करे कि इन्हें पढ़कर लोग सन्मार्ग पर चलने का सत्साहस करें।

मिर्जा जी का सौजन्य व शिष्टता

मिर्जा जी का एक आर्य पण्डित खड़कसिंह से कादियाँ में शास्त्रार्थ हुआ। मिर्जा जी जब शास्त्रार्थ में उनका सामना न कर सके तो फिर पण्डित जी को कोसने में कोई कसर न छोड़ी। एक विज्ञापन भी निकाला जिसमें ये शब्द भी थे—

"वरना (अन्यथा) ऐसे सूर्य का निरादर करना जो संसार का नूर (प्रकाश) है। नर्मी (उदारता) हरामजदगी है। झूठे व्यक्ति की यह निशानी है कि अज्ञानियों के सामने तो बहुत गप्पें हाँकते है परन्तु जब कोई पल्लू पकड़कर पूछे कि तनिक प्रमाण देकर **जाओ तो जहाँ से निकले थे वहीं दाखिल हो जाते हैं।**" (हयाते अहमद, जिल्द पहली, नम्बर तीन, पृष्ठ २५)[1]

हम अपने से भिन्न विचार के पाठकों से भी यह विनती करेंगे कि अपने हृदय पर हाथ रखकर यह साक्षी दें कि क्या यह असंसदीय भाषा नहीं है? क्या कोई शिष्ट व्यक्ति इन शब्दों का प्रयोग कर सकता है? **क्या यही नबुवत की शान व निशान है?**

चेलों ने क्यों कोसा?

एक पंजाबी मौलवी ने हज पर जाने वाले मौलवियों को यह परामर्श दिया कि वे हजाज में जाकर मोटर लारियों पर सवार न हों,

१. 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक के पृष्ठ ३, दिनांक २५-११-१९३४ ई० तथा वही, पृष्ठ ४, दिनांक २७-१-१९३५ ई० देखिए।

ऊँटों पर यात्रा करें ताकि निर्धन अरबी बद्दुओं को आजीविका मिल सके। इस सुझाव पर किसी को आपत्ति न होनी चाहिए। यह सहानुभूति से परिपूर्ण भाव है। परन्तु **'सालार'** नाम के मिर्जाई पत्र को यह सुझाव बड़ा अखरा। उसने इसे अत्यन्त बेहूदा (निरर्थक) घोषित किया।

क्यों ? क्या आप यह बुझारत समझे ? इसके पीछे भी एक रहस्य है। बात इस प्रकार से है कि **'अहादीसे सहीहा'** में लिखा है कि जब हजरत मसीह मोऊद नाजिल (उतरेंगे) तो ऊँट बेकार हो जावेंगे। अब श्री मिर्जा गुलाम अहमद ने मसीह होने का दावा किया है। ये मिर्जाई चाहते है कि मिर्जा साहिब के जीवन काल में तो ऊँट बेकार न हो सके तो चलो उनकी मृत्यु के पश्चात् ही उनकी बेकारी का उपाय निकाला जावे। कुछ तो सन्तोष हो जावेगा। उक्त पंजाबी मौलवी ने मिर्जाइयों की आशाओं व भावनाओं का रक्तपात कर दिया जब हजाज में मोटरों की बजाय ऊँटों पर यात्रा करने का गाधीवादी सुझाव दिया। मिर्जाई इसे सहन न कर सके।[1]

मिर्जा स्त्री था या पुरुष ?

१९३४ ई० के क्रिसमस पर मिर्जाइयों के उत्सव पर अहरारी मुसलमानों ने एक ट्रैक्ट बाँटा था जिसका शीर्षक था **'मिर्जा कादियाँ औरत था या मर्द ?'**[2] इसमें क्या था ? इसके सम्बन्ध में हम यहाँ कुछ नहीं लिखते। पाठक इस विषय में मौलाना सना उल्ला साहिब अमृतसरी व अन्य प्रतिष्ठित मुसलमानों द्वारा मिर्जा साहिब से सम्बन्धित साहित्य पढ़ें फिर **यह बुझारत भी समझ में आ जावेगी।**

डींग भी और विफलता की घोषणा भी

एक ओर तो मिर्जा साहिब व उनके मिर्जाई पं० लेखराम जी के वध को नबुवत का निशान व सफलता मानते है परन्तु इस डींग के साथ मिर्जा साहिब अपनी निराशा इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—

"परन्तु बहुत थोड़े मनुष्यों ने इससे [पण्डित जी की हत्या] लाभ

---

१. 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक, पृष्ठ पाँच, दिनांक २७-१-१९३५ ई०।

२. देखें वही, पृष्ठ ३, दिनांक ३-२-१९३५ ई०।

उठाया।"[1] (अलबशरी, जिल्द २, पृष्ठ २६)।

एक हत्यारे की स्तुति

आज से कोई ५३ वर्ष पूर्व एक मतांध व्यक्ति ने कराची में एक आर्य वीर नत्थूराम जी की हत्या कर दी। छेड़छाड़ की पहल मतांध लोगों ने ही की और आत्मरक्षा में जब एक आर्य ने कुछ उत्तर दिया तो 'रसूल का निरादर कर दिया', का शोर मचाकर ऐसे लोग दूसरों की हत्या करके पुण्य के भागी बनते रहे हैं। इस घटना के घटने पर मिजाई पत्रिका अलफजल ने ३१ मार्च सन् १९३५ ई० को एक सम्पादकीय लिखकर कराची के मुसलमानों को और उत्तेजित किया। मिर्जाई सम्पादक ने हत्यारे की स्तुति करते हुए यहाँ तक लिखा था, **"एक परवानाए रसूल उठता है।"**[2]

इस मिर्जाई परम्परा और हिंसा की इस घिनौनी प्रवृत्ति के विषय में हमें अब कुछ नहीं कहना। मिर्जाइयों के कर्म अब फल ला रहे हैं। उनके बोये हुए बीज उगकर फलदार वृक्ष बन गये है। हिंसा की प्रवृत्ति रंग दिखा रही है। पाकिस्तान में मिर्जाई कई वर्षों से 'रसूल के परवानों' के हाथों ऐसे पिट रहे हैं कि अब ये संसार की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए अपने आपको निर्दोष, शान्तिप्रिय व अहिंसक तथा Law Abiding Citizens (संविधान का सम्मान करने वाले) सभ्य नागरिक सिद्ध कर रहे हैं। हिंसा का चक्र जब चलता है तो उसका परिणाम अन्त को यही निकलता है।

कोयटा का भूकम्प क्यों आया?

१९३५ ई० मे कोयटा में बड़ा विनाशकारी भूकम्प आया था। सहस्रो जन मर गये। यह भूकम्प क्यों आया? मिर्जाई पत्रिका फारुक ने अपने १४ जून सन् १९३५ ई० के एक लेख में लिखा था कि अल्लाह ने बहुत पहले मिर्जा साहिब को एक इलहाम में कहा था कि यदि लोगो ने पाप तजकर मेरे भेजे हुए नबी की बात पर ध्यान न दिया अर्थात् उसे नबी न माना तो मैं बड़े जोरदार हमलों से अपने अमूर (विषयों- नियमों, शिक्षा) की सच्चाई का प्रकाश करूँगा।"

१. देखें वही, पृष्ठ १७, दिनांक १०-१७ मार्च सन् १९३५ ई०।

२. देखें 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ आठ पर दिनाक २८-४-१९३५ ई० पं० शिवराज जी का लेख।

विचित्र बात यह हुई कि भूकम्प में कई मिर्जाई भी मर गये। अब लोगों ने मिर्जाइयों से पूछा कि ये मिर्जा को नबी मानने वाले मिर्जा जी के नबुवत के इस आलीशान निशान भूकम्प का शिकार क्यों हुए ? इसका उत्तर मिर्जा गुलाम अहमद के पुत्र मिर्जा बशीर महमूद ने अपने खुतबा में यह दिया--

"कुछ लोग यह कहते है कि यदि यह भूकम्प निशान था तो फिर कुछ अहमदी (मिर्जाई) इसमें क्यों मर गये। इसका उत्तर यह है कि ...कोयटा के भूकम्प में हमारी जमात के लगभग दस प्रतिशत लोग मरे हैं जबकि इसकी तुलना में विरोधियों के घरों में ९० प्रतिशत मौतें हुई हैं।"

परन्तु प्रश्न तो यह है कि जब इन बेचारों ने मिर्जा को नबी मान लिया तो फिर इनमें से दस प्रतिशत भी क्यों मरे ?

इसका उत्तर मिर्जाइयों के पास क्या है ? यह प्रश्न तो चौड़ा मुँह किए हुए आज भी उत्तर की खोज कर रहा है।

और फरिश्ता फाँसी पर लटकाया गया

पाठक पीछे पढ़ चुके हैं कि पण्डित लेखराम जी सम्बन्धी इलहाम में मिर्जा गुलाम अहमद ने लिखा था कि फरिश्ता ने उनसे पं० लेखराम जी का व एक और व्यक्ति का पता पूछा। दूसरे का नाम मिर्जा साहिब भूल गये। वही फरिश्ता २९ वर्ष में लाहौर से देहली पहुँचा और स्वामी श्रद्धानन्दजी की हत्या कर दी। तब मिर्जा महमूद व लाहौरी मिर्जाइयों (मिर्जाइयों के दो सम्प्रदाय है) के नेता मौलवी मुहम्मद अली ने बड़े-बडे विज्ञापन, लेख व ट्रैक्ट छपवाकर यह प्रचार किया कि मिर्जा जी की भविष्यवाणी अब पूर्णरूपेण पूरी हुई है। फरिश्ते ने जिस दूसरे व्यक्ति का पता पूछा था वह स्वामी श्रद्धानन्द थे।

मिर्जा साहिब ने 'हकीकत उल् वही' पृष्ठ ३२१ पर लिखा है कि यदि [पं० लेखराम का] "हत्यारा पकड़ा जाता व फाँसी के तखता पर चढ़ जाता तो भविष्यवाणी का कुछ भी महत्त्व न रहता।"[1]

इतिहास साक्षी है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी का हत्यारा पकड़ा भी गया और फाँसी पर भी चढ़ाया गया। अब मिर्जाई मिर्जा जी की

---

१ देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ९, दिनांक ४-८-१९३५ पर श्री राधाकिशन आर्य का लेख।

भविष्यवाणी की अहमियत (महत्त्व) व सच्चाई के विषय में क्या कहते हैं ? क्या वे अब्दुलरशीद को एक फरिश्ता मानते है ? क्या फरिश्ता फाँसी पाकर शहीद हो गया ?

इसका उत्तर आज तक नहीं मिला ?

सैय्यद अताउल्ला शाह बुखारी की अपील पर सैशन जज के निर्णय के कुछ अंश

धर्मवीर पं० लेखराम की हत्या का षड्यन्त्र रचने वाले मिर्जा गुलाम अहमद के नवीन पन्थ की पोल खोलने वालों में अहरारी लीडर और इस्लाम के एक मूर्धन्य वक्ता तथा विद्वान् मौलाना सैय्यद अता उल्ला शाह बुखारी भी एक प्रमुख व्यक्ति रहे हैं। मिर्जाइयों का आपसे झगड़ा न्यायालय तक गया। बुखारी जी ने कोर्ट के निर्णय के विरुद्ध गुरदासपुर के सैशन जज श्री जी० डी० खोसला के न्यायालय में अपील की थी। माननीय न्यायाधीश श्री खोसला का निर्णय ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। यह सारा निर्णय ही पुस्तक में देने योग्य है तथापि हम यहाँ इसके कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंश देते हैं ताकि संसार मिर्जाई मनोवृत्ति को ठीक-ठीक समझ ले। आज ये लोग मिर्जा जी की एक पुस्तिका 'पैगामे सुलह' के नाम पर देश से छल करते हैं जैसे कि ये लोग अत्यन्त उदार, शान्तिप्रिय व देश में एकता के इच्छुक रहे हैं। इस पन्थ के लोगों ने तो गांधी जी को भी साम्प्रदायिक सिद्ध करने वाले विषैले पोथे लिखे। जवाहरलाल नेहरू जी पर भी कृपा की जबकि इन दोनों नेताओं ने हिन्दुओं के हितों की उपेक्षा करके भी मुस्लिम लीग का तुष्टिकरण किया। न्यायाधीश लिखते है—

"एक व्यक्ति गरीब शाह को कादियानियों ने मारा। जब उसने अभियोग चलाना चाहा तो कोई व्यक्ति उसकी ओर से साक्षी देने के लिए आगे न आया। कादियानी जजो के[1] किए हुए निर्णयों की Files (मिसलें) प्रस्तुत की गई तथा मिसल पर अंकित है (मौजूद है)। मिर्जा ने (मिर्जा महमूद) स्वीकार किया कि न्यायालय के अधिकार कादियाँ में प्रयुक्त किए जाते हैं तथा इन बातों में वह स्वयं अन्तिम न्यायालय है। न्यायालय की Degrees (आदेश) जारी किए जाते हैं

१. मिर्जाइयो के अपने ही न्यायालय थे। सुप्रीम कोर्ट मिर्जा था।

तथा एक उदाहरण भी है जहाँ Degree के पालन में एक घर की बोली (Auction) दी गई। कादियाँ में एक स्वयंसेवी संगठन के होने की साक्षी सफाई के साक्षी संख्या ४० मिर्जा शरीफ अहमद ने दी है।

मौलवी मुहम्मद हुसैन की हत्या

इसके अतिरिक्त सबसे गम्भीर विषय तो अब्दुल करीम का है। जिसकी कहानी वास्तव में बड़ी करुणाजनक गाथा है। इस व्यक्ति ने मिर्जाई मत स्वीकार किया तथा कादियाँ को चला गया परन्तु वहाँ इसके हृदय मे मजहबी शकाएँ, सशय उत्पन्न हुए और उसने मिर्जाई मत से तोबा की (तज दिया)। तब उस पर अत्याचार आरम्भ हुए। उसने एक पत्रिका 'मुबाहला' नाम से चालू किया जिसका उद्देश्य मिर्जाई मत की मान्यताओं का खण्डन करना था। मिर्जा ने एक भाषण मे जो Document दस्तावेज DZ संख्या २६ अलफजल दिनांक ११-४-१६३० ई० में प्रकाशित हुई है, 'मुबाहला' पत्रिका के प्रकाशकों की मृत्यु की भविष्यवाणी की। इस भाषण में उन लोगों की ओर भी संकेत किया जो अपने मत के लिए कटने को भी उद्यत होते हैं।

इस भाषण के शीघ्र पश्चात् अब्दुलकरीम पर घातक आक्रमण भी हुआ परन्तु वह बच गया। एक व्यक्ति मुहम्मद हुसैन अब्दुलकरीम की सहायता करता था तथा एक फौजदारी अभियोग में जो अब्दुल करीम के विरुद्ध चल रहा था उसका जामिन था। उस पर सचमुच आक्रमण हुआ तथा उसकी हत्या कर दी गई। हत्यारे पर अभियोग चला तथा उसे फाँसी का दण्ड दिया गया।

हत्यारे का सम्मान

फाँसी के आदेश को व्यावहारिक रूप दिया गया तथा फाँसी पाने के पश्चात् शव कादियाँ लाया गया तथा बड़ी धूमधाम से उस स्थान पर दफन किया गया (दबाया गया) जिसका 'बहिश्ती मकबरा' नाम रखते है। 'अलफजल' में जो मिर्जाई पत्रिका है, हत्या की प्रशसा तथा हत्यारे का गुणगान किया गया। यह लिखा गया कि हत्यारा अपराधी न था।"……अपने निर्णय मे सुयोग्य सैशन जज महोदय ने आगे लिखा है—

कादियाँ में अराजकता

"ये खेदजनक घटनाएँ प्रमाणित करती हैं कि कादियाँ में अराजकता थी जिसमें आग लगाने व हत्या तक की घटनाएँ होती थीं। इन घटनाओं में इस बात की और वृद्धि करो कि मिर्जाए कादियाँ ने करोड़ों मुसलमानों को जो उसके सर्वोपरि होने पर ईमान नहीं रखते थे शदीद दुशनाम तराजी (अत्यन्त कठोर अपशब्द) का निशाना बनाया।"

अपने निर्णय के अन्त में न्यायाधीश महोदय ने यह भी लिखा है—"मिर्जा ने मुसलमानों को काफर, सुअर तथा उनकी औरतों को कुत्तियों का खिताब देकर उनकी भावनाओं को भड़का दिया था।"[1]

स्मरण रहे कि इस अपील पर माननीय सैय्यद अता उल्लाशाह बुखारी को न्यायालय के उठने तक की कैद का दण्ड दिया गया।

इस निर्णय के हम कुछ और अंश भी देते परन्तु इस दुःखद कहानी की अधिक चर्चा करते हुए हमारा हृदय भी फटता है। ऐसा करने से अनेक जनों के हृदय के घाव हरे होंगे। अतः इतने अंश देना ही पर्याप्त है।

एक मिर्जाई गप्प

मिर्जाइयों की लाहौरी पार्टी के पत्र 'पैगामे सुलह' में मिर्जा साहिब की गौरव गरिमा के लिए एक दावा किया गया—

"जब इस देश में प्लेग का नामोनिशां भी न था, उस समय प्लेग की सूचना दी जिसके विनाश से भारत की सम्भवतः कोई विरली ही बस्ती बची हो। जब इस देश में भूकम्प की किसी को कल्पना तक न थी, उस समय भूकम्प की सूचना दी।"

ये दोनों दावे विशुद्ध गप्पें हैं। मिर्जा साहिब ने जब भारत में प्लेग फैलने की भविष्यवाणी की तब बम्बई में इसके कई केस हो चुके थे। इसी प्रकार चार अप्रैल १९०५ ई० के काँगड़ा के भूकम्प के पश्चात् ही भूकम्प की भविष्यवाणियाँ कीं। इस तथ्य को कौन झुठला सकता है?[2]

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक, पृ० ९-१०, दिनांक २३ जून सन् १९३५ ई०।

२. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ चार, दिनांक ७ जौलाई सन् १९३५ ई०।

मिर्जाई भाई नोट कर लें कि १५ जुलाई सन् १७२० ई० को देहली और (शाहजहाँबाद) पुरानी देहली में एक भयानक भूकम्प आया था और अनेक जन मृत्यु का ग्रास बन गये।

११-१०-१७३७ ई० में कलकत्ता में भूकम्प आया। इसमें तीन लाख व्यक्ति मर गये थे। अनेक जलपोत व नौकाएँ नष्ट हो गई थी।

२-४-१७६२ ई० में बंगाल व ब्रह्मा में फिर भूकम्प से विनाश-लीला हुई थी।

सन् १७८० ई० में कश्मीर में भूकम्प आया था।

पहली सितम्बर सन् १८०३ ई० में मथुरा में भूकम्प से पर्याप्त हानि हुई थी।

१६ जून, १८०६ ई० को उत्तर भारत में भूकम्प से ४०,००० (चालीस सहस्र) जन मृत्यु के मुख में चले गये।

२५-२६ सितम्बर सन् १८२७ ई० को कश्मीर मे भूकम्प से एक सहस्र जन मारे गये।

सन् १८३१ ई० में पेशावर व सिंध में भूकम्प आया।

सन् १८३२ ई० में लाहौर के आस पास भीषण भूकम्प आया था।

२६ अगस्त सन् १८३३ ई० को नेपाल व उत्तर भारत के मध्य व पूर्वी भागों में भूकम्प आया था।

१६ जनवरी सन् १८४४ ई० को काबल, पेशावर व उत्तर-पश्चिमी भारत में भूकम्प आया था।

८ जनवरी सन् १८५१ ई० में लाहौर व सारे पंजाब मे भूकम्प आया था परन्तु इसके झटके भयानक न थे।

७-४-१८५६ ई० में काँगड़ा, शिमला व कोटगढ़ में भूकम्प आया।

इसके पश्चात् भी काँगडा के १६०५ ई० वाले भूकम्प तक बीच में और भी तीन-चार बार भारत में भूकम्प आया था। मिर्जा साहिब तब तक होश सँभाल चुके थे अतः हम उनकी चर्चा यहाँ नहीं करते।

इन तथ्यों का प्रकाश हमने सत्य की रक्षा के लिए किया है। ये ठोस तथ्य पढ़कर भी अन्धविश्वासी मिर्जाई असत्य को तजकर सत्य को ग्रहण करने का साहस नही करेंगे।

मीनार और मिर्जा जी

ईसाई व मुसलमान बन्धुओं में यह विचार पाया जाता है कि दमिश्क के मीनार पर हजरत मसीह नाजिल (उतरेंगे) होंगे।

मिर्जाइयों की स्थिति इससे भिन्न है। कादियाँ में मसीह पहले उतरा और मीनार उस मसीह अर्थात् मिर्जा साहिब पर उतरा। स्मरण रहे कि कादियाँ में मिर्जा ने एक मस्जिद में मीनार बनवाया जिसका नाम 'मीनारात-उलमसीह' रखा। यह भी नबी के आने का एक निशान है। इसी के बारे में 'अलहुकम' मिर्जाई पत्रिका ने अपने २१ जनवरी, १९३६ ई० के अंक में यह लिखा था –"मीनार का प्रयोजन यह न था कि जो मसीह संसार में आ चुका था तथा जिसकी मुनादी (सूचना) विश्व में हो रही थी, वह इस पर उतरे और फिर लोगों को कहे कि देखो मैं इस मीनार पर उतर आया हूँ अपितु यह थी कि वह लोगों को जुबाने हाल से बतलाय कि आने वाला आ गया है तथा इसमें घड़ियाँ लगाई जावें जोकि लोगों को समय बतलायें और इस तथ्य की ओर राहनुमाई (मार्गदर्शन) करें कि जिसके आने का समय था, वह आ चुका।"

देहली में भी मिर्जा जी के आने पर चाँदनी चौक में घण्टाघर था। लाहौर के राजकीय कालेज की घड़ी की सुइयाँ भी यह पता दे सकती थीं। अन्य बड़े नगरों के घण्टाघरों से भी यह कार्य लिया जा सकता था। कादियाँ में मीनार पर व्यर्थ में धनराशि क्यों व्यय की गई ?

धन्य है कादियाँ की 'मीनार फिलासफी'।[1]

पैगम्बरी की अवधि

'निशाने आसमानी' नाम के रसाला में मिर्जा साहिब एक फारसी पद देते हैं—

ता चहल साल ऐ बरादरे मन,
दौरे आँ शाहसवार मे बीनम।

अर्थात् जिस दिन से वह अमाम नबी होकर आएगा, वह चालीस वर्ष तक जीवन बिताएगा। मिर्जा साहिब ने ब्राहीने अहमदिया में इस इलहाम के समय से चालीस वर्ष तक अपनी और आयु बताई। यह भी लिखा कि अस्सी वर्ष तक या इसके लगभग तेरी आयु है। यह उपर्युक्त इलहाम १८९२ ई० में हुआ।

१. देखिए आर्य मुसाफिर के पृष्ठ २ पर दिनाक २-२-१९३६ की एक टिप्पणी।

मिर्जा जी इसके केवल १६ वर्ष पश्चात् चल बसे। मिर्जा साहिब ने स्वयं इसी प्रसंग में ब्राहीने अहमदिया पृष्ठ २३८ पर लिखा था कि पैगम्बरी के दस वर्ष बीत चुके है अर्थात् उन पर १८८२ ई० में इलहाम उतरने लगे तो इससे सिद्ध हुआ कि उनकी पैगम्बरी की अवधि कुल २६ वर्ष बनती है। मिर्जा साहिव ने १८९२ ई० में अपनी आयु ५० वर्ष बताई। इस प्रकार वह ६६ वर्ष में इस संसार से विदा हुए। अब कहाँ अस्सी या अस्सी के लगभग और कहाँ ६६ वर्ष ?[1]

रोगियों को दुआ से रोगमुक्त किया
और
घर के प्राणी…

'अलफ़ज़ल' मिजाई पत्रिका में छपा कि एक डा० मुहम्मद जबीर M. B., B. S क्षय रोग से पीड़ित थे। डाक्टरों के सब यत्न निष्फल गये फिर मिर्जा महमूद की दुआ से सर्वथा नीरोग हो गये।

मिर्जाई भाइयो को यह भूल गया कि इन्हीं मिर्जा साहिब की जवान पुत्री और नबी साहिब की पौत्री को कोई दुआ न बचा सकी और वह चल बसी। 'अलफजल' में ही छपा था कि खलीफा साहिब की सुपुत्री उमता-उलरशीद बेगम साहिबा रुग्ण है। **"इलाज के लिए लाहौर ले जाना पड़ा है।"**[2]

मानव बुद्धि यहाँ हताश होकर पूछती है कि मिर्जाइयों की भविष्य-वाणियों व दुआओ की वास्तविकता को हम क्या जानें ? क्या समझें ? उर्दू का कवि कहता है—

'कुछ न समझे खुदा करे कोई'।

मिर्जा साहिब का हिन्दुओं को प्रमाण-पत्र

मिर्जा गुलाम अहमद ने ईसाइयों, सिखों, मुसलमानों सबको अश्लील भाषा में प्रमाण-पत्र दिये हैं। हिन्दुओं के सम्बन्ध मे उनके एक प्रमाण-पत्र की मौलाना मजहर अली आदि कई मुसलमानो ने चर्चा की है। हम भी उनका यह प्रसिद्ध **'वाण वचन'** यहाँ उद्धृत करते है—

---

१. अमृतसर के 'ऐहलेहदीस' की एक टिप्पणी का सार तथा 'आर्य मुसाफिर' पृष्ठ ६, दिनांक २७-१-१९३४ ई०।

२. देखिए 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक पृ० सात दिनांक २२-४-१९३४ ई०।

"उदाहरण के लिए हिन्दुओं की कौम एक ऐसी जाति है कि बहुत से इनमें से ऐसी आदत रखते है कि **यदि इनको अपनी ओर से न छेड़ा जावे** तो वे मुदाहना के तौर पर सारी आयु मित्र बनकर दीनी अमूर में (धार्मिक विषयों में) हाँ में हाँ मिलाते रहते है। प्रत्युत्त कई बार तो हमारे नबी (हजरत मुहम्मद) की स्तुति प्रशंसा व इस दीन के औलिया का गुणगान करने लगते है परन्तु **हृदय उनके अत्यन्त काले तथा सत्य से दूर होते हैं।"**

छेड़छाड़ में कौन पहल करता है, यह मिर्जा साहिब के शब्द, पुकार-पुकारकर बता रहे है।

मिर्जा साहिब का एक प्यारा इलहाम

मिर्जा महमूद ने लायलपुर में एक भाषण दिया। इसका कुछ अंश 'अलफजल' २० मई, १९३४ ई० के अंक में प्रकाशित हुआ था। इसमें आपने अपने पिताजी के एक इलहाम की चर्चा करते हुए कहा था—

"जिस समय हजरत मसीह मोऊद को यह इलहाम हुआ उस समय मैं विद्यार्थी था और विद्यार्थी भी ऐसा जो सदा Fail (विफल) होता था।"

इस पर आर्य मुसाफिर ने एक टिप्पणी दी—

और ऐसा होना आवश्यक भी था क्योंकि जब मिर्जा गुलाम अहमद साहिब कादियानी (खलीफा साहिब के बाप) मुखतारी की परीक्षा में (जो सम्भवत: एक ही परीक्षा थी जो उन्होंने अपने जीवन में दी थी) फेल हो गये तो यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है ही कि

'पिदर नतवानद पिसर तमाम कुनद'

अर्थात् जो पिता तो न कर सका पुत्र ने पूरा करके दिखा दिया।

"फरजन्द साहिब (पुत्र महोदय) सब परीक्षाओं में फेल होते रहे।"[1]

मिर्जा के जिस इलहाम की खलीफा ने इस व्याख्यान में चर्चा की वह यह था—"ऐ अल्लाह के रसूल के बेटे''तुम दुनिया के मुसलमानों को एक सिलसला में जमा करो—(एक सूत्र में पिरो दो)।"

मुसलमानों को श्रीमान जी ने कैसे एक सूत्र में पिरोया यह 'अशराय कामला', 'अजायबात मिर्जा', सोदाय मिर्जा, 'रईसे कादियाँ'

---

१. देखिए आर्य मुसाफिर २७ मई सन् १९३४ का अक, पृष्ठ ११।

'His Holiness' आदि पुस्तकों में पाठक पढ़ लें। ये सब पुस्तकें नामी मुसलमान विद्वानों द्वारा लिखी गई हैं।

श्री गुरु हरगोविन्द जी का अपमान

देश विभाजन के पश्चात् एक मिर्जाई ज्ञानी वाहद हुसैन प्रतिवर्ष कादियाँ मे 'सिख मुस्लिम इतिहाद' विषय पर भाषण देने के लिए पाकिस्तान से आता रहा। सम्भवतः यह व्यक्ति पहले सिख था। देश विभाजन से पूर्व मिर्जाइयों ने इसी की पुस्तक 'गुरु गोविन्द सिह के बच्चों का कतल' छपवा कर इस बात का प्रचार किया कि गुरु जी के चारों पुत्र शहीद नहीं हुए। मिर्जा साहिब तो असंसदीय भाषा का प्रयोग करते ही थे। इस व्यक्ति ने हिन्दू सिखों में द्वेष पैदा करने के लिए ही पाकिस्तान से आ-आकर उक्त विषय पर भाषण दिये। उसके भाषणों की तान यहाँ आकर टूटती थी कि गुरुनानक जी मुसलमान थे।

एक बार 'शेरे पंजाब' पत्रिका ने मिर्जाई पत्र 'नूर' के बारे उपालम्भ देते हुए लिखा था कि इस पत्रिका ने गुरुजी व लाहौर के काजी रुस्तम खाँ के सम्बन्ध में कुछ अनुचित लिखा है। ज्ञानी वाहद हुसैन ने 'नूर' की बात का प्रतिवाद करने की बजाए उलटा 'शेरे पंजाब' को गालियाँ देनी आरम्भ कर दी।

इसने 'फारूक' १४ जून, १९३४ ई० के अक में ऐसे-ऐसे शब्द लिखे जिन्हें यहाँ उद्धृत करते हुए भी हमे लज्जा आती है। यहाँ तक लिख दिया "और सिखों को तो नदामत (शर्म) से डूब मरना चाहिए।"[१]

मिर्जा जी की निशानियों व इलहामो की चर्चा के प्रसंग में देशहित में हमने मिर्जाई प्रवृत्ति का यह दिग्दर्शन करवाना आवश्यक जाना।

अंग्रेज भक्ति पर बलिहारी

आज मिर्जाई सत्ता पक्ष के गीत गाते है। मिर्जा गुलाम अहमद ने लिखा है—"मैंने अंग्रेजो के पक्ष मे इतनी पुस्तकें लिखी हैं कि इनसे पचास अलमारियाँ भर सकती हैं।"[२]

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ पाँच, दिनांक २४ जून सन् १९३४ ई०।

२. द्रष्टव्य वही, पृष्ठ छः, दिनांक २४ जून सन् १९३४ ई०।

मिर्जा साहिब के मृदु वचन

मिर्जाई सदा दूसरों के बड़ों के सम्मान की दुहाई देते हैं और सब के लिए स्टेजों पर भ्रातृभाव दर्शाते हैं। मिर्जा साहिब ने लिखा है—"जनाकारों (व्यभिचारियों) और बदकारों (दुराचारियों) की सन्तान…जादों[1] के अतिरिक्त सब मुसलमान मुझे कबूल (मानते है) करते हैं।" आईना कमालाते इस्लाम, पृष्ठ ५४७[2]

यह तो एक छोटा सा उदाहरण है। मौलाना सना उल्ला व कई अन्य मुसलमान मौलवियों ने पूरी फारसी वर्णमाला के क्रम से मिर्जा साहिब की गालियों पर पुस्तकें लिखी है। यह ऊपर का मृदुवचन स्पष्ट रूप से अपनी नबुवत के निशान के रूप में ही मिर्जा साहिब ने प्रस्तुत किया है।

जी हाँ ! मिर्जा ने अपने चेलों के बारे में कहा था

९ अगस्त, १९३४ के 'अलफजल' में खलीफा महमूद ने अपनी मिर्जाई जमात के विषय मे बड़े साहस से यहाँ तक कह डाला कि छः अहमदियों में से पाँच जरायम (Crimes) की जद में (पकड़ में) आए और वे भी स्त्री के अपहरण से…।[3] इस सत्य भाषण के लिए वह बधाई के पात्र हैं।

मिर्जा साहिब ने एक बार फिर ऐसा साहसिक वक्तव्य देते हुए कहा था, "जमाते अहमदिया जिसे अल्लाह ताला ने संसार के सुधार के लिए नियुक्त किया था, इसके कुछ सदस्यों की सन्तान आचार-व्यवहार के अत्यन्त घृणित व घिनौने उदाहरण प्रस्तुत कर रही है। 'अलफजल', दो जून सन् १९३४[4]

कादियाँ की अहरार कानफरेंस और मिर्जाई

२१, २२ व २३ अक्टूबर, १९३४ को कादियाँ में एक शानदार अहरार कानफरेंस आयोजित की गई थी। इसके सम्बन्ध में अलफजल

१. जादो से पूर्व रिक्तस्थान हमने जानबूझकर छोड़ा है। पाठक स्वयं इसे भर लें।

२. विस्तार के लिए 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ सात, जून २४ सन् १९३४ ई० को देखें।

३. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ चार, दिनांक १६ सितम्बर सन् १९३४ ई०।

४. देखिए वही, पृष्ठ पाँच, दिनाक ७-१०-१९३४ ई०।

ने लिखा था कि इसमें भाग लेने वाले कई मुसलमान उनके लंगर में खाना खाते रहे। इस विषय मे तत्कालीन पत्रों में छपा मिलता है कि कोई भी मुसलमान इतना निर्लज्ज नही हो सकता कि वह मिर्जाइयो के लंगर में जाकर लंगर की रोटियाँ तोड़े जबकि वे लोग वहाँ एकत्र ही इसलिए हुए थे कि मिर्जाइयों के आतक के विरुद्ध आवाज उठावें।

मिर्जाइयो ने तो तब कादियाँ की सीमा के अन्दर यह सम्मेलन होने ही न दिया। वहाँ के हिन्दुओं सिखो ने तब मुसलमानों का पूरा-पूरा सहयोग किया और यह महासम्मेलन डी० ए० वी० स्कूल के विशाल मैदान में आयोजित किया गया। अब प्रश्न यह था कि जल की व्यवस्था कैसे की जावे ?

आर्यो ने वहीं अपना कुआँ बाहर से आए हुए मुसलमान भाइयों के लिए खोल दिया। इस सम्मेलन में आए हुए मुस्लिम नेता डी० ए० वी० स्कूल के भवन में ही ठहराये गये थे। महा सम्मेलन के अध्यक्ष सैय्यद अताउल्ला शाह बुखारी का ओजस्वी, विचारोत्तेजक, सप्रमाण व धाराप्रवाह व्याख्यान लगातार छ: घण्टे तक होता रहा जिसे श्रोताओं ने मन्त्रमुग्ध होकर श्रवण किया। लेखक ने कादियाँ में उस समय के लोगों से इस भाषण की भूरि-भूरि प्रशंसा कई बार सुनी थी।[1]

अंग्रेज के विश्व-प्रसिद्ध एजेण्ट [Agents]

देश-विभाजन से पूर्व पत्रों में एक 'टोडी' शब्द का बड़ा प्रचलन था। अंग्रेजों के भक्त या एजेण्ट को 'टोडी' की सज्ञा दी जाती थी। मिर्जाई जमात सामूहिक रूप से भी टोडी मानी जाती थी। भारत ही नहीं, भारत के बाहर भी मिर्जाइयों की यह प्रसिद्धि थी। खलीफा महमूद जी स्वयं इस तथ्य की साक्षी देते हैं—

"संसार हमें अंग्रेजों का एजेण्ट (Agents) समझता है। जर्मनी में अहमदिया जमात के भवन के उद्घाटन समारोह मे एक मन्त्री ने भाग लिया तो उससे पूछताछ की गई कि तुम ऐसे संघटन के समारोह में सम्मिलित हुए जो अंग्रेज का एजेण्ट है।" 'अलफजल', पृष्ठ ३, दिनांक पहली नवम्बर १६३४ ई०।[2]

---

१. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ चार, दिनांक ४ नवम्बर सन् १६३४ ई० व पृष्ठ ११ पर सम्मेलन के एक प्रत्यक्षदर्शी पं० धर्मदत्त जी का लेख।

२. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृ० ५, दिनांक १५ नवम्बर, १६३४ ई०।

भारत के लोग क्या समझते हैं ?

"हमारी जमात वह जमात है जिसे आरम्भ से ही लोग यह कहते चले आए हैं कि ये गवर्नमैंट के चाटुकार व पिट्ठू हैं। कुछ लोग हम पर यह दोष लगाते हैं कि हम सरकार के गुप्तचर हैं। पंजाबी लोकोक्ति के अनुसार 'झोली चुक' तथा नये जमींदारा प्रयोग के अनुसार टोडी कहा जाता है।"[1] अलफजल, पृष्ठ २, दिनांक ११ नवम्बर सन् १९३४ ई०।

अंग्रेज के प्रति स्वर्णिम सेवाओं पर गर्व

"हमने आरम्भ से ही सरकार के प्रति भक्ति (Loyalty) दिखाई। हम सदा यह अभिमान करते रहे हैं कि हम सम्राट् महान की निष्ठावान् प्रजा हैं। कई टोकरे पत्रों के हमारे पास ऐसे हैं जो मेरे नाम अथवा मेरी जमात के मन्त्रियों (Secretaries) के या व्यक्तियों के नाम हैं जिनमें सरकार ने हमारी जमात की वफादारी (राजभक्ति) की प्रशंसा की। इस प्रकार हमारी जमात के पास कई टोकरे तमगों (Medals) के होंगे—उन तमगों के जिन्होंने अपनी जानें Government (गवर्नमैंट) के लिए वार दीं। ये इतने टोकरे हैं कि एक अधिकारी के भार (Weight) से भी उनका भार अधिक है।"

('अलफजल', ११ नवम्बर सन् १९३४ ई०)[2]

मिर्जा जी के निकट सबसे घटिया गाली

"परन्तु मैं Disloyalty राज्य के प्रति विद्रोह या राजभक्ति के अभाव को अपने लिए एक अत्यन्त घटिया गाली मानता हूँ।"

('अलफजल', पृष्ठ ६, दिनांक ११ नवम्बर सन् १९३४)[3]

मिर्जा जी का आसमानी निकाह् अटल

मौलाना अब्दुल रहमान साहिब अफजलाबादी के शब्दों में मिर्जा गुलाम अहमद की एक आसमानी शादी की अत्यन्त संक्षेप से यहाँ चर्चा करते हैं। मिर्जा स्वयं लिखते हैं, "मुहम्मदी बेगम के साथ मेरा निकाह खुदाई निर्णय है जो किसी प्रकार टल नहीं सकता। यह

१-२ देखिये 'आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ५, दिनांक २५ नवम्बर, १९३४ ई०।

३. द्रष्टव्य 'आर्य मुसाफिर', पृ० ५, दिनांक २५ नवम्बर सन् १९३४ ई०।

निकाह आसमान पर हो चुका है। संसार में अवश्य होकर रहेगा। मेरे विरोधियों को चाहिए कि धैर्य रखें। यदि यह भविष्यवाणी पूरी न हुई तो मै झूठा।"

इसपर मौलाना अब्दुलरहमान लिखते है, "मिर्जा साहिब १९०८ ई० में मर गये। इस तृष्णा को दिल ही दिल में ले गये। मुहम्मदी बेगम के साथ आपका निकाह न हुआ पर न हुआ।"[1]

इससे अधिक इस विषय पर हम क्या लिखें? सैंकड़ों मुसलमान विद्वानों ने इस भविष्यवाणी पर बहुत कुछ लिखा है। यहाँ हम किस-किसका प्रमाण दें?

क्या यह पद मिर्जा साहिब का नहीं है?

सन् १९३७ ई० में एक पत्रिका ने मिर्जा जी के दो पदों के बारे में मिर्जाईयों से एक प्रश्न पूछा था। हम यहाँ उन दो में से एक पद उद्धृत करते हुए मिर्जाइयों से पूछते हैं कि वे यह बतावें कि क्या यह पद मिर्जा साहिब की रचना नहीं है—

इबने मर्यम[2] के जिकर को छोड़ो।
इससे बेहतर गुलाम अहमद है॥[3]

दूसरों के बड़ों का आदर करने की तोता रटन वाले बतायें कि यही दूसरों का मान है?

यह भी मिर्जाई परम्परा है

अब तो देश-विभाजन के पश्चात् सब संस्थाओं में अर्थशुचिता का अभाव होता जा रहा है। देश-विभाजन से पूर्व अर्थअशुचिता इतनी व्यापक न थी। स्वतन्त्रता पूर्वकाल में समाजसेवियों ने, देश सेवकों ने व जाति सेवकों ने घर-बार फूँककर संस्थाओं को, देश व समाज को बनाया। स्वतन्त्रता उत्तरकाल में ऐसे लोग आगे आ गये हैं जो देश, समाज व सस्थाओं को फूँककर घर-बार बना रहे हैं। सारे देश में असहाय जनता इस 'लीडर वर्ग' की अर्थअशुचिता व भ्रष्टाचार

१. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृ० २, दिनाक ३-१-१९३७ पर उक्त मौलाना का लेख।
२. अर्थात हजरत ईसा।
३. 'आर्य मुसाफिर', पृ० ६, दिनांक ७-२-१९३७।

से पीड़ित है परन्तु मिर्जाइयों में तो यह रोग मिर्जा गुलाम अहमद से ही चला आ रहा है। मिर्जा साहिब ने इस्लाम की दुहाई देकर अपनी पुस्तकों के लिए भारी चन्दे लेकर वचन भंग किया। जब आपत्ति हुई तो विचित्र उत्तर दिया।

मिर्जा गुलाम अहमद के पश्चात् उनके चिरंजीव मिर्जा महमूद खलीफा सानी (द्वितीय) पर भी धन के अर्जित करने का आरोप लगता रहा। मुसलमानों का एक प्रसिद्ध पत्र 'अहसान' लाहौर से निकलता था। इस उर्दू दैनिक में एक मिर्जाई ने अपने लेख में मिर्जाई जमात के इस पूजनीय खलीफा साहिब पर यह आक्षेप किया कि मिर्जा महमूद जी ने मिर्जा गुलाम अहमद की मृत्यु के पश्चात् मिर्जा अकरम बेग से जो एक लाख अस्सी सहस्र रु० (१८००००-००) की सम्पत्ति क्रय की है, यह राशि कहाँ से आई है ?[1] इसी प्रकार इस लेख में पूछा गया था कि मिर्जा साहिब ने सिंध प्रदेश में सैकड़ों मुरबा भूमि[2] क्रय करली है। इतनी भूमि क्रय करने के लिए मिर्जा जी के पास धन कहाँ से आया है ? इस लेख में लगाए गये दोषों में कुछ अतिशयोक्ति तो हो सकती है परन्तु इतने बड़े दैनिक में एक चेले द्वारा उठाए गये प्रश्न निराधार नहीं हो सकते। सम्भव है मिर्जा महमूद भी मौलाना मुहम्मद अली की भाँति यही कहते होंगे कि हिसाब तो कयामत (प्रलय) के दिन अल्लाह ही माँग सकता है।[3]

तुम्हें याद हो कि न याद हो
तिरंगे झण्डे का इक-इक तार
मिर्जाइयों की आँख में काँटे के समान चुभता है

मिर्जाई सम्प्रदाय के सरकारी साप्ताहिक पत्र अलफजल में दिसम्बर १९३७ ई० के आरम्भिक दिनों में तिरंगे झण्डे के सम्बन्ध में एक अत्यन्त विषैला व साम्प्रदायिक भावनाएँ भड़काने वाला लेख प्रकाशित हुआ था। यह सारा लेख हम यहाँ उद्धृत नहीं करते। इसकी पृष्ठभूमि देकर कुछ पंक्तियाँ यहाँ देते हैं ताकि आज 'पैगामे सुलह' के नाम पर लोगों को अँधेरे में रखने वाले मिर्जाइयों की वास्तविकता बुद्धिमान लोग समझ सकें।

---

१. तब यह राशि बहुत बड़ी थी। २. पच्चीस एकड़ का मुरबा होता है।
३. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृ० ६, दिनांक २५ जुलाई सन् १९३७ ई०।

पेशावर में ईद के दिन ईदगाह में किसी ने तिरंगा झण्डा गाड़ दिया। डा० खाँ साहिब जो सीमा प्रान्त के तब मुख्यमन्त्री थे, उन्होंने भी यह दृश्य देखा। स्वतन्त्रता संग्राम में देशभक्तों ने कई बार मन्दिरों, मठों, स्कूलों व कालेजों पर यह ध्वज फहराया। ईदगाह में फहरा दिया गया तो यह कोई नई घटना न थी परन्तु अलफजल ने इसे मुसलमानों के लिए एक चुनौती बताकर 'इस्लाम खतरे में' का Patent Slogan परम्परागत मुस्लिम लीगी नारा लगा दिया। पढ़िए इस पत्र के शब्द, "परन्तु यह दृश्य देखकर उनके हृदय[1] कितने मुर्झाए होंगे ? कि वह पवित्र स्थान जहाँ की पवित्र धूलि पर अपना माथा टेकना प्रत्येक मुसलमान अपने लिए सौभाग्य का कारण मानता है, वहाँ ऐसा झण्डा गाड दिया जावे जिसके प्रत्येक तार में मुसलमानों के सहस्रों उपालम्ब (Complaints and grievances) व रोष लिपटे हुए हों। सहस्रों आहें चिमटी हों तथा जो ऐसे तारों से बना हो जो सर्वथा इस्लाम के विरुद्ध हो।"[2]

क्यो जी, अब मिर्जाई तिरंगे के तारों के बारे में क्या कहते हैं ?

इनकी यही परम्परा है

पंजाब के मुसलमानों के एक प्रसिद्ध पीर सैय्यद मेहरअली शाह की मृत्यु पर अलफ़जल ने २० मई सन् १९३७ ई० को उनका नाम बिगाड़कर एक भद्दे शीर्षक से उनकी मृत्यु का समाचार दिया। देहली के खाजा साहिब के मुनादी पत्र ने इसपर बुरा मनाया परन्तु इसमें बुरा मनाने वाली क्या बात है ? मिर्जाइयों की रीति-नीति व परम्परा ही यही है।

आर्य विद्वान् पं० धर्मभिक्षु जी की मृत्यु पर 'फारुक' ने लिखा था—

'खस कम जहाँ पाक'

इससे घटिया शीर्षक 'फारुक' को मिल न सका।[3]

मिर्जा साहिब किस वंश के थे ?

सन् १९३७ ई० में 'ऐहले हदीस' अमृतसर व 'अलफजल' कादियाँ में यह विवाद छिड़ गया कि मिर्जा साहिब किस वंश के थे। मौलाना

१-२. देखिए 'आर्य मुसाफिर', पृ० ७, दिनांक १९-१२-१९३७।

३. देखिए 'आर्य मुसाफिर' २० जून, १९३७, पृ० पाँच।

सना उल्ला साहिब मिर्जा साहिब के अपने लेखों के आधार पर उन्हें मुगल व चीनी सिद्ध करते थे जबकि सम्पादक 'अलफजल' अपने नवी को कुछ बिरोधियो के लेखों के आधार पर फारसी वंश से सिद्ध कर रहा था। मिर्जा साहिब की वास्तविक वंशावली क्या थी ?

हमने भी मिर्जा जी के लेख, सीरत-उल-महदी आदि मिर्जाइयों के एतद्विषयक प्रामाणिक साहित्य को बार-बार पढ़ा है। 'रईसे कादियाँ' आदि मुसलमान लेखकों की पुस्तकें भी पढ़ी है। मिर्जा साहिब का वंश हमारे लिए भी एक बुझारत Riddle ही है। मिर्जा साहिब ने हर किसी के बारे में की गई भविष्यवाणी एकदम अपने ऊपर चरितार्थ करने का प्रयत्न किया, इसी से यह उलझन और उलझती गई। सिखों की एक साखी भाई बाला वाली को मिर्जा पर चरितार्थ करके मिर्जाई उन्हे 'बटाला परगना का जटेटा' (जाट) भी सिद्ध करते हैं। यह भविष्यवाणी कादियाँ में उनके 'दफतर जायरीन' में लिखकर लगाई हुई है।

मौलाना अब्दुल हक लायलपुरी 'ऐहले हदीस' में अपने इसी विषय के लेख में 'हकीकत उल वही' पृष्ठ २० की मिर्जा जी की पाद टिप्पणी के अनुसार उनको तुर्कों के वंश से, मुगलो के वश से, फारसी वश से व चीनी वंश का बताते हैं। इसी लेख में ख़लीफ़ा नूरउद्दीन की 'तसदीक ब्राहीने अहमदीया' के अनुसार उनमें 'याजोज माजोज तुर्की' रक्त भी प्रमाणित होता है।

अलफजल २८ फरवरी सन् १९३३ ई० में मिर्जा जी के वंश पर प्रकाशित लेख के अनुसार आप **'बनी इजराईल'** के वंश से हैं। मिर्जा के अपने ही एक लेख के अनुसार वह सैय्यद से भी सम्बन्धित थे। आप लिखते हैं, "हमारी कुछ दादियाँ भले (शरीफ़) व प्रसिद्ध सादात वंश में से थीं।"[1]

मिर्जा का इलहामी खुदा उन्हें उनके वंश सम्बन्धी जानकारी समय-समय पर देता रहा। मिर्जा साहिब के अपने लेखों के अनुसार यह सिद्ध होता है कि—

(१) वह मुगलिया वंश से सम्बन्धित थे।
(२) उनकी नसल (Race) में तुर्कों का भी भाग (योगदान) है।
(३) मिर्जा साहिब फारसी उलनसल थे।

---

१. देखिए आर्य मुसाफिर, पृष्ठ ९, दिनांक २-१-१९३८ ई०।

(४) मिर्जा साहिब बनी इजराईल या चीनी नसल से थे।
या मिर्जा साहिब फ़ारसी नसल से थे।
(५) मिर्जा साहिब जाट नसल से थे।
(६) या फिर वह सैय्यद थे।
'हम गर अर्ज़ करेंगे तो शिकायत होगी' [ऐहलेहदीस]

मिर्जा जी की स्मृति—विस्मृति व पैगम्बरी

मिर्जाई भाई यह मानते है—'नबियों की स्मरण-शक्ति अद्‌भुत होती है।"[1]

"जिस पर इलहाम उतरे उसका मस्तिष्क अत्युत्तम होता है।"[2] अब इस कसौटी पर मिर्ज़ा साहिब की पैगम्बरी को तनिक कसकर देखिए।

मिर्जा साहिब लिखते हैं, "मुझे प्रातः को एक इलहाम हुआ था। मेरा विचार बना कि लिख लूँ फिर स्मृति पर विश्वास करके न लिखा अन्ततः वह ऐसा भूला कि बहुत याद करने पर भी कतई याद नही आया।"[3]

"आज प्रात: जब मैं नमाज के पश्चात् तनिक लेट गया तो इलहाम हुआ परन्तु खेद कि इसका एक अश स्मरण नहीं रहा।"[4]

इसी के आगे लिखते है, "इस विस्मृति में भी अल्लाह की कुछ इच्छा होती है।"[5]

"स्मृति अच्छी नहीं। स्मरण नही रहा।"[6]

हम समझते हैं कि पैगम्बर की स्मृति विषयक मिर्जाई मान्यता की कसौटी पर मिर्जा साहिब की नबुवत को कसने की हमें तो अब आवश्यकता नही। मिर्जाई अपने हृदय से स्वयं पूछे और निष्पक्ष

---

१. 'रिव्यु आफ रिलिजन्ज', पृ० ८, जनवरी सन् १९३० ई०।
२ वही, पृ० २६ देखें।
३ द्रष्टव्य 'बदर', पृ० ५, दिनाक ६ मार्च, सन् १९३० ई०।
४ अलबशरी, पृ० ८०, जिल्द दो।
५. वही देखिए।
६. 'नसीमे दावत', पृ० ७१ तथा हाशिया 'रिव्यु', अप्रैल १९०३, पृ० १५३, हाशिया।

बुद्धिमान पाठक आप ही पूर्वोक्त कसौटी पर मिर्जा जी की पैगम्बरी को कसकर देखें।

'सौदाए मिर्जा' पुस्तक के मुसलमान लेखक माननीय हाजी डाक्टर मुहम्मद अली प्रिंसिपल तिबिया कालेज अमृतसर ऊपर उद्धृत मिर्जा के शब्दों में, कि विस्मृति में भी अल्लाह की कुछ इच्छा होती है, पर लिखते हैं, "वाह! सुब्हान अल्लाह! पहले तो खुदा इलहाम करे और फिर उसी समय भुला दे।"[1]

मिर्जा जी की अपने मरणस्थान सम्बन्धी घोषणा

आपने लिखा था, "हम मक्का में मरेंगे अथवा मदीना में।"[2]

मिर्जा साहिब की कबर लेखक ने पचासों बार कादियाँ में देखी। सब मिर्जाई भाई भी जानते है कि मिर्जा जी का निधन लाहौर में हुआ। यह भी मिर्जाई जानते है कि मिर्जा जी मक्का-मदीना तो क्या उनके आसपास भी जीवनकाल में न पहुँच पाये। मिर्जा जी ने स्वयं ही लिखा है, "नबी के कलाम में झूठ उचित नहीं।"[3]

अब उपर्युक्त घोषणा को मिर्जा साहिब की अपनी ही कसौटी पर मिर्जाई कसकर देख लें। क्या यह वचन सत्य है अथवा असत्य?

मिर्जा साहिब ने लिखा है, "किसी मनुष्य को पशु कहना भी एक प्रकार की गाली है।"[4]

मिर्जा जी का कथन है, "एक शब्द भी ऐसा प्रयुक्त नहीं किया जिसको गाली देना कहा जावे।"[5]

फिर लिखा है, "गलियाँ देना व अश्लील वचन बोलना शिष्टता नहीं।"[6]

मिर्जा साहिब ने लिखा है कि "......ज़ादा तथा वलद-उल-ज़ना के अतिरिक्त प्रत्येक मुसलमान मुझे स्वीकार करेगा।"[7]

---

१ द्रष्टव्य 'सौदाए मिर्जा', पृ० २१, द्वितीय संस्करण, सन् १९३३ ई०।

२. अलबशरी, पृ० १०५, जिल्द दो।

३ 'मसीह हिन्दोस्तान में' पृष्ठ १९ देखें।

४. देखिए, 'अजाला ओहाम', पृ० २६, पाद टिप्पणी।

५. वही, पृष्ठ १३।

६. जमीमा अरबैन, पृ० ५।

७. आईनाए कमालाते इस्लाम, पृ० ५४७

हमने रिक्त स्थान यहाँ जान-बूझकर छोड़ा है। पाठक समझ लें। बार-बार मिर्जा जी का यह मृदु वचन क्या उद्धृत करें। वलदउलजना का अर्थ हमें उर्दू फारसी का स्नातक बनने पर भी न आता था। इस सारगर्भित शब्द के अर्थ हमें रबे कादियाँ ने बताए थे। पाठक उर्दू फारसी के शब्दकोशों में ही देखे हम नही दे सकते। मिर्जा साहिब लिखते हैं, "मेरे विरोधी जगलों के सूअर हैं तथा उनकी स्त्रियाँ कुत्तियों से बढ़कर हैं।"[1]

मिर्जाई भाई भलीभाँति जानते हैं कि निम्न पद किसकी रचना से हमने लिये है—

इक सगे दीवाना[2] लुधियाना में है।
आजकल वह खर शुतरखाना[3] में है॥
आदमियत से नहीं है उसको मस।
है नजासत खोर[4] वोह मिसले मगस[5]॥

हम यहाँ केवल चार ही पक्तियाँ देते है। इसमें ३६ पक्तियाँ [अठारह पद] है। एक से एक बढकर।[6] यह कविता एक मौलाना साद उल्लाह साहिब के सम्बन्ध में है।

सामान्य मौलवियों को ललकारते हुए एक कविता किसी ने लिखी थी। उसकी एक पक्ति पढ़िए—

'हींगता मुदत से है मानिन्द खर'।

अर्थात् वह लम्बे समय से गधे के समान चिंघाड़ता है। फिर एक पद है—

खूक[7] और बन्दर सभी बन जाओगे।
अपनी करतूतों का बदला पाओगे॥

फिर एक शुभकामना या प्रार्थना पद्य में ऐसे है—

---

१. "सौदाए मिर्जा", पृ० १७ पर उद्धृत।
२. पागल कुत्ता।
३. गधो व ऊँटों का अस्तबल।
४. गन्दगी खानेवाला।
५. मक्खी के समान।
६. पूरी कविता मौलाना मुहम्मद याकूब साहिब लिखित 'अशराय कामला', पृ० १३० पर देखें।
७. सूअर।

जिस कदर यह मौलवी है नाबकार[1]।
या हिदायत दे इन्हें या इनको मार ॥[2]

पीछे दिए मिर्जा जी के मृदु वचनों में तथा इन पदों में दूसरों को गधा, सूअर आदि कहा गया है या नहीं ? यह शिष्टता है अथवा अशिष्टता ? यह अमृत वर्षा है या गाली वर्षा ? इसका निर्णय हम मिर्जाइयों पर ही छोड़ते हैं और साथ ही यह भी विनती करेंगे कि वे जनहित में यह बताने की कृपा करें कि उपर्युक्त पद किसकी रचना हैं ?

मिर्जा जी के कुछ कथन—आप क्या समझे ?

मिर्जा जी ने लिखा है, "खुदाय ताला का सृष्टि-नियम बदल नहीं सकता।"[3]

मिर्जा जी ने यह भी लिखा है, "खुदा अपने विशेष व्यक्तियों (खास बन्दों) के लिए नियम भी बदल देता है।"[4]

कादियानी नबी लिखते है, "कुछ इलहामात मुझे उन भाषाओं में भी होते हैं जिनसे मुझे कुछ जानकारी नहीं जैसे अंग्रेजी या संस्कृत अथवा इबरानी आदि।"[5]

फिर आप ही ने लिखा है, "यह सर्वथा अनुचित तथा निरर्थक बात है कि मनुष्य की वास्तविक भाषा तो कोई हो और इलहाम उसको किसी और भाषा में हो जिसको वह समझ भी नहीं सकता।"[6]

यहाँ प्रसंगवश हम अपने छात्र जीवन के दिनों में मिर्जा जी के दो-तीन अंग्रेजी इलहाम, जो हमने याद किये थे, यहाँ देते हैं। अंग्रेजी जानने वाले मिर्जा जी की अंग्रेजी पर Command पर मुग्ध होंगे ही।

"I am a great quarreller".[7] भाषा कैसी भी हो इसके भाव से किसे इन्कार हो सकता है ? भाव यह है कि "मैं बड़ा झगड़ालू हूँ।"

"I shall halt in the zila Peshawer".[8] अर्थात् मैं पेशावर जिले

१ मूर्ख, अयोग्य, नालायक।

२. पूरी कविता मौलाना मुहम्मद याकूब साहिब लिखित 'अशराय कामला', पृ० १३१ पर पढ़ें।

३. द्रष्टव्य 'करामात उल-सादकीन', पृ० ८।

४. द्रष्टव्य 'चश्माय मारफत', पृ० ६६।

५ द्रष्टव्य 'नजूल मसीह', पृ० ५७। ६. द्रष्टव्य 'चश्माय मारफत', पृ० २०६।

७-८. कुछ अंग्रेजी इलहाम His Holliness पुस्तक के लेखक ने भी उद्धृत किए है।

में ठहरूँगा।" "Words of God cannot exchange". परमात्मा के शब्दों का···। कुछ भी भाव नहीं।

"परमात्मा प्रत्येक नुकसान (दोष न्यूनता) से रहित है जिसे कभी मृत्यु नहीं आती, जिसका विनाश नही होता, वह ऊँघ तथा निद्रा से भी जो मृत्यु के ही सदृश हैं, रहित है।"[1] अर्थात् ईश्वर न ऊँघता है और न सोता है।

परन्तु मिर्जा जी लिखते हैं—खुदा मिर्जा को सम्बोधित करते हुए कहता है, "मैं जागता हूँ और सोता हूँ।"[2] इन सब वचनों को पढ़कर आप क्या समझे ?

आप मत हँसना—ये बातें इलहामी हैं

मिर्जा जी ने स्वयं लिखा है कि "सम्भव है कि कई लोग मेरी इन बातों पर हँसेंगे या मुझे पागल और दीवाना घोषित कर दें क्योंकि ये बातें संसार की समझ से बढ़कर है और संसार इनको नहीं समझ सकता।" (दुनिया इनकी शिनाख्त नहीं कर सकती)।[3]

यह बात तो मिर्जा जी ने बड़े पते की लिख दी। उनकी इलहामी बातें सचमुच संसार से परे की हैं। लोग हँसेंगे, ऐसा मिर्जा जी को पूर्वानुमान था। वह बड़े अनुभवी पुरुष थे। इन बातों का परिणाम वह पहले ही ताड़ गये परन्तु कोई बात नहीं, हमने तो अपने पाठको को संकेत कर दिया है कि वे मिर्जा जी की 'समझ से बढ़कर' बातों पर कतई न हँसें। हमें आशा है कि हमारे कृपालु पाठक हमारी विनती का सम्मान करेंगे।

मिर्जा जी ने लिखा है—

"मसीह का मीनारा जिसके निकट उसका नजूल (उतरेगा) होगा, दमिश्क से पूर्व की ओर है और यह बात ठीक भी है क्योंकि कादियाँ जो जिला गुरदासपुर पंजाब में हो **जो लाहौर से पश्चिम व दक्षिण के कोण में स्थित है।**"[4]

---

१ 'वेद और कुरान का मुकाबला', पृ० २७।

२. अलबशरी, पृ० ७६, जिल्द दो देखें।

३ द्रष्टव्य 'कशफ उलगता', पृ० १२।

४. देखिए विज्ञापन, चन्दा मिनारत उलमसीह, पृष्ठ 'हे', सन् १६०० ई० के मई में प्रकाशित।

दमिश्क वाले प्रसंग के बारे में कुछ न लिखते हुए हम अपने भारतीय पाठकों को कहेंगे कि यह ठीक है कि भूगोल में आप कादियाँ को लाहौर के उत्तर-पूर्व में स्थित पाते हैं परन्तु फिर भी आप मिर्जा जी के द्वारा इस लाहौर के **'पश्चिम-दक्षिणीकोण'** में बताए जाने पर न तो घबराएँ और न ही मिर्जा साहिब के भूगोल के ज्ञान पर हँसें। घबराने की कोई बात नहीं। कादियाँ अपनी भौगोलिक स्थिति नहीं बदलेगा। मिर्जाजी के रहस्य उद्घाटन पर हँसना भी ठीक नहीं। मिर्जा साहिब का भूगोल सांसारिक नहीं। उनका इलहामी भूगोल आपकी समझ से परे है। यह समझकर आप बस चुप ही रहेंगे तो अच्छा है।

महाभारत में हजरत मुहम्मद साहिब के चमत्कार मोजज्ञा शक-उल-कमर का उल्लेख ?

धर्मवीर पण्डित लेखराम जी ने अपनी पुस्तक तकजीबे ब्राहीने अहमदिया के तृतीय खण्ड में मिर्जा जी के ये शब्द उद्धृत किये हैं---

"फिर इन सब बातों के पश्चात् हम यह भी कहते हैं कि 'शक-उल-कमर' (चाँद के दो टुकड़े होना) की घटना की साक्षी हिन्दुओं की प्रामाणिक पुस्तकों में भी पाई जाती है। महाभारत 'धर्म पर्व' में व्यास जी साहिब लिखते हैं कि उनके काल में चाँद दो टुकड़े होकर पुनः मिल गया था तथा वह इस 'शक-उल-कमर' (चन्द्र के दो टुकड़े होने) को अपने अप्रमाणिक विचार से विश्वामित्र का चमत्कार बताते हैं परन्तु पण्डित दयानन्द साहिब की साक्षी तथा योरूप के गवेषकों के वक्तव्य से पाया जाता है कि 'महाभारत आदि पुराण' कुछ प्राचीन और पुराने नहीं हैं प्रत्युत कुछ पुराणों का सम्पादन तो केवल आठ सौ या नौ सौ वर्ष (पूर्व[1]) हुआ है। अब यही अनुमान लगता है कि महाभारत अथवा उसकी घटना हजरत मुहम्मद साहिब के चमत्कार 'शक-उल-कमर' के घटित होने व देखने के पश्चात् लिखा गया और विश्वामित्र का नाम केवल अनुचित प्रशंसा के रूप में, जैसाकि प्राचीन हिन्दुओं का अपने पूर्वजों के लिए स्वभाव है[2] लिखा गया है।"

१. कोष्ठों में पूर्व शब्द हमने जोड़ा है। वाक्य इसके बिना कुछ अस्पष्ट रह जाता है।

२. मिर्जा साहिब हिन्दुओं पर दोषारोपण का अवसर चूक जावें, ऐसा हो नहीं सकता। यह भी उनकी कृपा जानिए कि उन्होंने इस प्रसंग में हिन्दुओं को 'खूक और बन्दर' नहीं लिख दिया जैसाकि मौलवियों को फटकारते हुए लिखा था।

इस पर पण्डित लेखराम जी लिखते है कि यह तो ऐसी ही बात है जैसे कोई कहे कि मुहम्मद साहिब की महाराजा रणजीत सिंह जी से भेंट होकर बहुत महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुआ और एक दूसरे को उपहार आदि भेंट किए गये······तो क्या कोई बुद्धिमान मानेगा ? कदापि नही। हजरत ! ऐसा ही इस बात का दावा है और सत्य भी है कि 'दरोग़ आदमी रा कुनद शर्मसार' (अर्थात् झूठ व्यक्ति को लज्जित करता है।) श्रीमान जी, महाभारत में न तो कोई धर्म पर्व है और न चाँद के दो टुकड़े होने का सम्पूर्ण महाभारत में कही उल्लेख है। न उसमे विश्वामित्र के सम्बन्ध में इसकी कहीं चर्चा है तथा न किसी परकीय (गैर) के बारे में भी संकेत तक है, न स्वामी जी ने कहीं भी महाभारत को आठ सौ वर्ष का लिखा हुआ बतलाया तथा न महाभारत की गणना पुराणों में हुई है।"[1]

और न कोई आज महाभारत की गिनती पुराणो में करता है।

मिर्जा जी के उद्धरण के साथ ही हमने पूज्य पं० लेखराम जी के एतद् विषयक उत्तर का कुछ अंश दे दिया है। हमारी ओर से इसपर किसी और टिप्पणी की आवश्यकता ही नही। हम सब पाठको से, विशेष रूप से मिर्जाई भाइयो से कर जोड़ प्रार्थना करेंगे कि वे पूर्वाग्रह से मुक्त होकर इस पर विचार करे और बतावें कि क्या मिर्जा जी का उपर्युक्त 'सत्य कथन' भी उनकी पैगम्बरी का निशान व प्रमाण है ? वह अपनी हर बात में यूँ ही हजरत मुहम्मद साहिब को बीच मे ले आते हैं। मुसलमान भी उनकी इस चाल को समझ गए है और उनका हृदय पुकार-पुकार कर कह रहा है—**'मन खूब मे शनासम पीराने पारसा रा।'** अर्थात् मै इन भले पीरों को भलीभाँति पहचानता हूँ।

यहाँ हम एक बात प्रसगवश लिख दें कि श्री पं० चमूपति जी ने लिखा है कि मिर्जा जी ने यह 'शक-उल-कमर' की बात महाभारत के 'आनन्द पर्व' में बतलाई है।[2] महाभारत मे आनन्द पर्व है ही नही। हमारे सामने इस समय मिर्जा जी का मूल ग्रन्थ नही है परन्तु लगता है कि श्री प० चमूपति जी से लिखने में भूल हुई है। पं० लेखराम जी का लेख ही अधिक प्रामाणिक है। कारण उन्होंने ही तो सर्वप्रथम

१. द्रष्टव्य 'कुल्लियात आर्य मुसाफिर', पृष्ठ ५०७।
२. द्रष्टव्य 'ॠषि का चमत्कार', लेखक प० चमूपति, पृष्ठ सख्या १०।

मिर्जा की पुस्तक का उत्तर देते हुए इस प्रसंग की चर्चा की सो यह निश्चित है कि सब कुछ देखकर ही लिखा। कुछ भी हो, मिर्जा जी का यह लेख उनके शेष लेखों के समान अत्यन्त रोचक है। उनकी इस Research (अनुसंधान) को देख-पढ़कर महाभारत का स्वल्प ज्ञान रखने वाला विद्यार्थी भी झूम उठता है और मिर्जा जी के लिए वाह ! वाह ! पुकार उठता है।

मिर्जा साहिब का मोजजा (चमत्कार)
[आयु ग्यारह वर्ष]

लेखक—मौलाना सनाउल्ला साहिब सम्पादक 'ऐहले हदीस' अमृतसर "मिर्जा साहिब कादियानी नुबवत (पैगम्बरी) के दावेदार थे। संसार में जितने भी पंथ नुबवत के क्रम को मानते हैं, वे इस बात को भी मानते है कि सच्चे नबी से स्वभाव विरुद्ध ऐसे कार्य भी हुआ करते हैं जिनको चमत्कार की संज्ञा दी जाती है। वैसे तो मिर्जा साहिब ने अपने पक्ष मे यह भी लिखा है कि मेरे दस लाख मौजजे हैं।[1] परन्तु हमारे विचार में उनकी एक घटना ऐसी भी है जोकि सृष्टि-नियम (खलाफ़े आदत) होने के दस लाख चमत्कारों से भी बढ़कर है। वह इतना बड़ा चमत्कार है कि जब से सृष्टि बनी है किसी से जहूर पजीर न (घटित नहीं हुआ) हुआ होगा।

हम पाठकों को उसके सुनने के लिए अधिक देर तक प्रतीक्षा नहीं करवाना चाहते। इसलिए शीघ्र बता देते है कि वह चमत्कार इस प्रकार से है कि मिर्जा साहिब के यहाँ सन्तान पैदा हुई। सन्तान के भी सन्तान हो गई। आपने आरम्भिक दिनों में राजकीय नौकरी (चुंगी लिपिक) भी की। कानून (Law) की परीक्षा भी दी (भले ही असफल हो गये)। आर्यों व ईसाइयों को आड़े हाथों भी लेते रहे। पं० लेखराम को कादियाँ आने का निमन्त्रण भी दिया। उनके लिए छः वर्ष में मृत्यु की भविष्यवाणी भी की। मसीही शास्त्रार्थी डिप्टी आथम के लिए भी पन्द्रह मास की भविष्यवाणी की।[2] छोटी-बड़ी बहुत-सी पुस्तकें भी लिखीं। श्वेत दाढ़ी को मेंहदी भी लगाई परन्तु

---

१. इसका अर्थ है कि एक-एक दिन में मिर्जा जी बीसियों चमत्कार दिखाते थे। क्या कोई और काम-धन्धा न था ?

२. इसकी चर्चा हम पीछे कर चुके हैं।

इन समस्त घटनाओं के होते हुए भी आपकी समस्त आयु केवल दस-ग्यारह वर्ष सिद्ध होती है। इस दावा का प्रमाण हम अपने शब्दों में नही देते प्रत्युत्त मिर्जा साहिब ही के शब्द उद्धृत किए देते हैं। आपने लिखा है कि—

सृष्टि की उत्पत्ति के छठे हजार में से ग्यारह वर्ष शेष रहते थे जब में पैदा हुआ (हाशिया ताहेफाए गोलड़िया प्रथम संस्करण पृ० ६५) फिर एक लेख जो प्रथम मार्च सन् १६०६ ई० को छपा में लिखा है कि अब 'छठा हजार आखिर पर (समाप्ति) है' (मुकदमा चश्मा मसीही, पृष्ठ बे) यह लेख क्योंकि प्रथम मार्च १६०६ ई० का है इसलिए प्रतीत हुआ कि १६०६ तक सृष्टोत्पत्ति का छठा हजार समाप्त नहीं हुआ था। अपितु अभी इसमें कुछ भाग शेष था।

यदि हम कल्पना कर लें कि छठे हजार की समाप्ति सन् १६०७ ई० में हो गई जोकि मिर्जा साहिब की मृत्यु का वर्ष है[1] तो भी मिर्जा साहिब की आयु १६०८ ई० में बड़ी कठिनाई से ग्यारह वर्ष होती है। पाठकवृन्द विचार करेंगे कि इससे बड़ा चमत्कार क्या होगा ?[2]

घोषणा—मिर्जा साहिब अथवा (उनका) कोई चेला हमारे दोनों प्रमाणों की चूक अथवा हमारी गणना की भूल सिद्ध कर दे अथवा न्यायाधीश के निर्णय के पश्चात् हम उसको मिर्जा साहिब की आयु ग्यारह वर्ष के समान ग्यारह रुपये पुरस्कार स्वरूप देंगे।

लिए फिरते हैं हाथों पर दिल मुजतिर को अपने हम
कोई माहे जबी इसको उठा ले जिसका जी चाहे

(टिप्पणी) मिर्जा साहिब के इस प्रकार के मोजजात हमारे रसाला (पुस्तक) 'अजायबात मिर्जा' नाम में कई एक मिलते है।"[3]

---

१. मिर्जा साहिब के जीवन का अन्तिम वर्ष सन् १६०७ ई० है। मृत्यु सन् १६०८ ई० में हुई थी।

२. माननीय मौलाना सना उला साहिब के प्रमाणो को झुठलाना किसी मिर्जाई के बस की बात नहीं थी। अब भी कौन झुठला सकता है ? मौलाना की गणना भी पूर्णतया ठीक है। मिर्जा साहिब छठे हजार में ग्यारह वर्ष रहते जन्मे तो फिर उनका जन्म का वर्ष १८६७ ई० बनता है। इससे स्पष्ट है कि मृत्यु के समय वह दस-ग्यारह वर्ष के ही थे। सचमुच यह सृष्टि का एक विचित्र चमत्कार है।

३. मिर्जाई नवम्बर 'आर्य मुसाफिर' २५-११-१६३४ ई०, पृष्ठ चार देखिए।

खूँरेज पार्टी का इतिहास

ईसाई पत्रिका 'नूर अफशां' के सम्पादक को हत्या की धमकी

'नूर अफशां' के सम्पादक को एक पत्र प्राप्त हुआ। इसे इस पत्रिका ने अपने एक सितम्बर सन् १९३० ई० के अंक में अपनी टिप्पणी सहित प्रकाशित किया। हम इस पत्र को इस ग्रन्थ में इसलिए दे रहे हैं क्योंकि इसमें श्री पं० लेखराम जी के बलिदान की चर्चा है। पण्डित जी के जीवन-चरित्र का गम्भीर अध्ययन करने वाले तथा मिर्जाई मत के इतिहास व मन्तव्यों में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए नूर अफशां में प्रकाशित यह पत्र एक महत्त्वपूर्ण Document है। पत्र का विवरण नूरअफशां ने ऐसा दिया है—

इस पत्र पर अंग्रेजी में स्थान रावलपिण्डी लिखा है। डाकघर की मुहर झेलम की है। पत्र पैंसिल से लिखा है। लिखने वाले का नाम खून—खून—हमदर्दबाज लिखा है। पत्र में लिखा है, "तुम दूसरे मतों के विरुद्ध अश्लील भाषा से बाज आ (सावधान रहो) जाओ। अन्यथा इसका परिणाम बुरा होगा। मैं प्रत्येक अंक में बुरे लेख देखता हूँ। यदि भविष्य में ऐसा ही देखा तो मैं अथवा मेरा कोई शिष्य तुम्हें नरक में प्रविष्ट कर देगा। बस मौत के लिए तैयार रहो। हमारा सम्प्रदाय सब मतों में शान्ति व मेल के लिए पैदा हुआ है।"

इस पर सम्पादक 'नूर अफशां' लिखता है-–

"जब से मै सम्पादक बना हूँ मैंने मिर्जाई मत के अतिरिक्त किसी के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं लिखा। हाँ प्रहार का, अनुचित आरोपों का व अण्ड-बण्ड का जैसे का तैसा उत्तर देने के प्रयोजन से कादियानी मत के विरुद्ध बहुत कुछ लिखा है अतः अनुमान यही है कि लिखने वाला कोई कादियानी है।"

फिर आगे चलकर लिखा है—

"जब हम कादियानियों की अतीत की काली करतूतों पर विचार करते हैं तो हमारा यह सन्देह डोल जाता है, विशेषकर इसलिए कि कादियानियों के अतिरिक्त किसी अन्य मत से हमारा सम्बन्ध नहीं। कुछ भी हो इस पत्र के लेखक को बतला देना चाहते हैं कि हम इस खूँरेज (रक्त बहाने वाली) पार्टी को तब से मानते हैं (कायल हैं) जबकि हम अभी जन्मे भी नहीं थे। अब्दुल्ला आथम दिवंगत के घर मे किसने सर्प फैंकवाया ? उनकी जान लेने के लिए किसने गुण्डे

नियत किये ? पं० लेखराम की हत्या किसनें करवाई ? बेचारे काजी मुहम्मद हुसैन का वध किसने करवाया तथा उनके पिता को किसने बुरी तरह घायल किया ? सम्पादक महोदय 'मुबाहला' को किसने हत्या की धमकी दी थी ? आखिर इस पार्टी ने जो मतपंथों में सुलह व आशती (प्रेम व मिलाप) के लिए जन्मी है।"

सम्पादक 'नूर अफशां' ने अत्यन्त साहस का परिचय देते हुए सब प्रकार के भाग्य का स्वागत करते हुए—जो कुछ भी हो उसे शुभ मान कर अन्त में पत्र लेखक के नाम के साथ **'हमदर्द'** शब्द पर व्यंग्य कसते हुए पत्र लिखने वाले को लजाते व फटकारते हुए लिखा है कि क्या यही वीरता है ? नाम व पता लिखने का भी साहस नही ? फिर सम्पादक ने कादियानी रूहानियत (अध्यात्मवाद) पर गहरी चोट की है।[1]

समाप्ति और धन्यवाद

इसमें दो मत नहीं है कि तपोधन शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित शान्ति प्रकाश जी इस समय पूज्य प० लेखराम जी के साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् हैं। वे इस समय श्री पण्डित जी पर सबसे बड़े अधिकारी विद्वान् Authority है। उनके पश्चात् श्रीमान् प० निरंजनदेव जी व पं० शिवराज जी मौलवी फाजल का स्थान आता है। इन तीनों के पश्चात् इस क्षेत्र में इन पक्तियों के लेखक ने जो श्रम किया है, उसका फल आपके सामने है। लेखक को इस दिशा मे स्वर्गीय महाशय चिरंजीलाल जी 'प्रेम' सम्पादक 'आर्य मुसाफिर' से बहुत प्रोत्साहन प्राप्त हुआ परन्तु हमें इस विषय मे सर्वाधिक प्रेरणा पूज्य प० शान्ति प्रकाश जी से ही प्राप्त होती रही है। उनसे क्या कुछ पाया है इसे परमेश्वर ही जानते है या फिर लेखक जानता है।

हमारी चाह है वीर शिरोमणि पं० लेखराम जी के जीवन व साहित्य पर आर्य जाति मे बीसियो अधिकारी विद्वान् उत्पन्न हों। जिन लोगों ने **'लीडर'** की सज्ञा प्राप्त करके सभाओ पर एकाधिकार जमा रखा है, उनके पास साधन है परन्तु उनकी इधर रुचि नहीं। लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज की प्रेरणा से कभी सरदार वसाखा

१. 'आर्य मुसाफिर', मासिक के नवम्बर १६३१ ई० के पृ० ५१ पर श्रीमान मास्टर लक्ष्मण जी आर्योपदेशक के लेख से।

सिंह जी (भामड़ी जिला गुरदासपुर) ने श्रीमद्दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर को ऐसे विद्वानों के निर्माण के लिए एक बड़ी राशि दी थी। अब सेठों का धन (श्वेत या काला) पब्लिक स्कूलों के लिये है।

माननीय प्राध्यापक सत्यपाल जी 'सरस', मान्यवर उत्तमचन्द जी 'शरर' व श्रीमान डा० राणा गनौरी सरीखे सुयोग्य सज्जन उर्दू, फारसी, संस्कृत, हिन्दी व अंग्रेजी के विद्वान् हैं। ये लोग आर्य सिद्धान्तों के भी सुलझे प्रवक्ता हैं। इधर श्रम करें तो अनेक युवक इनका अनुकरण करेंगे किन्तु, यहाँ भी किन्तु 'परन्तु' प्रमाद का रूप धारण कर लेता है। अरबी जाननेवाले कुछ भाई गतवर्षों में आर्यसमाज में प्रविष्ट हुए हैं, उनमें भी श्री प० भोजदत्त जी, पं० मुरारीलाल जी शर्मा, ठाकुर अमर सिंह जी व पं० शान्तिप्रकाश जी वाली प्रवृत्ति नहीं तथापि हम आचार्य प्रवर पं० सत्यप्रिय जी से कहेंगे कि वे इस दिशा में व्यक्तिगत रूप से कुछ प्रयास करें तो लेखक भी उनका साथ देगा। यह अभाव दूर होना चाहिए।

हमने 'ब्याजे गम' [मातम नामा] प० लेखराम, 'लेखराम की कहानी', 'खूने नाहक', (मुसद्दस श्री दुर्गासहाय)[1] तथा गुजराती में छपा पण्डित जी का चरित्र कहीं नहीं देखा। अब इनकी खोज करेंगे व विभिन्न भाषाओं में पण्डित जी के जीवन-चरित्र प्रकाशित करवाने का प्रबल अभियान चलायेंगे। ईश्वर हमारे सहायक होंगे।

□□□

---

१. यह भी १८९७ ई० में छपा था। यह भी एक आर्य कवि थे। दुर्गासहाय जी सरूर से भिन्न थे।

निर्देशिका

—o—

हमारे प्रकाशन

रक्त साक्षी पं० लेखराम	राजेन्द्र जिज्ञासु	६०.००
आखिर जीत हमारी	सच्चाह सुनानी	१६.००
अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल [आत्मकथा]		८.००
अमर सेनानी श्रद्धानन्द	स्वामी जगदीश्वरानन्दजी	३.००
सत्यनारायण व्रतकथा	,, ,,	१.००
भर्तृ हरि शतकम्	,, ,,	८.००
दिव्य दयानन्द	क्षितीश वेदालंकार	५.००
आर्यसमाज का अतीत और वर्तमान	भवानीलाल भारतीय	२.५०
उपनिषदो की कथाएँ	,, ,,	३.००
निराला के काव्य पर अद्वैतवाद का प्रभाव	डा० वास्पति कुलवन्त	१५.००
आकाश मे तनी दो मुट्ठियाँ	,, ,,	१०.००
स्वकथित जीवन-चरित्र महर्षि दयानन्द तथा काशी शास्त्रार्थ	स्वामी रामेश्वरनन्द सरस्वती	३.००
सन्ध्या भाष्यम्	,, ,, ,,	४.००
भ्रमोच्छेदक	,, ,, ,,	४.००
सन्ध्या सुमन	,, ,, ,,	२.००
देवयज्ञ	,, ,, ,,	४.००
महर्षि दयानन्द का योग	,, ,, ,,	३.००
महर्षि दयानन्द और राजनीती	,, ,, ,,	५.००
शतायुर्वै पुरुष	,, ,, ,,	१.००
वृक्षो मे जीव एक भ्रान्ति	प० रामदयालुजी	७ ००
उपनिषद् कथामृत	शिवदयालुजी	६.००
दुर्गुण दूर भगाइए	सुरेशचन्द्र वेदालंकार	२.००
वैदिक विवाह परिचय	,, ,,	३.००
नामकरण सस्कार	,, ,,	१.००
अन्त्येष्टि सस्कार	,, ,,	३.००
मनुष्य बनो	,, ,,	५.००
न्यायदर्शन	तुलसीराम स्वामी	४.००
वेदान्त दर्शन	,, ,,	५.००
योगदर्शन	,, ,,	३.००